BC-09

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति

BC-09

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / सदस्य

संयोजक

डॉ. एम. एल. जैन 'मणि'

(पूर्व उपप्राचार्य, विश्वविद्यालय वाणिज्य महाविद्यालय, जयपुर)

परामर्शदाता - वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य सचिव

प्रो.(डॉ.) अनाम जैतली

निदेशक(अकादमिक)

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

- **प्रो.(डॉ.) आर. के. दीक्षित**
  आचार्य एवं अध्यक्ष ई. ए. एफ. एम. विभाग
  राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
- **प्रो.(डॉ.) नवीन माथुर**
  आचार्य एवं प्रशासनिक सचिव, कुलपति
  राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
- **प्रो.(डॉ.) एस. जी. शर्मा**
  आचार्य एवं अध्यक्ष ए. बी. एस. टी. विभाग
  राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
- **प्रो. आई. वी. त्रिवेदी**
  आचार्य, बैंकिंग एण्ड बिजनेस इकॉनामिक्स
  एम. एल. सुखा. विश्वविद्यालय, उदयपुर
- **डॉ. पुखराज दाधीच**
  वरिष्ठ व्याख्याता
  राजकीय महाविद्यालय, अजमेर
- **डॉ. एस. सी. जोशी**
  पूर्व उपप्राचार्य
  राजकीय महाविद्यालय, बांरा

संपादन एवं पाठ-लेखन

संपादक

प्रो. के. सी. सोढ़ानी

डीन,कॉलेज ऑफ कामर्स एवं मेनेजमेन्ट

एम. एल. सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

पाठ लेखक

साक्षी अरोड़ा (इकाई संख्या 1,2,3,4)

व्याख्याता

एस. एस. जैन सुबोध पी. जी. महावि., जयपुर

प्रो. एल. एन. सिंघल (इकाई संख्या 5,7,8)

आचार्य, व्यावसायिक प्रशासन विभाग,

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

डॉ. अमित अग्रवाल (इकाई संख्या 6)

व्याख्याता

एस. बी. पी. जी. महाविद्यालय, बगरु

डॉ. एन. एम. शर्मा (इकाई संख्या 9,10,11,12)

सहायक आचार्य, विश्वविद्यालय महारानी कॉलेज

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

डॉ. कपिल देव (इकाई संख्या 13,14,15)

विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर व्याव. प्रशासन विभाग,

राज. जानकी. बजाज कन्या महावि., कोटा

डॉ. भवानी शंकर शर्मा (इकाई संख्या 16,17,18)

सहायक आचार्य

विश्वविद्यालय वाणिज्य विश्वविद्यालय, जयपुर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच	प्रो. एम. के. घडोलिया	योगेन्द्र गोयल
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	संकाय विभाग	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन - अगस्त 2010 **ISBN No.: 13/978-81-8496-235-2**

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि. कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।व. म. खु. वि. कोटा के लिए कुलसचिव व. म. खु. वि. कोटा(राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई- 1	कम्पनी की परिभाषा एवं विशेषताएँ	**6–26**
इकाई- 2	कम्पनी के प्रकार	**27–36**
इकाई- 3	कम्पनी की प्रवर्तन	37–46
इकाई- 4	पार्षद सीमानियम	47–56
इकाई- 5	पार्षद अन्तर्नियम	57–71
इकाई- 6	प्रविवरण	72–96
इकाई- 7	अंश पूँजी	97–107
इकाई- 8	कम्पनी की सदस्यता तथा सदस्यों का रजिस्टर	108–120
इकाई- 9	निदेशक मण्डल तथा प्रबन्ध निदेशक	121–151
इकाई- 10	अन्याय एवं कुप्रबन्ध का निवारण	152–161
इकाई- 11	कम्पनी का समापन	162–183
इकाई- 12	कम्पनी सचिव- नियुक्ति, कार्य तथा शक्तियाँ	184–204
इकाई- 13	कम्पनी सचिव- कर्तव्य, योग्यताएँ एवं स्थिति	205–223
इकाई- 14	अंश आवंटन कार्यविधि	224–243
इकाई- 15	याचनाओं तथा अंशों के हरण के लिए सचिवीय कार्यविधि	244–260
इकाई- 16	कम्पनी की सभाएँ : सामान्य परिचय	261–270
इकाई- 17	वैधानिक सभा	271–282
इकाई- 18	असाधारण सामान्य सभा	283–290

इकाई-1 : कम्पनी की परिभाषा एवं विशेषताएँ
(Definition & characteristics of Co.)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 इतिहास एवं विकास

1.3 अर्थ एवं परिभाषा

1.4 आवश्यकता

1.5 प्रकृति एवं क्षेत्र

1.6 प्रकार

1.7 अन्य विषयों से सम्बन्ध

- एकल व्यक्ति कम्पनी
- कम्पनी का पर्दा उठाना या उसे बेनकाब करना ।

1.8 कम्पनी की विशेषताएँ

1.9 आधार

1.10 उदाहरण

!.11 सारांश

1.12 अभ्यास

1.13 उपयोगी पुस्तकें

1.0 उद्देश्य(Objective)

कम्पनियाँ व्यक्तियों की एक ऐच्छिक संस्था है जिसकी पूँजी ऐसे अंशों में विभाजित होती है, जिन्हें हस्तान्तरित किया जा सकता है, जो लाभ के लिए बनायी जाती है और जिसका समामेलन कम्पनी अधिनियम के अनुसार होता है तथा जिसका उत्तरदायित्व साधारणतया सीमित होता है ।

1) कम्पनी निर्माण में व्यावसायिक ईमानदारी व सद्विश्वास के न्यूनतम मानदण्डों को स्थायी बनायें रखना ।
2) अंशधारियों व लेनदारों के वैधानिक हितों का संरक्षण करना ।
3) प्रकाशित लेखों में कम्पनी के क्रियाकलापों का पूर्ण व सच्चा निरूपण करना ।
4) कम्पनी अधिनियम की प्रभावशीलता को स्थापित करना ।
5) उचित एवं पूर्ण सूचनाएँ प्राप्त करने के अंशधारियों के अधिकार को मान्यता प्रदान करना।
6) कम्पनी संचालन में सरकार को हस्तक्षेप करने एवं जाँच पड़ताल करने का अधिकार प्रदान करना ।

7) कम्पनी के प्रबन्धकों व कर्मचारियों को अपने कर्त्तव्यों एवं दायित्वों को पूर्णरूपेण निभाने के लिए बाध्य करना ।

8) सामाजिक परिवर्तन के परिवेश में कम्पनी अधिनियम को संशोधन, परिवर्तन एवं परिवर्द्धन की कार्यवाहियों से अप-टू-डेट रखना

1.1 प्रस्तावना

कम्पनी शब्द लेटिन भाषा से लिया गया है जिसमें कम्पनी का आशय साथ-साथ से है। प्रारम्भ में कम्पनी एक ऐसे व्यक्तियों के संघ को कहा जाता था जो अपना खाना साथ-साथ खाते थे । इस खाने पर व्यवसाय की बातें भी होती थी । आजकल कम्पनियों का आशय ऐसे संघ से हो गया जिसमें संयुक्त पूंजी होती है । यद्यपि यहीं कम्पनी की परिभाषा समझाने के लिए कुछ विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाएँ, न्यायाधीशों द्वारा दी गयी परिभाषाएँ एवं कम्पनी एक्ट में दी गई परिभाषा का वर्णन है, पर कम्पनी लॉ के विद्यार्थी को कम्पनी एक्ट, व 1956 की परिभाषा पर ध्यान देना है क्योंकि यही परिभाषा कानून द्वारा मान्य है और कानून की परिभाषा ही देनी चाहिए ।

1.2 इतिहास एवं विकास

भारत में कम्पनी विधान का इतिहास इंग्लैण्ड के कम्पनी विधान से जुड़ा हुआ है, क्योंकि 15 अगस्त, 1947 से पहले अंग्रेजों का शासन था और उन्होंने भारत में अपनी मर्जी के आधार पर विधानों की रचना की थी, जिनका मूल आधार ब्रिटिश विधान रहे हैं ।

19वी शताब्दी के मध्य में सन् 1844 ई. में इंग्लैण्ड में कम्पनी सम्बन्धी विधान पारित किया गया । इसी विधान से मिलता-जुलता विधान भारत के लिए सन् 1850 में प्रथम बार संयुक्त पूँजी कम्पनी अधिनियम बनाया गया । इस अधिनियम की सबसे बड़ी कमी यह थी कि इसमें सीमित दायित्व के तत्व को मान्यता प्रदान नहीं की गई । सन् 1857 में नया संयुक्त पूँजी कम्पनी अधिनियम पारित करके सीमित दायित्व की कमी को कुछ सीमा तक पूरा कर दिया गया ।

सन् 1860 में नया कम्पनी अधिनियम पारित किया गया जिसमें बैंकिंग एवं बीमा कम्पनियों को भी सीमित दायित्व की छूट दे दी गई । समय के साथ-साथ परिस्थितियों में परिवर्तन होने से कम्पनी अधिनियम में भी निरन्तर कुछ नये-नये प्रावधानों की आवश्यकता अनुभव की गई । अतः सन् 1860 के बाद सन् 1866, 1882, 1913 तथा 1956 में एक के बाद एक नये अधिनियम भारत में ब्रिटिश विधान में होने वाले परिवर्तनों के मद्देनजर पारित किये जाते रहे हैं ।

1.3 अर्थ एवं परिभाषा

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 3(1) '**कम्पनी**' शब्द को परिभाषित करती हैं । "इस अधिनियम के अन्तर्गत संगठित और पंजीकृत की गयी कम्पनी या एक विद्यमान कम्पनी । " हम प्रायः कम्पनी में कार्य करने वाले व्यक्तियों या कम्पनी का संचालन करने वाले व्यक्तियों के बारे में सुनते हैं । सामान्य व्यक्ति के लिए कम्पनी शब्द से तात्पर्य एक व्यावसायिक संगठन से है । परन्तु हम यह भी जानते हैं कि सभी प्रकार के

व्यावसायिक संगठनों को तकनीकी रूप से कम्पनी नहीं कहा जा सकता । अपने देश का सामान्य कानून एकल स्वामी के निजी संसाधनों को, उसके व्यवसाय से पृथक नही मानता । इसके परिणामस्वरूप, व्यावसायिक संकट के दौर में उसके व्यावसायिक ऋणों की पूर्ति उसके निजी संसाधनों से कर ली जाती है । इस प्रकार गणनात्मक अशुद्धियों की कुछ अपरिहार्य घटनाएँ स्वयं उसकी और उसके परिवार के विनाश का कारण बन सकती है । ऐसी स्थिति में उसके लिए ऐसा जोखिम उठाना उचित नहीं है । अत: वह अपने व्यवसाय को एक निजी कम्पनी के रूप में चलाने का कर सकता है । एक साझेदार की स्थिति और भी अधिक जोखिमपूर्ण होती है । साझेदारी का सम्बन्ध पारस्परिक विश्वास पर आधारित होता है । यदि कोई साझेदार इस विश्वास का दुरूपयोग करता है तो वह अन्य साझेदारी को गंभीर संकट में डाल सकता है, क्योंकि साझेदारों का दायित्व असीमित होता है । इस असीमित दायित्व के जोखिम से बचने के लिए साझेदार स्वयं को कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत करा सकते हैं, क्योंकि उस स्थिति मे प्रत्येक सदस्य का दायित्व उसके द्वारा लिए गये शेयरों के मूल्य तक ही सीमित होता है । व्यक्तिगत जोखिम की सीमाओं के अतिरिक्त ऐसे बहुत से अन्य कारण हैं जो व्यक्तियों के समूह को इस अधिनियम के अन्तर्गत निगमित केन्द्र का रूप धारण करने के लिए बाध्य कर सकते हैं । जैसे तकनीकी ज्ञान को प्राप्त करने, प्रबन्धकीय योग्यताओं से युक्त नीतियों को प्राप्त करने, विशाल पूँजी, निगमित व्यक्तित्व, शेयरों की अंतरणीयता आदि । कम्पनी अधिनियम की कतिपय परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं -

- "समस्त उद्देश्य के लिए संगठित व्यक्तियों का संघ कम्पनी है ।"

न्यायाधीश जेम्स

"कम्पनी विधान द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति है जिसका पृथक अस्तित्व, अविच्छिन्न उत्तराधिकारी एवं सार्वमुद्रा होती है ।"

. ..... प्रो. हैने

"कम्पनी बहुत से ऐसे व्यक्तियों का एक संघ है जो -द्रव्य या द्रव्य के बराबर का अंशदान एक संयुक्त कोष में जमा करते हैं और उसका प्रयोग एक निश्चित उद्देश्य के लिए करते है । इस प्रकार का संयुक्त कोष मुद्रा में प्रकट किया जाता है और कम्पनी की पूंजी होती है जो व्यक्ति इसमें अंशदान देते है, इसके सदस्य कहे जाते है । पूँजी के उतने अनुपात पर किसी सदस्य का अधिकार होता है जो उसके क्रय किये हुए अंश के बराबर है ।.

.... लार्ड लिंडले

"कम्पनी राजनियम द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति है । यह एक पृथक वैधानिक अस्तित्व रखती है । इसे अविच्छिन्न उत्तराधिकार प्राप्त है और इसकी एक सार्वमुद्रा होती है ।"

...कम्पनी अधिनियम 1956 के अनुसार

"कम्पनी का आशय कई व्यक्तियों के ऐसे संघ से है जो मुद्रा या मुद्रा के बराबर कोई अन्य सम्पत्ति एक संयुक्त कोष में अंशदान करते हैं तथा जिसका उपयोग किसी सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए करते हैं ।"

.... अमेरिकन विधिवेत्ता मार्शल जेम्स

"कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है जो अदृश्य एवं अमूर्त है और जिसका अस्तित्व केवल. कानून की दृष्टि से है ।"

....न्यायाधीश मार्शल

"कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है, जिसका समामेलन कुछ विशिष्ट निर्धारित उद्देश्यों के लिए हुआ है।"

.....न्यायाधीश चार्ल्सवर्थ

"निगम राज्य की एक रचना है जिसका अस्तित्व उन व्यक्तियों से भिन्न होता है जो उस (निगम) की पूँजी अथवा प्रतिभूतियों के स्वामी होते हैं ।"

. .....डॉ. विलियम आर. स्प्रिगल

निष्कर्ष: कम्पनी का आशय कम्पनी अधिनियम के अधीन निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति से है, जिसका अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व एवं अविच्छिन्न उत्तराधिकार होता है साधारणतः ऐसी कम्पनी का निर्माण किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए होता है और जिसकी एक सार्वमुद्रा होती है ।

1.4 आवश्यकता

इस अधिनियम की आवश्यकता कम्पनियों के प्रबन्ध तथा उसके करने की विधियाँ में इस प्रकार सुधार करना है ताकि प्रवर्तकों, विनियोगियों तथा प्रबन्धकों में घनिष्ठ संबंध स्थापित हो सके, जिससे कम्पनियों के संगठन की कार्यक्षमता बढ़े, विनियोगियों के उचित अधिकारियों के साथ प्रबन्धकों की कार्यक्षमता मेल खा सके, लेनदारों, श्रमिकों तथा अन्य व्यक्तियों के हितों की उत्पादन तथा वितरण में पर्याप्त रक्षा हो सके ।

1) पब्लिक कम्पनियों के प्रबन्धकों से उनके कर्त्तव्यों का पालन कराना ।
2) लाभ के उस भाग पर नियन्त्रण करना जो प्रबन्धकों को उनकी सेवाओं के बदले में पारिश्रमिक के रूप में दिया जाता है और उनके उन व्यवहारों पर रोक लगाना, जिसके कारण उनके हितों तथा कर्त्तव्यों में विरोध होने की सम्भावना हो ।
3) संयुक्त स्कन्ध कम्पनी के निर्माण और प्रबन्ध पर सरकार का अधिक नियन्त्रण होना, ताकि कम्पनियों की राशियों को उस ओर जाने से रोका जा सके, जिससे राष्ट्र की उन्नति में बाधा पड़ती हो ।
4) प्रबन्ध में अंशधारियों का अधिक से अधिक नियन्त्रण करना ।
5) कम्पनी के चिट्ठे तथा लाभ-हानि खाते में सच्चा एवं उचित वर्णन देना ।
6) लेखाकर्म एवं अंकेक्षण के उच्च स्तर की स्थापना ।
7) कम्पनी के अनुसंधान का प्रबन्ध करना जबकि कम्पनी का प्रबन्धन बुरा हो या अल्पसंख्यक अंशधारियों को हानि पहुँचाने वाला हो ।
8) कम्पनी के प्रवर्तन और प्रबन्ध में अच्छे व्यवहार तथा ईमानदारी का स्तर लाना ।
9) अंशधारियों और लेनदारों के उचित हितों को मान्यता देना तथा प्रबन्धकों द्वारा उनके हितों को क्षति न पहुँचाना ।

10) कम्पनी के प्रबन्ध को एक बहुत बड़ी सीमा तक प्रजातंत्रीय ढंग पर लाना तथा इसके दोषों को दूर करना ।

11) देश की आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति में कम्पनियों का सहयोग प्राप्त करना ।

1.5 प्रकृति एवं क्षेत्र

इस अधिनियम की प्रकृति क्षेत्र इस प्रकार से है -

1) इस अधिनियम को 1 अप्रेल 1956 से सम्पूर्ण भारत पर लागू किया गया है । इसे भूतकालीन प्रभाव से लागू नहीं किया गया है ।
2) इस अधिनियम में 658 धाराएँ व 15 अनुसूचियाँ हैं जो 13 खण्डों में विभक्त हैं ।
3) यह अधिनियम उन सभी भारतीय कम्पनियों पर लागू किया गया है जिनका समामेलन इस अधिनियम अथवा इससे पूर्व के किसी भी कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ है ।
4) यह अधिनियम भारत के बाहर समामेलित होने वाली उन कम्पनियों पर भी लागू किया गया है जिनका भारत में कारोबार का स्थान है ।
5) यदि भारतीय प्रथाओं, परम्पराओं तथा परिस्थितियों के प्रतिकूल नहीं है तो अंग्रेजी कानून के अनुसार ही भारतीय कम्पनी अधिनियम का अर्थ लगाया जाता है । अंग्रेजी न्यायालयों का संदर्भ भी दिया जा सकता है ।
6) यह अधिनियम बीमा, बैंकिंग, यातायात तथा विद्युत कम्पनियों पर भी लागू होता है जबकि इनके नियमन करने वाले अधिनियमों में कोई प्रतिकूल व्यवस्था न की गई हो ।
7) इस अधिनियम के अन्तर्गत समामेलित कम्पनियों की ओर से किये गये अनुबन्धों पर भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, वस्तु विक्रय अधिनियम, विनिमय साध्य विलेख अधिनियम आदि ठीक उसी प्रकार से लागू होते हैं इस प्रकार वे किसी अन्य व्यक्ति अथवा संस्था पर लागू होते हैं ।

उपयुक्त अधिनियम सन् 1956 से लागू है जिसमें अनेक बार अनेक प्रकार से संशोधन व परिवर्तन किये गये हैं । इसके स्थान पर अब नये अधिनियम की आवश्यकता गंभीरता से सन् 1997 से ही अनुभव की जा रही है । 1 अप्रेल 2003 से लागू कम्पनी विधेयक 2002 में कम्पनी विधान मण्डल की शक्तियों को समाप्त करके राष्ट्रीय कम्पनी विधान न्यायाधिकरण बनाने का प्रावधान किया गया है । इस ट्रिब्यूनल को विधान मण्डल एवं न्यायालय से सम्बन्धित विस्तृत अधिकार प्रदान किये गये है ।

1.6 प्रकार

कम्पनी के निम्नलिखित प्रकार है ।

1) **शाही अधिकार-पत्र द्वारा समामेलित कम्पनियाँ** - सर्वप्रथम कम्पनियों की स्थापना शाही अधिकार पत्र द्वारा ही हुयी थी । ऐसी कम्पनियों का आशय उन कम्पनियों से है, जिनकी स्थापना किसी शाही फरमान अथवा बादशाह अथवा किसी प्रभुसत्ताधारी की विशेष आज्ञा से हुई हो । इन्हें चार्टर्ड कम्पनियाँ भी कहते है । इंग्लैण्ड में ऐसी कई कम्पनियों की स्थापना की गयी थी ।

   विशेषताएँ: शाही अधिकार पत्र द्वारा समामेलित कम्पनियों की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं

1. इन कम्पनियों की स्थापना सरकार द्वारा प्रदान किये गये चार्टर के अन्तर्गत की जाती है ।
2. चार्टर एक निश्चित अवधि के लिए प्रदान किया जाता है, इस अवधि के समाप्त होने पर चार्टर का नवीनीकरण कर दिया जाता है; यदि नवीनीकरण नहीं किया जाता है तो कम्पनी बंद हो जाती है ।
3. इन कम्पनियों की स्थापना किसी विशेष उद्देश्य के लिए की जाती है जैसे शासन करना, सेना की शक्ति में वृद्धि करना ।
4. कम्पनी के सदस्य, कम्पनी के ऋणों के लिए उत्तरदायी नहीं होते ।
5. इनके अधिकार अत्यन्त विस्तृत होते हैं ।

   उदाहरणार्थ - ईस्ट इंडिया कम्पनी

   `हुसेन बी.कम्पनी

2) **संसद के विशेष अधिनियम के अन्तर्गत समामेलित कम्पनियाँ** - संसद के विशेष अधिनियम द्वारा समामेलित कम्पनियों का आशय ऐसी कम्पनियों से है जिसकी स्थापना राष्ट्रीय महत्व, राष्ट्रीय सुरक्षा की वस्तुओं का उत्पादन करने एवं सार्वजनिक हित जैसे कार्यो को करने के उद्देश्य से देश की संसद अथवा किसी राज्य की विधानसभा में विशेष अधिनियम पारित करके की जाती है । इन्हें वैधानिक कम्पनियाँ और भारत में निगम कम्पनियों भी कहते है ।

उदाहरणार्थ -

1. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया
2. जीवन बीमा निगम
3. औद्योगिक विकास बैंक
4. स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया
5. औद्योगिक वित्त निगम

विशेषताएँ :

1. इन कम्पनियों का भी पृथक अस्तित्व होता है ।
2. ऐसी कम्पनियों के हिसाब-किताब की जांच भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परिक्षक के नियंत्रण एवं देख-रेख में होती है ।
3. इन कम्पनियों के अंशों का क्रय-विक्रय स्टाक एक्सचेंज में नहीं होता है ।
4. इन कम्पनियों के अधिकार सीमित होने के कारण ये अपने कोष का प्रयोग अन्य कार्यो के लिए नहीं कर सकती है चाहे वे लाभप्रद ही क्यों न हों ।
5. ऐसी कम्पनियों को अपना पार्षद सीमा नियम तैयार नहीं करना पड़ता है, क्योंकि इनके उद्देश्य अधिकार, कार्य क्षेत्र, पूँजी आदि का उल्लेख संबंधित अधिनियम में किया जाता है।
6. इसके अन्तर्गत केवल ऐसी कम्पनियों की स्थापना की जाती है जिनका राष्ट्रीय दृष्टि से विशेष महत्व है अथवा कुछ विशेष सार्वजनिक उपक्रमों को चलाने के लिए जिनकी स्थापना आवश्यक है| जैसे - रेल, गैस, वितरण आदि ।

7. ऐसी कम्पनियों की स्थापना उस देश की संसद अथवा विधान सभाओं द्वारा पारित विशेष अधिनियमों द्वारा की जाती है ।

प्रचलन : संसद के विशेष अधिनियम द्वारा समामेलित कम्पनियों का प्रचलन भारत में पहले बहुत कम था । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इन कम्पनियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है लेकिन धीमी गति से ।

3) **कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत समामेलित कम्पनियाँ** - ऐसी कम्पनियाँ जिनका समामेलन अथवा रजिस्ट्रेशन प्रत्येक देश के कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत किया जाता है । ऐसी कम्पनियों को समामेलित एवं रजिस्टर्ड कम्पनियों के नाम से भी पुकारा जाता है ।

भारतीय कम्पनी अधिनियम की धारा 216 के अनुसार भारत में वैधानिक कम्पनियों को छोड़कर शेष सभी कम्पनियाँ कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत समामेलित की जाती है ।

कुछ कम्पनियों का पंजीयन यद्यपि कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत होता है, किन्तु उसके लिए पृथक से अधिनियम बने हुए हैं । इस प्रकार वे दो अधिनियमों से शासित होती हैं - भारतीय कम्पनी अधिनियम एवं संबंधित विशिष्ट अधिनियम ।

उदाहरणार्थ -

1. बैंकिंग कम्पनियों के लिए भारतीय बैंकिंग अधिनियम, 1949
2. विद्युत कम्पनियों के लिए विद्युत पूर्ति अधिनियम, 1948
3. बीमा कम्पनियों के लिए बीमा अधिनियम, 1938

(अ) असीमित दायित्व वाली कम्पनियाँ - ऐसी कम्पनियाँ जिनके सदस्यों का दायित्व उनके अंशदान तक ही सीमित नहीं होता है अपितु सदस्यों की व्यक्तिगत एवं निजी सम्पत्तियों को भी कम्पनियों के दायित्वों एवं ऋणों के भुगतान करने के काम में लिया जा सकता है । भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा, 12(2) (स) 1 के अनुसार "यदि कम्पनी के सदस्यों का दायित्व सीमित नहीं होता है तो वह असीमित दायित्व वाली कम्पनी पुकारी जाती है । "

विशेषताएँ :

क. इन कम्पनियों का समामेलन भारतीय कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत होता है।

ख. इस प्रकार की कम्पनी को भी अपने स्वयं के पार्षद सीमा नियम एवं पार्षद अन्तर्नियम बनाने पड़ते हैं एवं कम्पनियों के रजिस्ट्रार के यहाँ फाइल करने पड़ते हैं ।

ग. असीमित दायित्व वाली कम्पनी की दशा में यदि वह सार्वजनिक कम्पनी है तो कम से कम सात सदस्य और निजी कम्पनी की दशा में न्यूनतम दो सदस्य अवश्य होने चाहिये ।

घ. असीमित दायित्व वाली कम्पनियाँ अंश पूँजी सहित अथवा अंश पूँजी रहित हो सकती है ।

ङ. ऐसी कम्पनियों को कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ वार्षिक रिटर्न प्रतिवर्ष फाइल करनी पड़ती है ।

च. ऐसी कम्पनियाँ अपने अंशों को स्वयं खरीद सकती हैं ।

छ. ऐसी कम्पनियाँ प्रायः दो परिस्थितियों में स्थापित की जाती है -

1. जबकि बहुत अधिक दायित्व उत्पन्न होने की कोई संभावना नहीं हो ।
2. समामेलन के लाभ प्राप्त करने की इच्छा हो ।

ज. सदस्यों का दायित्व कम्पनी के समापन पर उदय होता है ।

झ. असीमित दायित्व वाली कम्पनी -

1. अंश-पूजी वाली अथवा बिना अंश-पूंजी वाली ।
2. सार्वजनिक अथवा निजी हो सकती है ।

ञ. असीमित दायित्व वाली कम्पनी को सीमित दायित्व वाली कम्पनी में, यदि असीमित दायित्व वाली कम्पनी के सदस्य आवश्यक समझे तो परिवर्तन भी किया जा सकता है ।

(ब). अंशों द्वारा सीमित कम्पनियाँ - सामान्यत: अंशों द्वारा सीमित कम्पनियों का आशय ऐसी कम्पनियों से है जिनमें सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा क्रय किये गये अंशों के अंकित मूल्य तक सीमित होता है ।

"अंशों द्वारा सीमित कम्पनी वह है जिसके प्रत्येक सदस्य का दायित्व पार्षद सीमा नियम के अनुसार उस राशि तक सीमित है, जो उसके द्वारा ग्रहण किये गये क्रमिक अंशों पर अदत्त हों"

भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956

राजकीय स्वामित्व के अन्तर्गत निर्मित होने वाली जितनी भी सरकारी कम्पनियाँ है, वे भी: अंशों द्वारा सीमित कम्पनियाँ ही होती है ।

"जिनकी पूँजी निश्चित राशि के अंशों में विभक्त होती है तथा जिनमें, प्रत्येक अंशधारी का दायित्व उसके द्वारा लिये गये अंशों के अंकित मूल्य तक ही सीमित होता है । "

अंशों द्वारा सीमित कम्पनियाँ दो प्रकार की हो सकती हैं -

सार्वजनिक कम्पनी के नाम के अंत में 'लिमिटेड' एवं निजी कम्पनी के नाम के अंत में 'प्राइवेट लिमिटेड' लिखा जाना चाहिये ।

(स) गारन्टी द्वारा सीमित कम्पनियाँ – गारन्टी द्वारा सीमित कम्पनियों का आशय ऐसी कम्पनियों से है, जिनके सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा दी गयी गारन्टी की राशि की सीमा तक सीमित होता है । परन्तु ऐसी गारन्टी की राशि कम्पनी के समापन के पूर्व नहीं माँगी जा सकती है ।

गारन्टी द्वारा कम्पनियों की स्थापना का उद्देश्य लाभ कमाना तथा लाभांश को अपने सदस्यों में वितरण करना नहीं होता है, अपितु अव्यापारिक उद्देश्यों एवं अन्य हितकारी कार्यो को प्रोत्साहित करना होता है । उदाहरणार्थ -

- ट्रेड एसोसिएशन
- खेलकूद संघ ।

विशेषताएँ:

1. कम्पनी के समापन के समय ऋणों व समापन व्ययों के भुगतान के लिए, यदि कम्पनी की सम्पत्तियाँ कम पड़ती हैं तो प्रत्येक सदस्य एक निश्चित राशि तक अनुदान करेंगे ।

2. ऐसी कम्पनियों के पार्षद सीमा नियम में प्रत्येक सदस्य द्वारा गारण्टी की गई राशि का उल्लेख करना आवश्यक है ।
3. इन कम्पनियों की स्थापना का उद्देश्य लाभ कमाना अथवा लाभांश का अपने सदस्यों में वितरण करना नहीं होता है ।
4. अंश पूँजी की दृष्टि से ये कम्पनियाँ दो प्रकार की हो सकती हैं - अंश-पूँजी सहित और अंश-पूँजी रहित ।
5. सीमित दायित्व वाली कम्पनी के सभी अधिकार इन्हें समामेलन के ठीक पश्चात् प्राप्त हो जाते हैं ।
6. गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी को अपने स्वयं के अंश खरीदने की स्वतंत्रता नहीं होती है।
7. यदि कम्पनी का समापन उसकी सदस्यता के समय अथवा सदस्यता त्यागने के एक वर्ष के भीतर होता है तब तो उसका दायित्व उत्पन्न होता है, अन्यथा नहीं ।
8. सीमित दायित्व वाली कम्पनी के सभी अधिकार इन्हें समामेलन के ठीक पश्चात् प्राप्त हो सकते हैं ।
9. प्रत्याभूति द्वारा सीमित कम्पनियाँ अपनी प्रारम्भिक कार्यशील पूँजी अपने सदस्यों से प्राप्त नहीं करती है, वरन् अन्य साधनों से अपनी पूँजी एकत्रित करती है ।

(I) **सार्वजनिक कम्पनी** - कम्पनी संशोधित अधिनियम, 2000 की धारा 3(i) (iv) के अनुसार सार्वजनिक कम्पनी से आशय:

   i) जो एक निजी कम्पनी नहीं हो,
   ii) जिसकी न्यूनतम प्रदत्त पूँजी 5 लाख रूपये अथवा अधिक राशि की निर्धारित की गयी हो अथवा
   iii) जो एक ऐसी निजी कम्पनी है जो किसी निजी कम्पनी की सहायक निजी नहीं है ।
   iv) इसकी स्थापना के लिए न्यूनतम 7 अभिदाताओं (सदस्यो) की आवश्यकता होती है ।

(II) **निजी कम्पनियाँ** - कम्पनी संशोधित अधिनियम 2000 की व्यवस्था के अनुसार निजी कम्पनी से आशय एक ऐसी कम्पनी से है जिसकी न्यूनतम प्रदत्त पूँजी 1 लाख रूपये अथवा अधिक राशि की निर्धारित की गई है तथा जो अपने पार्षद अन्तर्नियम द्वारा -

i) अंश हस्तान्तरण के अधिकार पर प्रतिबन्ध लगाती हे, यदि कोई हो,
ii) अपने सदस्यों की संख्या 50 तक सीमित रखती है लेकिन इसमें निम्नलिखित शामिल नहीं होते है-
   (क) कम्पनी के कर्मचारी
   (ख) कम्पनी अपने अंशों तथा ऋणपत्रों के विक्रय के लिए जनता को आमन्त्रित करने एवं स्वीकार करने पर निरोध लगाती है ।
iii) अपने सदस्यों, संचालकों एवं इनके रिश्तेदारों के अलावा अन्य व्यक्तियों से जमाएँ आमंत्रित करने या स्वीकार करने पर प्रतिबन्ध लगती है |
iv) कम्पनी के अंशों तथा ऋण-पत्रों के क्रय करने के लिए जनता को आमंत्रित करने पर प्रतिबन्ध लगाती है ।

यदि दो या अधिक व्यक्ति संयुक्त रूप से कम्पनी के एक अथवा अधिक अंशों को लेते हैं तो सदस्यों की गणना के लिए एक ही सदस्य माने जायेंगे । ऐसी कम्पनी मे सदस्यों की न्यूनतम संख्या दो है ।

(III) अन्य कम्पनियाँ -

i) **सरकारी कम्पनी:** "सरकारी कम्पनी का आशय एक ऐसी कम्पनी से है जिसकी प्रदत्त अंश पूँजी के कम से कम 51 प्रतिशत भाग केन्द्रीय सरकार अथवा अंशतः केन्द्रीय और अंशतः एक या अधिक राज्य सरकारों के अधिकार में हो । सरकारी कम्पनी के आशय के अन्तर्गत ऐसी कम्पनी को भी सम्मिलित किया जाता है जो कि सरकारी कम्पनी की सहायक है ।"

सरकारी कम्पनी के संबंध में प्रमुख प्रावधान:

a. सरकारी कम्पनी के लिए अंकेक्षकों की नियुक्ति भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक की सलाह पर भारत सरकार द्वारा की जाती है ।
b. अंकेक्षण के पश्चात् अंकेक्षक अपना प्रतिवेदन भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक को प्रस्तुत करेगा ।
c. सरकारी कम्पनी के वार्षिक खाते अंकेक्षण के प्रतिवेदन के साथ संसद के दोनों सदनों अथवा संबंधित विधानसभा में प्रस्तुत करने होते हैं ।

क्या एक विदेशी कम्पनी, सरकारी कम्पनी हो सकती? यदि एक विदेशी कम्पनी (जिसका पंजीयन किसी अन्य देश में हुआ है) भारत में व्यापार करती है और यहाँ की सरकार ने उस विदेशी कम्पनी को 51 प्रतिशत या अधिक अंश ले रखे हों तो ऐसी कम्पनी सरकारी कम्पनी की श्रेणी में आ जायेगी ।

सरकारी कम्पनियों का अंकेक्षण :

1. **अंकेक्षक की नियुक्ति:** सरकारी कम्पनी के अंकेक्षक की नियुक्ति भारत के लेखा नियंत्रक तथा महालेखा परीक्षक के द्वारा की जाती है । ऐसा अंकेक्षक अधिक से अधिक 20 कम्पनियों के लिए नियुक्त किया जा सकता है ।
2. **पूरक अथवा परीक्षण जाँच:** महालेखा परीक्षक को यह अधिकार होता है कि वह ऐसी सरकारी कम्पनी की लेखा - पुस्तकों की पूरक अथवा परीक्षण जांच ऐसे व्यक्तियों द्वारा करवाए जिन्हें वह इस कार्य के लिए अधिकृत करें ।
3. **अंकेक्षण की विधि निश्चित करना:** महालेखा - परीक्षक को अधिकार है कि वह ऐसे नियुक्त अंकेक्षक को ऐसी कम्पनी के लेखा-पुस्तकों के अंकेक्षण की विधि के सम्बन्ध में आवश्यक निर्देश दें तथा वह ऐसे अन्य निर्देश भी दे सकता है जो उनके कार्य पालन में सहायक हो ।
4. **अंकेक्षण द्वारा अंकेक्षण रिपोर्ट भेजना:** अंकेक्षक द्वारा कम्पनी की लेखा पुस्तकों का अंकेक्षण कार्य करने के पश्चात् अंकेक्षक अंकेक्षण रिपोर्ट को महालेखा परीक्षक के पास भेजता है जिसे इस रिपोर्ट पर टिप्पणी करने अथवा आलोचना करने का अधिकार है ।
5. **संसद अथवा विधान सभा में प्रस्तुत:** सरकारी कम्पनी के खातों को अंकेक्षित रिपोर्ट संबंधित राज्य की विधान सभा में तथा भारतीय संसद में प्रस्तुत करनी होती है ।

कम्पनी अधिनियम का लागू होना - सरकारी कम्पनी का पंजीयन कम्पनी अधिनियम, 1956 के अधीन कराया जा सकता है | ये सरकारी कम्पनियाँ - सार्वजनिक अथवा निजी - किसी भी प्रकार की हो सकती हैं ।

केन्द्रीय सरकार को अधिकार है कि सरकारी गजट में अधिसूचना देकर आदेश दे सकती है कि कम्पनी अधिनियम की कुछ धाराओं (धाराएँ 619 एवं 619 ए) के अतिरिक्त शेष सम्बन्धित समस्त धाराएँ अथवा कुछ धाराएँ सरकारी कम्पनियों पर लागू नहीं होंगी अथवा कुछ संशोधन के साथ लागू होंगी । इस प्रकार के आदेश को दोनों सदनों द्वारा पास करना अनिवार्य है, अन्यथा यह क्रियाशील नहीं हो सकता है ।

ii) **विदेशी कम्पनी:** ऐसी कम्पनी जिनका समामलेन या रजिस्ट्रेशन भारत के बाहर किसी दूसरे देश के विधान के अनुसार हुआ है । भारतीय कम्पनी अधिनियम के अनुसार विदेशी कम्पनियों को दो वर्गो मे विभक्त कर सकते हैं:

a. ऐसी कम्पनियाँ जो इस अधिनियम के शुरू होने के पश्चात् भारत में अपने व्यापार का स्थान स्थापित करती है ।
b. ऐसी कम्पनियाँ जिन्होंने इस अधिनियम के शुरू होने से पूर्व, भारत में अपने व्यापार का स्थान स्थापित कर लिया है ओर इस अधिनियम के पश्चात् भी ऐसे स्थान को स्थापित रखती है|

विदेशी कम्पनी के लेखे :-

1. प्रत्येक वर्ष विदेशी कम्पनी को अपना चिट्ठा तथा लाभ-हानि खाता बनाना होगा, जो उसे इस अधिनियम के अधीन बनाने पड़ते । रजिस्ट्रार को तीन प्रतिलिपियाँ देनी होती हैं ।
2. कम्पनी के भारत व्यापार का अलग चिट्ठा तथा लाभ-हानि खाता बनाना होगा और इसे कम्पनी के विश्व-भर के व्यापार के लेखों की एक प्रतिलिपि के साथ रजिस्ट्रार को देना होगा ।

विदेशी कम्पनी पर आर्थिक दण्ड: यदि कोई विदेशी कम्पनी व्यवस्थाओं का पालन करने में गलती करती है तो कम्पनी तथा कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी अथवा दोषी एजेन्ट पर अधिक से अधिक 10000 - रूपये तक का आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है तथा लगातार गलती की अवधि से 1000 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से अतिरिक्त आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है ।

iii) **निष्क्रिय कम्पनी:** निष्क्रिय कम्पनी का आशय ऐसी कम्पनी से है जिसका समामलेन कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ तो है लेकिन अब व्यापार नहीं कर रही है अथवा अब व्यापार करना बंद कर दिया है । कम्पनी संशोधन अधिनियम, 2000 के अनुसार कोई विद्यमान निजी अथवा सार्वजनिक कम्पनी के द्वारा निर्धारित समय में निर्धारित न्यूनतम पूँजी नहीं बढ़ाई जाती है तो वह कम्पनी भी निष्क्रिय कम्पनी मानी जायेगी ।

ऐसी कम्पनी के नाम को रजिस्ट्रार रजिस्टर से हटा सकता है, यदि उसे यह विश्वास हो जाये कि कम्पनी निष्क्रिय है । इसके लिए रजिस्ट्रार प्रायः निम्नलिखित कार्यवाही कर सकता है

1. साधारण डाक से पत्र भेजना जिससे यह पता लगा सके कि कम्पनी कार्य कर रही है अथवा निष्क्रिय हो गयी है ।

2. साधारण डाक से पत्र भेजने पर 1 माह में कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता है तो उसे पहले वाले पत्र का संदर्भ देते हुए रजिस्टर्ड डाक से स्मरण पत्र भेजा जाता है । जिसमें यह लिख दिया जाता है कि 1 माह में उत्तर प्राप्त नहीं हुआ तो कम्पनी का नाम रजिस्टर से हटाने के लिए आवश्यक कार्यवाही की जायेगी तथा सरकारी राजपत्र में सूचना प्रकाशित कर दी जायेगी ।
3. कार्य बंद करने की सूचना प्राप्त हो जाती है या दूसरे पत्र का कोई उत्तर नहीं मिलता है तो सरकारी राजपत्र में निष्क्रिय होने की सूचना प्रकाशित करवा दी जाती है तथा नोटिस की तिथि के 3 महीने के बाद कम्पनी का नाम रजिस्टर से हटा दिया जायेगा और कम्पनी समाप्त हो जायेगी |

iv. **पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर:** पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर कम्पनियाँ दो प्रकार की होती हैं :-

1. सहायक कम्पनी
2. सूत्रधारी कम्पनी

1. **सहायक कम्पनी:** कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 4(1) के अनुसार एक कम्पनी निम्नलिखित दशाओं में, किसी अन्य कम्पनी की सहायक कम्पनी कहलाएगी, यदि दूसरी कम्पनी (अर्थात् सूत्रधारी कम्पनी) -
   क. इस कम्पनी (सहायक कम्पनी) के संचालक-मण्डल के गठन पर नियंत्रण रखती हो; या
   ख. दूसरी कम्पनी (सूत्रधारी कम्पनी) ने उसकी साधरण अंश-पूँजी के पचास प्रतिशत से अधिक अंश धारण कर रखे हों, किन्तु यदि एक कम्पनी के पास दूसरी कम्पनी के अंश जमानत के रूप में रखे गये हों तो उन्हें इस अभिप्राय के लिए अंश धारण नहीं माना जायेगा ।
   ग. यदि वह किसी ऐसी कम्पनी की सहायक कम्पनी है जो कि सूत्रधारी कम्पनी की सहायक हो ।

   उदाहरण : राम और श्याम दो कम्पनियाँ हैं । राम कम्पनी के पास श्याम कम्पनी की साधारण अंश पूंजी के अंकित मूल्य के आधे से अधिक अंश हैं जो इस उदाहरण में राम सूत्रधारी कम्पनी है और श्याम उसकी सहायक कम्पनी है ।

   यदि श्याम कम्पनी राम कम्पनी की सहायक है और सोहन कम्पनी श्याम कम्पनी की सहायक है तो सोहन कम्पनी राम कम्पनी की भी सहायक है । यदि मोहन कम्पनी सोहन कम्पनी की सहायक है तो मोहन कम्पनी श्याम कम्पनी की सहायक कम्पनी है और राम कम्पनी की भी सहायक कम्पनी होंगी ।
2. **सूत्रधारी कम्पनी :** "एक कम्पनी को दूसरी कम्पनी की सूत्रधारी कम्पनी तभी माना जायेगा जबकि वह दूसरी कम्पनी उसकी सहायक हो ।" राजनियम में सूत्रधारी कम्पनी का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है । सूत्रधारी कम्पनी केवल उस दिशा में हो सकती है जबकि उसकी एक अथवा अधिक सहायक कम्पनियाँ हों ।

   विशेषताएँ :

1. सूत्रधारी कम्पनी तथा सहायक कम्पनी दोनों ही अलग-अलग होती हैं, दोनों का ही पृथक-पृथक समामेलन होता है । पृथक-पृथक सम्पत्तियों व देनदारियों होती हैं ।
2. सूत्रधारी कम्पनी एवं सहायक कम्पनी दो अथवा दो से अधिक कम्पनियों के मध्य सम्बन्धों को बतलाती है ।
3. सूत्रधारी कम्पनी के पास सहायक कम्पनी के कम-से-कम 51 प्रतिशत अथवा अधिक अंश होना आवश्यक है ।
4. सूत्रधारी कम्पनी का सहायक कम्पनी के बिना अपना कोई अस्तित्व नहीं होता ।

सूत्रधारी कम्पनी की सदस्यता: एक सहायक कम्पनी अपनी सूत्रधारी कम्पनी की सदस्य नहीं बन सकती है । यदि किसी सूत्रधारी ने अपनी सहायक कम्पनी के लिए अंशों का हस्तान्तरण अथवा आवंटन कर दिया है, तो वह व्यर्थ माना जायेगा ।

अपवाद :

1. सहायक कम्पनी सूत्रधारी कम्पनी के मृतक सदस्य के वैधानिक प्रतिनिधि के रूप में हो; अथवा
2. यदि सहायक कम्पनी ट्रस्टी के रूप में हो, जब तक कि सूत्रधारी कम्पनी अथवा उसकी सहायक कम्पनी का ट्रस्ट के अन्तर्गत लाभकारी हित न हो तथा केवल प्रतिभूति में इतना हित न हो ।

सूत्रधारी कम्पनी का हिसाब विवरण: सूत्रधारी कम्पनी के चिट्ठे तथा हानि-लाभ खाते समूह-खाता के रूप में प्रस्तुत किये जाने चाहिये जिनमें सम्पूर्ण समूह की स्थिति का विवरण स्पष्ट रूप से होना चाहिये । प्रत्येक सहायक कम्पनी से खातों में इस कम्पनी का एवं समूह की अन्य कम्पनियों के साथ ऋण की स्पष्ट स्थिति बतलानी चाहिये ।

यदि सूत्रधारी कम्पनी को प्रविवरण अथवा स्थानापन्न प्रविवरण के निर्गमन की आवश्यकता पड़े तो सहायक कम्पनियों की सम्पत्ति, दायित्व, लाभ अथवा हानि के सम्बन्ध में रिपोर्ट साथ में संलग्न होनी चाहिये ।

v) **अवैध संघ:** कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत जिनका रजिस्ट्रेशन न कराया गया हो तथा ऐसा संघ निम्नलिखित में से किसी भी एक अवस्था में हो, अवैध संघ के नाम से जाने जाते हैं ।

a. बैंकिंग व्यापार करने की अवस्था में 10 से अधिक व्यक्तियों की वह संस्था हो, अथवा

b. अन्य प्रकार का व्यापार करने की दशा में उसमें 20 से अधिक व्यक्ति साझेदार हों ।

ऐसी संस्था के सदस्य अनुबन्ध करने की दृष्टि से सक्षम वास्तविक मानव अथवा वैधानिक कृत्रिम व्यक्ति दोनों ही हो सकते हैं । 20 से अधिक सदस्यों का संयुक्त हिन्दू परिवार जो अपना वंशगत व्यापार एक कर्ता के माध्यम से संचालित करते हैं - एक व्यक्ति माना जाता है और ऐसे व्यक्ति पर अवैध संघ संबंधी प्रावधान लागू नहीं होते हैं। कम्पनी अधिनियम की धारा 11 उन संस्थानों पर भी लागू नहीं होती है, जिनकी स्थापना लाभार्जन के उद्देश्य से न की गयी हो । साहित्य, धर्म आदि कार्यो को प्रोत्साहित करने के लिए बनायी गयी संस्थाएँ लाभार्जन हेतु स्थापित संस्थाएँ नहीं मानी जाती हैं ।

vi) **अलाभकर कम्पनियाँ :** वाणिज्य, कला, विज्ञान, धर्म, पुण्यार्थ या अन्य उपयोगी उद्देश्यों के उत्थान के लिए सीमित कम्पनी के रूप में किसी संघ का गठन किया जाना है ओर ऐसी कम्पनी का इरादा, इसके लाभ या आय को उसके उद्देश्यों के उत्थान के लिए प्रयोग करना है और इसके किसी भी सदस्य को कोई लाभांश का भुगतान करना वर्जित है, ऐसी परिस्थितियों में केन्द्र सरकार लाईसेंस देकर निर्देश दे सकती है कि ऐसे संघ को इसके नाम के साथ 'सीमित' या 'निजी सीमित' शब्द का उपयोग किए बिना, सीमित दायित्व वाली कम्पनी के रूप में पंजीकृत किया जा सकता है । अतएव, संघ का पंजीकरण तदनुसार किया जा सकता है । पंजीकरण होने पर (धारा 25 के उपबन्धों के अधीन) इसे वैसे ही विशेषाधिकार और दायित्व प्राप्त होंगे जैसे सीमित कम्पनी को प्राप्त होते हैं । केन्द्र सरकार किसी भी समय इस लाइसेंस को रह कर सकती है और इस प्रकार लाइसेंस रद्द किये जाने पर रजिस्ट्रार अपने रजिस्टर में कम्पनी के नाम के साथ सीमित' या 'निजी सीमित' शब्द जोड़ देगा । परन्तु लाइसेंस रह किए जाने से पहले केन्द्र सरकार को लाईसेंस रह करने के अपने इरादे की लिखित सूचना अवश्य देनी चाहिए और इस विषय पर कम्पनी को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिये ।

vii) **सार्वजनिक वित्तीय संस्थाएँ :** सार्वजनिक वित्तीय संस्था केवल ऐसी ही संस्था को घोषित किया जा सकता है :

a. जिसकी स्थापना किसी केन्द्रीय अधिनियम के अन्तर्गत हुई है ।
b. जिसकी प्रदत्त पूँजी का कम से कम 51 प्रतिशत भाग केन्द्रीय सरकार के हाथ में हो अथवा वह संस्था केन्द्रीय सरकार द्वारा नियंत्रित हो ।

उदाहरणार्थ :

क. **भारत का औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम लिमिटेड़ -** जिसका निर्माण एवं पंजीकरण भारतीय कम्पनी अधिनियम 1913 के अन्तर्गत हुआ है ।

ख. **भारत का जीवन बीमा निगम** - इसकी स्थापना जीवन बीमा निगम, 1956 के अन्तर्गत हुई है ।

ग. **भारत का औद्योगिक विकास बैंक** - इसकी स्थापना भारत के औद्योगिक विकास बैंक अधिनियम 1964 के अन्तर्गत हुई है ।

1.7 अन्य विषयों से सम्बन्ध

एकल व्यक्ति कम्पनी (one man company)

कभी-कभी कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों का इस प्रकार प्रयोग किया जाता है कि कोई एक व्यक्ति कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी की स्थापना कर लेता है तथा सीमित दायित्व का लाभ उठाने लगता है । ऐसा करने के लिए एकल व्यवसाय का स्वामी अथवा सार्वजनिक कम्पनी में अन्य कोई व्यक्ति किन्हीं 6 व्यक्तियों को अथवा निजी कम्पनी की स्थापना कर लेता है तथा सीमित दायित्व का लाभ उठाने लगता है । ऐसा करने के लिए एकल व्यवसाय का स्वामी अथवा सार्वजनिक कम्पनी में अन्य कोई व्यक्ति किन्हीं 6 व्यक्तियों को अथवा निजी कम्पनी की दशा में किसी एक व्यक्ति को

अपने साथ अपनी कठपुतली के रूप में मिला लेता है । ऐसे व्यक्ति प्रायः उस व्यक्ति के मित्र-रिश्तेदार के रूप मे ही होते हैं । ये व्यक्ति कम्पनी का पार्षद सीमा नियम बनाते हैं उस पर हस्ताक्षर करते हैं तथा कम्पनी के अंशों में अपना विनियोग भी करते हैं । एकाकी व्यवसाय का स्वामी प्रायः समस्त अंश ले लेता है और शेष अन्य सदस्य औपचारिकता पूरी करने की दृष्टि से एक-एक अंश क्रय कर लेते हैं । परिणामस्वरूप अन्य व्यक्ति कम अंशों के कारण कम्पनी के कार्यो में अपनी मर्जी का प्रयोग करने की क्षमता नहीं रखते हैं । इस प्रकार वह प्रमुख एक व्यक्ति ही समस्त कारोबार का स्वामी एवं अधिकांश पूंजी का धारक होने की वजह से इसे एकल व्यक्ति कम्पनी के नाम से पुकारा जाता है । इस प्रकार की कम्पनी में वह कारोबार को अपने हाथ में नियंत्रित रखता है तथा सीमित दायित्व का लाभ उठाकर उस व्यवसाय को कम्पनी के रूप में चलाता है ।

कम्पनी का पर्दा उठाना या उसे बेनकाब करना (lifting or piercing the corporate veil)

"पृथक वैधानिक अस्तित्व" का सिद्धान्त एक प्रभावी तथ्य है जिसकी पुष्टि उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट शब्दों में होती है । वस्तुतः कम्पनी तथा इसके सदस्यों के बीच एक पर्दा है जो दोनों को अलग-अलग करता है किन्तु जब कम्पनी के सदस्य / संचालक कपटपूर्ण कार्य करते हैं, अथवा राष्ट्रहितों की अवहेलना करते हैं, अथवा ऋणदाताओं के वैधानिक हितों के साथ खिलवाड़ करते हैं अथवा लोकनीति एवं न्याय के विरूद्ध कोई कार्य करते हैं तब न्यायालय को यह अधिकार होता है कि वह कम्पनी के पृथक वैधानिक अस्तित्व को स्वीकार न करें तथा ऐसे दोषी सदस्य / संचालकों को कम्पनी कार्यो के लिए व्यक्तिगत रूप से दोषी ठहरा कर दण्डित करें, ऐसा करना सामान्य हितों को संरक्षण प्रदान करना है । इसे ही कम्पनी का पर्दा उठाना या उसे बेनकाब करना कहा जा सकता है । ऐसा करते समय न्यायालय कम्पनी के पृथक अस्तित्व को भूलकर उसके सदस्यों / संचालकों को ही कम्पनी के रूप में मानने लगता है । इस प्रकार के अधिकार का प्रयोग न्यायालय का विवेचनात्मक अधिकार है । इसका उपयोग करना या न करना उसके विवेक पर निर्भर करता है ।

परिस्थितियाँ :

सामान्यत: न्यायालय निम्नलिखित नकारात्मक परिस्थितियों में ऐसी कार्यवाही करता है:

1) सदस्य संख्या में अवैधानिक परिवर्तन की दशा में ।
2) कपटपूर्ण व्यवहारों की दशा में ।
3) कर दायित्वों का भुगतान न करने की दशा में ।
4) अधिकार सीमा के बाहर कार्य करने की दशा में ।
5) दायित्व निर्धारण संबंधी मामलों में ।
6) वैधानिक दायित्वों के समुचित निर्वाह न करने की दशा में ।
7) प्रपत्रों में व्यक्तिगत हस्ताक्षर करने की दशा में ।
8) स्वामित्व की जांच की दशा में ।
9) जांच एवं निरीक्षण की कार्यवाही को सरल करने की दशा में ।

10) वैधानिक दायित्वों से बचने के लिए बनायी गयी कम्पनी की दशा में ।

11) कम्पनी के एजेन्ट या प्रन्यासी के रूप में कार्य करने की दशा में ।

12) कम्पनी के वास्तविक चरित्र के निर्धारण के लिए ।

13) सदस्यों 7 संचालकों को अधिकारों के दुरूपयोग की दशा में ।

इनके अतिरिक्त कुछ सकारात्मक परिस्थितियाँ भी हैं, जिनमें कभी-कभी न्यायालय पर्दा उठाने की कार्यवाही कर सकता है जैसे-

1) राजकीय कोषों एवं हितों के संरक्षण के लिए ।

2) कपट एवं अन्याययुक्त व्यवहारों की रोकथाम के लिए ।

3) सामाजिक एवं राष्ट्रीय हितों के संरक्षण के लिए ।

अत: निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि कम्पनी का समामेलन करवा लेने से सदस्य संचालक आदि ने सीमित दायित्व तथा पृथक वैधानिक व्यवस्थाओं तथा अपेक्षाओं के विपरीत कार्य किया अथवा करने का इरादा किया है तो उन्हें व्यक्तिगत रूप में असीमित दायित्व तथा अपने अस्तित्व का कम्पनी के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होने की बात को नकारने का कोई अधिकार नहीं होगा । इसके अतिरिक्त न्यायालय के विस्तृत अधिकार क्षेत्र से बच सकना भी कठिन हो जायेगा ।

साझेदारी एवं कम्पनी में अन्तर

	अन्तर का आधार	**साझेदारी फर्म**	**कम्पनी**
1.	**अधिनियम**	इस पर भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1982 लागू होता है ।	कम्पनी पर भारतीय अधिनियम 1956 लागू होता है ।
2.	**सदस्यों की संख्या**	साझेदारी में यदि बैंकिंग व्यवसाय है तो अधिकतम 10 तथा अन्य व्यवसायों में अधिकतम 20 सदस्य हो सकते है तथा न्यूनतम संख्या दोनों ही दशाओं में दो ही होती है ।	एक सार्वजनिक कम्पनी में न्यूनतम सदस्य संख्या 7 तथा अधिकतम संख्या पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है जबकि निजी कम्पनी में न्यूनतम संख्या 2 तथा अधिकतम संख्या 50 है ।
3.	**अनुबंध**	एक साझेदार अपनी साझेदारी फर्म से अनुबन्ध नहीं कर सकता है ।	एक अंशधारी अपनी कम्पनी के साथ अनुबन्ध कर सकता है ।
4.	**प्रलेख**	साझेदार प्रायः साझेदारी संलेख का निर्माण करते है ।	एक कम्पनी अपने लिये सीमानियम एवं प्रायः अन्तर्नियम बनाती है ।
5.	**दायित्व**	साझेदारी में प्रत्येक साझेदार का दायित्व असीमित होता है जब तक कि किसी साझेदार के दायित्व के सम्बन्ध में तय नहीं हो जाए । सीमित साझेदारी भारत में होती ही नहीं है ।	प्रायः कम्पनी के अंशधारियों का दायित्व सीमित होता है ।

6.	अंकेक्षण एवं लेखे	साझेदारी फर्म के लिए यह अनिवार्य है बशर्ते साझीदारी संलेख में लिखा हो, अन्यथा नहीं	एक कम्पनी को कम्पनी अधिनियम में दिए गए निर्देशानुसार खाते रखना तथा उनका अंकेक्षण करवाना अनिवार्य है ।
7.	प्रबन्ध	साझेदारी फर्म का प्रत्येक साझेदार साझेदारी के प्रबन्ध में प्रत्यक्ष रूप से भाग ले सकता है ।	कम्पनी का प्रबन्ध अंशधारियों द्वारा चुने हुए संचालको के द्वारा किया जाता है । अत : इसमें प्रजातान्त्रिक प्रबन्ध होता है ।

1.8 कम्पनी की विशेषताएँ

1) **विधान द्वारा कृत्रिम व्यक्ति:** कम्पनी विधान द्वारा निर्मित कृत्रिम, अदृश्य, काल्पनिक एवं अमूर्त व्यक्ति है । कम्पनी को विधान द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति इसलिए कहा जाता है कि एक ओर तो इसका जन्म अप्राकृतिक तरीके से होता है तथा दूसरी ओर प्राकृतिक व्यक्ति की तरह इसके अधिकार एवं दायित्व होते हैं ।

   किसी व्यापार आदि कार्यो में जितने अधिकारों का प्रयोग वास्तविक व्यक्ति कर सकता है और जितने उत्तरदायित्व एक वास्तविक व्यक्ति के होते हैं, उतने ही कम्पनी के भी होते है ।

2) **पृथक अस्तित्व:** कम्पनी की दूसरी विशेषता यह भी है कि इसका अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व होता है । जिस प्रकार साझेदारी में साझेदारी फर्म एवं साझेदारों का अस्तित्व एक ही माना जाता है, उसी प्रकार कम्पनी का अस्तित्व उसके सदस्यों से पृथक होता है। इसका कारण यह है कि कम्पनी स्वयं विधान द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति होने की वजह से कम्पनी द्वारा किये गये कार्यो के लिए कम्पनी स्वयं ही उत्तरदायी होती है और सदस्यों द्वारा किये गये कार्यो के लिए नहीं होती है ।

3) **शाश्वत (अविच्छिन्न) उत्तराधिकार:** "समामेलन की तिथि से ही कम्पनी शाश्वत उत्तराधिकार वाली हो जाती है ।"कम्पनी के अंश हस्तान्तरणीय होने के कारण, चाहे उसके सभी सदस्य अंशधारी भले ही क्यों न बदल जायें, कम्पनी का अस्तित्व यथावत बना रहता है ।

   कम्पनी के सदस्यों की मृत्यु पागलपन अथवा अंश-हस्तान्तरण जैसी घटनाएँ भी कम्पनी के अस्तित्व एवं उसके जीवन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकती । अपितु उसका मूल अस्तित्व यथावत बना रहता है ।

4) **सार्वमुद्रा:** सार्वमुद्रा मजबूत धातु पर इस प्रकार खुदी हुई मुद्रा है जिसमें कम्पनी का नाम लिखा होता है । जहां भी कम्पनी को हस्ताक्षर करने होते हैं, वहाँ कम्पनी के संचालक सार्वमुद्रा का प्रयोग करते हैं । सार्वमुद्रा **(common seal)** का प्रयोग किये बिना कम्पनी को किसी कार्य के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है । अत: हर कम्पनी के पास अपनी एक सार्वमुद्रा का होना अनिवार्य है ।

5) **लाभ के लिए ऐच्छिक पंजीकृत संघ:** कम्पनी व्यक्तियों का एक ऐच्छिक संघ है, जिसका मूल प्रयोजन लाभार्जन होता है । व्यक्ति स्वेच्छा से कम्पनी की सदस्यता स्वीकार करता

है, किसी के दबाव में आकर नहीं । लाभ के लिए बनाये गये ऐसे ऐच्छिक संघ का पंजीयन भी आवश्यक होता है । पंजीयन कंपनी विधान के अधीन करवाया जाता है ।

6) **लोकतांत्रिक प्रबन्ध:** कम्पनी स्वयं एक कृत्रिम व्यक्ति है, जो स्वयं अपना प्रबन्ध नहीं कर सकती है । ऐसी स्थिति में सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति लोकतांत्रिक प्रबन्ध व्यवस्था द्वारा की जाती है । कम्पनी के सदस्य एवं अंशधारी स्वयं कम्पनी का प्रबंध नहीं कर सकते, क्योंकि वे बिखरे हुए होते हैं, उनके अंश क्रय का मुख्य प्रयोजन लाभांश अर्जित करना होता है, न कि कम्पनी को चलाना । इसे प्रतिनिधि प्रबंध के नाम से भी पुकारा जाता है ।

7) **सीमित दायित्व:** व्यावसायिक स्वामित्व के विभिन्न प्रारूपों में कम्पनी के रूप में जो प्रारूप हैं, वहीं उसके सदस्यों का दायित्व अपने हिस्से (अंश) की सीमा तक सीमित हो सकता है । यदि किसी कम्पनी के सदस्यों ने अपने द्वारा किये गये अंशों की पूरी राशि कम्पनी को चुका दी है तो वे अतिरिक्त धनराशि के लिए बाध्य नहीं किये जा सकते, चाहे कम्पनी को अपने दायित्व चुकाने के लिए कितने ही धन की आवश्यकता क्यों ना हो ।

8) **कार्यक्षेत्र की सीमाएँ** : प्रत्येक संयुक्त पूँजीवाली कम्पनी अपने कार्य में कम्पनी अधिनियम, अपने पार्षद सीमा-नियम तथा पार्षद अंतर्नियम से पूर्णतया बंधी हुई है । इनमें वर्णित व्यवस्थाओं के बाहर जाकर वह कोई भी कार्य नहीं कर सकती है ।

9) **हस्तान्तरणीय अंश:** किसी भी कम्पनी का कोई भी अंशधारी किसी अन्य व्यक्ति को एक स्वतंत्र अधिकार के रूप में अंशों का हस्तान्तरण कर सकता है और इस प्रकार वह स्वयं कम्पनी की सदस्यता से मुक्त हो सकता है ।

10) **अभियोग चलाने का अधिकार:** कम्पनी अन्य पक्षकारों पर तथा अन्य पक्षकार कम्पनी पर वाद भी चला सकती है । इतना ही नहीं कम्पनी अपने सदस्यों पर तथा सदस्य अपनी कम्पनी पर भी वाद प्रस्तुत करने का अधिकार रखती है ।

11) **सदस्य संख्या:** सार्वजनिक कम्पनियों में कम से कम 7 सदस्य होना अनिवार्य है । इसमें अधिकतम सदस्यों की कोई सीमा नहीं होती है । जबकि निजी कम्पनी में कम से कम 2 तथा अधिकतम 50 व्यक्तियों तक सदस्य हो सकते |

12) **व्यावसायिक सम्पत्तियाँ :** "कम्पनी की सम्पत्ति अंशधारियों की सम्पत्ति नहीं है, यह कम्पनी की सम्पत्ति है ।" अंशधारी न तो व्यक्तिगत रूप से और न ही संयुक्त रूप में कम्पनी की सम्पत्तियों के स्वामी हो सकते हैं । कम्पनी एक विधान संगत व्यक्ति होने के कारण उसे व्यावसायिक सम्पत्तियों को अपने नाम में रखने, बेचने तथा खरीदने का पूर्णतया अधिकार है|

13) **कम्पनी का सामाजिक स्वरूप:** कम्पनी का उस समाज के प्रति भी उत्तरदायित्व है जिसके लिए निर्माण हुआ है तथा जिसमें वह विकास करती है समाजवादी व्यवस्थाओं में किसी भी संयुक्त पूंजी संगठन को मात्र लाभार्जन का संकुचित उद्देश्य लेकर नहीं चलने दिया जा सकता है ।

14) **कम्पनी का सामाजिक चरित्र:** कम्पनी से सम्बन्धित आधुनिक विचारधारा के अनुसार समाज के प्रति भी उत्तरदायित्व माना जाने लगा है ।

15) **उधार लेना:** समामेलन के पश्चात् कम्पनी एक वैधानिक व्यक्ति हो जाती है । अत: अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऋण ले सकती है और इसके लिए यदि आवश्यकता हो तो वह अपनी चल व अचल सम्पत्ति को बंधक रख सकती है ।

16) **कम्पनी का समापन:** कम्पनी का जन्म राज नियम के द्वारा होता है और जीवन पर्यन्त राज नियम के अनुरूप ही कार्य करती है । कम्पनी का समापन भी राज नियम के द्वारा ही होता है अत: कहा जाता है कि किसी भी कम्पनी का समापन राज नियम के बिना नहीं हो सकता है ।

17) **निकाय वित्त व्यवस्था:** अतिरिक्त कार्य विस्तार की दशा में अधिक धनराशि की आवश्यकता होने पर कम्पनी, पार्षद सीमा नियम के अनुसार अंशों एवं ऋण पत्रों का भी निर्गमन कर सकती है इस प्रकार अंशों एवं ऋण पत्रों के रूप में निकाय वित्त प्राप्त करने की सुविधा केवल कम्पनी रूपी प्रारूप में ही उपलब्ध है, अन्य प्रारूपों में नहीं ।

18) **कम्पनी एक नागरिक नहीं:** "कम्पनी के सभी सदस्य भारत के नागरिक हों तो भी कम्पनी, भारत की नागरिक नहीं बन सकती है । ठीक उसी प्रकार की जिस तरह से कम्पनी के सभी सदस्यों का विवाह हो जाने से, कम्पनी का विवाह नहीं हो जाता है । किसी कम्पनी को सामान्य नागरिक के मूल अधिकार प्राप्त नहीं हैं फिर भी कम्पनियाँ अपने अधिकारों के संरक्षण के लिए न्यायालय की शरण ले सकती है

19) **राष्ट्रीयता एवं निवास स्थान:** यद्यपि कम्पनी देश की नागरिक नहीं होती है किन्तु उसकी राष्ट्रीयता अवश्य होती है । कम्पनी की राष्ट्रीयता उस देश की मानी जाती है जिसमें उसका समामेलन होता है । कम्पनी का निवास स्थान वह होता है जहाँ से कम्पनी के व्यवसाय का प्रबन्ध एवं नियन्त्रण किया जाता है । कम्पनी के साथ पत्राचार करने कोई अन्य सन्देश देने-लेने की दृष्टि से कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय को ही कम्पनी का निवास स्थान माना जाता है ।

20) **कम्पनी का चरित्र:** कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है जिसका अपना दिल दिमाग, आत्मा आदि नहीं होता है । यह किसी के प्रति निष्ठावान तो किसी अन्य के प्रति निष्ठाहीन भी नहीं हो सकती है । यह न किसी की मित्र होती है और न शत्रु । वास्तव में कम्पनी का अपना कोई चरित्र नहीं होता है । किन्तु कभी-कभी कोई कम्पनी शत्रु का चरित्र धारण कर सकती है ।

21) **स्थायी अस्तित्व:** कम्पनी का अस्तित्व स्थायी होता है । इसका प्रमुख कारण यह है कि कम्पनी के अंश हस्तान्तरणीय होते है तथा कम्पनी का अपने सदस्यों से पृथक् अस्तित्व होता है । परिणामस्वरूप कम्पनी में कोई नया सदस्य बनता है या सदस्यता छोड़ता है अथवा सदस्य मर जाता है अथवा दिवालिया या पागल हो जाता है तो भी कम्पनी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है । वास्तव में कम्पनी का जन्म विधान प्रावधानों के अनुसार होता है । अत: कम्पनी का समापन भी विधान में वर्णित प्रक्रिया का पालन

करने के बाद ही हो सकता है । कम्पनी तो तब भी चलती रहती है चाहे कम्पनी के निर्माण करने वाले समस्त सदस्यों की ही मृत्यु क्यों न हो जाये ।

1.9 आधार

कम्पनी अधिनियम,1956 में 658 धाराएं एवं 12 अनुसूचियाँ हैं, जबकि भारतीय कम्पनी अधिनियम 1913 में, जिसके स्थान पर कम्पनी अधिनियम, 1956 बनाया गया है, 290 धाराएं और 4 अनुसूचियाँ थी । अंग्रेजी कम्पनी अधिनियम, 1948 में 462 धाराएँ और 18 अनुसूचियाँ हैं । इन धाराओं एवं अनुसूचियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत का कम्पनी अधिनियम विश्व में प्रत्येक देश के कम्पनी अधिनियम से बड़ा है । कम्पनी अधिनियम अपनी आदि अवस्था में किस रूप में था और उस समय से आज तक इस अधिनियम में कब-कब और क्या-क्या परिवर्तन हुए है? इसका ज्ञान कम्पनी अधिनियम के इतिहास से प्राप्त किया जा सकता है । सुविधा के दृष्टिकोण से इस इतिहास को निम्नलिखित 10 अवधियों में विभाजित किया जा सकता है : (1) सन् 1850 से सन् व 1857 तक; (2) सन् 1857 से 1882 तक; (3) सन् 1882 से 1913 तक; (4) सन् 1913 से व 1936 तक; (5) सन् 1936 से 1947 तक; (6) सन् 1947 से 1951 तक; (7) सन् 1951 से 1956 तक; (8) सन् 1956 से 1974 तक; (9) सन् 1974 से 1977 तक; (10) 1978 से आज तक ।

1.10 उदाहरण

1) **ली बनाम लीज एयर फार्मिंग लिमिटेड के मामले (1961) -** में न्यायालय में ली तथा उसकी कम्पनी का पृथक वैधानिक व्यक्तित्व मानते हुए ली की विधवा द्वारा किये गये क्षति पूर्ति दावे को स्वीकृत किया ।

2) परमेश्वरी दास बनाम कलेक्टर ऑफ बुलन्दशहर (1955) - के मामले में यह निर्णय दिया गया कि किसी कम्पनी द्वारा देय बिक्री कर की वसूली केवल कम्पनी के वित्त में से ही की जा सकती है तथा अंशधारियों की सम्पत्ति में से उसकी वसूली करना अवैधानिक होगा ।

3) **अब्दुल हक बनाम दासमल (1910) -** के मामले में पृथक अस्तित्व को मान्यता देते हुए ''अब्दुल हक'' नामक कर्मचारी ने संचालक पर दावा किया जिसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि कम्पनी के कर्मचारियों को कम्पनी के विरूद्ध उपचार उपलब्ध हो सकता है, कम्पनी के संचालकों या सदस्यों के विरूद्ध नहीं ।

4) **टी.आर प्राट बनाम ससून एण्ड कम्पनी लि (1988) -** के मामले में बम्बई उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति ने अपना निर्णय देते हुए कहा कि विधि के अन्तर्गत रजिस्टर्ड कम्पनी अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखती है, चाहे उसके सभी अंश एक ही व्यक्ति के नियंत्रण में क्यों न हो । इस संदर्भ में यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि उस कम्पनी के सभी अंशधारी या संचालक एक ही परिवार के सदस्य हैं, संगत नहीं होगा ।

5) **हैवी इंजीनियरिंग मजदूर यूनियन बनाम बिहार राज्य (1970) -** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कम्पनी एवं उसके अंशधारियों के पृथक अस्तित्व की पुष्टि करते हुए यह मत व्यक्त किया कि भारत के राष्ट्रपति एवं केन्द्रीय सरकार के कुछ अधिकारियों का

अपने पदीय अधिकारों के अन्तर्गत कम्पनी की समस्त पूँजी का स्वामी होने के उपरान्त भी कम्पनी, राष्ट्रपति या केन्द्रीय सरकार की अभिकर्ता नहीं मानी जा सकती है ।

कुछ परिस्थितियों में स्वतंत्र अस्तित्व की वैधानिकता को चुनौती भी दी जा सकती है ।

1.11 सारांश

कम्पनी एक वैधानिक व्यक्ति है जिसका निर्माण एवं रजिस्ट्री कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत किसी विशेष उद्देश्य से होती है, जिसका दायित्व साधारणतः सीमित और अस्तित्व उसके सदस्यों से अलग होता है तथा जिसके पास सार्व मुद्रा है ।

कम्पनी अधिनियम के अधीन निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति से है, जिसका अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व एवं अविछिन्न उत्तराधिकार होता है । साधारण ऐसी कम्पनी का निर्माण किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए होता है ।

1.12 अभ्यास

निबन्धात्मक प्रश्न :

1) कम्पनी की परिभाषा दीजिये और उसकी मुख्य विशेषताएँ बताइये ।
2) एक कम्पनी के प्रमुख प्रकारों का संक्षेप में वर्णन कीजिए ।
3) निम्नलिखित पर टिप्पणी दीजिए:

   अ. एकल व्यक्ति कम्पनी

   ब. कम्पनी का पर्दा उठाना या उसे बेनकाब करना ।

   स. शाही अधिकार पत्र द्वारा समामेलित कम्पनियाँ ।

अति लघुत्तरात्मक प्रश्न:

1) कम्पनी का अर्थ बताइये ।
2) सार्वजनिक कम्पनी में न्यूनतम सदस्यों की संख्या बताइये ।
3) सार्वजनिक कम्पनी एवं निजी कम्पनी में अंतर बताइये ।

1.13 उपयोगी प्रश्न

1. डी. आर.एल. नौलखा - कम्पनी अधिनियम
2. N.D.Kappor - company law and secretarial practice
3. गुप्ता, शर्मा - कम्पनी अधिनियम एवं सचिव पद्धति
4. A.K.Majumdar, Dr.G.K. Kapper - company law

इकाई-2: कम्पनी के प्रकार (Type of companies)

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रकार

2.1 अन्य विषयों से सम्बंध

2.2 आधार

2.3 उदाहरण

2.4 सारांश

2.5 अभ्यास

2.6 उपयोगी पुस्तकें

2.0 प्रकार

वर्तमान आर्थिक जगत में कई प्रकार की कम्पनियाँ बनाई जाती है । यहाँ तक कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें भी सार्वजनिक क्षेत्र तथा सरकारी उद्योगों के संगठन के लिए विशेष अधिनियमों द्वारा कम्पनी का निर्माण करती है । बडे पैमाने पर काम करने के लिए सरकारें निगमों की स्थापना करती है । जैसे भारतीय बीमा निगम इत्यादि-इत्यादि । इसके अतिरिक्त निजी क्षेत्र में निजी तथा सार्वजनिक कम्पनियों का बहुत विकास हुआ है । अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से विभिन्न प्रकार की कम्पनियों को निम्नांकित रेखा चित्र द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है:-

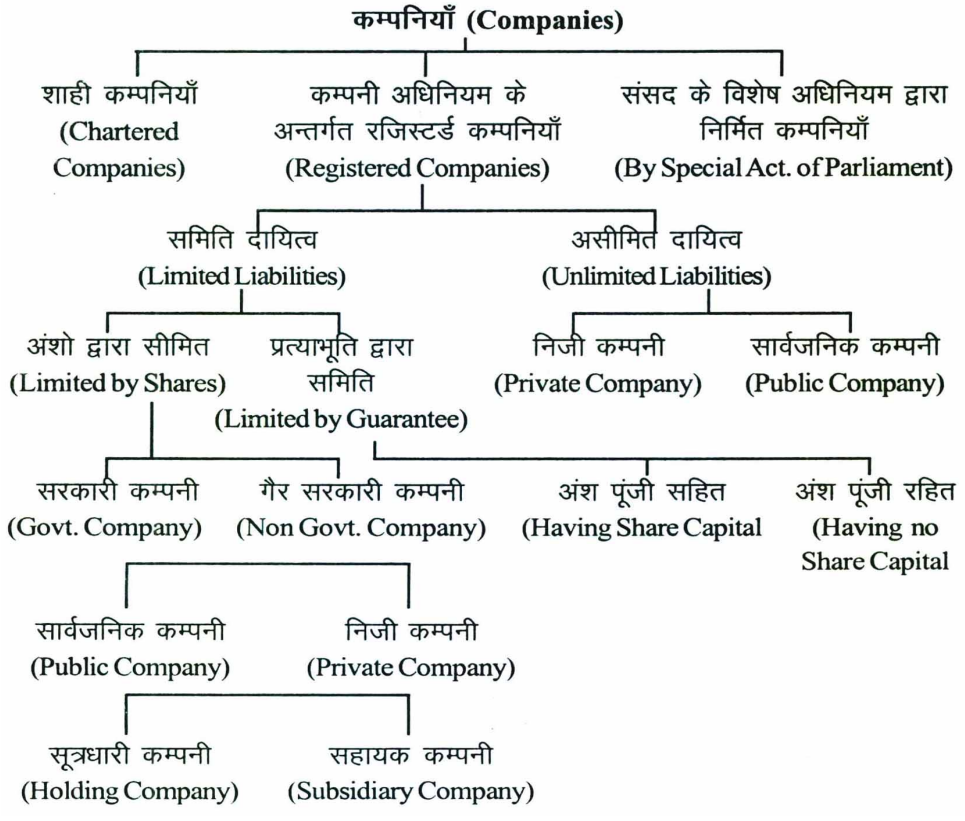

1 **शाही राजाज्ञा द्वारा पंजीयत कम्पनियाँ (Companies Registered By Royal Charter) :-** ये वे कम्पनियाँ है जिनका समामेलन शाही आज्ञा पत्र के द्वारा किया जाता है । इनका निर्माण कुछ विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया जाता है, उदाहरण:- ईस्ट इण्डिया कम्पनी, बैंक ऑफ इंगलैण्ड आदि-आदि । कम्पनी के निर्माण की यह प्राचीन पद्धति है जो कि इंगलैण्ड में प्रचलित थी, जहां कि शाही फरमान के द्वारा कम्पनियों का निर्माण हो जाया करता था । ऐसी चार्टर्ड कम्पनियाँ बडे-बडे भू-भागों पर शासन भी करती थी, जैसे ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारत पर शासन करती थी ।

2 **संसद के विशेष अधिनियम द्वारा निर्मित कम्पनियाँ (Companies Formed By Special Act Of Parliamement) :-** संसद विशेष अधिनियम पारित करके कम्पनियों का निर्माण कर सकती है । ऐसी कम्पनियों का वैधानिक कम्पनियाँ (statutory Companies) कहते हैं । ये कम्पनियाँ ऐसे उद्योग तथा व्यापार के संचालन के लिये स्थापित की जाती है जो राष्ट्र के लिये महत्वपूर्ण हो ।

3 **रजिस्टर्ड कम्पनियाँ (Registered Companies):-** ये वे कम्पनियाँ हैं जिनका निर्माण तथा समामेलन भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 या इससे पूर्व के अधिनियमों के अन्तर्गत किया गया हो । कम्पनी विधान के अनुसार रजिस्टर्ड कम्पनियाँ सार्वजनिक तथा निजी दोनों प्रकार की हो सकती है ।

4 **अंशों द्वारा सीमित कम्पनियाँ (companies limited by shares):-**कम्पनी संगठन की यह विशेषता होती है कि इसके सदस्यों का दायित्व अंशों के अंकित मूल्य तक ही सीमित होता है । इसकी पूंजी अंशों में विभक्त होती है ।

5 **प्रत्याभूति या गारन्टी द्वारा सीमित कम्पनियाँ (companies limited by guarantee):-** रजिस्टर्ड कम्पनियाँ अंशों अथवा प्रत्याभूति द्वारा सीमित हो सकती है । प्रत्याभूति द्वारा सीमित कम्पनी वह है जिसके सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा दी हुई प्रत्याभूति की राशि तक ही सीमित रहता है । ऐसी कम्पनियों का निर्माण सामान्यतया लाभार्जन के उद्देश्य से नहीं किया जाता, अपितु कला, विज्ञान, धर्म, वाणिज्य अथवा धर्मार्थ आदि महत्वपूर्ण उद्देश्यों को प्रोत्साहन देना होता है । ऐसी कम्पनियों को भी अपने नाम के साथ 'लिमिटेड' तथा 'प्राइवेट लिमिटेड' शब्द लगाने पड़ते हैं ।

6 **असीमित कम्पनियाँ (unlimited companies):-** असीमित कम्पनियाँ वे कम्पनियाँ है जिनके सदस्यों का दायित्व साझेदारी फर्म की तरह असीमित होता है । ये कम्पनियाँ नहीं के बराबर है । इनकी रजिस्ट्री कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत निजी अथवा सार्वजनिक कम्पनी के रूप में की जा सकती है । इन कम्पनियों का निर्माण कुछ विशेष लाभ प्राप्त करने के लिए किया जाता है, जैसे असीमित दायित्व वाली कम्पनी बिना पूंजी के बनाई जा सकती है । परन्तु इसके लिये पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये । यह कम्पनी स्वंय के अंशों का क्रय करती है । यह निर्णय **Roborough Commercial Building Society**, 1895 के मामले में दिया गया था । इस कम्पनी को अपनी अंश पूंजी पर स्टाम्प फीस नहीं देनी पड़ती । इस कम्पनी के अंश भी हस्तांतरण योग्य होते है । इस कम्पनी के सदस्यों पर

व्यक्तिगत रूप से मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है इसके लिए वैधानिक सभा का आयोजन करना आवश्यक नहीं है ।

7 **सरकारी कम्पनियाँ (govt. companies) :-** एक सरकारी कम्पनी वह है जिसकी प्रदत्त अंश पूंजी के कम से कम 51 प्रतिशत अंश केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार या अंशतः केन्द्रीय तथा अंशतः राज्य सरकारों के पास हो और इनमें वह कम्पनी भी शामिल की जाती है जो सरकारी कम्पनी की सहायक है ।

स्पष्टीकरण:- सरकारी कम्पनियों के बारे में कतिपय स्पष्टीकरण निम्न भांति है:

1. **अंशों का स्थानीय निकाय के पास होना:** यदि किसी कम्पनी की प्रदत्त पूजी का 51 प्रतिशत अथवा अधिक भाग किसी स्थानीय निकाय, नगरपालिका अथवा नगर निगम के पास है तो ऐसी कम्पनी को सरकारी कम्पनी नहीं माना जायेगा ।
2. **स्थिति सरकार से भिन्न:-** चूंकि सरकारी कम्पनी का अस्तित्व अपने अंशधारियों / सदस्यों से भिन्न होता है ।
3. **सरकार से भिन्न:-** सरकारी कम्पनी सरकार नहीं है । सरकारी कम्पनी का अस्तित्व सरकार से पृथक होता है ।
4. **सरकारी कम्पनी सरकार की एजेन्ट हो सकती है:-** यदि कोई सरकारी कम्पनी सरकार की आज्ञा से सरकारी कार्य सम्पन्न करती है तो वह सरकार की एजेण्ट मानी जा सकती है, अन्यथा नहीं ।
5. **सरकारी कम्पनी के कर्मचारी सरकारी कर्मचारी नहीं:-** सरकारी कम्पनियों के कर्मचारी सरकारी कर्मचारी नहीं माने जाते है, अत: भारतीय संविधान की धारा 226 के अन्तर्गत उनको कोई संरक्षण प्राप्त नहीं हो सकता है ।
6. **एक विदेशी कम्पनी भी सरकारी कम्पनी हो सकती है:-** रीवर्स स्टीम नेवीगेशन कम्पनी लिमिटेड (1967) के मामले में दिए गये निर्णयानुसार यदि किसी ऐसी कम्पनी जो विदेश में पंजीकृत या समामेलित हुई किन्तु उसके 51 प्रतिशत अथवा अधिक अंश सरकार ने ले रखे हों तो उसे सरकारी कम्पनी माना जायेगा ।
7. **नाम के साथ 'प्राइवेट' शब्द आवश्यक नहीं:-** एक सरकारी कम्पनी को अपने नाम के साथ 'प्राइवेट' शब्द लगाना जरूरी नहीं है ।

सरकारी कम्पनी से सम्बंधित नियम एवं व्यवस्थाएं :- सरकारी कम्पनियों से सम्बंधित प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित है:-

I. **अंकेक्षकों की नियुक्ति:-** धारा 224 की सीमा में ही सरकारी कम्पनियों में कोई भी अंकेक्षक धारा 224(1बी) और धारा 224(1बी) की सीमाओं के अन्दर ही नियुक्त किया जा सकेगा|

II. **अंकेक्षण विधि निश्चित करना:-** भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक सरकारी कम्पनियों के लिए अंकेक्षण विधि और प्रक्रिया निश्चित कर सकता है ।

III. **पूरक अथवा परीक्षण जांच:-** भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक को यह भी अधिकार है कि वह चाहे तो किसी भी सरकारी कम्पनी के खातों की पूरक अथवा परीक्षण जांच करा सकता है । धारा 619(3) (b).

IV. **अंकेक्षण रिपोर्ट महालेखाकार को भेजना:-** सरकारी कम्पनी के अंकेक्षक की लेखों का अंकेक्षण कार्य करने के पश्चात् भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक को अपनी अंकेक्षण रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होती है । यदि केन्द्रीय सरकार किसी सरकारी कम्पनी की सदस्य है तो उस कम्पनी को वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होती है ।

V. **कम्पनी की वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करना:-** प्रत्येक सरकारी कम्पनी को अपनी सदस्य सरकार को सदन के माध्यम से अपनी वार्षिक सभा के तीन महिने में उस कम्पनी के क्रिया कलापों एवं कार्य संचालन बाबत एक रिपोर्ट तैयार करवाती है ।

VI. **समापन की प्रक्रिया में चल रही कम्पनियों की वार्षिक रिपोर्ट:-** कम्पनी (संशोधित) अधिनियम, 1988 की धारा 619 (ए-4) के अनुसार यदि कोई सरकारी कम्पनी समापन की प्रक्रिया में चल रही हो तो भी उसे अपनी वार्षिक रिपोर्ट ठीक उसी प्रकार प्रस्तुत करनी होंगी जिस प्रकार अन्य कार्यरत सरकारी कम्पनियां प्रस्तुत करती है ।

VII. **कुछ अन्य दशाओं में अंकेक्षकों की नियुक्ति:-** अंकेक्षण के उद्देश्य से कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1974 के अन्तर्गत धारा 619-बी जोड़कर यह व्यवस्था की गई है कि अंकेक्षण से सम्बंधित सरकारी कम्पनी की व्यवस्थाएँ एक ऐसी कम्पनी पर भी लागू होंगी ।

VIII. **सरकारी कम्पनियों से सम्बंधित व्यवस्थाओं में छूट अथवा उनमें संशोधन करने का अधिकार:-** केन्द्रीय सरकार सरकारी गजट में प्रकाशित करके यह आदेश दे सकती है कि भारतीय कम्पनी अधिनियम की धाराएँ 618,819 व 619-ए को छोडकर, अधिनियम की कुछ विशिष्ट व्यवस्थाएँ जिनको प्रकाशन में निर्दिष्ट किया गया है, किसी सरकारी कम्पनी पर लागू नहीं होंगी अथवा उन संशोधनों के साथ लागू होंगी जिन्हें केन्द्रीय सरकार ने अपने आदेश में निर्देशित कर दिया हो । निजी कम्पनी के अन्तर्नियमों की तरह सार्वजनिक कम्पनी के अन्तर्नियमों में सदस्यों की अधिकतम संख्या अंश हस्तान्तरण तथा अंश 7 ऋणपत्र खरीदने के लिए जनता को आमंत्रित नहीं करने सम्बंधी प्रावधानों का होना आवश्यक नहीं है । इसके अतिरिक्त सार्वजनिक कम्पनी में कम से कम 7 सदस्यों का होना अनिवार्य है ।

8 **निजी कम्पनी:-** कम्पनी विधान की धारा 3(1)(iii) के अनुसार निजी कम्पनी वह कम्पनी है जो अपने अन्तर्नियमों के द्वारा -

1. अपने अंशों के हस्तान्तरण के अधिकार पर रोक लगाती है तथा

2. कम्पनी के सदस्यों की संख्या 50 तक सीमित करती है । इस 50 की संख्या गिनने में संयुक्त अंशधारी को एक सदस्य माना जाता है तथा कम्पनी के वर्तमान तथा पुराने कर्मचारियों को नहीं गिना जाता है, तथा
3. कम्पनी के अंशों तथा ऋण पत्रों के विक्रय के लिये जनता को आमंत्रित करने पर प्रतिबंध लगाती है ।

9. **सूत्रधारी और सहायक कम्पनियाँ:-** इस अधिनियम के लिए एक कम्पनी को दूसरी कम्पनी की सूत्रधारी कम्पनी तभी माना जायेगा जबकि वह दूसरी कम्पनी उसकी सहायक हो ।

   अधिनियम की धारा 4(1) के अनुसार एक कम्पनी किसी अन्य कम्पनी की सहायक निम्न दशा में हो सकती है जबकि:-

   (i) अन्य कम्पनी इस कम्पनी के संचालक-मण्डल के गठन पर नियंत्रण रखती हो,
   (ii) अन्य कम्पनी इस कम्पनी के आधे से अधिक अंश पूंजी या मताधिकार पर नियंत्रण रखती हो, या
   (iii) जब वह किसी ऐसी कम्पनी की सहायक हो जो कि स्वंय अन्य कम्पनी की सहायक है ।

10. **विदेशी कम्पनियाँ:-** भारत में विदेशी कम्पनियाँ वे है जिनका समामेलन भारत से बाहर होता है ।

    (i) ऐसी कम्पनियाँ जिन्होंने भारतीय कम्पनी अधिनियम के लागू होने के पश्चात् भारत में अपने व्यापार का स्थान स्थापित किया हो,
    (ii) ऐसी कम्पनियाँ जिन्होंने भारतीय कम्पनी अधिनियम के लागू होने से पहले अपने व्यापार का स्थान भारत में बना लिया है तथा इस अधिनियम के लागू होने पर भी भारत में अपना व्यापार का स्थान स्थापित कर रखा है ।

विदेशी कम्पनियों द्वारा रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत किये जाने वाले प्रपत्र आदि

प्रत्येक विदेशी कम्पनी को, जो भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 के बाद अपने व्यापार करने का स्थान भारत में स्थापित करती है, इस स्थान के स्थापित करने के 30 दिन के भीतर निम्नलिखित प्रलेख तथा सूचनायें रजिस्ट्रार के समक्ष रजिस्ट्री के लिए अवश्य प्रस्तुत करनी चाहिए

1. **चार्टर या सीमानियम**: अधिनियम की धारा 592 के अनुसार विदेशी कम्पनी का चार्टर या पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम या अन्य प्रेलेख की प्रमाणित प्रतिलिपि जो इस कम्पनी की रचना को परिभाषित करती हो ।
2. कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय का पूर्ण पता ।
3. कम्पनी के संचालकों एवं सचिव की सूची ।
4. **सूचना प्राप्त करने वाले अधिकृत व्यक्ति:** ऐसे व्यक्तियों के नाम व पते जो भारत के निवासी है तथा जिन्हें कम्पनी की ओर से उन सूचनाओं व प्रपत्रों का स्वीकार करने का अधिकार प्राप्त है, और
5. **मुख्य स्थान का पता:** भारत में कम्पनी के ऐसे कार्यालय का पूरा पता जिसे इस विदेशी कम्पनी के व्यापार का मुख्य स्थान माना जाता है |

विदेशी कम्पनियों पर अन्य प्रतिबन्ध (other restrictions on foreign companies):

1. **वार्षिक खातों का प्रारूप:** प्रत्येक विदेशी कम्पनी को अपना चिट्ठा लाभ-हानि खाता ऐसे प्रारूपों में तथा ऐसे विवरणों को दर्शाते हुए बनाना चाहिए ।
2. **वार्षिक खातों एवं प्रतिवेदन का प्रस्तुतीकरण :** विदेशी कम्पनी को अपने चिट्ठे, लाभ-हानि खाते व अंकेक्षक व संचालक के प्रतिवेदनों की तीन-तीन प्रतिलिपियाँ भेजनी पड़ती है ।
3. **अंग्रेजी भाषा में :** चिट्ठे के साथ संलग्न कोई प्रपत्र यदि अंग्रेजी भाषा में नहीं है तो इसका प्रमाणित अनुवाद इसके साथ संलग्न किया जाना चाहिए ।
4. **व्यापार के स्थानों की सूची :** उपर्युक्त प्रपत्रों के साथ प्रत्येक विदेशी कम्पनी भारत में स्थापित किये गए व्यापार के स्थानों की सूची की तीन प्रतियाँ रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करेगी ।
5. **प्रविवरण में देश का नाम:** प्रत्येक विदेशी कम्पनी को भारत में अंशों व ऋण-पत्रों के अभिदान के लिए निर्गमित प्रविवरण में उस देश का नाम लिखना पड़ता है, जहाँ इस विदेशी कम्पनी का समामेलन हुआ है ।
6. **कम्पनी के नाम व देश को लिखना:** भारत में विदेशी कम्पनी के व्यापार के स्थानों पर कम्पनी का नाम तथा उस देश का नाम जहाँ इनका समामेलन हुआ है, साफ-साफ लिखना पड़ता है ।
7. **सीमित दायित्वों की सूचना :** यदि विदेशी कम्पनी के सदस्यों का दायित्व सीमित होता है तो सीमित दायित्व की सूचना कम्पनी के प्रत्येक विवरण, व्यापारिक पत्र, बिलों, सूचनाओं और विज्ञापनों में अंग्रेजी भाषा में लिखी जानी चाहिए ।

(11) **एक व्यक्ति कम्पनियाँ :** कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों का प्रयोग कभी-कभी इस प्रकार कर लिया जाता है जिससे कि एक ही व्यक्ति सीमित दायित्व के साथ व्यापार करने में समर्थ हो जाता है । इसकी विधि बहुत ही सरल है । किसी भी व्यापार का मालिक किन्ही छः और व्यक्तियों को कम्पनी के निर्माण के लिए कम्पनी में शामिल कर लेता है । ये सात व्यक्ति पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले हो जाते है जिनमें छःव्यक्तियों को केवल नाम-मात्र के लिए एक-एक अंश दे दिया जाता है । इस प्रकार यह कम्पनी सीमित दायित्व के साथ एक सार्वजनिक कम्पनी के रूप में रजिस्टर्ड हो जाती है । इस प्रकार निर्मित की गई कम्पनी व्यापार के स्वामी से व्यापार खरीद लेती है और उसका प्रतिफल उसे कम्पनी के पूर्ण प्रदत अंशों में दे देती है । फिर न तो कोई अंश निर्गमित किये जोते है और न कोई अन्य सदस्यों को प्रवेश ही दिया जाता है । इस प्रकार जो व्यापारी पहले एकाकी मालिक था उसका केवल छह अंशों को छोड़कर कम्पनी की पूर्ण अंश पूँजी पर अधिकार हो जाता है और कम्पनी का पूर्ण नियन्त्रण उसी के हाथ में रहता है और उसके कारण वह भविष्य में सीमित दायित्व के साथ अपना व्यापार करता रहता है । यह विधि निजी कम्पनी की दशा में और भी सरल हो जाती है, क्योंकि उस दशा में केवल अधिनियम के अनुसार दो ही सदस्यों की आवश्यकता होती है और इस आधार पर एक व्यक्ति केवल एक और व्यक्ति को एक अंश देकर निजी कम्पनी का निर्माण कर सकता हैं । इस प्रकार की निर्मित कम्पनियों को एक व्यक्ति कम्पनी कहा जाता है ।

(12) **निष्क्रिय कम्पनियाँ:** ये वे कम्पनियाँ है जो अधिनियम के अनुसार समामेलित हुई हैं लेकिन जो व्यापार नहीं कर रही हैं या जिन्होंने अब व्यापार करना बन्द कर दिया है । यदि

कम्पनियों के रजिस्ट्रार को विश्वास करने का उचित आधार मिल जाता है कि कम्पनी व्यापार नहीं कर रही है या उसने अपना व्यापार बन्द कर दिया है तो रजिस्ट्रार व्यापार बन्द होने के कारण को जानने के लिए कम्पनी को डाक द्वारा पत्र भेजता है ।

2.1 अन्य विषयों से सम्बन्ध

1 **विदेशी कम्पनियाँ आशय एवं वर्गीकरण-** विदेशी कम्पनियों का आशय ऐसी कम्पनियों से है जिनका समामेलन अथवा पंजीयन भारत में ही नहीं हुआ है, वरन् किसी अन्य देशों के सम्बन्धित कानूनों के अन्तर्गत हुआ हो । भारत के कम्पनी अधिनियम, 1958 की धारा (591) के अनुसार विदेशी कम्पनियों का अधिनियम की दृष्टि से, दो भागों में विभाजन किया गया है-

1. **अधिनियम के प्रारम्भ होने के बाद-** ऐसी कम्पनियाँ जिसका समामेलन भारत के बाहर किसी देश में हुआ है और जिन्होंने इस अधिनियम (1956) के प्रारम्भ होने के पश्चात् भारत में ही अपने व्यापार का स्थान स्थापित कर लिया है अर्थात् भारत में ही किसी स्थान पर व्यापार कर रही हैं ।
2. **अधिनियम के प्रारम्भ होने के पूर्व-** इस वर्ग में ऐसी विदेशी कम्पनियाँ हैं जिन्होंने इस अधिनियम के प्रारम्भ होने के पूर्व, भारत में किसी स्थान पर अपना व्यापार स्थापित कर लिया हो और चालू रखा हो ।

विदेशी कम्पनियों द्वारा फाइल किये जाने वाले प्रपत्र- धारा 562 के अनुसार, यदि कोई विदेशी कम्पनी, भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 के लागू होने के पश्चात् भारत में किसी स्थान पर अपना व्यापार स्थापित करती है:

1 ऐसी विदेशी कम्पनी का चार्टर अथवा पार्षद सीमानियमों तथा अन्तर्नियमों की एक प्रमाणित प्रतिलिपि । यदि यह प्रलेख अंग्रेजी भाषा में न हों तो उनका प्रमाणित अंग्रेजी में अनुवाद,

2 कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय अथवा मुख्य कार्यालय का पूरा पता,

3 कम्पनी के संचालको तथा सचिव की सूची जिसमें उनके नाम, पते, राष्ट्रीयता, व्यवसाय आदि का उल्लेख होना चाहिये,

4 किसी एक या अधिक ऐसे व्यक्तियों के नाम व पते, जो कि भारत के निवासी है तथा जिन्हें कम्पनी की ओर से उन सूचनाओं और प्रपत्रों को स्वीकार करने का अधिकार है, जो कम्पनी को दिये जायें,

5 भारत में कम्पनी के कार्यालय का पूरा पता जिसे भारत में उनके व्यापार का प्रमुख कार्यालय माना जाता है ।

विदेशी कम्पनी के लेखे- (1) विदेशी कम्पनियों के लेखों के सम्बन्ध में वे ही उतरदायित्व हैं जो भारत में समामेलित कम्पनियों के होते हैं । प्रत्येक वर्ष प्रत्येक विदेशी कम्पनी का ऐसे प्रारूप में (आवश्यक विवरण तथा प्रलेखों सहित) अपना चिट्ठा तथा लाभ-हानि का लेखा बनाना होगा जो उसे इस अधिनियम के अधीन बनाने पड़ते, यदि वह इस अधिनियम के आशय के लिए एक कम्पनी होती । रजिस्ट्रार को इसकी तीन प्रतिलिपियाँ देनी होती हैं ।

(2) कम्पनी के भारत व्यापार का पृथक् चिट्ठा तथा लाभ-हानि खाता बनाना होगा और इसे कम्पनी के विश्व-भर के व्यापार के लेखों की एक प्रतिलिपि के साथ रजिस्ट्रार को देना होगा ।

विदेशी कम्पनी के नाम व समामेलन के देश का उल्लेख करना-

1. कोई भी विदेशी कम्पनी, चाहे उसने भारत में व्यवसाय न भी स्थापित किया हो, अपने अंशों तथा ऋण-पत्रों को बेचने के लिए प्रविवरण निकाल सकती है । ऐसे प्रविवरण में वे समस्त शर्तों को पूरी करनी पड़ती है जो अधिनियम के अनुसार भारतीय कम्पनियों पर लागू है ।
2. प्रत्येक विदेशी कम्पनी को, प्रत्येक ऐसे स्थान व कार्यालय के बाहर, जहाँ वह भारत में व्यापार करती है, कम्पनी का नाम तथा उस देश का नाम, जहाँ वह समामेलित की गई है, स्पष्ट अक्षरों में अंग्रेजी तथा क्षेत्रीय भाषा में प्रदर्शित करना होगा ।
3. प्रत्येक व्यापारिक पत्र, बिल, सूचनाओं तथा कम्पनी के अन्य व्यावसायिक पत्रों पर कम्पनी का नाम एवं उस देश का नाम जहाँ समामेलित हुई है, का अंग्रेजी भाषा में उल्लेख होना चाहिए ।
4. यदि कम्पनी के सदस्यों का दायित्व सीमित है तो इस तथ्य की सूचना उक्त सभी प्रपत्रों, पत्रों, सूचनाओं आदि में अंग्रेजी भाषा में तथा भारत के प्रत्येक कार्यालय और व्यापार के स्थान के बाहर अंग्रेजी भाषा में तथा क्षेत्रीय भाषा में उल्लिखित तथा प्रदर्शित करेगी ।

रजिस्ट्रार को फीस देना-

प्रत्येक विदेशी कम्पनी को अपने प्रपत्रों की रजिस्ट्री करनें के लिए रजिस्ट्रार के यहाँ पर निर्धारित फीस देनी पड़ती है ।

1. **नई दिल्ली-** यदि कोई प्रपत्र किसी भी विदेशी कम्पनी द्वारा रजिस्ट्रार को देना है तो वह इसे उस रजिस्ट्रार को देगी जिसके कार्यक्षेत्र की परिधि नई दिल्ली में है ।
2. **व्यापार के मुख्य स्थान पर-** उपर्युक्त प्रपत्र उस राज्य के रजिस्ट्रार के पास भी भेजा जाता है, जिसमें उस विदेशी कम्पनी के व्यापार का मुख्य स्थान हो ।
3. **व्यापार समाप्त होने पर-** यदि किसी विदेशी कम्पनी ने भारत में अपना व्यापार समाप्त कर दिया है तो इस बात की सूचना रजिस्ट्रार कें पास भेजेगी । इस प्रकार का नोटिस दिये जाने वाली तिथि से कम्पनी का रजिस्ट्रार के पास प्रपत्र भेजने का दायित्व समाप्त हो जाता है ।

विदेशी कम्पनियों पर आर्थिक दण्ड- यदि कोई विदेशी कम्पनी उपर्युक्त किन्हीं व्यवस्थाओं का पालन करने में त्रुटि करती है तो कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी अथवा दोषी एजेन्ट पर अधिक से अधिक 10000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है |

उक्त व्यवस्थाओं के उल्लंघन का अनुबन्धों पर प्रभाव- यदि कोई विदेशी कम्पनी उपर्युक्त व्यवस्थाओं में से किसी का भी पालन नहीं करती है तो-

(1) इस देश के कारण इस विदेशी कम्पनी द्वारा किये गये अनुबन्धों की वैधानिकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है । यदि यह कम्पनी अपने अनुबन्ध को पूरा नहीं करती है, तो दूसरा पक्षकार इस कम्पनी पर वाद प्रस्तुत कर सकता है ।

(2) परन्तु विदेशी कम्पनी, इन अनुबन्धों के लिए अन्य पक्षकार पर उस समय तक कोई वाद प्रस्तुत नहीं कर सकती, जब तक कि वह उक्त व्यवस्थाओं का पूर्ण रूप से पालन नहीं कर लेती |

2.2 आधार

कम्पनी अधिनियम,1956 में 658 धाराएं एवं 12 अनुसूचियाँ हैं, जबकि भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1913 में जिसके स्थान पर कम्पनी अधिनियम, 1956 बनाया गया है, 290 धाराएँ और 4 अनुसूचियाँ थी । अंग्रेजी कम्पनी अधिनियम, 1948 में 462 धाराएँ और 16 अनुसूचियाँ थी । इन धाराओं एवं अनुसूचियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकला जा सकता है कि भारत का कम्पनी अधिनियम विश्व में प्रत्येक देश के कम्पनी अधिनियम से बड़ा है । कम्पनी अधिनियम अपनी आदि अवस्था में किस रूप में था और उस समय से आज तक इस अधिनियम में कब-कब और क्या-क्या परिवर्तन हुए हैं । इस का ज्ञान कम्पनी अधिनियम के इतिहास से प्राप्त किया जा सकता है । सुविधा के दृष्टिकोण से इस इतिहास को निम्नलिखित 10 अवधियों में विभाजित किया जा सकता है:

1 सन् 1850 से 1657 तक
2 सन् 1657 से 1882 तक
3 सन् 1882 से 1913 तक
4 सन् 1913 से 1936 तक
5 सन् 1936 से 1947 तक
6 सन् 1947 से 1951 तक
7 सन् 1951 से 1956 तक
8 सन् 1956 से 1974 तक
9 सन् 1974 से 1977 तक
10 सन् 1978 से आज तक ।

2.3 उदाहरण

(1) ली बनाम जीज एयर फार्मिंग लिमिटेड के मामले (1961) में न्यायालय में "ली" तथा उसकी कम्पनी का पृथक वैधानिक व्यक्ति मानते हुए "ली" की विधवा द्वारा किये गये क्षति पूर्ति दावे को स्वीकृत किया ।

(2) परमेश्वरी दास बनाम कलेक्टर ऑफ बुन्लदशहर (1955) के मामले में यह निर्णय दिया गया कि किसी कम्पनी द्वारा देय बिक्री कर तथा अंशधारियों की सम्पति में से उसकी वसूली केवल वित्त में से ही की जा सकती है तथा अंशधारियों की सम्पत्ति में से उसकी वसूली करना अवैधानिक होगा ।

(3) अब्दुल हक बनाम दासमल (1910) के मामले में पृथक अस्तित्व को मान्यता देते हुए "अब्दुल हक" नामक कर्मचारी ने संचालक पर दावा किया जिसे स्वीकार नहीं किया क्योंकि

कम्पनी के कर्मचारियों को कम्पनी के विरूद्ध उपचार उपलब्ध हो सकता है कम्पनी के संचालकों या सदस्यों के विरूद्ध नहीं ।

2.4 सारांश

कम्पनी एक वैधानिक व्यक्ति है । जिसका निर्माण एवं रजिस्ट्री कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत किसी विशेष उद्देश्य से होती है, जिसका दायित्व साधारणतः सीमित और अस्तित्व उसके सदस्यों से अलग होता है तथा जिसके पास सार्व मुद्रा है । कम्पनी अधिनियम के अधीन निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति से है जिसका अपने सदस्यों से पृथक् अस्तित्व एवं अविछिन्न उतराधिकार होता है| साधारणतया ऐसी कम्पनी का निर्माण किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए होता है ।

2.5 अभ्यास

(1) कम्पनी के विभिन्न प्रकारों में से असीमित दायित्व के बारे में समझाइए ।

(2) एक कम्पनी के प्रमुख प्रकारों का संक्षेप में वर्णन कीजिए ।

(3) निम्नलिखित पर टिप्पणी दीजिएः-

1 एकल व्यक्ति कम्पनी

2 कम्पनी का पर्दा उठाना या उसे बेनकाब करना

3 शाही अधिकार पत्र द्वारा समामेलित कम्पनियाँ

अति लघुतरात्मक प्रश्न

1 कम्पनी का अर्थ बताइये ।

2 सार्वजनिक कम्पनी में न्यूनतम सदस्यों की संख्या बताइये ।

3 सार्वजनिक कम्पनी एवं निजी कम्पनी में अंतर बताइये ।

2.6 उपयोगी पुस्तकें

1. डॉ. आर. एल. नौलखा -कम्पनी अधिनियम
2. N.D.KAPPOR -Company law and Secretarial Practice
3. M.J.MATHW -Company law
4. A.K.MAJUMDAR -Company law (Taxmann's)
   DR.G.K.KAPPOR
5. गुप्ता शर्मा -कम्पनी अधिनियम एवं सचिव पद्धति

इकाई-3: कम्पनी का प्रवर्तन(promotion of company)

इकाई की रुपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 इतिहास एवं विकास

3.3 अर्थ एवं परिभाषा

3.4 आवश्यकता (प्रवर्तन की आवश्यकता)

3.5 गुण (प्रवर्तकों के गुण)

3.6 प्रकार

3.7 अन्य विषयों से सम्बन्ध

3.8 नियम (प्रवर्तकों की वैधानिक स्थिति एवं नियम)

3.9 प्रवर्तकों के कार्य

3.10 उदाहरण

3.11 सारांश

3.12 अभ्यास

3.0 उद्देश्य (objective)

1. एक कम्पनी के निर्माण की कल्पना करना और विचारधारा को पूर्ण करने का प्रयत्न करना |
2. कुछ विद्वान व विशेषज्ञों से आवश्यकतानुसार परामर्श करने के लिए सम्बन्ध स्थापित करना |
3. ऐसे व्यक्तियों को ढूंढ़ना जो प्रथम संचालक बनने के लिए सहमति दें और पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करें ।
4. न्यूनतम अंशदान का प्रबन्ध करना ।
5. प्रारंभिक व्ययों का भुगतान करना ।
6. कम्पनी के हित के लिए यदि आवश्यक हो तो विक्रेता एवं अभिगोपक के साथ किये हुए प्रसंविदों को पूरा करने के लिए आवश्यक प्रबन्ध करना ।
7. कम्पनी का नाम, उद्देश्य तथा पूंजी का निश्चय करना यदि आवश्यक हो तो कम्पनी की पूंजी के अभिगोपन का प्रबन्ध करना ।

3.1 प्रस्तावना

कम्पनी के प्रवर्तकों अथवा संस्थापकों द्वारा कुछ ऐसी वैधानिक अपेक्षाओं की पूर्ति करने से है, जिनके फलस्वरूप कम्पनी अस्तित्व में आती है । कम्पनी के निर्माण का उद्देश्य किसी नये व्यवसाय को प्रारम्भ करना अथवा किसी विद्यमान व्यवसाय को ग्रहण करने का हो सकता है । एक कम्पनी के निर्माण की कार्यवाही या विधि को वैधानिक रूप से निम्नलिखित अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है -

1. प्रवर्तन अवस्था
2. समामेलन अवस्था
3. पूंजी अभिदान अवस्था एवं
4. व्यापार प्रारम्भ करने की अवस्था ।

3.2 इतिहास एवं विकास

साधारण शब्दों में प्रवर्तन का आशय 'प्रारम्भ' से है । लेकिन कम्पनी की दृष्टि में प्रवर्तन का अर्थ उन सब क्रियाविधियों से है जिनके द्वारा किसी व्यापार अथवा उद्योग के विचार को जन्म देने के समय से लेकर कम्पनी का व्यापार अथवा उद्योग के प्रारम्भ की स्थिति में लाने के समय तक किये जाते हैं ।

प्रवर्तन के अर्थ को भली-भाँति समझने के लिए निम्नलिखित परिभाषाएँ दी जा सकती है

"प्रवर्तन के चार मुख्य तत्व हैं:-

1. खोज
2. जाँच
3. एकत्रीकरण
4. वित्त"

- प्रो. मीड

"प्रवर्तन एक विशेष व्यावसायिक उपक्रम के निर्माण की प्रक्रिया है । जो व्यक्ति ऐसे उपक्रम के निर्माण में भाग लेते हैं उन सब क्रियाओं का योग प्रवर्तन है ।"

- डी हॉगलैण्ड

"प्रवर्तन का आशय व्यावसायिक सुअवसरों की खोज करना और तत्पश्चात् लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से पूँजी, सम्पत्ति तथा प्रबन्धकीय योग्यता को एक व्यावसायिक संस्था में संगठित करना है ।"

- गर्स्टनबर्ग

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि कम्पनी के निर्माण की उन समस्त क्रियाओं से है जो किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के मस्तिष्क में किसी ऐसे व्यावसायिक एवं औद्योगिक विचार के जन्म देने के समय से लेकर कम्पनी का व्यवसाय या उद्योग प्रारम्भ करने की स्थिति लाने के समय तक की जाती है ।

3.3 अर्थ एवं परिभाषा

प्रवर्तक शब्द सन्नियम का न होकर एक व्यापारिक शब्द है, जिसका आशय ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह द्वारा की गयी अनेक व्यापारिक गतिविधियों से है जिनके द्वारा सामान्य रूप में एक कम्पनी का अस्तित्व स्थापित किया जाता है और कम्पनी को संचालित होने के योग्य बनाया जाता है । कम्पनी प्रवर्तक का अर्थ समझने के लिए निम्नलिखित सन्दर्भ एवं परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है:-

(i) कम्पनी अधिनियम में दिए गए सन्दर्भ के आधार पर
(ii) विभिन्न न्यायाधीशों एवं विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं के आधार पर ।

(i) **कम्पनी अधिनियम में दिये गये सन्दर्भ के आधार पर:-** यद्यपि भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 में प्रवर्तक शब्द की कोई स्पष्ट परिभाषा तो नहीं दी गयी है तथापि कुछ धाराओं जैसे धारा 82(6) (अ), 69, 76,478, 519 एवं 543 इत्यादि में प्रवर्तक शब्द का स्पष्ट रूप से प्रयोग किया गया जिनसे इस शब्द के कुछ भाव प्रकट होते हैं जो इस प्रकार हैं :-

"प्रवर्तक का आशय किसी प्रवर्तक से है जो कि प्रविवरण या इसके किसी भाग की तैयारी से सम्बन्धित था जिसमें कि असत्य विवरण था, लेकिन किसी ऐसे व्यक्ति को शामिल नहीं किया जाता है जिसने व्यावसायिक रूप में कम्पनी के निर्माण में लगे हुए व्यक्तियों की ओर से कार्य किया हो ।"

- धारा 62(6) अ के अनुसार

"एक कम्पनी के समापन की दशा में किसी व्यक्ति ने कम्पनी के निर्माण अथवा प्रवर्तन में भाग लिया है ।"

- धारा 543(1)

"प्रवर्तक शब्द उन व्यक्तियों को सम्बोधित करने का एक संक्षिप्त और सुविधाजनक तरीका है जो उस मशीन को चलाते हैं जिसके द्वारा अधिनियम उन्हें एक समामेलित कम्पनी का निर्माण करने के योग्य बनाता है ।"

- लार्ड ब्लैकबर्न

"प्रवर्तक शब्द का कोई बहुत निश्चित अर्थ नहीं है । कम्पनी के सम्बन्ध में प्रयोग किए जाने वाले शब्द प्रवर्तक में कम्पनी प्रारम्भ करने के विचार तथा चालू करने अथवा उसको स्थापित करने एवं कम्पनी के प्रति उसके उत्तरदायित्व सम्मिलित हैं जो प्रवर्तक की हैसियत अथवा उस स्थिति से उत्पन्न होते हैं ।"

- न्यायाधीश लिण्डले

"प्रवर्तक का आशय एक ऐसे व्यक्ति से हैं जो कम्पनी के निर्माण की योजना बनाता है, पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियम को तैयार करवाता है, उनकी रजिस्ट्री करवाता है एवं प्रथम संचालकों को चुनता है, प्रारंभिक अनुबन्धों की शर्तों को निश्चित करता है और प्रविवरण के विज्ञापन, प्रकाशन एवं पूँजी प्राप्ति का प्रबंध करता है ।"

- सर फ्रांसिस पामर

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि प्रवर्तक का आशय एक ऐसे औद्योगिक विशेषज्ञ से है जो नियोक्ता के रूप में कम्पनी की स्थापना का विचार करने से लेकर कम्पनी को चालू करने की अवस्था तक लाने से सम्बन्धित सभी कार्य करता है । यह आवश्यक नहीं है कि प्रवर्तक एक व्यक्ति ही हो, एक परिवार, फर्म, एक कम्पनी अथवा इसी प्रकार की कोई भी संस्था प्रवर्तक के रूप में कार्य कर सकती है । वर्तमान समय में प्रायः फर्म तथा समामेलित संस्थाएँ ही प्रवर्तक का कार्य करती है ।

3.4 आवश्यकता (प्रवर्तन की आवश्यकता)

प्रवर्तन की निम्नलिखित कारणों से आवश्यकता होती है-

1. यह कम्पनी के निर्माण की आधारभूत एवं प्रथम महत्वपूर्ण सीढ़ी है ।

2. प्रवर्तन एक विशेष व्यावसायिक उपक्रम के निर्माण की प्रक्रिया है ।
3. प्रवर्तन, कम्पनी के निर्माण की समस्त क्रियाओं - पूँजी, सम्पत्ति खोज, जाँच, साधनों के उपयोग करने की योजना, लाभदेयता का अनुमान लगाने, वैधानिक कार्यवाही करना एवं प्रारंभिक अनुबन्ध आदि का योग है ।
4. प्रवर्तन किसी व्यवसाय को प्रारम्भ करने के विचार की उत्पत्ति से प्रारम्भ होता है और व्यवसाय या उद्योग को प्रारम्भ करने की स्थिति में लाने पर समाप्त हो जाता है ।
5. ऐसे विचार की उत्पत्ति किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के मस्तिष्क में हो सकती है ।

3.5 गुण (प्रवर्तकों के गुण)

(1) **अधिनियमों की जानकारी (knowledge of act)** : हालांकि कम्पनी की स्थापना भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत की जाती है किन्तु उस पर अन्य कानून भी लागू होते हैं इसलिए प्रवर्तक को सभी अधिनियमों एवं सन्नियमों जैसे - व्यावसायिक सन्नियम, आय एवं बिक्री कर अधिनियम आदि की जानकारी होनी चाहिए, अन्यथा उसे कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा ।

(2) **साधन सम्पन्न (wealthy)** : प्रवर्तक का साधन सम्पन्न होना आवश्यक गुण है क्योकि कम्पनी स्थापना का विचार आने से लेकर कम्पनी के अस्तित्व में आने तक कई आवश्यक व्यय करने पड़ते हैं । इसके अतिरिक्त यदि इन कार्यों के लिए किसी अन्य व्यक्ति से वित्तीय सहयोग नहीं मिले तो प्रवर्तक को ही अपने वित्त का विनियोग करना पड़ता है ।

(3) **आत्म विश्वास (self-confidence)** : एक व्यक्ति आत्म विश्वास जैसे गुण से ही कठिन से कठिन कार्यों में सफलता प्राप्त कर सकता है । अत: एक प्रवर्तक में आत्मविश्वास का होना आवश्यक है ताकि वह बड़े से बड़े व्यवसाय अथवा उद्योग की स्थापना कर सकेगा अन्यथा वह असफल हो जायेगा ।

(4) **दूरदर्शी (forsightedness)** : प्रवर्तक द्वारा निर्मित की जाने वाली कम्पनी भविष्य की योजना पर आधारित है । इसलिए प्रवर्तक को दूरदर्शी होना चाहिए ताकि भविष्य की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं का शीघ्र एवं सही पूर्वानुमान लगा सके ।

(5) **ईमानदार एवं परिश्रमी (honest and hardworking)** : एक प्रवर्तक को कम्पनी की स्थापना तथा रजिस्ट्री होने के बाद अपनी कार्यवाहियों का सम्पूर्ण ब्यौरा कम्पनी के समक्ष प्रस्तुत करना पड़ता है जिसमें ईमानदारी का होना आवश्यक है । यदि इसमें प्रवर्तक ईमानदारी से कार्य नहीं करता है तो उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न हानि एवं अनियमितता के लिए प्रवर्तक ही उत्तरदायी होता है ।

(6) **संगठनकर्ता (organiser) :** कम्पनी की स्थापना एवं सफल संचालन करने के लिए कुछ आधारभूत तत्व - मनुष्य, मशीनें, सामग्री तथा धन है । अत: एक प्रवर्तक में इन सब तत्वों की व्यवस्था करने की योग्यता होनी चाहिए अन्यथा सभी साधन बेकार रहेंगे जिसका भार कम्पनी को ही वहन करना पड़ेगा ।

3.6 प्रकार

(1) **व्यावसायिक प्रवर्तक (professional promoters) :** इन व्यक्तियों का प्रमुख व्यवसाय नई कम्पनियों का प्रवर्तन करना ही होता है । कम्पनी का समामेलन एक तकनीकी कार्य है । व्यावसायिक प्रवर्तक इन सब विधियों से परिचित होते हैं एवं संबंधित कार्यकलापों से भी सम्पर्क भी रहता है, अत: इन्हें कठिनाई नहीं होती है और कार्य भी सरलता एवं शीघ्रता से हो जाता है ।

ये प्रवर्तक अपनी सेवाओं के लिए एकमुश्त राशि अथवा कमीशन अथवा अन्य किसी रूप में पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं ।

(2) **सामयिक प्रवर्तक (occasional promoters) :** इनका मूल व्यवसाय तो कोई अन्य होता है, किन्तु कम्पनी के प्रवर्तक का कार्य भी कभी-कभी कर लेते हैं । उदाहरण के लिए अपने ही व्यवसाय को कम्पनी के रूप में बदलने के लिए अथवा अपने किसी मित्र अथवा परिचित के लिए कम्पनी के प्रवर्तक के रूप में कार्य करने वाले इस वर्ग में आते |

(3) **केवल विशेष स्थितियों में ही प्रवर्तक :** कम्पनी की स्थापना में केवल एक ही व्यक्ति प्रवर्तक के रूप में कार्य नहीं करता बल्कि अनेक प्रवर्तक होते हैं और वे अपने कार्यों का विभाजन कर लेते हैं उदाहरण के लिए यदि एक प्रवर्तक अपनी सम्पत्ति कम्पनी को विक्रय करना चाहता है और वह ऐसा कर लेता है तथा अन्य कार्यों में रूचि नहीं रखता है तो वह इस वर्ग का प्रवर्तक कहलायेगा । कोई प्रवर्तक तकनीकी ज्ञान के कारण प्रवर्तक हो जाता है, वह कम्पनी निर्माण में केवल तकनीकी पक्ष ही देखता है । इसी प्रकार वित्तीय प्रवर्तक भी होता है जो कम्पनी के प्रवर्तन कार्य में अपना धन विनियोग करके वित्त की व्यवस्था करता है ।

(4) **विशिष्ट संस्थाएँ :** ये विशिष्ट संस्थाएँ हैं जो कम्पनियों के निर्माण एवं प्रवर्तन के लिए ही स्थापित की जाती है । विदेशों में, विशेषतः संयुक्त राज्य अमेरिका व जापान में, इस प्रकार की अनेक संस्थाएँ हैं । भारत में राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम इसका उदाहरण है ।

3.7 अन्य विषयों से सम्बन्ध

प्रवर्तक कौन होते हैं ? (who are promoters?)

प्रश्न उत्पन्न होता है कि कोई व्यक्ति प्रवर्तक है या नहीं ? यह कहना गलत है कि प्रत्येक व्यक्ति जो कम्पनी के निर्माण से सम्बन्धित है, प्रवर्तक है । दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि कई ऐसे व्यक्ति जो कम्पनी के निर्माण में अप्रत्यक्ष रूप से कार्य करते हैं, उन्हें कम्पनी का प्रवर्तक नहीं माना जा सकता है । इसीलिए कोई व्यक्ति जो कम्पनी के निर्माण में पेशेवर की हैसियत से कार्य करता है, जैसे कि -

1. पेशेवर सलाहकार, वैधानिक या अन्य सलाहकार प्रवर्तक नहीं कहे जा सकते हैं ।
2. इसी प्रकार वे व्यक्ति जो नये उद्योग को चलाने में लगे हैं और भावी विकास के सम्बन्ध में विशेषज्ञ के रूप में अपनी सेवाएँ देते हैं ।
3. इसके अतिरिक्त ऐसे व्यक्ति जो कम्पनी के निर्माण में केवल अधीनस्थ के रूप में भाग लेते हैं - वकील, प्रविवरण का मुद्रक, विज्ञापन करने वाले एजेण्ट तथा लेखापाल इत्यादि

भी प्रवर्तक नहीं कहे जा सकते हैं, क्योंकि ये अपनी सेवाओं के बदले में प्रवर्तक से पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं, चाहे कम्पनी अस्तित्व में आये या नहीं आये । यदि वह कुछ ऐसे अन्य कार्य करता है जैसे - प्रवर्तक को किसी किसी व्यक्ति के सम्पर्क में लाता है जो नई कम्पनी के अंशों को खरीदने का इच्छुक हो तो वह स्वयं भी प्रवर्तक कहलाने का उत्तरदायी है । अत: कौन व्यक्ति प्रवर्तक है और कौन नहीं । यह एक तथ्यात्मक प्रश्न है, कानून सम्बन्धी नहीं । इसका निर्धारण प्रत्येक विशेष दशा में एक कम्पनी से सम्बन्धित आवश्यक तथ्यों के अध्ययन एवं विश्लेषण और सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए ।

3.8 नियम (प्रवर्तकों की वैधानिक स्थिति एवं नियम) (Legal Positions and Provisions of Promoters)

कम्पनी के प्रवर्तन एवं निर्माण में प्रत्यक्ष सहायता करने वाला कोई भी व्यक्ति प्रवर्तक कहा जाता है । इसलिए प्रवर्तक अपने कार्य से पहचाना जाता है न कि पद से । अत: प्रवर्तक के रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति न तो कम्पनी के प्रन्यासी है, न ही अभिकर्ता एवं न ही स्वामी हैं क्योंकि प्रवर्तन के समय कम्पनी का कोई अस्तित्व नहीं होता है । परन्तु प्रश्न यह है कि कम्पनी में प्रवर्तकों की वैधानिक स्थिति क्या है । हालांकि इस सम्बन्ध में **Specific Relief Act 1963** की कुछ धाराओं को छोड़कर प्रवर्तक की सही वैधानिक स्थिति के बारे में कम्पनी अधिनियम लगभग मौन है लेकिन वैधानिक स्थिति का ठीक उल्लेख करने के लिए यह कहा जा सकता है कि प्रवर्तक का कम्पनी के साथ 'विश्वासाश्रित सम्बन्ध' होता है । लेकिन इतना कहना ही पर्याप्त नहीं है । अत: कम्पनी में प्रवर्तक की वैधानिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिन्दुओं का अध्ययन करना आवश्यक है:-

(1) **प्रवर्तक कम्पनी का एजेन्ट, स्वामी अथवा प्रन्यासी नहीं है (promoter is not an agent, principal or trustee of the company):** व्यावहारिक दृष्टि से प्रवर्तक कम्पनी के प्रवर्तन एवं निर्माण से सम्बन्धित सभी कार्य करता है । किन्तु वैधानिक दृष्टि से प्रवर्तक कम्पनी का एजेन्ट नहीं हो सकता है । समामेलन के पूर्व कम्पनी अस्तित्व में ही नहीं होती है तो स्वामी कहाँ ? बिना स्वामी के एजेण्ट का सम्बन्ध नहीं हो सकता है । यही कारण है कि प्रवर्तकों द्वारा तृतीय पक्षकारों से किए गए अनुबन्धों एवं कार्यों का कम्पनी समर्थन अथवा पुष्टिकरण नहीं कर सकती है । इसलिए एक विवाद में यह निर्णय किया गया कि प्रवर्तक कम्पनी का एजेन्ट नहीं होता है क्योंकि वह कम्पनी जो अभी अस्तित्व में ही नहीं आयी है, एजेन्ट नहीं रख सकती है । महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रवर्तक के रूप में कार्य करने वाले व्यक्तियों की स्थिति प्रन्यासी की भाँति नहीं होती है क्योंकि प्रन्यास नाम की कोई वस्तु अस्तित्व में ही नहीं होती है ।

(2) **प्रवर्तक का कम्पनी के साथ विश्वासाश्रित सम्बन्ध होता है (the promoter stands in a fiduciary relationship to the company)** यद्यपि प्रवर्तक निर्मित कम्पनी का न तो एजेन्ट होता है और न ही प्रन्यासी, अपितु उसका कम्पनी एवं सम्भावित सदस्यों के मध्य केवल एक विश्वासाश्रित सम्बन्ध होता है । लार्ड केयर्न्स ने निर्णय देते हुए लिखा

है कि "कम्पनी के प्रवर्तक निःसंदेह विश्वासाश्रित स्थिति में होते हैं । कम्पनी का निर्माण एवं रचना उनके हाथ में होती है । उनके हाथ में यह निर्धारित करने का अधिकार होता है कि कैसे और किस रूप में तथा किस प्रकार के निरीक्षण के अन्तर्गत यह अस्तित्व में आना' शुरू करेगी तथा एक व्यापारिक निगम के रूप में कार्य प्रारंभ करेगी । यह सब उन्हीं की शक्ति में निहित होता है ।"

3.9 प्रवर्तकों के कार्य

प्रवर्तक के कार्य अनेक एवं विविध हैं तथा क्षेत्र विस्तृत एवं व्यापक है । अत: प्रवर्तक द्वारा किये जाने वाले कार्य उसके द्वारा स्थापित की जाने वाली कम्पनी के स्वभाव एवं परिस्थितियों पर निर्भर है ।

(1) **विशेषज्ञ से सम्पर्क -** नई कम्पनी की स्थापना अथवा अन्य किसी कम्पनी को क्रय करने की दशा में विशेषज्ञों तथा तकनीकी व्यक्तियों को खोजना, उनसे सम्पर्क स्थापित रखना, उनके द्वारा किये जाने वाले कार्यों एवं उनके पारिश्रमिक निश्चित करना ।

(2) **व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण पत्र :** रजिस्ट्रार के संतुष्ट हो जाने पर कि सभी औपचारिकताएँ पूरी हो गई हैं तो वह व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र जारी कर देता है और कम्पनी अपना व्यापार प्रारम्भ कर देती है ।

(3) **संचालकों का चुनाव :** कम्पनी के प्रथम संचालकों के रूप में कार्य करने वाले एवं पार्षद सीमानियम, अन्तर्नियम आदि पर सार्वजनिक कम्पनी की दशा में सात सदस्य एवं निजी कम्पनी की दशा में दो व्यक्तियों का चयन करना ।

(4) **वैधानिक परामर्शदाता आदि की नियुक्ति:** कम्पनी के वैधानिक परामर्शदाता, अंकेक्षक, दलाल, बैंकर आदि का चयन करेगा ।

(5) **पंजीयन संबंधी कार्यवाही :** कम्पनी के रजिस्ट्रार कार्यालय में आवश्यक शुल्क जमा कराने के पश्चात् अन्तर्नियमों, संचालकों की सहमति, पार्षद सीमानियम, जमा कराये गये शुल्क की रसीद की एक प्रति व अन्य आवश्यक प्रलेख व प्रपत्र फाइल कराये जाएंगे ।

(6) **समामेलन प्रमाण पत्र प्राप्त करना:** रजिस्ट्रार के द्वारा प्रपत्रों की जाँच की जाती है एवं ठीक पाये जाने पर कम्पनी को समामेलन का प्रमाण पत्र निर्गमित कर देगा । समामेलन का प्रमाण पत्र इस बात को दर्शाता है कि समामेलन संबंधी समस्त आवश्यक कार्यवाहियां पूरी कर ली गई है ।

(7) **प्रविवरण तैयार करना :** कम्पनी समामेलन प्रमाण पत्र प्राप्त करने के पश्चात् प्रविवरण तैयार करने व उसे छपवाने की व्यवस्था करेगा । सीमा नियम एवं अन्तर्नियमों पर जिन व्यक्तियों ने हस्ताक्षर किये थे, उन व्यक्तियों से हस्ताक्षर करवा कर, रजिस्ट्रार के कार्यालय में आवश्यक शुल्क जमा कराने की रसीद सहित फाइल करना होगा । यदि कम्पनी प्रविवरण फाइल करना नहीं चाहती है तो उसे उसके स्थान पर स्थानापन्न प्रविवरण आवश्यक शुल्क सहित जमा कराना होगा ।

(8) **आवश्यक प्रलेख तैयार करवाना :** अन्तर्नियमों एवं पार्षद सीमा नियमों को हर कोई व्यक्ति तैयार नहीं कर सकता है क्योंकि यह तकनीकी कार्य है । इसलिए इन प्रलेखों को

तैयार करवाना एवं आवश्यक निर्देश देने की व्यवस्था के साथ इन्हें छपवाने की व्यवस्था भी की जानी चाहिए ।

(9) **नाम-निर्धारण करना :** प्रवर्तक को कम्पनी का नाम निर्धारित करने के पश्चात् उसे रजिस्ट्रार कार्यालय में, निश्चित शुल्क जमा कर, निर्धारित प्रपत्र पर नाम - निर्धारण के लिए आवेदन किया जाना चाहिए । रजिस्ट्रार कार्यालय से "आपत्ति नहीं" की सूचना प्राप्त होने पर कम्पनी का नाम निश्चित हो जाता है ।

(10) **कम्पनी के निर्माण की कल्पना करना:** किसी उद्योग, व्यापार अथवा व्यवसाय को चलाने के लिए कम्पनी के निर्माण की कल्पना करना एवं उसे क्रियान्वित करने के लिए योजना बनाना व प्रयास करना ।

(11) **स्वभाव एवं क्षेत्र निर्धारित करना:** कम्पनी के व्यापार, उद्देश्य अथवा अन्य कार्यों के स्वभाव, क्षेत्र तथा सीमा को निर्धारित करना ।

(12) **संबंधित बातों पर विचार :** प्रवर्तक का मुख्य कार्य है कि उसे कम्पनी के निर्माण से पूर्व अनेक बातों पर विचार करना चाहिए । उदाहरण के लिए - राज्य सरकारों द्वारा क्या कोई विशेष सुविधा उपलब्ध करवायी जा रही है जल शक्ति, यातायात व संदेशवाहन के साधनों की उपलब्धता क्या है?

(13) **प्रारंभिक अनुबन्ध करना :** यदि किसी कम्पनी का निर्माण किसी चालू व्यवसाय को खरीदने के लिए किया जा रहा है तो जिस व्यापार को खरीदने के लिए किया जा रहा है उसके संबंध में बातचीत करना तथा विक्रेता से अनुबन्ध करना ।

(14) **पंजीकृत कार्यालय का निर्धारण :** प्रवर्तक द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय किस राज्य में स्थापित किया जायेगा तत्पश्चात् नगर का निर्धारण किया जायेगा कि कौनसे नगर में यह सुविधाजनक रहेगा ।

(15) **लाइसेंस प्राप्त करना :** प्रवर्तक द्वारा उद्योग अधिनियम, 1951 तथा अन्य अधिनियमों के अन्तर्गत सरकार द्वारा लाईसेंस प्राप्त किया जाना चाहिए । यदि कम्पनी एक वर्ष की अवधि में छ लाख रूपये अथवा अधिक पूँजी का निर्गमन करती है तो उसे "सेबी" की अनुमति पूँजी निर्गमन के लिए आवश्यक है ।

(16) **उद्देश्य एवं पूँजी का निर्धारण** :कम्पनी के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए एवं कम्पनी की पूंजी निर्धारित करने में विशेष सतर्कता की आवश्यकता होती है क्योंकि उसमें बाद में परिवर्तन करना एक जटिलता का कार्य है । एक लाख रूपये की अधिकृत पूंजी वाली कम्पनी को लगभग 4,000/ - रूपये शुल्क देना होता है ।

(17) **न्यूनतम अभिदान की व्यवस्था करना :** न्यूनतम अभिदान की राशि प्राप्त नहीं होने पर कम्पनी द्वारा किये गये सभी कार्य एवं खर्चे बेकार हो जाते हैं अत: कम्पनी के प्रवर्तकों को न्यूनतम अभिदान की राशि निश्चित करनी पड़ती है और सुरक्षा हेतु इसकी व्यवस्था भी कर लेनी चाहिए ।

(18) **स्टॉक एक्सचेंज को आवेदन:** यदि कम्पनी अपने अंशों में व्यवहार मान्यता प्राप्त stock exchange में करना चाहती है तो उसे आवेदन पत्र, शुल्क जमा कराना एवं अन्य औपचारिकताएँ पूरी करके अनुमति प्राप्त करना आवश्यक होता है ।

(19) **अंशों के लिए आवेदन पत्र:** अंशों को क्रय करने के लिए आवेदन पत्र एवं राशि प्राप्त होती है, वह किसी अनुसूचित बैंक में सीधे ही जमा कर दी जाती है । बैंक उस राशि को अपने पास रख लेता है, रसीद अंश आवेदक को भेज देता है और ऐसे आवेदन पत्र कम्पनी के पास रिकार्ड के लिए भेज देता है ।

(20) **अभिगोपकों एवं दलालों की नियुक्ति :** यदि समस्त अंशों का अभिगोपन हो सके तो शेष के लिए दलाल नियुक्त किए जा सकते हैं । प्रविवरण में अभिगोपकों व दलालों के नाम, पते व अन्य विवरण दिये होते हैं ।

3.10 उदाहरण

इस्मा सिल्वर माइनिंग कम्पनी बनाम ग्रान्ट नामक विवाद महत्त्वपूर्ण है जिसमें "ग्रान्ट" ने विक्रेताओं से एक अनुबन्ध किया कि वे उसके द्वारा निर्मित की जाने वाली कम्पनी को खान बेचेंगे । तत्पश्चात् उसने एक कम्पनी का निर्माण किया, संचालकों को नियुक्त किया कम्पनी के एजेन्ट के रूप में कार्य करते हुए अपने मनोनीत व्यक्ति को खान बेचने का समझौता करवाया तथा संचालकों से अनुबन्ध को स्वीकृत कराया । ऐसी स्थिति में "ग्रान्ट" कम्पनी का प्रवर्तक है अथवा नहीं । यह निर्णय दिया गया कि वह कम्पनी का प्रवर्तक है । इसके अतिरिक्त यदि एक व्यक्ति कम्पनी के निर्माण का आंशिक या सम्पूर्ण दायित्व ग्रहण करता है और प्रवर्तन सम्बन्धी कार्यों के लिए अपना दायित्व स्वीकार करता है तो अप्रत्यक्ष रूप से कार्य करने वाला व्यक्ति भी प्रवर्तकों में गिना जायेगा । यदि एक व्यक्ति ने कम्पनी के प्रवर्तन सम्बन्धी कार्यवाहियों में तुलनात्मक रूप से आशिक भाग लिया है तो वह भी कम्पनी का प्रवर्तक कहा जा सकता है ।

3.11 सारांश

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि प्रवर्तन से आशय उन समस्त क्रियाओं की श्रृंखला से है जो किसी कम्पनी के जन्म देने के समय से लेकर कम्पनी का व्यवसाय प्रारम्भ करने की स्थिति लाने के समय तक किये जाते हैं । 'समस्त क्रियाओं शब्द विस्तृत अर्थ में प्रयोग किये गये हैं जिनके अन्तर्गत वे सभी "क्रियाएँ" सम्मिलित की जाती हैं जो कानून, वित्त एवं प्रारंभिक प्रबन्ध से सम्बन्धित है । इस प्रकार प्रवर्तन एक प्रक्रिया है जो व्यवसाय को स्थापित करने के विचार से अंकुरित होने से प्रारम्भ होता है और व्यवसाय को प्रारम्भ करने की स्थिति में लाने पर समाप्त हो जाता है ।

3.12 अभ्यास

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. प्रवर्तन क्या है?
2. प्रवर्तक की परिभाषा दीजिए?
3. व्यावसायिक प्रवर्तक कौन होते हैं?
4. प्रवर्तक कौन होते है?
5. प्रवर्तक के मुख्य दो उद्देश्य बताइये?

अति लघुत्तरात्मक प्रश्न :

1. प्रवर्तक कौन हो सकता है?
2. प्रवर्तक को विशेषज्ञों से क्यों सम्पर्क करना चाहिए ?
3. लाइसेंस प्राप्त करना क्यों आवश्यक है?
4. प्रवर्तन की आवश्यकता में दो महत्त्वपूर्ण बातें कौन सी हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. कम्पनी के प्रवर्तन से क्या अभिप्राय होता है? इसके विभिन्न प्रकारों को समझाइये ।
2. प्रवर्तक का अर्थ एवं परिभाषा को समझाते हुए प्रवर्तकों के गुणों को समझाइये ।
3. प्रवर्तकों की वैधानिक स्थिति एवं नियम को समझाइये ।
4. प्रवर्तकों के कार्यों का उल्लेख कीजिए ।

3.13 उपयोगी पुस्तकें

1. डी. आर.एल. नौलखा - कम्पनी अधिनियम
2. M.j. Mathew - Company law

इकाई - 4:- पार्षद सीमानियम (memorandum of association)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 इतिहास एवं विकास

4.3 अर्थ एवं परिभाषा

4.4 महत्व

4.5 कार्य प्रणाली

4.6 विधि

4.7 अन्य विषयों से सम्बन्ध

- सीमानियम का अभिदाता कौन हो सकता है?
- समामेलन नैतिकता का दुरूपयोग

4.8 पार्षद सीमानियम के नियम

4.9 उदाहरण

4.10 सारांश

4.11 अभ्यास

4.12 उपयोगी पुस्तकें

4.0 उद्देश्य

पार्षद सीमानियम के उद्देश्य अंशधारियों. ऋणदाताओं तथा उन सब व्यक्तियों को जो कम्पनी के साथ व्यवहार करते हैं, इस योग्य बनाना है कि वे जान सकें कि कम्पनी का स्वीकृत कार्यक्षेत्र क्या है ' इसके अतिरिक्त एक विवाद के निर्णय में लार्ड रेनबरी ने पार्षद सीमानियम के निम्नलिखित दो उद्देश्य बताये -

(i) **कम्पनी के अधिकार तथा कार्य सीमाओं से अवगत कराना** - कम्पनी के पार्षद सीमानियम का प्रथम उद्देश्य यह है कि कम्पनी का अंशधारी बनने का अभिप्राय रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस बात से अवगत कराना है कि उसका रूपया किस क्षेत्र में या किस कार्य में प्रयुक्त किया जाता तथा कम्पनी में अपनी पूंजी का विनियोग कर उसने क्या जोखिम उठायी है ।

(ii) **अनुबन्धनीय स्थिति से अवगत कराना** - कम्पनी के पार्षद सीमानियम का द्‌वितीय उद्देश्य यह है कि कम्पनी से व्यवहार करने वाले प्रत्येक बाह्य व्यक्ति को यह अवगत कराना है कि कम्पनी के क्या उद्देश्य है तथा कम्पनी से जिस विषय पर अनुबन्ध किया जाने वाला है, वह कम्पनी के उद्देश्यों के सीमा क्षेत्र में है । दूसरे शब्दों में, पार्षद सीमानियम का यह उद्देश्य है कि कम्पनी को किस प्रकार का अनुबन्ध करने का अधिकार है और किस प्रकार का नहीं ।

4.1 प्रस्तावना

साधारणतः पार्षद सीमानियम का आशय कम्पनी के एक आधारभूत प्रलेख अथवा अधिकार पत्र से है जो कम्पनी के उद्देश्यों को परिभाषित करता है तथा अधिकारों की सीमाएँ निश्चित करता है । दूसरे शब्दों में यह एक ऐसा प्रलेख है जो कम्पनी का नाम, स्थान, उद्देश्य, पूंजी तथा सदस्यों के दायित्व आदि की जानकारी देता है ।

4.2 इतिहास एवं विकास

कम्पनी का समामेलन कराने से पूर्व अनेक प्रलेखों को तैयार करना होता है । इन प्रलेखों में "पार्षद सीमानियम" सबसे महत्वपूर्ण है । इसके अन्तर्गत कम्पनी के उद्देश्यों का उल्लेख किया जाता है । इसके बाहर किया हुआ कार्य व्यर्थ माना जाता है । अत: इसका निर्माण भी सावधानी से किया जाना' चाहिए । हम यह कह सकते है कि पार्षद सीमानियम कम्पनी का एक आधारभूत प्रलेख या अधिकार पत्र है जो उसके उद्देश्यों को परिभाषित करता है तथा कम्पनी के अधिकार की सीमाओं को निर्धारित करता है जिनके अन्तर्गत कोई कम्पनी अपना कार्य करती है ।

4.3 अर्थ एवं परिभाषा

पार्षद सीमानियम के अर्थ को समझने के लिए निम्नलिखित आधार पर विभाजित की गयी परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है-

(i) कम्पनी अधिनियम के अनुसार दी गई परिभाषाएं

(ii) पार्षद सीमानियम के महत्व के आधार पर दी गयी परिभाषाएँ

(iii) पार्षद सीमानियम के कार्यक्षेत्र के आधार पर दी गयी परिभाषाएँ ।

(i) **कम्पनी अधिनियम के अनुसार दी गयी परिभाषा धारा 2(28) के अनुसार -** सीमानियम से आशय एक कम्पनी के उस पार्षद सीमा नियम से है जो पिछले किसी कम्पनी अधिनियम अथवा इस अधिनियम के अन्तर्गत मूल रूप से बनाया गया अथवा समय-समय पर परिवर्तित किया गया हो ।

यह परिभाषा अस्पष्ट प्रतीत होती है क्योंकि यह परिभाषा सीमानियम के लक्षणों पर प्रकाश नहीं डालती है । अत: पार्षद सीमा नियम का स्वरूप, पद्धति एवं अन्य बातों को समझने एवं अध्ययन करने के लिए निम्न परिभाषाओं का अध्ययन करना होगा ।

(ii) पार्षद सीमानियम के महत्व के आधार पर दी गयी परिभाषाएँ-

"सीमानियम में वे मूलभूत दशाएँ होती हैं, केवल जिन पर ही कम्पनी के समामेलन की अनुमति होती है ।"

-आसबरी बनाम वाटसन

"पार्षद सीमानियम प्रस्तावित कम्पनी से संबंधित एक महत्त्वपूर्ण प्रलेख है ।"

- पामर

"सीमानियम वह क्षेत्र है जिसके बाहर जाकर कम्पनी कार्य नहीं कर सकती, और उस क्षेत्र के अन्दर अंशधारी अपने प्रशासन हेतु ऐसे नियम बना सकते हैं, जिन्हें वे उचित समझे ।"

- लार्ड केयर्न्स

(iii) पार्षद सीमानियम के कार्यक्षेत्र के आधार पर दी गयी परिभाषाएँ-

"पार्षद सीमानियम कम्पनी का अधिकार पत्र है जो उसकी शक्तियों की सीमाओं को परिभाषित करता है |"

-न्यायाधीश चार्ल्स वर्थ

"सीमानियमों का कार्य अंशधारियों, ऋणदाताओं तथा उन व्यक्तियों को जो कम्पनी के साथ व्यवहार करते हैं, इस योग्य बनाना है कि वे यह जान सके कि कम्पनी का सम्पूर्ण कार्यक्षेत्र क्या है ?

- लार्ड मैकमिलन

निष्कर्ष: एक कम्पनी का पार्षद सीमानियम-

(i) कम्पनी की स्थापना जिन उद्देश्यों के लिए स्थापित की जाती है उन उद्देश्यों का उल्लेख होता है ।

(ii) कुछ विशिष्ट परिस्थितियों को छोड़कर उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता है ।

(iii) कम्पनी का आधारभूत प्रलेख होता है ।

(iv) यह कम्पनी के अधिकारों की सीमाएँ निश्चित करता है ।

(v) यह सार्वजनिक अथवा निजी कम्पनी द्वारा मौलिक रूप से तैयार किया जाता है और रजिस्ट्रार कार्यालय में जमा करना होता है ।

4.4 महत्व: पार्षद सीमानियम का महत्व

निम्नलिखित विशेषताओं के कारण पार्षद सीमानियम कम्पनी का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रलेख माना जाता है:

(i) **कम्पनी का अपरिवर्तनीय चार्टर:** इस प्रलेख का इतना अधिक महत्व है कि सन् 1890 तक इंग्लैण्ड में इसे अपरिवर्तनीय चार्टर माना जाता था । फलतः कम्पनियों की कार्यवाहियों में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था । इसी कारण अधिनियम में कुछ विशेष दशाओं व विशेष परिस्थितियों में कुछ सीमा तक इसके परिवर्तन के लिए व्यवस्था की गयी है । इस व्यवस्था को छोड़कर पार्षद सीमानियम अब भी अपरिवर्तनीय चार्टर माना जाता है क्योंकि यह कम्पनी की आधारशिला है इसलिए यह लेनदारों, बाहरी व्यक्तियों तथा अंशधारियों के हित में है कि इसे बार-बार परिवर्तित न किया जाय । वर्तमान कम्पनी अधिनियम की धारा 16 इस प्रपत्र के अपरिवर्तनीय स्वभाव को मान्यता देती है । इस धारा में दिया हुआ है कि कम्पनी अपने पार्षद सीमानियम में, उन दशाओं उस रीति और सीमा को छोड़कर जिन्हें इस अधिनियम की धारा 17 से व 9 तक दिया गया है, कोई परिवर्तन नहीं कर सकती है । इसमें अन्य किसी

प्रकार का भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है, चाहे इसके सब सदस्य साधारण सभा में परिवर्तन के लिए तैयार हों ।

(ii) **मौलिक प्रलेख:** कम्पनी के सीमानियम की परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि सीमानियम प्रत्येक कम्पनी का एक मौलिक प्रपत्र है जिसे बनाना एवं रजिस्ट्रार को प्रेषित करना अनिवार्य है । इसके अभाव में कम्पनी का समामेलन अथवा रजिस्ट्रेशन नहीं हो सकता है ।

(iii) **कार्य क्षेत्र निर्धारक**: पार्षद सीमानियम कम्पनी के कार्य क्षेत्र को निर्धारित करता है । कम्पनी इसी निर्धारित सीमा में कार्य कर सकती है ।

(iv) **कम्पनी के अधिकारों का निर्धारण**: कम्पनी के पार्षद सीमानियम में उद्देश्य वाक्य के अन्तर्गत कम्पनी के उद्देश्यों, कार्यों एवं अधिकारों का समुचित विवरण होता है । अत: कम्पनी इन्हीं के अन्तर्गत कार्यों को करने का अधिकार रखती है । यदि कम्पनी का कोई भी कार्य कम्पनी के अधिकार क्षेत्र में नहीं है अथवा जो उसके उद्देश्यों एवं कार्यों से यथोचित रूप में संबंधित नहीं है तो वह कम्पनी के अधिकारों के बाहर का कार्य माना जायेगा और राजनियमानुसार व्यर्थ होगा ।

(v) **राष्ट्रीय हितों का प्रहरी:** पार्षद सीमानियम को 'राष्ट्रीय हितों का प्रहरी भी कहा जाता है । सीमानियम में कम्पनी के उद्देश्य दिए हुए होते हैं अत: ऐसी कम्पनी का समामेलन नहीं कराया जा सकता है जिसके उद्देश्य राष्ट्रीय हित, लोकनीति अथवा लोक हित के विरूद्ध हों । अत: इस प्रलेख के राष्ट्रीय हितों का सजग प्रहरी कहा जाता है

4.5 कार्य-प्रणाली

(i) **सीमानियम का प्रारूप:** कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्त में अनुसूची-1 की सारिणी B,C,D तथा E में विभिन्न प्रकार की कम्पनियों के लिए पार्षद सीमानियम आदर्श रूप में पथ-प्रदर्शक के रूप में दिए गए हं् । कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत चार प्रकार की कम्पनियाँ स्थापित की जा सकती हैं । इनके लिए सीमानियमों के आदर्श रूप निम्नलिखित तालिकाओं में दिए गए हैं । स्थापित होने वाली कम्पनी को चाहिए कि अपने सीमानियमों को जहाँ तक हो सके, उनके अनुरूप बनाए ।

कम्पनी	सारिणी
अंशों द्वारा सीमित	B
गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी	C
गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी	D
असीमित कम्पनी	E

(ii) **मुद्रित होना चाहिए:** प्रत्येक कम्पनी का पार्षद सीमानियम मुद्रित होना चाहिए । ऐसा अधिनियम का आदेश है । अत: टंकित अथवा साइक्लोस्टाइल्ड पार्षद सीमानियम मान्य नहीं होते हैं, यह ध्यातव्य है ।

(iii) **परिच्छेदों में विभक्त**: पार्षद सीमानियम की समस्त सामग्री आवश्यक एवं उचित परिच्छेदों में विभक्त होनी चाहिए । ऐसा न हो कि परिच्छेद बनाए ही न जाएं और समस्त सामग्री एक साथ ही दे दी जाए ।

(iv) **अभिदाताओं का विवरण:** सीमानियम में प्रत्येक अभिदाता का नाम, पिता का नाम, घर का पता, व्यवसाय, लिये जाने वाले अंशों की संख्या एवं अन्य विवरण होने चाहिए । अभिदाताओं के नाम के पूर्व भी क्रमागत संख्या होनी चाहिए । अन्त में WITNESS का, जिनके समक्ष अभिदाताओं ने हस्ताक्षर किये हैं, नाम, पता, व्यवसाय आदि भी होना चाहिए ।

(v) **प्रत्येक अभिदाता द्वारा हस्ताक्षर**: (a) अपने नाम, पते आदि के आगे प्रत्येक अभिदाता को साक्षी के समक्ष हस्ताक्षर करने चाहिए । व्यवहार में सीमानियम की मूल प्रति अथवा प्रतियों पर तो अभिदाता हस्ताक्षर स्वयं कर देता है और प्रत्येक मुद्रित प्रतिलिपि पर उसे हस्ताक्षर करने की अथवा हस्ताक्षर का ब्लॉक बनवा कर छपवाने की आवश्यकता नहीं होती । वरन् उसके हस्ताक्षर के स्थान पर 'ह' अथवा 'हस्ताक्षरित' और उसका नाम छपवा दिया जाता है । यह अधिनियम द्वारा मान्य है ।

(b) यदि मूल अभिदाता वहाँ उपलब्ध न हो, अन्य किसी नगर अथवा विदेश में हो तो उसके स्थान पर उसका प्रतिनिधि हस्ताक्षर कर सकता है, किन्तु ऐसा करने के लिए प्रतिनिधि के पास, लिखित अथवा मौखिक अधिकार अवश्य होना चाहिए । अधिनियम में ऐसी व्यवस्था सुविधा एवं समय की बचत की दृष्टि से दी गई है ।

4.6 विधि: पार्षद सीमानियम के निर्माण की विधि

(i) **मुद्रित एवं अनुच्छेदों में विभाजित:** धारा 15 (अ) (ब) के अनुसार पार्षद सीमानियम को मुद्रित एवं अनुच्छेदों मे विभाजित होना चाहिए और प्रत्येक अनुच्छेद पर क्रमागत संख्या पड़ी रहनी चाहिए ।

(ii) **हस्ताक्षरित एवं प्रमाणित होना**: धारा 15 (स) के अनुसार पार्षद सीमानियम पर प्रत्येक प्राथमिक सदस्य को कम से कम एक गवाह की उपस्थिति में अपने हस्ताक्षर करने चाहिए और उन्हें उसके साथ अपना पता, विवरण और पेशा भी लिखना चाहिए । गवाह इन हस्ताक्षरों को प्रमाणित करेगा और साथ ही साथ अपना पता, विवरण और पेशा भी लिख देगा । एक कम्पनी चूंकि कानूनी व्यक्ति है अत: दूसरी कम्पनी के सीमानियम की Subscriber हो सकती है पर संचालक नहीं बन सकती ।

(iii) **हस्ताक्षरकर्ताओं की न्यूनतम संख्या**: धारा 12(1) के अनुसार प्रत्येक पब्लिक कम्पनी में कम से कम सात और प्रत्येक प्राइवेट कम्पनी में कम से कम दो सदस्यों को पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करना चाहिए ।

(iv) **सदस्य के स्थान पर एजेण्ट द्वारा हस्ताक्षर**: सदस्यों के स्थान पर उनके अधिकृत एजेण्ट पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर कर सकते हैं ।

(v) हस्ताक्षर के समय, यदि आवश्यक हो तो तारीख की मुहर का प्रयोग किया जा सकता है।

(vi) **सदस्यों से असम्बन्धित व्यक्ति द्वारा प्रमाणन**: सभी सदस्यों के लिए एक गवाह ही पर्याप्त हो सकता है, परन्तु एक सदस्य के हस्ताक्षर को दूसरा सदस्य प्रमाणित नहीं कर

सकता, क्योंकि प्रमाणन एक ऐसे व्यक्ति द्वारा कराया जाना चाहिए जो उस सौदे से सम्बन्धित है ।

4.7 अन्य विषयों से संबन्ध

सीमानियम का अभिदाता कौन हो सकता है?

(Who may be subscriber?)

(i) **कम्पनी अथवा समामेलन संस्था**: कम्पनी एक वैधानिक, किन्तु कृत्रिम व्यक्ति है । वैधानिक व्यक्ति होने के कारण, एक कम्पनी सीमानियम की अभिदाता हो सकती है, किन्तु कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण स्वयं सीमानियम पर हस्ताक्षर नहीं कर सकती । कम्पनी की ओर से उसका अधिकार प्राप्त प्रतिनिधि हस्ताक्षर कर सकता है । अत: एक कम्पनी किसी अन्य कम्पनी के सीमानियम की अभिदाता तो बन सकती है, किन्तु उसकी संचालक नहीं बन सकती ।

(ii) **एक साझेदारी फर्म :** एक साझेदारी फर्म, वैधानिक व्यक्ति नहीं होती वरन् वैधानिक संस्था होती है । अत: सीमानियम की अभिदाता नहीं बन सकती है किन्तु उस फर्म का साझेदार, साझेदार की हैसियत अथवा फर्म के एजेण्ट के रूप में नहीं वरन् व्यक्तिगत रूप में कम्पनी का अभिदाता बन सकता है । यह फर्म उस साझेदार के अभिदाता के रूप में, कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं होंगी ।

(iii) **विवाहित स्त्री :** एक विवाहिता स्त्री में अनुबन्ध करने की क्षमता होती है अत: वह सीमानियम की अभिदाता हो सकती है किन्तु उसका पति अपनी स्त्री के कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं होगा ।

(iv) **विदेशी:** विदेशी को कम्पनी के सीमानियम का अभिदाता बनने पर कोई रोक नहीं है किन्तु एक शत्रु अभिदाता नहीं हो सकता है । कम्पनी के सीमानियम का अभिदाता एक अथवा अधिक अथवा समस्त व्यक्ति विदेशी हो सकते हैं । यदि ऐसी कम्पनी भारत में समामेलित हुई है तो वह भारतीय कम्पनी ही मानी जाएगी ।

समामेलन नैतिकता का दुरूपयोग

(Abuse of corporate morality)

वर्तमान कम्पनी प्रबन्धक व्यवस्था में प्रायः यह देखा जा रहा है कि कुछ प्रतिष्ठित एवं विख्यात व्यक्ति, किन्तु जिनका इस प्रबन्ध व्यवस्था में ज्ञान या तो बिल्कुल नहीं है अथवा अति अल्प है, अपना नाम देकर कतिपय कम्पनियों की प्रबन्ध व्यवस्था से अपने को सम्बद्ध कर लेते हैं और इस प्रकार जनसाधारण को कम्पनी के अंश क्रय करने के लिए भुलावा देते है । इस प्रकार कतिपय अनैतिक एवं बेईमान प्रबन्धकीय व्यक्ति, इन प्रतिष्ठित व्यक्ति के नाम की वैशाखी से सहारे धनी हो गये हैं । इसके अन्तिम परिणाम के रूप में कम्पनी प्रायः समाप्त हो जाती है एवं अंशधारियों को भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है । अत: कम्पनी अधिनियम में अंशधारियों को ऐसे नामदाताओं तथा कठपुतली संचालकों से सुरक्षा दिलाने के लिए आवश्यक प्रावधान और जोड़ने की आवश्यकता है ।

4.8 पार्षद सीमानियम के नियम

कम्पनी अधिनियम की धारा 13 के अनुसार पार्षद सीमानियम में निम्नलिखित बातों का समावेश किया जाना अनिवार्य होता है अन्यथा कम्पनी का समामेलन नहीं हो सकता है।

(1) **कम्पनी का नाम अथवा नाम वाक्य:** प्रत्येक कम्पनी के सीमानियम में कम्पनी के नाम का लिखा जाना अनिवार्य होता है । विधान द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण पहचान एवं सम्बोधन के लिए भी कम्पनी का कोई न कोई नाम देना आवश्यक है । कम्पनी का नाम इसके व्यक्तिगत अस्तित्व का निशान होता है ।

कम्पनी अपने नाम का चुनाव करने के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्र होती है लेकिन नाम का चुनाव करने से पूर्व कम्पनी अधिनियम के प्रतिबन्धों का भी ध्यान रखा जाना चाहिए-

(i) किसी भी कम्पनी का ऐसा नाम रजिस्टर्ड नहीं किया जायेगा जो कि केन्द्रीय सरकार की दृष्टि में अवांछनीय हो ।

(ii) यदि कोई कम्पनी अपना रजिस्ट्रेशन ऐसे नाम से करा लेती है जो कि ऐसे नाम का रजिस्ट्रेशन पहले से हो तो ऐसा रजिस्ट्रेशन केन्द्रीय सरकार की दृष्टि में ऐसा नाम अवांछनीय माना जाता है ।

(iii) कम्पनी के नाम का रजिस्ट्रेशन ऐसा नहीं होना चाहिए जो कि जनता को धोखा देने वाला हो ।

(iv) भारतीय कम्पनी अधिनियम के अनुसार सार्वजनिक कम्पनी को नाम के अन्त में 'लिमिटेड' एवं निजी कम्पनी को अपने नाम के अन्त में 'प्राइवेट लिमिटेड' शब्द लिखना अनिवार्य होता है ।

(v) प्रत्येक कम्पनी का नाम कम्पनी की सार्वमुद्रा पर स्पष्ट अक्षरों से खुदवाना चाहिए ।

(vi) कम्पनी का नाम ऐसा ना हो जो अन्य प्रसिद्ध कम्पनियों के संक्षिप्त नामों से मिलता जुलता है । उदा. H.M.T.,L.I.C.,T.T.M.L.

(2) **कम्पनी का रजिस्टर्ड कार्यालय अथवा स्थान वाक्य :** इसके अन्तर्गत कम्पनी को उस राज्य का नाम लिखना चाहिए जिसमें कम्पनी का रजिस्टर्ड कार्यालय स्थापित किया जायेगा ।

कम्पनी का समामेलन हो जाने के 30 दिन के भीतर या व्यापार शुरू करने की तिथि से, जो भी पहले हो फार्म संख्या- 18 में कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय की सूचना रजिस्ट्रार को देनी होंगी, जिससे कि उसी पते पर पत्राचार किया जा सकें ।

(3) **कम्पनी के उद्देश्य अथवा उद्देश्य वाक्य:** कोई भी कम्पनी अपने उद्देश्य वाक्य में लिखित व्यवसाय के अतिरिक्त अन्य कार्य नहीं कर सकती है । यदि कम्पनी ऐसा करती है तो ये सभी कार्य व्यर्थ और अधिकारों के बाहर माने जाते है ।

उद्देश्य वाक्य के मुख्य प्रयोजन :

(i) **ऋणदाताओं के हितों की सुरक्षा :** ऋणदाता इस बात से आश्वस्त रहते हैं कि उनके द्वारा कम्पनी को दिया गया ऋण सीमा में उल्लिखित उद्देश्यों के अनुरूप ही उपयोग में लिया जायेगा ।

(ii) **विनियोक्ताओं की पूंजी की सुरक्षा :** जिन व्यक्तियों ने कम्पनी की पूँजी में विनियोग किया है वे इस बात की अपेक्षा करते हैं कि उन्हें कम्पनी के उद्देश्य एवं कार्यों की जानकारी मिलती

रहे ताकि यह अनुमान लगाया जा सके कि उनकी पूँजी का सर्वोत्तम उपयोग किया जा रहा है ।

उद्देश्य वाक्य का महत्व :

(i) पार्षद सीमानियम यह स्पष्ट करने में सहायक होता है कि कौन-कौन से कार्य कम्पनी के कार्यक्षेत्र के बाहर माने जाये ।

(ii) उद्देश्य वाक्य जितना स्पष्ट होगा, कम्पनी को समय-समय पर स्पष्ट दिशा-निर्देश स्वत: मिलता रहेगा ।

(iii) उद्देश्य वाक्य संचालकों के अधिकार क्षेत्र का निर्धारक एवं उनकी गतिविधियों पर नियंत्रण करने में सहायक होता है ।

(iv) सीमानियम अंशधारियों एवं लेनदारों के हितों को निरन्तर संरक्षण प्रदान करता है।

(4) **कम्पनी के सदस्यों का दायित्व अथवा दायित्व वाक्य:** कम्पनी के पार्षद सीमानियम के दायित्व वाक्य में यह स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए कि कम्पनी के सदस्यों का दायित्व अंश सीमित है अथवा गारन्टी सीमित ।

गारन्टी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में कम्पनी समापन पर सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा दी गयी गारण्टी राशि तक ही सीमित होता है अर्थात् कम्पनी के समापन की दशा में सदस्य कम्पनी के ऋणों और दायित्वों का भुगतान करने के लिए कम्पनी की सम्पत्ति में अधिक से अधिक केवल निर्धारित राशि तक अंशदान के लिए ही उत्तरदायी होंगे । यदि सदस्यों का दायित्व अंशों द्वारा सीमित है तो कम्पनी के समापन की दशा में उनका दायित्व अंशों की अदल राशि अर्थात् जो राशि अभी तक नहीं चुकायी गयी है (UNPAID AMOUNT) तक ही सीमित होगा ।

(5) **कम्पनी की पूँजी अथवा पूँजी वाक्य :** कम्पनी अधिनियम के अनुसार असीमित दायित्व वाली कम्पनी को छोड़कर एक अंश पूँजी वाली कम्पनी के पार्षद सीमानियम में अंश पूँजी की उस राशि का उल्लेख करना आवश्यक होता है जिस पूँजी से कम्पनी का रजिस्ट्रेशन होने वाला हो तथा उसका निश्चित राशि के अंशों में विभाजन का विवरण देना आवश्यक होता है ।

सीमानियम का प्रत्येक हस्ताक्षरकर्ता कम से कम एक अंश अवश्य लेगा और अपने नाम के सामने अपने द्वारा क्रय किये अंशों की संख्या का विवरण भी देगा । अंश पूँजी को समता एवं पूर्वाधिकार अंशों में विभाजित किया जा सकता है । लेकिन कम्पनी अपने सीमा नियम में अधिकृत पूँजी से अधिक राशि में पूँजी तथा अंकित संख्या से अधिक संख्या में अंशों का निर्गमन नहीं कर सकती है ।

कम्पनी जितनी राशि की पूँजी से अपना रजिस्ट्रेशन करवाती है, उस राशि के अनुसार ही रजिस्ट्रेशन शुल्क देना पड़ता है । न्यूनतम अंश पूँजी निजी कम्पनी की 100000 रूपये तथा सार्वजनिक कम्पनी की 500000 रूपये निर्धारित की गयी है ।

(6) **अभिदाताओं का विवरण अथवा संघ एवं हस्ताक्षर वाक्य:** इसके अन्तर्गत कम्पनी के अभिदाताओं का विवरण होता है । सीमानियम के इस विवरण को संघ वाक्य के नाम से पुकारा जाता है । प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी के समामेलन के लिए कम से कम 7 एवं निजी कम्पनी के लिए कम से कम 2 व्यक्तियों का होना आवश्यक है । कम्पनी का निर्माण करने

वाले व्यक्तियों के नाम, पते एवं व्यवसाय संबंधी विवरण, इस घोषणा के नीचे दिया जाता है, तथा अभिदाताओं के हस्ताक्षर कराये जाते हैं । कम्पनी के सदस्यों ने जितने अंश क्रय किये हैं उनका विवरण (संख्या) भी उनके नाम के सामने लिख दी जाती है । उसके पश्चात् हस्ताक्षर किसी अन्य व्यक्ति से प्रमाणित करवाया जाता है । हस्ताक्षर प्रमाणित करने वाले व्यक्ति के भी नाम, पते एवं व्यवसाय आदि का विवरण लिखना होता है ।

4.9 उदाहरण

(i) **स्टीफेन्स बनाम मैसूर रीफरा माइनिंग कम्पनी:** कम्पनी का मुख्य उद्देश्य मैसूर तथा अन्य स्थानों पर सोने की खानों पर कार्य करना था । कम्पनी ने अफ्रीका के गोल्ड कोस्ट में सोने की खानों का कार्य करने की इच्छा जाहिर की । न्यायालय ने निर्णय दिया कि मैसूर रीफस माइनिंग कम्पनी का मुख्य उद्देश्य भारत में सोने की खानों पर कार्य करना था । अत: उसके उद्देश्य वाक्य मे लिखित 'अन्य' शब्द का तात्पर्य भारत में ही मैसूर के अलावा किसी अन्य जगह पर कार्य करना था, न कि भारत के बाहर ।

(ii) **फोरेस्ट बनाम मैनचेस्टर आदि रेल्वे कम्पनी:** रेल्वे कम्पनी के पास कुछ नावें थी जिनका उपयोग रेल यात्रियों को जलमार्ग द्वारा एक घाट से दूसरे घाट पर उतारने का व्यवसाय करती थी । इसके साथ ही खाली रहने पर उन नावों का नौका विहार के लिए भी उपयोग करती थी, जिसका उद्देश्यों में कोई उल्लेख नहीं था । अत: न्यायाधीश ने निर्णय दिया कि सीमानियम द्वारा कम्पनी के अधिकृत कार्यों के कारण होने वाले प्रासंगिक या अनुषंगीक परिणामों को तब तक अवैध नहीं माना जा सकता है, जब तक वे कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत विशेष रूप से प्रतिबन्धित किये गये हो ।

(iii) **इनरी जर्मन डेट कॉफी कम्पनी:** कम्पनी के पार्षद सीमानियम में यह उल्लेख किया गया कि वह खजूर से कॉफी तैयार करने के लिए एक जर्मन पेटेन्ट प्राप्त करे तथा इसी प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कोई आविष्कार करे अथवा खरीदे । कम्पनी को कॉफी तैयार करने का जर्मन पेटेन्ट स्वीकृत नहीं होने के कारण इस कम्पनी ने स्वीडिश पेटेन्ट प्राप्त किया तथा उसके अन्तर्गत खजूर से कॉफी तैयार की और उसे बेचना प्रारम्भ कर दिया । कम्पनी की स्थिति अच्छी थी तथा उसके अधिकांश सदस्य यह चाहते थे कि कम्पनी यही कारोबार करते रहे । परन्तु न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि कम्पनी के मुख्य उद्देश्य को पूरा करने में असफल हो जाने के कारण उसे अपने मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कार्य करना असंभव हो गया । अत: कम्पनी का समापन कर दिया जाना चाहिए और कम्पनी को समापन का आदेश दे दिया गया ।

4.10 सारांश

प्रत्येक कम्पनी के निर्माण के समय सर्वप्रथम इसे तैयार करना पड़ता है जिस पर कम्पनी का समामेलन होता है और कम्पनी अस्तित्व में आती है । इसके अतिरिक्त यह प्रलेख अपरिवर्तनीय विधान भी है जो अंशधारियों के हितों की रक्षा करता है ।

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि पार्षद सीमानियम कम्पनी का एक आधारभूत प्रलेख या अधिकार पत्र है जो उसके उद्देश्यों को परिभाषित करता है तथा कम्पनी की अधिकार की सीमाओं को निर्धारित करता है जिसके अन्तर्गत कोई कम्पनी

अपना कार्य करती है । पार्षद सीमानियम अंशधारियों, ऋणदाताओं तथा उन सब व्यक्तियों को, जो कम्पनी के साथ व्यवहार करते हैं, इस योग्य बनाना है कि वे जान सके, कि कम्पनी का स्वीकृत कार्यक्षेत्र क्या है?

4.11 अभ्यास

1. पार्षद सीमानियम की परिभाषा दीजिये । कम्पनी के जीवन में पार्षद सीमानियम के महत्व की विवेचना कीजिए ।
2. पार्षद-सीमानियम के विभिन्न वाक्यों को संक्षेप में समझाइये ।
3. (क) पार्षद सीमानियम किसे कहते है?
   (ख) अंशों द्वारा सीमित दायित्व वाली कम्पनी के पार्षद सीमानियम की विषय-सामग्री का संक्षेप में उल्लेख कीजिए ।
4. पार्षद सीमानियम के उद्देश्य समझाते हुए इसका इतिहास एवं विकास का वर्णन कीजिए ।
5. पार्षद सीमानियम के निर्माण की विधि को समझाइये ।

4.12 उपयोगी पुस्तकें

1. Dr.M.J.Mathew – Company Law
2. Dr.R.L.Nolakha – Company Law

इकाई -5: पार्षद अन्तर्नियम (Articles of association)

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 परिभाषाएँ

5.2 लक्षण अथवा विशेषताएँ

5.3 पार्षद अन्तर्नियमों की आवश्यकता

5.4 अन्तर्नियमों का महत्व

5.5 अन्तर्नियमों का कार्य-क्षेत्र

5.6 पार्षद अन्तर्नियमों का प्रारूप

5.7 पार्षद अन्तर्नियमों की विषय-वस्तु

5.8 अन्तर्नियमों में परिवर्तन

5.9 वैधानिक प्रतिबन्ध

5.10 पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में अन्तर

5.11 अधिकारों के बाहर का सिद्धान्त

5.12 सिद्धान्त के अपवाद

5.13 अधिकृत कार्यों का सिद्धान्त

5.14 रचनात्मक सूचना का सिद्धान्त

5.15 आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त

5.16 आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के अपवाद

5.17 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.18 सन्दर्भ पुस्तकें

5.0 प्रस्तावना

एक कम्पनी के पंजीकरण के लिये दो प्रपत्रों-पार्षद सीमा नियम एवं पार्षद अन्तर्नियम का होना आवश्यक है । अन्तर्नियम का साधारण अर्थ है- कम्पनी के आन्तरिक नियम । वे नियम जिनके अनुसार कम्पनी के दिन-प्रतिदिन के व्यवसाय का संचालन किया जाता है ।

5.1 परिभाषाएँ

धारा 2(2) के अनुसार, "अन्तर्नियमों का आशय किसी कम्पनी के उन पार्षद अन्तर्नियमों से है जिनको किसी पूर्व के कम्पनी अधिनियम के अधीन अथवा इस अधिनियम के अधीन मूल रूप से बनाया अथवा समय-समय पर परिवर्तित किया गया है ।"

इस परिभाषा द्वारा हम पार्षद अन्तर्नियम का आशय सही रूप से नहीं समझ सकते हैं । अत: हमें अन्य विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं का अध्ययन करना होगा । कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नानुसार हैं :

न्यायाधीश लॉर्ड बोवेन (Bowen L.J.) के अनुसार, "अन्तर्नियम कम्पनी के आन्तरिक नियम होते हैं"(Articles are the internal regulations of the company)।

लॉर्ड चान्सलर केयर्न्स (Cairns L.C.) के अनुसार, "अन्तर्नियम सम्पूर्ण कम्पनी तथा संचालक मण्डल (GOVERNING BODY) के आपसी अधिकारों, कर्त्तव्यों, शक्तियों को परिभाषित करते हैं तथा उस रीति तथा प्रारूप को निर्धारित करते हैं जिसके अनुसार कम्पनी के व्यवसाय का संचालन किया जाता है तथा उस रीति तथा प्रारूप को परिभाषित किया जाता है, जिसके अनुसार समय-समय पर कम्पनी के आन्तरिक संचालन में परिवर्तन किये जा सकें । "

निष्कर्ष रूप में, पार्षद अन्तर्नियम एक ऐसा प्रलेख है जो कम्पनी के सदस्यों तथा कम्पनी के आपसी सम्बन्धों, कर्त्तव्यों तथा दायित्वों को परिभाषित तथा नियन्त्रित करता है संचालक मण्डल के अधिकारों की सीमा निर्धारित करता है तथा उन नियमों एवं विधियों को स्पष्ट करता है जिनके अनुसार कम्पनी का संचालन किया जाता है ।

5.2 लक्षण अथवा विशेषताएँ (Characteristics)

1. अन्तर्नियम कम्पनी का एक महत्त्वपूर्ण प्रपत्र (DOCUMENT) होता है ।
2. यह सार्वजनिक प्रलेख (PUBLIC DOCUMENT) होता है जिसे कोई भी व्यक्ति देख सकता है, पढ़ सकता है तथा क्रय कर सकता है ।
3. यह कम्पनी के सदस्यों तथा कम्पनी के आपसी संबंधों, अधिकारों, कर्त्तव्यों एवं शक्तियों को परिभाषित करता है ।
4. यह कम्पनी की आन्तरिक व्यवस्था को बनाये रखने का आधार होता है ।
5. यह कम्पनी के व्यवसाय के संचालन का नियमन (REGULATES) करता है ।
6. यह अन्तर्नियम कम्पनी के पार्षद् सीमानियम का पूरक प्रपत्र होता है ।
7. पार्षद अन्तर्नियम एक परिवर्तनीय प्रलेख है जिसे सीमानियम के अधीन आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है ।
8. यह मुद्रित (PRINTED), हस्ताक्षरित तथा अनुच्छेदों में बंटा होता है ।
9. अंशों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी के लिए अन्तर्नियमों का निर्माण करना आवश्यक नहीं है । वह चाहे तो अन्तर्नियम न बनाकर, कम्पनी अधिनियम की प्रथम अनुसूची की सारिणी 'अ' को अन्तर्नियमों के रूप में स्वीकार कर सकती है ।

5.3 पार्षद अन्तर्नियमों की आवश्यकता

किसी भी कम्पनी के वर्गीकरण हेतु अन्तर्नियम आवश्यक हैं । लेकिन अंशों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी को छोड़कर प्रत्येक प्रकार की कम्पनी के लिए अपने अन्तर्नियम बनाना अनिवार्य है । दूसरे शब्दों में, असीमित कम्पनी, गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी अथवा निजी सीमित कम्पनी के लिए पार्षद अन्तर्नियम बनाना तथा उनका पंजीयन करवाना अनिवार्य है (धारा 26) । यदि कोई सार्वजनिक सीमित कम्पनी

चाहे तो अपने स्वंय के अन्तर्नियम बना सकती है । यदि वह अपने अन्तर्नियम नहीं बनाना चाहती है तो कम्पनी अधिनियम की प्रथम अनुसूची की सारणी 'अ' के सभी 99 नियम ही उस कम्पनी के अन्तर्नियम माने जाते हैं । किन्तु ऐसी कम्पनी को अपने सीमानियमों के ऊपर यह लिखना पड़ेगा कि "कम्पनी बिना अन्तर्नियमों के पंजीकृत है ।"

5.4 अन्तर्नियमों का महत्व (importance of articles)

यह कम्पनी का दूसरा महत्वपूर्ण प्रलेख है । कम्पनी के अन्तर्नियमों में, पार्षद सीमानियम में वर्णित उद्देश्यों तथा कार्यो को, कार्यान्वित करने की विधि तथा नियमों का समावेश होता है । अन्तर्नियम कम्पनी एवं कम्पनी के व्यापार के प्रबन्ध-संचालन के संबंध में नियम होते हैं । अन्तर्नियम कम्पनी एवं कम्पनी के सदस्यों के पारस्परिक अधिकारों का विवेचन करते हैं तथा कम्पनी एवं सदस्यों के मध्य समझौते का कार्य करते हैं । कम्पनी के अन्तर्नियमों का बाहरी व्यक्तियों से कोई संबंध नहीं होता है । कम्पनी अपना कार्य-संचालन, जैसे- अंश-हस्तान्तरण, अंश-अपहरण, अंशों पर याचना करना, लाभांश देना, संचालकों की नियुक्ति, कम्पनी की सार्वमुद्रा का प्रयोग, सभाओं की कार्यविधि, पारिश्रमिक के भुगतान आदि के संबंध में अन्तर्नियमों में निहित व्यवस्था का पालन करके कर सकती है । अन्तर्नियमों का महत्व निम्न बातों से स्पष्ट होता है-

1. **रजिस्ट्रेशन के लिए आवश्यक (essential for registration)** - धारा 26 के अनुसार प्रत्येक असीमित दायित्व वाली कम्पनी, अंशों द्वारा सीमित निजी कम्पनी तथा गारन्टी द्वारा सीमित कम्पनी के किए अन्तर्नियम तैयार करना आवश्यक है ।
2. **उद्देश्य प्राप्ति में सहायक (assistance in the achievement of objects)** - पार्षद अन्तर्नियमों में कम्पनी के उद्देश्यों की प्राप्ति के साधनों, रीतियों एवं विधियों आदि का उल्लेख होता है, जिससे कम्पनी को अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में पर्याप्त सुविधा एवं सहायता मिलती है ।
3. **आन्तरिक प्रबन्ध में सहायता (assistance in internal administration)** - अन्तर्नियमों के अन्तर्गत कम्पनी का प्रबन्ध करने हेतु विभिन्न नियमों एवं उपनियमों का उल्लेख भी किया जाता है, जिससे कम्पनी का आन्तरिक प्रबन्ध नियन्त्रित होता है ।
4. **पारस्परिक समझौता (mutual agreement)** - पार्षद अन्तर्नियम कम्पनी के सदस्यों एवं कम्पनी के मध्य पारस्परिक अधिकारों की व्याख्या करता है और सदस्यों के मध्य एक पारस्परिक समझौते की भाँति कार्य करता है ।
5. **कार्यो एवं व्यवहारों का नियमन (regulation of activities)** - कम्पनी अधिनियम की विभिन्न व्यवस्थाओं के अनुसार कम्पनी कुछ कार्यों को तभी कर सकती है जबकि पार्षद अन्तर्नियमों में उनको करने का अधिकार हो ।
6. **व्यावसायिक क्षमता में सहायता (assistance in business efficiency)** -पार्षद अन्तर्नियम को कम्पनी का सार्वजनिक प्रलेख मानने के साथ-साथ व्यापारिक प्रलेख भी माना जाता है तथा इसकी व्याख्या इस प्रकार से की जाती है कि उससे कम्पनी को उचित व्यावसायिक क्षमता प्राप्त करने में सहायता मिल सके ।

5.5 अन्तर्नियमों का कार्य-क्षेत्र (scope of articles)

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि अन्तर्नियम कम्पनी के वे आन्तरिक नियम तथा उपनियम हैं जिनकी सहायता से कम्पनी के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कम्पनी का प्रबन्ध-संचालन किया जाता है । अन्तर्नियम पार्षद सीमानियम के अधीनस्थ (subordinate) होते हैं । इसका अर्थ यह है कि अन्तर्नियम कम्पनी को पार्षद सीमानियम तथा कम्पनी विधान के प्रावधानों के प्रतिकूल कार्य करने का अधिकार प्रदान नहीं कर सकते हैं । यदि कोई कार्य अन्तर्नियमों के अधिकार के बाहर है, किन्तु पार्षद सीमानियम के अधिकार-सीमा के अन्दर है तो कम्पनी ऐसे कार्य की पुष्टि (ratification) आवश्यक प्रस्ताव पारित करके तथा अन्तर्नियमों में आवश्यक परिवर्तन-करके कर सकती है । अन्तर्नियम कम्पनी को उसके कार्य-क्षेत्र की सीमा के बाहर कार्य - करने का अधिकार नहीं दे सकते हैं, उदाहरणार्थ यदि कम्पनी के अन्तर्नियम कम्पनी को पूँजी में से लाभांश वितरण करने का अधिकार देते हैं अथवा कम्पनी के स्वयं के अंश खरीदने का प्रावधान करते हैं तो ऐसे अधिकार व्यर्थ होते हैं ।

कम्पनी के अन्तर्नियम, सामान्य विधान के प्रतिकूल अथवा विधान द्वारा वर्जित या अनैतिक तथा जननीति के प्रतिकूल कार्य करने के अधिकार नहीं दे सकते हैं । ऐसी व्यवस्था व्यर्थ तथा प्रभावशुन्य होंगी । कम्पनी के अन्तर्नियमों के बनाने की स्वतन्त्रता का आशय यह नहीं है कि अन्तर्नियम कम्पनी को पार्षद सीमानियम कम्पनी विधान तथा सामान्य विधान के प्रतिकूल कार्य करने का अधिकार दें । अत: अन्तर्नियम कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा कम्पनी के अधीन होते हैं ।

यदि अंशों द्वारा सीमित कम्पनी अपने अन्तर्नियम बनाती है और उनमें किन्हीं विषयों के संबंध में नियमों का उल्लेख नहीं किया गया है अथवा अन्तर्नियम मौन हैं तो उन विषयों पर सारणी 'अ' में दिये गये नियम ही लागू होंगे । [धारा 28(2)]

5.6 पार्षद अन्तर्नियमों का प्रारूप - (form of articles association)

प्रत्येक प्रकार की कम्पनी के लिए अन्तर्नियमों का अलग-अलग प्रारूप है जो कम्पनी अधिनियम की प्रथम अनुसूची की भिन्न-भिन्न सारणियों में दिये गये हैं । प्रमुख प्रारूप निम्नानुसार हैं:

1. सारणी अ (table A): अंशपूँजी वाली सार्वजनिक सीमित कम्पनी के लिए ।
2. सारणी स (table C): बिना अंशपूँजी वाली गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी के लिए ।
3. सारणी द (table D): अंशपूँजी वाली गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी के लिए ।
4. सारणी इ (टेबल E): असीमित कम्पनियों के लिए ।

पंजीकरण हेतु प्रत्येक कम्पनी को अपने से संबंधित प्रारूप में ही अन्तर्नियमों का निर्माण करना चाहिए अथवा परिस्थितियों के अनुरूप वांछित प्रारूप से यथासम्भव मिलते-जुलते नियम ही बनाने चाहिए ।

कम्पनी को पार्षद अन्तर्नियम के संबंध में निम्नलिखित बातों को भी ध्यान में रखना चाहिए:

(अ) यह छपा हुआ होना चाहिए ।

(ब) यह क्रमशः नम्बर लगा हुआ अनुच्छेदों में बँटा हुआ होना चाहिए ।

(स) पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले प्रत्येक अभिदाता का नाम, पता, व्यवसाय तथा अन्य विवरण इस पर भी होना चाहिए तथा उन सभी के द्वारा किसी व्यक्ति की साक्षी में हस्ताक्षर किये जाने चाहिए । साक्षी का भी नाम, पता, व्यवसाय तथा हस्ताक्षर होने चाहिए । (धारा 30) ।

5.7 पार्षद अन्तर्नियमों की विषय-वस्तु (CONTENT OF ARTICLES OF ASSOCIATION)

सामान्यत: सभी कम्पनियों के अन्तर्नियमों में निम्नलिखित व्यवस्थाएँ अवश्य आवश्यक रूप से दी गई होती है

1. सारणी 'अ' के लागू होने की सीमा - प्रत्येक कम्पनी के अन्तर्नियम में सर्वप्रथम यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि कम्पनी अधिनियम की प्रथम अनुसूची की सारणी 'अ' कम्पनी पर किस सीमा तक लागू होंगी ।
2. **प्रारम्भिक अनुबन्धों की स्वीकृति** - यदि प्रवर्तकों द्वारा कोई प्रारम्भिक अनुबन्ध किए गए हैं तो वे अनुबन्ध किस प्रकार किए जायेंगे?
3. **पूँजी** - कम्पनी द्वारा जारी किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के अंशों का वर्गीकरण, इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के अंशधारियों का लाभांश मतदान के अधिकार तथा अधिकारों में परिवर्तन संबंधी व्यवस्थायें भी दी जानी चाहिए ।
4. **अंशों का आवंटन** - कम्पनी के अंशों के आवंटन की विधि, जारी किये जाने वाले अंशों की संख्या, आवेदन शुल्क, आवंटन राशि, अंशों पर ग्रहणाधिकार (LIEN) आदि से सम्बन्धित व्यवस्थाएँ दी जानी चाहिए ।
5. **अभिगोपन** - कम्पनी के अंशों तथा ऋणपत्रों के अभिगोपन संबंधी नियम भी अन्तर्नियमों में लिख दिये जाने चाहिए । इसके अतिरिक्त अभिगोपन सम्बंधी पारिश्रमिक या कमीशन देने सम्बन्धी प्रावधानों का विशेष रूप से उल्लेख कर देना चाहिए ।
6. **अंश हस्तान्तरण** - अन्तर्नियमों में अंशों के हस्तान्तरण सम्बंधी नियम, प्रक्रिया तथा इसके सम्बन्ध में संचालकों व सचिव के अधिकारी का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए ।
7. **ऋण प्राप्ति के अधिकार** - अन्तर्नियमों में, कम्पनी के प्रबंधकों एवं संचालकों द्वारा कम्पनी के लिए ऋण प्राप्त करने संबंधी अधिकारों एवं शक्तियों का, वर्णन करना चाहिए।
8. **संचालक** - कम्पनी में संचालकों की संख्या, उनकी योग्यता, अधिकार, कर्त्तव्य, पारिश्रमिक, अवकाश ग्रहण करने आदि से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण नियम इस प्रपत्र में उल्लिखित होने चाहिए ।
9. **संचालक सभाओं संबंधी नियम** - इसमें संचालक मण्डल की सभा बुलाने, संचालित करने, उनके सूक्ष्म लिखने आदि के संबंध में नियम होने चाहिए ।

10. **प्रबन्ध व्यवस्था** - कम्पनी के अन्तर्नियमों में कम्पनी के प्रबन्धकीय कर्मचारियों के सम्बन्ध में भी उल्लेख करना चाहिए । इसमें प्रबन्ध संचालक, प्रबन्धक, सचिव आदि की नियुक्ति, नियुक्ति की शर्तें, पारिश्रमिक, अधिकार, कर्त्तव्य, शक्तियों, आदि के सम्बन्ध में प्रावधानों का उल्लेख करना चाहिए ।
11. **कम्पनी सचिव** - कम्पनी सचिव की नियुक्ति, पारिश्रमिक, सेवा की शर्तें, पदमुक्ति, अधिकार, कर्त्तव्य आदि से सम्बन्धित नियम भी इसमें होने चाहिए ।
12. **सभाएँ** - अन्तर्नियमों में कम्पनी की विभिन्न सभाओं की सूचना कार्यविधि, मतगणना, कार्य विवरण आदि के सम्बन्ध में नियम होने चाहिए ।
13. **पुस्तकें तथा अंकेक्षण** - कम्पनी में पुस्तकें रखने की पद्धति, अंकेक्षण की विधि, खाते तैयार करने सम्बन्धी नियम भी अन्तर्नियमों में लिखे होने चाहिए । इसके अतिरिक्त अंकेक्षकों की नियुक्ति सम्बन्धी नियम भी इसमें सम्मिलित किये जाने चाहिए ।
14. **सदस्य रजिस्टर** - सदस्यों के रजिस्टर रखने सम्बन्धी नियम भी अन्तर्नियमों मे लिखे होने चाहिए ।
15. **सार्वमुद्रा -** कम्पनी की सार्वमुद्रा का प्रयोग करने की परिस्थितियों का वर्णन होना चाहिए।
16. लाभांश - कम्पनी द्वारा लाभांश वितरित करने, उनका संचय करने तथा उनका पूँजीकरण करने सम्बन्धी प्रावधान भी अन्तर्नियमों में दिये जाने चाहिए ।
17. समापन - कम्पनी के समापन की विधि तथा परिस्थितियों का भी अन्तर्नियमों में उल्लेख किया जा सकता है ।

उपर्युक्त वर्णित बातों के अतिरिक्त भी अन्तर्नियमों में अनेक नियमों का उल्लेख किया जा सकता है तथा प्रावधानों का निर्माण किया जा सकता है । उदाहरण के लिए संचालकों के दायित्व को असीमित करने, पूँजी में से ब्याज का भुगतान करने, विदेशों में सदस्यों का रजिस्टर रखने, अतिरिक्त तथा वैकल्पिक संचालकों की नियुक्ति करने सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रावधानों को अन्तर्नियमों में सम्मिलित किया जा सकता है ।

5.8 अन्तर्नियमों में परिवर्तन (Alteration Of Articles)

कम्पनी विधान की धारा 31 के अनुसार कम्पनी-अधिनियम की व्यवस्थाओं के अधीन एक विशेष प्रस्ताव पारित करके कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन किया जा सकता है। अत: यह स्पष्ट है कि कम्पनी को अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने का वैधानिक अधिकार प्राप्त है । कम्पनी के इस अधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता है ।

वाकर बनाम लंदन ट्रामवेज कम्पनी लिमिटेड के वाद में दिये निर्णयानुसार यदि किसी कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है तो अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के अधिकार से कम्पनी वंचित नहीं हो सकती है । ऐसी कोई व्यवस्था सदस्यों को परिवर्तन न करने के लिए बाध्य नहीं कर सकती है ।

5.9 वैधानिक प्रतिबन्ध (Statutory Restrictions)

अन्तर्नियमों में परिवर्तन करते समय अग्रलिखित वैधानिक व्यवस्थाओं का पालन करना आवश्यक हैं-

(अ) परिवर्तन पर प्रतिबन्ध (restrictions on alter) - कम्पनी अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अधीन तथा विभिन्न न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के अनुसार अन्तर्नियमों में परिवर्तन पर कुछ प्रतिबन्ध लगाये गये हैं जो निम्नलिखित हैं ।

1. **कम्पनी विधान एवं सीमानियम के अधीन-** धारा 31(1) के अनुसार पार्षद अन्तर्नियमों में किए जाने वाले परिवर्तन कम्पनी के पार्षद सीमानियम, कम्पनी विधान तथा सामान्य विधान के प्रतिकूल नहीं होने चाहिए ।
2. **विशेष प्रस्ताव -** पार्षद अन्तर्नियमों में परिवर्तन कम्पनी की सामान्य सभा में पारित विशेष प्रस्ताव के द्वारा किया जा सकता है । धारा 31(1) अन्तर्नियमों मे प्रावधान होने पर भी साधारण प्रस्ताव के द्वारा अन्तर्नियमों में किया गया परिवर्तन व्यर्थ है । (नवनीतलाल बनाम सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी लिमिटेड) ।
3. **रजिस्ट्रार को प्रस्ताव भेजना -** परिवर्तन के लिए साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करने की तिथि के 30 दिन के अन्दर प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि रजिस्ट्रार को अवश्य प्रस्तुत करनी चाहिए ।
4. **सदस्यों की सहमति** - यदि अन्तर्नियमों में प्रस्तावित परिवर्तन से सदस्यों का आर्थिक दायित्व बढ़ता है तो इस परिवर्तन को वैधानिक रूप देने से पहले सम्बन्धित सदस्य या सदस्यों से लिखित अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है । सदस्य की बिना अनुमति के इस आशय के परिवर्तन व्यर्थ होते हैं । (धारा 38)
5. **केन्द्रीय सरकार की अनुमति** - कुछ परिवर्तन जैसे सार्वजनिक कम्पनी में संचालकों का पारिश्रमिक तथा उनकी अधिकतम संख्या में वृद्धि एवं सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तन, करने के लिए केन्द्रीय सरकार की पूर्व लिखित अनुमति का प्राप्त करना आवश्यक है । (धारा 310)
6. **न्यायालय की आज्ञा** - यदि अन्तर्नियमों में परिवर्तन न्यायालय के द्वारा धारा 397 या 398 के अधीन प्रार्थना-पत्र आने के फलस्वरूप न्यायालय के आदेश पर हुआ है तो उस व्यवस्था को पुन: न्यायालय की आज्ञा लिये बिना नहीं बदला जा सकता है । (धारा 404(1)
7. **परिवर्तित प्रतिलिपि भेजना** - विशेष प्रस्ताव पारित किये जाने अथवा केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति मिल जाने की तिथि से 1 महीने के अन्दर परिवर्तित अन्तर्नियमों की छपी हुई प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के समक्ष अवश्य प्रस्तुत की जानी चाहिए ।

(ब) **न्याय सम्बन्धी प्रतिबंध (Judicial Restrictions):** अन्तर्नियमों में परिवर्तन के मामले समय-समय पर न्यायालय के समक्ष आये हैं । इन परिवर्तनों के सम्बन्ध में दिये गये निर्णयों में अन्तर्नियमों के परिवर्तनों पर न्यायिक प्रतिबन्ध लगाये गये हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. **परिवर्तन पूर्ण सद्भावना से तथा कम्पनी के हित में हो -** कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन सद्भावनापूर्वक कम्पनी के अधिकतम हित में किये जाने चाहिए ।
2. परिवर्तन न्यायसंगत हो - परिवर्तन के सम्बन्ध में दूसरा न्यायिक प्रतिबन्ध यह है कि परिवर्तन न्यायसंगत होना चाहिए । परिवर्तन ऐसा नहीं होना चाहिए जिसके द्वारा बहुसंख्यक सदस्यों द्वारा अल्पसंख्यक सदस्यों पर अन्याय होता हो ।

कम्पनी विधान की धारा 31 के अन्तर्गत यह व्यवस्था हो कि यदि अन्तर्नियमों में ऐसा परिवर्तन कर दिया जाये जो अल्पसंख्यक सदस्यों पर दबाव के रूप में हो या विधान के सिद्धान्तों का खण्डन करता हो तो ऐसा परिवर्तन वैध नहीं होगा ।

3. **परिवर्तन अवैध व्यापार की आज्ञा देने वाला नहीं हो-** परिवर्तन ऐसा नहीं होना चाहिए जो कि कम्पनी को अवैध व्यापार करने की आज्ञा देता हो । एक कम्पनी ने विशेष प्रस्ताव द्वारा अपने अन्तर्नियमों में इस आशय का परिवर्तन किया जिससे वह एक अन्य कम्पनी का अवैध व्यापार (लॉटरी) करने लग गई । रजिस्ट्रार ने ऐसे प्रस्ताव को रजिस्टर करने से इनकार कर दिया ।
4. **परिवर्तन अवैधानिक नहीं हो**- अन्तर्नियमों में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए जो अवैधानिक हो ।
5. **परिवर्तन से कम्पनी को अनुबंध भंग का अधिकार न हो-** कम्पनी के अन्तर्नियमों में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप तृतीय पक्षकार के साथ कम्पनी द्वारा किये गये अनुबन्ध का खण्डन होता हो । किसी सदस्य के अंशों को वैध रूप से तीसरे पक्षकार को हस्तान्तरित करने के बाद, कम्पनी इन अंशों पर ग्रहणाधिकार का प्रयोग करने के लिए अन्तर्नियमों में परिवर्तन नहीं कर सकती है ।
6. **अल्प-संख्यकों के प्रति अन्यायपूर्ण न हो-** अन्तर्नियमों में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता जिससे अल्पसंख्यक अंशधारियों की लागत पर बहु संख्यक अंशधारियों को लाभ होता हो ।

5.10 पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में अन्तर (Distinction Between Memorandum And Articles)

पार्षद अन्तर्नियम कम्पनी के पार्षद सीमानियम का सहायक तथा अधीनस्थ प्रलेख है । कम्पनी के पार्षद सीमानियम में उन आधारभूत शर्तों का उल्लेख होता है जिसके आधार पर कम्पनी एक विधान द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति के रूप में अस्तित्व मे आती है । अन्तर्नियमों में कम्पनी के पार्षद सीमा नियम में वर्णित उद्देश्यों को प्राप्त करने की विधियाँ तथा नियमों उपनियमों का समावेश होता है । अन्तर्नियम पार्षद सीमानियम के सहायक तथा अधीनस्थ होते हैं । अत: पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम दोनों कम्पनी के महत्व पूर्ण प्रलेख हैं परन्तु इनमें काफी अन्तर हैं, जिन्हें निम्नानुसार समझा जा सकता है ।

पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियमों में अन्तर

(Distinction between Memorandum and Articles of Association) :

क्र.सं.	अन्तर का आधार Basis of Difference	पार्षद सीमानियम(Memorandum of Association)	पार्षद अन्तर्नियम (Articles of Association)
1.	आशय	1. पार्षद सीमा नियम कम्पनी का चार्टर है	1. पार्षद अन्तर्नियम कम्पनी के सदस्यों के

			अधिकार एवं कर्तव्यों का विवरण है।
2.	विषय	पार्षद सीमानियम में कम्पनी के कार्य की सीमाओं का उल्लेख होता है।	2. इसमें संचालकों के अधिकार एवं कर्तव्यों का वर्णन होता है।
3.	सम्बन्ध	पार्षद, सीमानियम में जनता, सदस्यों, लेनदारों, क्रेता तथा विक्रेता के सम्बन्धों का वर्णन होता है।	यह कम्पनी और सदस्यों के मध्य अधिकारों तथा दायित्वों का विवेचन करता है।
4.	महत्व	पार्षद सीमानियम कम्पनी का प्रथम महत्वपूर्ण प्रलेख है। प्रत्येक कम्पनी के लिए पार्षद सीमानियम का बनाना आवश्यक है।	यह कम्पनी का दूसरा महत्वपूर्ण तथा सहायक प्रलेख है। यह पार्षद सीमानियम के अधीन होता है। यह अंशों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी के लिए बनाना आवश्यक नहीं है।
5.	सीमा	पार्षद सीमानियम, कम्पनी को सामान्य विधान के प्रतिकूल कार्य करने का अधिकार नहीं दे सकता है।	अन्तर्नियमों का कार्यक्षेत्र कम्पनी के विधान, कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा सामान्य विधान के अधीनस्थ होता है।
6.	परिवर्तन	पार्षद सीमानियम में परिवर्तन, विधान में वर्णित सीमाओं में किया जाता है। महत्वपूर्ण शर्तों में परिवर्तन विशेष प्रस्ताव द्वारा कम्पनी विधान मण्डल अथवा केन्द्रीय सरकार की अनुमति के बाद किया जा सकता है। यह एक अपरिवर्तनीय चार्टर समझा जाता है।	अन्तर्नियमों में कम्पनी की सामान्य सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करके परिवर्तन किये जा सकते हैं। कुछ दशाओं में केन्द्रीय सरकार की अनुमति लेने की आवश्यकता पड़ती है।
7.	अन्य अधिकृत	कम्पनी अपने पार्षद सीमानियम के अधिकार क्षेत्र के विपरीत कार्य नहीं कर सकती है। इस प्रकार सीमानियम के बाहर किये गये कार्य व्यर्थ होते हैं। ऐसे कार्य के लिए बाहरी पक्षकारों को कम्पनी के प्रति कोई अधिकार प्राप्त नहीं होते हैं।	यदि कोई कार्य कार्य अन्तर्नियमों के बाहर तथा पार्षद सीमानियम के अधिकार क्षेत्र में है तो कम्पनी विशेष प्रस्ताव पारित करके ऐसे कार्यों की

			पुष्टि कर सकती है।
8.	रजिस्ट्रेशन	कम्पनी के समामेलन के लिए पार्षद सीमानियम तैयार करना नितान्त आवश्यक है, अन्यथा कम्पनी का समामेलन सम्भव नहीं होता।	एक अंशों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी के लिए अन्तर्नियमों का बनाया जाना मूलरूप में आवश्यक नहीं है, क्योंकि इसके अभाव में सारणी 'अ' का प्रयोग करके समामेलन कराया जा सकता है।

5.11 अधिकारों के बाहर का सिद्धांत (doctrine of ultra-vires)

पार्षद सीमानियम का विवेचन करते हुए यह स्पष्ट किया गया था कि कोई भी कम्पनी अपने पार्षद सीमानियम के कार्यक्षेत्र के बाहर कार्य नहीं कर सकती है । यदि कोई कम्पनी अपने पार्षद सीमानियम के बाहर कोई कार्य करती है तो ऐसा कार्य 'अधिकार के बाहर या अनाधिकृत कहलाता है ।'

'अधिकारों के बाहर कार्यो का आशय' (meaning of ultra-vires): जब कोई ऐसा कार्य या व्यवहार, जो चाहे वैध है, लेकिन पार्षद सीमा नियम के उद्देश्य वाक्यांश द्वारा अनाधिकृत है तो ऐसे कार्य को कम्पनी के लिए अधिकारों से बाहर या अनाधिकृत कार्य कहा जाता है ।

भारत में अधिकारों के बाहर, के सिद्धान्त(Doctrine of ultra - Vires in India) का प्रयोग सर्वप्रथम 1366 में बम्बई उच्च न्यायालय ने जहाँगीर आर0 मोदी बनाम शामजी लढ्ढा के वाद में किया और कहा कि किसी कम्पनी के संचालकों द्वारा किसी दूसरी कम्पनी के अंश क्रय करना उस समय तक अधिकारों के बाहर है, जब तक कि पार्षद सीमा-नियम द्वारा कम्पनी को यह अधिकार प्राप्त नहीं हो । इसी प्रकार 1963 में ए0 लक्ष्मण स्वामी मुदालियर बनाम लाइफ इंश्योरेंस कॉरपोरेशन ऑफ इण्डिया के वाद में भी इसकी पुष्टि की गयी है । इस वाद में कम्पनी के संचालकों को किसी पुण्यार्थ अथवा परोपकारी उद्देश्यों के लिए अथवा सार्वजनिक हित के लिए भुगतान करने का अधिकार था। संचालकों ने अंशधारियों के प्रस्ताव के अनुसार तकनीकी एवं व्यावसायिक ज्ञान का विकास करने वाले एक ट्रस्ट को दो लाख रूपये दिये । न्यायालय ने निर्णय दिया कि यह कार्य कम्पनी के अधिकारों के बाहर है । न्यायालय ने यह भी कहा कि संचालक अपनी इच्छा से कम्पनी के धन को किसी भी काम में नहीं लगा सकते, वे केवल उन्हीं कामों में कम्पनी का धन लगा अथवा दान दे सकेंगे जिससे कम्पनी को लाभ मिले एवं कम्पनी के उद्देश्य प्राप्ति में ऐसे कार्य से सहायता मिले । अन्य कई मामलों में भी इस सिद्धान्त की पुष्टि की गयी है ।

अनाधिकृत कार्यो का प्रभाव (effects of ultra-vires acts):

1. **कार्य प्रभावहीन और व्यर्थ (ultra-vires acts null and void)**: यदि कोई कम्पनी, कम्पनी विधान अथवा अपने पार्षद सीमानियम के अधिकार-क्षेत्र की सीमा के बाहर कार्य करती है तो ऐसा कार्य व्यर्थ होता है । अधिकार के बाहर किये गये कार्य पर कम्पनी के समस्त अंशधारियों द्वारा पुष्टि अथवा स्वीकृत किये जाने पर भी वैध नहीं हो सकते हैं ।
2. **कम्पनी बाध्य नहीं (company is not bound)-** इस प्रकार के अधिकारों के बाहर किये गये कार्यों के लिए कम्पनी बाध्य नहीं होती है ।
3. **बाद न चलाना (no right to sue and to be sued)** - अनाधिकृत कार्य के लिए न तो कम्पनी ही तीसरे पक्षकार पर मुकदमा चला सकती है और न इस सम्बन्ध में कम्पनी पर ही वाद प्रस्तुत किया जा सकता है । कम्पनी से व्यवहार करने वाला कोई भी व्यक्ति अधिकारों के बाहर के कार्य के लिए कम्पनी पर बाद इसलिए नहीं चला सकता है क्योंकि पार्षद सीमानियम एक खुला सार्वजनिक प्रलेख है । कम्पनी से व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि उसे पार्षद सीमानियम में लिखित कम्पनी के उद्देश्यों का तथा अधिकारों का पूरा ज्ञान है और यदि फिर भी कोई कम्पनी के साथ ऐसा व्यवहार करता है जो अनाधिकृत है तो वह कम्पनी के विरूद्ध कोई वैधानिक कार्यवाही नहीं कर सकता है ।
4. **प्रभावी न होना (Non effective)** - अनाधिकृत कार्यो के अन्तर्गत लिया गया कोई भी निर्णय प्रभावशाली नहीं होता है।
5. **संचालकों का व्यक्तिगत दायित्व (Personal Liability of directors)** - यदि कम्पनी के संचालक या अन्य अधिकारी कम्पनी की सम्पत्तियों का उपयोग अधिकारों के बाहर के कार्यों के लिए करते हैं और यदि ऐसा करने से कम्पनी को हानि होती है तो संचालक अथवा सम्बन्धित व्यक्ति उक्त क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है ।
6. **अधिकार का आश्वासन भंग (breach of the warranty of authority)** - संचालक कम्पनी के प्रतिनिधि माने जाते है, अत: इन्हें अपने अधिकार क्षेत्र में ही कार्य करना चाहिए । यदि वे अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करते हैं तो अधिकार का आश्वासन भंग होने के कारण बाहरी पक्षकारों के प्रति वे व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होंगे भले ही उन्हें अधिकारों के उल्लंघन की जानकारी रही हो अथवा नहीं ।
7. **स्थगन आदेश (injuction)** - यदि कोई कम्पनी अपने सीमानियम के बाहर कोई कार्य कर रही है अथवा करने जा रही है तो ऑटर्नी जनरल बनाम ग्रेट ईस्टर्न रेल्वे कम्पनी के वाद में दिये गये निर्णयानुसार कम्पनी का कोई भी अंशधारी सदस्य उसे ऐसा कार्य करने से रोकने के लिए न्यायालय में स्थगन आदेश या निषेधाज्ञा प्राप्त कर सकता है ।
8. **माल तथा सेवाओं की पूर्ति के लिए भुगतान प्राप्त नहीं (Payment for ultra-vires contracts cannot be recovered)-** किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा कम्पनी को उसके अधिकारों के बाहर कोई माल अथवा सेवा की पूर्ति किये जाने की दशा में भुगतान प्राप्ति का अधिकार नहीं होगा । इसी प्रकार कम्पनी द्वारा अधिकारों के बाहर दिया गया ऋण भी वसूल नहीं किया जा सकेगा ।

5.12 सिद्धान्त के अपवाद (exceptions to the doctrine of ultra-vires)

अनाधिकृत कार्यों का विवेचन करते समय उन कार्यो को भी बताया गया है जो कम्पनी अधिनियम या कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों के अधिकार क्षेत्र के बाहर हो सकते हैं । अनाधिकृत कार्य व्यर्थ होते हैं । निम्न अवस्थाओं के बाहर कार्यों का अनुसमर्थन किया जा सकता है ।

(1) यदि कोई कार्य कम्पनी के अन्तर्नियम एवं या संचालक मण्डल के अधिकारों के बाहर है तो ऐसे कार्यों की, कम्पनी के सदस्यों द्वारा सामान्य सभा में पुष्टि की जा सकती है ।

(2) यदि कोई कार्य अन्तर्नियमों के द्वारा अनाधिकृत है तो कम्पनी अन्तर्नियमों में विशेष प्रस्ताव द्वारा संशोधन करके आवश्यक अधिकार प्राप्त कर सकती है ।

(3) यदि कोई कार्य कम्पनी के अधिकार-क्षेत्र में है परन्तु यह अनियमिततापूर्वक किया जा रहा है तो कम्पनी के सदस्य अपनी सहमति देकर ऐसे कार्य को वैध कर सकते हैं ।

(4) यदि कम्पनी ने अपने धन से अनाधिकृत रूप से कोई सम्पत्ति प्राप्त की है तो उसे इस प्रकार से प्राप्त सम्पत्ति की रक्षा करने का पूर्ण अधिकार है ।

(5) यदि कोई व्यक्ति एक अनाधिकृत अनुबन्ध के अन्तर्गत संचालक के असत्य कथन के आधार पर कम्पनी को रूपया उधार देता है, तो किसी ऋणदाता के प्रति संचालकों का व्यक्तिगत दायित्व होगा ।

(6) यदि कम्पनी का संचालक किसी व्यक्ति को कम्पनी के धन का अनाधिकृत भुगतान करता है तो कम्पनी ऐसी रकम लौटाने के लिए दबाव डाल सकती है । संचालक किसी व्यक्ति से क्षतिपूर्ति प्राप्त कर सकते हैं जिन्होंने भुगतान को अनाधिकृत जानते हुए धन लिया है ।

5.13 अधिकृत कार्यो का सिद्धान्त (doctrine of intra vires)

ऐसे कार्य जो कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा कम्पनी के अन्तर्नियमों के कार्य क्षेत्र की सीमा में हैं, को अधिकृत कार्य कहते हैं । ऐसे कार्यों के लिए कम्पनी ठीक उसी प्रकार बाध्य होती है जिस प्रकार कि एक प्रतिनिधि के कार्यो के लिए उसका नियोक्ता उत्तरदायी होता है । कम्पनी द्वारा पार्षद सीमानियम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के अधिकार की सीमा में किये गये कार्यो के लिए कम्पनी उत्तरदायी होती है । व्यापारिक कम्पनी को अपने कार्य संचालन के लिए रूपया उधार लेने, भूमि को बेचने, सम्पत्तियों को गिरवी रखने के गर्भित अधिकार प्राप्त होते हैं । कम्पनी को कुछ कार्यों के करने के लिए अधिकार अन्तर्नियमों द्वारा दिये जाते हैं, जैसे अंशों का निर्गमन, संचालकों की नियुक्ति, अंशों का अपहरण करना आदि कार्य । ये सभी कार्य कम्पनी के अधिकृत कार्य कहे जाते हैं ।

5.14 रचनात्मक सूचना का सिद्धान्त (doctrine of constructive notice)

प्रत्येक कम्पनी को समामेलन (incorporation) के लिए कम्पनी अधिनियम के अनुसार पार्षद सीमानियम एवं अन्तर्नियमों का रजिस्ट्रेशन कराना आवश्यक है । धारा 610 के अनुसार रजिस्ट्रेशन के बाद ये दोनों प्रलेख (documents) सार्वजनिक प्रलेख (public documents) माने जाते हैं तथा निर्धारित शुल्क जमा कराने पर वे आम जनता के अवलोकनार्थ उपलब्ध कराये जा सकते हैं । इसी प्रकार जन सामान्य द्वारा इन प्रलेखों की प्रतिलिपि भी प्राप्त की जा सकती है । अत: कम्पनी से व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि वे स्वयं को रजिस्ट्रार के कार्यालय में उपलब्ध इन प्रलेखों से भली-भांति अवगत करा लें तथा उनका अर्थ ठीक तरह से समझ लें । दूसरे शब्दों में बाहरी पक्षकार को कम्पनी के साथ व्यवहार करते समय इस बात की जानकारी प्राप्त करके अपने को सन्तुष्ट कर लेना होगा कि कम्पनी को प्रस्तावित कार्य करने का अधिकार है । इसका तात्पर्य यह है कि इन प्रलेखों का रजिस्ट्रार के यहाँ रजिस्ट्रेशन हो जाने के बाद प्रलेखों में उल्लेखित सूचनाएँ जनता की दृष्टि में कम्पनी के द्वारा रचनात्मक सूचना मानी जायेगी ।

5.15 आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त (doctrine of indoor management)

रजिस्ट्री के बाद कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियम सार्वजनिक प्रलेख (public documents) हो जाते हैं । कोई भी व्यक्ति जो कम्पनी के साथ व्यवहार करता है, उससे यह आशा की जाती है कि उसे कम्पनी के पार्षद सीमा नियम का ज्ञान है । यदि कोई व्यक्ति कम्पनी के साथ व्यवहार करने के बाद पार्षद सीमानियम में दिये हुए नियमों की अनभिज्ञता के कारण हानि उठाता है तो इसका फल उसी को भुगतना पड़ता है ।

यदि कोई व्यक्ति कम्पनी के साथ ऐसा अनुबन्ध करता है जो कम्पनी के अधिकारों के बाहर अथवा संचालकों के अधिकार के बाहर है तो ऐसे व्यक्ति को कम्पनी के विरूद्ध प्रस्तुत करने का कोई वैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं होता है, परन्तु उपर्युक्त नियम का एक महत्त्वपूर्ण अपवाद आंतरिक प्रबंध का सिद्धांत (doctrine of indoor management) है । इस सिद्धान्त का अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति जो कम्पनी के साथ व्यवहार करता है, उसे कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों का ज्ञान होना आवश्यक है । इस सम्बन्ध में बाहरी व्यक्तियों का कर्त्तव्य उनके ज्ञान होने तक ही सीमित है । कम्पनी द्वारा अपने अन्तर्नियमों की व्यवस्थाओं तथा नियमों का पालन किया जा रहा है अथवा नहीं, यह देखना बाहरी व्यक्तियों का कर्त्तव्य नहीं है । संक्षेप में बाहरी व्यक्तियों को कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध की सूचना का होना आवश्यक नहीं है । व्यावहारिक दृष्टि से यह सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह एक सार्वजनिक

सुविधा तथा न्याय पर आधारित है । कम्पनी के सीमानियम तथा अन्तर्नियम सार्वजनिक प्रलेख (public documents) होने के कारण कोई भी व्यक्ति उनका अवलोकन कर सकता है, किन्तु कम्पनी की आन्तरिक कार्यवाहियों अथवा गतिविधियों का सार्वजनिक निरीक्षण सम्भव नहीं है । Pacific Coast Mines LTd.vs.aributhnot के बाद यह कहा गया है कि बाहरी व्यक्ति से कम्पनी के संविधान की जानकारी की अपेक्षा की जा सकती है, किन्तु उनसे इस बात की आशा नहीं की जा सकती कि कम्पनी के दरवाजों के अन्दर, जो उसके लिए बंद होते हैं, की कार्यवाही को जाने । वास्तव में यदि कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले बाहरी व्यक्तियों को कम्पनी के आंतरिक मामलों के छानबीन की अनुमति दे दी जाये तो व्यावसायिक जगत में कार्य सम्पादन में कई कठिनाइयाँ आ जायेंगी ।

5.16 आंतरिक प्रबंध के सिद्धांत के अपवाद (exceptions to the doctrine of indoor management)

कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाला कोई भी व्यक्ति यह मान सकता है कि कम्पनी का आन्तरिक प्रबन्ध नियमित ढंग से चल रहा है तथा कम्पनी ने अपने अन्तर्नियमों की व्यवस्थाओं का पालन कर लिया है । परन्तु इस सिद्धान्त के निम्न अपवाद हैं -

1. **अनियमितता का ज्ञान (Knowledge of irregularity) -** व्यक्ति जो कम्पनी के साथ व्यवहार कर रहा है, को कार्य की अनियमितता का ज्ञान हो तो यह सिद्धान्त लागू नहीं होगा तथा इस सम्बन्ध में कम्पनी बाध्य नहीं होंगी । दूसरे शब्दों में जहाँ कम्पनी से व्यवहार करने वाले व्यक्ति को आन्तरिक प्रबन्ध में अनियममितता की वास्तविक अथवा तथ्यात्मक जानकारी है तो वह इस सिद्धान्त का लाभ नहीं उठा सकेगा ।
2. **अन्तर्नियमों की अनभिज्ञता (Ignorance about articles) -** इस सिद्धान्त का प्रयोग किसी किसी व्यक्ति के पक्ष में नहीं किया जा सकता जिसने वास्तव में कम्पनी के सीमानियम एवं अन्तर्नियमों को देखे बिना कार्य किया हो ।
3. **लापरवाही (Negligence) -** यदि कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले बाहरी पक्षकार अनियमितताओं का पता लगाने में असावधानी दिखाते हैं, तो उन्हें आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त का लाभ पाने का अधिकार नहीं होगा ।
4. **कम्पनी के साधारण व्यापार के असंगत हो** - यदि कम्पनी के साथ किया गया कोई व्यवहार (transaction) कम्पनी से व्यवसाय से सम्बन्धित नहीं है अथवा अनाधिकृत है तो उपर्युक्त सिद्धान्त लागू नहीं होगा ।

5.17 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions)

1. What is article of association? what are its contents?
   पार्षद अन्तर्नियम क्या हैं? इसकी विषय-सामग्री क्या है?
2. distinguish between memorandum of association and article of association.
   पार्षद सीमानियम और पार्षद अन्तर्नियम में अन्तर बतलाइये

3. what are the importance of articles of association in the life of a company? describe the procedure of alteration of articles of association.
   कम्पनी के जीवन में पार्षद अन्तर्नियम का क्या महत्व है? पार्षद अन्तर्नियम में परिवर्तन की विधि बतलाइए ।
4. describe the"doctrine of indoor management" in detail.
   आन्तरिक प्रबंध के सिद्धान्त का सविस्तार वर्णन कीजिए ।
5. describe in detail the 'doctrine of ultra-vires'
   अधिकार से बाहर का सिद्धान्त' का सविस्तार वर्णन कीजिए ।

5.18 संदर्भ पुस्तकें

1. आर.सी.अग्रवाल एवं एन.एस. कोठारी. कम्पनी अधिनियम एवं सचिव पद्धति (कॉलेज बुक हाऊस)
2. एस.एम. शुक्ल एवं सहाय. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (साहित्य भवन, आगरा) ।
3. N.D.Kapoor: Company law
4. Avater singh: company law
5. माथुर, सक्सैना, कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति ।
6. डी. आर.एल. नौलखा. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (रमेश बुक डिपो, जयपुर)।

इकाई - 6: प्रविवरण (prospectus)

इकाई की रूपरेखा

6.0 परिचय

6.1 अर्थ एवं परिभाषा

6.1.1 परिभाषा

6.1.2 लक्षण

6.1.3 जनता को निमन्त्रण

6.1.4 प्रविवरण की विषय-वस्तु

6.2 उद्देश्य

6.3 महत्व

6.4 प्रविवरण का निर्गमन कौन कर सकता है?

6.5 प्रविवरण का निर्गमन कब आवश्यक नहीं होता?

6.6 प्रविवरण का पंजीयन एवं निर्गमन

6.7 प्रविवरण की रचना से सम्बन्धित सिद्धान्त अथवा नियम

6.8 प्रविवरण में असत्य कथन

6.9 प्रविवरण में मूल, असत्य कथन या मिथ्यावर्णन के प्रभाव या परिणाम

6.10 स्थानापन्न प्रविवरण

6.11 भोल्फ प्रविवरण

6.12 सूचना स्मरण-पत्र

6.13 विक्रय हेतु प्रभाव/गर्भित या प्रभाव से प्रविवरण

6.14 निजी कम्पनी के सार्वजनिक कम्पनी में परिणत होने पर निर्गमित प्रविवरण

6.15 विदेशी कम्पनी का प्रविवरण

6.16 सारांश

6.17 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

6.18 व्यावहारिक प्रश्न

6.19 उपयोगी पुस्तकों/संदर्भ ग्रन्थ

6.0 परिचय

प्रत्येक कम्पनी को अपनी गतिविधियों के संचालन हेतु धन की आवश्यकता होती है । धन की आवश्यकता की पूर्ति प्रवर्तकों प्रबन्धकों संस्थापकों को अथवा और जनता से धन आमंत्रित कर पूरी की जा सकती है । निजी कम्पनी को इसके अन्तर्नियम द्वारा जनता से धन आमन्त्रित करने हेतु प्रतिबन्धित है अत: निजी कम्पनी को धन प्राप्ति हेतु प्रविवरण जारी करने की आवश्यकता नहीं होती है । परन्तु प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी जो जनता से पूंजी प्राप्त करना चाहती है उसके अपने अंशों या ऋण पत्रों के क्रय या

अभिदान के लिए या धन का निक्षेप प्राप्त करने के लिए जनता को आमंत्रित करना पडता है इस हेतु कम्पनी को एक विवरण पत्र जारी करना पड़ता है । जिसे प्रविवरण कहते है यदि कम्पनी धन जनता से प्राप्त नहीं कर संचालक प्रवर्तक या प्रबन्ध द्वारा अपने निजी साधनों अथवा अपने परिचितों के माध्यम से धन एकत्रित किया जाता है तो कम्पनी को प्रविवरण के स्थान पर एक अन्य विवरण पत्र जारी करना पड़ता है जिसे स्थानापत्र प्रविवरण कहते है । इसे कम्पनी रजिस्ट्रार के पास ऋण पत्र आवंटन के तीन दिन पूर्व जमा करवाना होता है ।

6.1 अर्थ एवं परिभाषा

6.1.1 परिभाषा

धारा 2(36) के अनुसार "प्रविवरण से आये एक ऐसे प्रपत्र से है जिसे प्रविवरण की तरह से वर्णित अथवा निर्गमित किया गया है, जिसमे किसी भी प्रकार का सूचनापत्र, परिपत्र, विज्ञापन या अन्य प्रपत्र सम्मिलित है जो जनता से जमाएं आमन्त्रित करता है अथवा जो किसी समामेलित संस्था के अंशों एवं ऋणपत्रों के क्रय अथवा अभिदान के लिए जनता से प्रस्ताव आमन्त्रित करता है ।"

इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि प्रविवरण एक ऐसा प्रपत्र है जिसे कम्पनी द्वारा तब जारी किया जाता है, जबकि कम्पनी निम्न तीन उद्देश्यों में से किसी भी उद्देश्य से जनता को आमन्त्रित करती है:

(i) कम्पनी के अंश या क्रय अथवा अभिदान करने के लिए अथवा
(ii) कम्पनी के ऋणपत्रों का क्रय अथवा अभिदान करने के लिए अथवा
(iii) कम्पनी में अपनी जमाएं देने के लिए

6.1.2 लक्षण

प्रविवरण के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित है

1. प्रविवरण एक प्रलेख होता है ।
2. यह प्रलेख किसी सूचनापत्र, परिपत्र, विज्ञापन के रूप में हो सकता है ।
3. यह किसी सार्वजनिक कम्पनी द्वारा जारी किया जा सकता है
4. यह निजी कम्पनी द्वारा जारी नहीं किया जाता ।
5. प्रविवरण पर तिथि लिखी होती है जिसे सामान्यता: प्रविवरण जारी करने की तिथि माना जाता है ।
6. प्रविवरण पर प्रत्येक संचालक अथवा प्रस्तावित संचालक के हस्ताक्षर होने आवश्यक है । धारा 60(1)
7. यह किसी समामेलित संस्था द्वारा सार्वजनिक जमाओं को आमन्त्रित करने के लिए जारी किया जा सकता है । (धारा 58 B)
8. इस निमन्त्रण के द्वारा कम्पनी के अंशों या ऋणपत्रों के क्रय के लिए प्रस्ताव करने हेतु जनता को आमन्त्रित किया जाता है ।

6.1.3 जनता को निमंत्रण

अधिनियम की धारा 67 के अन्तर्गत कहा गया है कि यदि जनता के किसी एक वर्ग को अंशों के क्रय या अभिदान का प्रस्ताव या निमंत्रण माना जावेगा । जनता के इस वर्ग में कम्पनी के वर्तमान सदस्य अथवा ऋणधारी अथवा प्रविवरण जारी करने वाले व्यक्तियों के मुवक्किल (CLIENTS OF THE PERSONS ISSUING PROSPECTUS) सम्मिलित हो सकते है । (धारा 67) परन्तु निम्नलिखित दो दशाओं में दिया गया निमन्त्रण जनता को दिया गया निमंत्रण नहीं माना जाता है ।

(1) जब प्रस्ताव अथवा निमन्त्रण पाने वाले के अतिरिक्त किसी को भी अंश उपलब्ध न हो,

(2) यदि यह निमन्त्रण देने वालों तथा प्राप्त करने वालों का घरेलू मामला हों ।

अपवादों का अपवाद उपर्युक्त वर्णित दोनों अपवादों के उपरान्त भी यदि कोई कम्पनी (किसी वित्तीय वर्ष में) 50 या अधिक व्यक्तियों को अपने अंशों या ऋणपत्रों का प्रस्ताव करती है अथवा इनके अभिदान हेतु आमंत्रित करती है तो उसे जनता को दिया हुआ निमन्त्रण माना जायेगा । (2000 में जोड़ा गया धारा 67(3) का परन्तुक प्रथम)

यहाँ यह उल्लेखनीय है उपर्युक्त प्रबन्ध बैंकिंग तथा वित्तीय कम्पनियों पर लागू नहीं होगा । सेबी रिजर्व बैंक से परामर्श कर इनके लिए मार्गदर्शक बातें निर्धारित करेगा तथा राजपत्र में प्रकाशित कर लागू कर सकेगा । (2000 में जोड़ा गया धारा 67 (3) का परन्तुक द्वितीय तथा नई धारा 67(3)ए)

6.1.4 प्रविवरण की विषय-वस्तु (contents of prospectus)

प्रविवरण जनता को दिया गया निमन्त्रण माना जाता है । इसे देखकर ही निवेशक कम्पनी की स्थिति का अनुमान लगाता है । अत: प्रविवरण में उन सभी बातों को सम्मिलित करना चाहिए जिन्हें देख, पढ एवं समझकर निवेशक कम्पनी में अपने धन को निवेश करने के सम्बन्ध में आवश्यक निर्णय ले सके । अत: इसमें कम्पनी के आर्थिक पहलुओं के सम्बन्ध में ही जानकारी नही दी जानी चाहिए बल्कि प्रबन्धकीय एवं भविष्य की प्रगति की सम्भावनाओं के सम्बन्ध में भी जानकारी दी जानी चाहिए ।

धारा 56 में प्रविवरण की विषयवस्तु के सम्बन्ध में कुछ निर्देश दिये गये है । उन निर्देशों के अनुसार एक कम्पनी के प्रविवरण में अग्रलिखित बातें आवश्यक होनी चाहिए:

(अ) अनुसूची द्वितीय के प्रथम भाग में वर्णित बातों का होना, तथा

(ब) अनुसूची द्वितीय के द्वितीय भ में निर्दिष्ट प्रतिवेदन संलग्न करना ।

(स) अनुसूची द्वितीय के तृतीय भाग में वर्णित रातों का समावेश करना ।

किन्तु प्रविवरण को तैयार करते समय द्वितीय अनुसूची के तृतीय भाग में दी गई बातों या छूटों को ध्यान मे रखा जायेगा ।

(अ) द्वितीय अनुसूची के प्रथम भाग में वर्णित बातें:

द्वितीय अनुसूची के प्रथम भाग में वर्णित बातों का शीर्षकों में विभक्त किया गया

I. **सामान्य सूचनाएँ-** (i) कम्पनी का नाम एवं पंजीकृत कार्यालय का पता । (ii) प्रस्तुत निर्गमन के लिए केन्द्रीय सरकार की अनुमति, औद्योगिक लाइसेंस/आशय पत्र और केन्द्रीय सरकार की यह घोषणा कि वह इन विवरणों की सत्यता एवं वित्तीय सुदृढ़ता के

लिए उत्तरदायी नहीं है । (iii) उन क्षेत्रीय एवं अन्य स्कन्ध विनियम केन्द्रों के नाम, जिनमें इस निर्गमन के अंशों के सूचीयन के लिए आवेदन किया गया है । (iv) जाली नाम से आवेदन करने वालों को दण्ड देने के सम्बन्धी धारा 68-A(1) के प्रावधान । (v) निर्गम बन्द करने की तिथि के 90 दिन के भीतर यदि न्यूनतम अभिदान की 90 प्रतिशत राशि प्राप्त नहीं होती है तो निर्गम की राशि वापस करने सम्बन्धी घोषणा । दस सप्ताह में आवंटन पत्र/रिफण्ड आर्डर जारी करने की घोषणा तथा रिफण्ड में देरी की दशा में धारा 73(2) 7 (2-A) के अनुरूप ब्याज चुकाने की घोषणा । (vi) निर्गम खुलने तिथि, निर्गम बन्द होने की अंतिम तिथि तथा निर्गम बन्द होने की सर्वप्रथम (earliest) तिथि । (vii) अंकेक्षकों तथा अग्रणी प्रबन्धकों (lead manegers) के नाम एवं पते । (viii) ऋणपत्रों की दशा में ऋण-पत्र प्रत्यासियों के नाम एवं पते । (ix) यदि प्रस्तावित ऋणपत्र/ पूर्वाधिकार अंशों के निर्गमन के लिए किसी मूल्यांकन एजेन्सी (रेटिंग एजेन्सी) से मूल्यांकन करवाया गया है, तो उसका उल्लेख । (x) निर्गमन के अभिगोपकों के नाम, पते तथा उनके द्वारा अभिगोपित राशि । (xi) संचालकों द्वारा यह घोषणा कि अभिगोपकों के पास पर्याप्त साधन है, जिनमें वे अपने दायित्वों को पूरा कर सकते है । (xii) संचालक मण्डल द्वारा यह विवरण कि अंशों के निर्गमन के समय प्राप्त समस्त राशि को पृथक बैंक खाते में अन्तरित कर दिया जायेगा, उक्त राशि के उपयोग के उद्देश्य को चिट्ठे में पृथक् शीर्षक के अधीन दर्शाया जायेगा उपयोग की गई राशि को चिट्ठे में प्रथक शीर्षक के अधीन दर्शाया जायेगा तथा विनियोग के स्वरूप को भी प्रकट किया जायेगा ।

II. **कम्पनी की पूँजी संरचना-** (1) कम्पनी की अधिकृत, निर्गमित, अभिदत्त तथा प्रदत्त पूँजी । (ii) कम्पनी के वर्तमान निर्गमन का आकार तथा उसमें से प्रवर्तकों अन्य वर्गो के लिए किये गये आरक्षण का पृथक-पृथक विवरण । (iii) कम्पनी के वर्तमान निर्गमन के बाद पूँजी तथा यदि ऋण-पत्र भी निर्गमित किये जा रहे है तो उनके परिर्वतन के बाद कुल प्रदत्त पूँजी ।

III. **प्रस्तुत निर्गमन की शर्तें-** (1) भुगतान की शर्तें । (ii) प्रलेख धारकों के अधिकार । (iii) आवेदन करने की विधि -जैसे आवेदन- पत्रों एवं प्रविवरण की उपलब्धता तथा भुगतान की विधि का उल्लेख । (iv) कम्पनी तथा इसके अंशधारकों को प्राप्त होने वाले विशेष कर सम्बन्धी विशेष लाभ ।

IV. **निर्गमन सम्बन्धी विवरण-** (i) निर्गमन के उद्देश्य । (ii) परियोजना की लागत । (iii) वित्तीय स्रोत, जिसमें प्रवर्तकों का अंशदान भी सम्मिलित हो ।

V. **कम्पनी, प्रबन्धक एवं परियोजना-** (i) कम्पनी का इतिहास, मुख्य उद्देश्य तथा इसका वर्तमान व्यवसाय । (ii) कम्पनी की सहायक कम्पनी, यदि कोई हो तो उनके सम्बन्ध में वित्तीय आँकड़े, जो अंकेक्षकों की रिपोर्ट के द्वितीय भाग में दिये जाते है । (iii) प्रवर्तक एवं उनका इतिहास । (iv) प्रबन्धक, प्रबन्ध संचालक तथा अन्य संचालकों के नाम, पते तथा व्यवसाय और उनके द्वारा धारित अन्य कम्पनियों में संचालक पदों की संख्या । (v) परियोजना का स्थान । (vi) प्लान्ट, मशीनरी, तकनीक आदि के सम्बन्ध में जानकारी । (vii) परियोजना का सहयोगी (collaborator) तथा उसके द्वारा

परियोजना के निष्पादन की गारंटी अथवा उसके साथ उत्पादों के विपणन में सहायता का समझौता । (viii) कच्चे माल तथा विद्युत, जल जैसी उपयोगी वस्तुओं के लिए आधारभूत सुविधाएँ । (ix) परियोजना के क्रियान्वयन की योजना एवं अब तक की प्रगति । (x) कम्पनी के उत्पाद, जिसमें उत्पाद की प्रकृति, उत्पाद की विपणन व्यवस्था उत्पाद की निर्यात सम्भावनाएँ तथा निर्यात दायित्व, यदि कोई हो तो । यदि कम्पनी किसी सेवा का उत्पादन या वितरण करती है तो उसके सम्बन्ध में विवरण । (xi) भावी सम्भावनाएँ- उत्पादन प्रारम्भ होने की तिथि के तीन महीने के भीतर क्षमता के उपयोग की सम्भावनाएँ तथा वह सम्भावित वर्ष जिसमें कम्पनी नकद लाभ एवं शुद्ध लाभ प्राप्त करने की स्थिति में होंगी । (xii) पूँजी बाजार सम्बन्धी ऑकड़े- कम्पनी के अंशों एवं ऋण पत्र के पिछले तीन वर्षो में प्रत्येक वर्ष में रहे न्यूनतम एवं अधिकतम मूल्य तथा पिछले छः महीने में रहे मासिक न्यूनतम एवं अधिकतम मूल्य ।

VI. **उसी प्रबन्ध की अन्य कम्पनियों का विवरण** - धारा 37(1-B) के अन्तर्गत यदि इसी प्रबन्ध समूह की कोई कम्पनी है जो उनके सम्बन्ध में यह विवरण (i) कम्पनी का नाम, (ii) निर्गम का प्रकार (iii) निर्गम की राशि, (iv) निर्गम बंद होने के तिथि, (v) अंश ऋणपत्र सुपुर्द करने की तिथि, (vi) परियोजना पूरी होने की तिथि तथा (vii) चुकाये गये लाभांश की दर ।

VII. **लम्बित (pending) न्यायिक विवादों सम्बन्धी विवरण** - (i) वे मामले, जो कम्पनी के कार्य-कलापों अथवा वित्तीय स्थिति को प्रभावित कर सकते है, जिसमें सभी प्रकार के कर दायित्व को सम्मिलित करना चाहिए । (ii) कम्पनी तथा कम्पनी के संचालकों के विरूद्ध दायर कर किये गये फौजदारी मामले, जो अनुसूची xiii के प्रथम भाग के अन्तर्गत आते है । (iii) वैधानिक देय ऋण, ऋणपत्रों, स्थायी जमाओं, संचयी पूर्वाधिकारी अंशों पर बकाया लाभांश आदि के चुकाने के सम्बन्ध में की गई त्रुटियों का वर्णन । ऐसे विवरण उन अन्य कम्पनियों के सम्बन्ध में भी देने होंगे, जो इन्हीं प्रवर्तकों द्वारा बनायी गई हैं तथा स्कन्ध विनिमय केन्द्रों में सूचीबद्ध हैं । (iv) अन्तिम चिट्टे की तिथि के बाद हुए महत्वपूर्ण परिवर्तनों का विवरण तथा कम्पनी की भावी प्रगति पर इनका प्रभाव ।

VIII. **जोखिम घटकों के सम्बन्ध में प्रबन्धकों की धारा-** कच्चे माल की उपलब्धता में कठिनाई, विदेशी विनिमय -दर में परिवर्तन, उत्पादों के विपणन में कठिनाई, परियोजना के प्रारम्भ में देरी होने आदि के कारण कम्पनी की जोखिम में परिर्वतन होता है तो उसके सम्बन्ध में प्रबन्धकों की धारणा को स्पष्ट करना चाहिए ।

(ब) द्वितीय अनुसूची के द्वितीय भाग में वर्णित बातें :

I. **सामान्य सूचनाएँ** : (i) संचालकों, अंकेक्षकों, विधि सलाहकारों, निर्गमन प्रबन्धकों, निर्गमन रजिस्ट्रार, बैंकर तथा विशेषज्ञों की अंश जारी करने सम्बन्धी सहमति । (ii) विशेषज्ञों की कोई राय प्राप्त की गई हो तो उसका विवरण । (iii) पिछले तीन वर्षा में संचालकों तथा अंकेक्षकों में कोई परिवर्तन हुआ हो, तो उसका विवरण तथा उसके कारण (iv) निर्गमन का अधिकार एवं उसके लिए पारित किये गये प्रस्ताव का विवरण । (v) आवंटन तथा अंश प्रमाण पत्रों के निर्गमन की प्रक्रिया तथा अवधि । (vi) कम्पनी सचिव,

विधि सलाहकार, अग्रणी प्रबन्धक, अंकेक्षक, बैंकर, निर्गम के बैंकर तथा दलालों के नाम एवं पते ।

(i) **सामान्य सूचनाएँ : (i) कम्पनी अंकेक्षक की रिपोर्ट-** इसमें इन बातों का उल्लेख होना चाहिए: (a) कम्पनी के लाभों तथा हानियों, सम्पत्तियों तथा दायित्वों का उल्लेख । (b) पिछले पाँच वर्षो में से प्रत्येक वर्ष में भुगतान किये गये लाभांश की दरें । (c) यदि कम्पनी की कोई सहायक कम्पनी नहीं है तो प्रविवरण निर्गमन के पूर्व के 5 वर्षो में से प्रत्येक वर्ष के लाभ-हानि तथा सम्पत्तियों एवं दायित्वों के सम्बन्ध में अंकेक्षण की रिपोर्ट, जो प्रविवरण के निर्गमन के तत्काल पूर्व समाप्त वित्तीय वर्षो से सम्बन्धित हो । (d) यदि कम्पनी की कोई सहायक कम्पनी है तो अंकेक्षक की रिपोर्ट कम्पनी के लाभ-हानि के साथ अथवा सहायक कम्पनियों के लाभ-हानि की पृथक रिपोर्ट हो सकती है ।

(ii) लेखापालको की रिपोर्ट- लेखापालको की रिपोर्ट में इन बातों का उल्लेख होना चाहिए: (a) यदि निर्गम से प्राप्त होने वाली राशि से कोई व्यवसाय क्रय किया जाने वाला है या किसी व्यवसाय में 50 प्रतिशत से अधिक हित खरीदा जाने वाला है तो लेखापालको की रिपोर्ट में उस व्यवसाय के पिछले पाँच वर्षो के लाभ या हानियों का विवरण देना चाहिए तथा इन व्यवसाय के अन्तिम खातों में दर्शायी गई तिथि को सम्पत्तियों एवं दायित्वों का प्रतिवेदन होना चाहिए, जिसकी तिथि प्रविवरण जारी करने की तिथि से 120 दिन पूर्व की नहीं होनी चाहिए । (b) यदि कम्पनी ने निर्गमन से प्राप्त राशि या उसके किसी भाग का उपयोग किसी अन्य कम्पनी के अंश क्रय करने में किया गया है तथा इसके लिए परिणामस्वरूप वह कम्पनी इस कम्पनी की सहायक कम्पनी बनने वाली है तो लेखापालको को अपनी रिपोर्ट में कम्पनी के पिछले 5 वर्षो के लाभ या हानियों को दर्शाना चाहिए तथा उस कम्पनी की लेखों की अंतिम तिथि को, विद्यमान सम्पत्तियों एवं दायित्वों का विवरण देना चाहिए ।

(iii) **प्रभार-** प्रभार पर रखी गयी सम्पत्तियों पर प्राप्त क्या की प्रमुख शर्तें ।

II **वैधानिक एवं अन्य सूचनाएँ:** (i) न्यूनतम अभिदान राशि । (ii) निर्गमन व्ययों का विवरण, जिसमें परामर्शदाता, निर्गम रजिस्ट्रार, निर्गम प्रबन्धक, ऋण-पत्र, प्रन्यासी आदि को दी गई राशि का विवरण हो । (iii) अभिगोपन कमीशन तथा दलाली । (iv) इससे पहले नकद पर जारी किये गये अंश । (v) पिछले 5 वर्षो में किये गये सार्वजनिक एवं अधिकार निर्गमन का विवरण (a) आवंटन की तिथि, निर्गम बंद होने की तिथि, रिफण्ड भेजने की तिथि, अंशों के सूचीयन की तिथि । (b) निर्गम की प्रीमियम या बट्टे की राशि, तथा (c) पिछले दो वर्षो में निर्गमित किये गये अंशों पर प्रदत्त अथवा प्रीमियम की राशि (vi) पूर्व में निर्गमन पर कमीशन या दलाली की राशि । (vii) नकद के अतिरिक्त प्रतिफल पर निर्गमित अंश । (viii) प्रविवरण जारी करने की तिथि पर अशोभित ऋणपत्र तथा शोध्य पूर्वाधिकार अंशों की राशि (ix) अभिदान करने का विकल्प । (x) डिपोजिटरी संस्था से अंशों का लेन-देन करने सम्बन्धी विकल्प का पूर्ण विवरण । (xi) क्रय की जाने वाली सम्पत्ति का विवरण, जिसका कि भुगतान इस निर्गम से प्राप्त राशि से किया जाना है । (xii) संचालकों, प्रस्तावित संचालकों, प्रबन्ध संचालकों, पूर्णकालिक संचालकों के नाम, पते, व्यवसाय, पारिश्रमिक, योग्यता अंश आदि से

सम्बन्धित विवरण । (xiii) मतदान, लाभांश, अंशों के ग्रहणाधिकार पर सदस्यों के अधिकार तथा उनमें संशोधन करने या उनको समाप्त करने की विधि । (xiv) अंशों के हस्तान्तरण एवं हस्तांकन पर प्रतिबन्ध (यदि कोई हो तो) तथा उनके एकीकरण तथा विभाजन सम्बन्धी नियम । (xv) कम्पनी द्वारा किये गये महत्वपूर्ण अनुबन्ध एवं प्रलेख तथा उनके निरीक्षण की व्यवस्था ।

(स) द्वितीय अनुसूची के तृतीय भाग में वर्णित बातें:

द्वितीय अनुसूची के तृतीय भाग में कुछ छूटों का उल्लेख है जो उपर्युक्त वर्णित कुछ प्रावधानों के संदर्भ में प्राप्त होती है । इन सभी छूटों का ऊपर यथास्थान उल्लेख भी कर दिया गया है । इनके अतिरिक्त इस भाग में निम्नांकित बातों का प्रविवरण में उल्लेख करने का निर्देश है:

1. **प्रलेखों का निरीक्षण-** प्रविवरण में उस समय तथा स्थान का भी उल्लेख होना चाहिये जहाँ पर कम्पनी के चिट्ठे तथा लाभ -हानि खाते, महत्वपूर्ण अनुबन्ध तथा अन्य प्रलेख निरीक्षण हेतु उपलब्ध रहेंगे ।
2. **घोषणा-** प्रविवरण में यह घोषणा भी करनी पड़ती है कि कम्पनी अधिनियम तथा 'सेबी' के अधिनियम के प्रावधानों तथा उनके अधीन बनाये गये नियमों तथा सरकार तथा 'सेबी' द्वारा जारी की गयी मार्गदर्शक बातों का पालन कर लिया गया है तथा प्रविवरण में कोई ऐसा कथन नहीं जो कम्पनी अधिनियम तथा सेबी अधिनियम के प्रावधानों तथा उनके अधीन बनाये गये नियमों तथा 'सेबी' एवं सरकार द्वारा जारी की गयी मार्गदर्शक बातों के प्रतिकूल हो । (2002 में जोड़ा गया प्रावधान)

"सेबी" द्वारा निर्धारित अन्य बातें :

'सेबी' ने प्रविवरण में सम्मिलित करने हेतु कुछ अन्य बातों को भी निर्धारित किया है । वास्तव में, ये बातें सेबी द्वारा मर्चेन्ट बैंकर नियम एवं विनियम लागू करने के परिणास्वरूप प्रविवरण में सम्मिलित की जानी अनिवार्य हुई है । इन नियमों में निर्गम के अग्रणी प्रबन्ध (lead managers to the issue) को प्रविवरण में कुछ बातों को जोड़ने के लिए उत्तरदायी बना दिया है । वे बातें निम्नानुसार है:

1. **अस्वीकरण वाक्य (disclaimer clause) -** सेबी के नियमों के अनुसार प्रविवरण के प्रथम भाग में सामान्य सूचना शीर्षक में एक अस्वीकरण वाक्य मोटे अक्षरों में जोड़ना पड़ेगा । इस वाक्य में इस बात को स्पष्ट किया जाता है कि सेबी द्वारा प्रविवरण की जाँच का अर्थ यह नहीं लगाना चाहिए कि सेबी ने प्रविवरण को अनुमोदित कर दिया है इसमें इस बात की भी घोषणा की जाती है कि प्रविवरण में दी गई परियोजना या योजना की वित्तीय सुदृढ़ता के लिए कोई उत्तरदायित्व नहीं लेता है । सेबी केवल इस बात को सुनिश्चित कर रहा है कि इसमें उन सभी बातों को पर्याप्त रूप से प्रकट कर दिया गया है जिसमें निवेशक पूर्ण सूचना के साथ अपने निवेश-निर्णय कर सकें ।
2. **गैर-निवासी भारतीयों. विदेशी निगमीय संस्थाओं के लिए आरक्षण-** गैर निवासी भारतीयों, विदेशी निगमीय संस्थाओं के लिए अंशों का आरक्षण किया गया है तो प्रविवरण में कम से कम एक ऐसे स्थान का नाम एवं पता दिया जाना चाहिए जहाँ से वे आवेदन फॉर्म प्राप्त कर सके । इसमें आवेदकों को यह भी स्पष्ट करना चाहिए जो

व्यक्ति आरक्षित अंशों के कोटे में आवेदन करना चाहते है उन्हें स्वतन्त्र विदेशी मुद्रा (free foreign exchange) में भुगतान करना पड़ेगा ।

3. **स्टॉक इन्वेस्ट-** प्रविवरण में अब यह भी देना पड़ता है कि आवेदक किसी प्रकार स्टॉक इन्वेस्ट का उपयोग कर सकते है तथा ऐसे आवेदकों का किसी प्रकार से निपटारा किया जायेगा ।
4. **ऋणपत्रों के अंशतः** अपरिवर्तनीय भाग में पुन: क्रय की व्यवस्था- जब कोई कम्पनी अंशतः परिवर्तनीय ऋणपत्र निर्गमित करती है तो उसके अपरिवर्तनीय भाग (खोखा) के पुन: क्रय की व्यवस्था तथा शर्तों का उल्लेख प्रविवरण में करना पड़ता है । इसमें पुन: क्रय करने वाली संस्था तथा बट्टे की दर आदि का भी उल्लेख किया जाता है । यदि खोखा के पुन: क्रय की व्यवस्था नहीं है तो इस बात का उल्लेख प्रविवरण में करना पड़ता है ।
5. **पूर्ववर्ती निर्गमों के वादों तथा कार्य -** परिणामों का विवरण- यदि निर्गम कर्ता ने पिछले तीन वर्षो में कोई अंशों का निर्गम किया है तो उन निर्गमों में किये गये वादों तथा उने वास्तविक कार्य-परिणामों को भी प्रविवरण में प्रकट करना पड़ता है ।
6. **निर्गम की राशि का उपयोग -** प्रविवरण में यह भी स्पष्ट करना पड़ता है कि इस निर्गम से प्राप्त राशि का निवेश तब तक किस प्रकार किया जायेगा जब तक कि प्रस्तावित परियोजना क्रियान्वयन की प्रक्रिया में रहेगी ।
7. **स्टॉक मार्केट के ऑकड़े-** यदि कम्पनी के अंश पहले से ही सूचीबद्ध है तो उनके सम्बन्ध में पिछले तीन वर्षो के स्टॉक मार्केट के आँकड़े देने पड़ते है । इनमें अंशों का अधिकतम, न्यूनतम एवं औसत मूल्य, कारोबार किये गये अंशों की संख्या आदि के आँकड़े अवश्य होने चाहिए ।
8. **आवंटन तथा वापसी-** प्रविवरण में इस बात का उल्लेख करना चाहिए कि आवंटन कितनी अवधि में किस प्रकार कर दिया जायेगा । आवंटन न करने की दशा में आवेदन शुल्क की वापसी कितनी अवधि में तथा किसी प्रकार की जायेगी ।

प्रविवरण प्रारूप में न होने का प्रभाव:

यदि प्रविवरण निर्धारित प्रारूप में नहीं होता है या प्रविवरण में सभी निर्धारित बातें नही होती तो प्रविवरण के लिए उत्तरदायी संचालक या अन्य व्यक्ति का दायित्व होता है । दायित्व की प्रकृति इस धारा (धारा 56) में स्पष्ट नही की गई है किन्तु ऐसा नहीं करने से प्रविवरण भ्रामक या असत्य अवश्य हो जायेगा । ऐसी दशा में प्रविवरण के लिए उत्तरदायी व्यक्ति पीड़ित पक्षकार की क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होंगे । इसके अतिरिक्त, इस धारा में यह लिखा है कि यदि प्रविवरण की विषय-वस्तु तथा उसमें सम्मिलित किये जाने वाले प्रतिवेदन सम्बन्धी प्रावधानों का उल्लंघन किया जाता है तो प्रविवरण के लिए उत्तरदायी व्यक्ति देश के सामान्य कानून के अनुसार उत्तरदायी होंगे । धारा 56(6) किन्तु निम्नांकित परिस्थितियों में उनको उनके दायित्व से मुक्त किया जा सकेगा:

(i) यदि वह सिद्ध कर देता है कि जो बात प्रकट नहीं की गई है उसी उसे जानकारी ही नहीं थी, अथवा

(ii) यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि प्रविवरण के निर्माण सम्बन्धी किसी भी प्रावधान की अवहेलना या उल्लंघन निष्कपट तथ्य सम्बन्धी गलती के कारण हुई है, अथवा

(iii) यदि वह उल्लंघन या अवहेलना किसी ऐसी बात के सम्बन्ध में है जिसे न्यायालय सारहीन समझता है, अथवा

(iv) यदि वह उल्लंघन या अवहेलना ऐसी है जिसे न्यायालय क्षमा योग्य समझता है । 56(4)

6.2 उद्देश्य (objects)

प्रत्येक संस्था को अपनी गतिविधियों के संचालन हेतु वित्त की आवश्यकता होती है । वित्त की पूर्ति संस्था के प्रवर्तक, संचालक या जनसामान्य के माध्यम से की जा सकती है । भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 के अनुसार निजी कम्पनी को जनता से धन स्वीकार करने का अधिकार नहीं है परन्तु एक सार्वजनिक कम्पनी जनता से धन आमन्त्रित कर सकती है । जनता से धन आमन्त्रित करने हेतु उसे एक विवरण पत्र/प्रलेख जारी करना होता है, जिसे प्रविवरण कहते है । प्रविवरण के द्वारा जनता को कम्पनी में भविष्य का स्वर्णिम चित्र प्रदर्शित करने की चेष्ठा की जाती है ।

6.3 महत्व (importance)

प्रविवरण कम्पनी का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रलेख है क्योकि इसके द्वारा जनता का कम्पनी के प्रति विश्वास उत्पन्न किया जाता है । इसी के आधार पर कम्पनी अपनी पूंजी एकत्रित करने में सफल होती है ।

सम्भावित अंशधारियों के लिए भी प्रविवरण महत्वपूर्ण है क्योकि इसमें उन सभी शर्तों का भी उचित रूप से उल्लेख होता है जिन पर कि वे इसके अंश (अथवा ऋणपत्र) खरीद सकते है ।

प्रविवरण वह खिड़की है जिनके द्वारा विनियोक्ता किसी कम्पनी के साहसिक कार्यो को देख सकता है ।

6.4 प्रविवरण निर्गमन कौन कर सकता है?

प्रविवरण निम्नलिखित में से कोई भी जारी कर सकता है:-

1. कोई भी सार्वजनिक कम्पनी;
2. कम्पनी की और से किसी भी व्यक्ति द्वारा;
3. कम्पनी को निर्माण से सम्बन्धित किसी भी व्यक्ति द्वारा;
4. कम्पनी के निर्माण में रूचि रखने वाले व्यक्ति द्वारा;
5. कम्पनी के निर्माण से सम्बन्धित किसी भी व्यक्ति की और से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा;
6. कम्पनी के निर्माण में रूचि रखने वाले किसी व्यक्ति की और से किसी भी अन्य व्यक्ति द्वारा;

7. ऐसी संस्था द्वारा जिसे जनता का पुन: आवंटित करने हेतु अंशों का आवंटन किया गया है;

6.5 प्रविवरण का निर्गमन कब आवश्यक नहीं होता

1. निजी कम्पनी द्वारा
2. जब अंश व ऋणपत्र जनता को प्रस्तावित नहीं किये जा रहे हो ।
3. जब किसी व्यक्ति को कम्पनी के अंश व ऋणपत्रों के अभिगोपन के लिए निमन्त्रण दिया गया हों
4. जब इसी प्रकार के अंश कम्पनी द्वारा पहले ही जारी किये जा चुके हो तथा उनका किसी मान्यता प्राप्त स्कन्ध विनियम केन्द्र में लेन-देन होता हो (धारा 56)
5. यदि अंश अथवा ऋणपत्रों का निर्गमन विद्यमान अंशधारियों अथवा ऋणपत्रधारियों को ही किये जाने का प्रस्ताव है.

6.6 प्रविवरण का पंजीयन एवं निर्गमन

प्रविवरण एक महत्वपूर्ण प्रलेख है, जिसे पंजीयन के बाद ही जनता को जारी किया जा सकता है । इसके तीन प्रमुख उद्देश्य है -

1. अंशों, ऋणपत्रों या प्राप्त की जाने वाली जमाओं की शर्तों एवं नियमों का प्रमाणित अभिलेख जनता को उपलब्ध करना
2. अंशों या ऋणपत्रों या जमाएं प्राप्त करने की शर्तों एवं नियमों के प्रमाणित अभिलेख रखना तथा
3. प्रविवरण जारी करने वाले व्यक्तियों की पहचान बनाना एवं आवश्यकता पड़ने पर उन्हें प्रविवरण के विवरणों एवं कथनों के लिए उत्तरदायी ठहराना ।

अधिनियम में प्रविवरण के पंजीयन एवं निर्गमन के सम्बन्ध में अनेक धाराओं मे प्रावधान है । जो कि संक्षेप में निम्नानुसार है:-

1. कम्पनी को प्रविवरण पंजीयन करने से पूर्व उसे अधिनियम के द्वितीय अनुसूची के प्रथम भाग के अनुरूप प्रविवरण तैयार करना चाहिए तथा इसके साथ इसी अनुसूची के द्वितीय भाग में वर्णित सभी प्रतिवेदन संलग्न किये जाने चाहिये ।
2. तिथि का उल्लेख, जब तक अन्यथा तिथि नहीं होंगी, तब तक प्रविवरण का पंजीयन करने से पूर्व जो तिथि उस पर लिखी गयी है उसी तिथि को प्रविवरण के प्रकाशन की तिथि मानी जायेगी ।
3. प्रविवरण पर उसके प्रस्तावित संचालकों या उनके अधिकृत प्रतिनिधियों द्वारा हस्ताक्षर किये जाने चाहिये ।
4. प्रविवरण का पंजीयन कराने से पूर्व ' सेबी ' से प्रविवरण की जाँच या अनुमोदन करवाना अनिवार्य है ।
5. 'सेबी' से अनुमोदित प्रविवरण रजिस्ट्रार के पास पंजीयन हेतु प्रस्तुत करना चाहिए ।
6. जनता को जारी की जाने वाली प्रविवरण की प्रत्येक प्रति पर इस बात का उल्लेख किया जाना चाहिये कि प्रविवरण पंजीयन के लिए रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत किया जा चुका हैं ।

7. यदि प्रविवरण पर तिथि न लिखी हो, हस्ताक्षर न हो अथवा सभी आवश्यक प्रपत्र संलग्न नहीं किये गये हो तो, रजिस्ट्रार प्रविवरण के पंजीयन से इनकार कर सकता है ।
8. प्रविवरण को पंजीयन के लिए सौपने के तिथि से निर्दिष्ट नब्बे दिनों में प्रविवरण जारी कर देना चाहिए । 90 दिनों के बाद पंजीयन रह हो जाता है और यह माना जाता है कि प्रविवरण कभी भी पंजीयन के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया ।
9. पंजीयन की व्यवस्थाओं का पालन न करने पर कम्पनी को ऐसा प्रविवरण जारी करने से सम्बन्धित प्रत्येक पक्षकार को पचास हजार रूपये तक के जुर्माने से दण्डित किया जा सकता है ।
10. कम्पनी को प्रत्येक आवेदन फार्म के साथ अब प्रविवरण की प्रति नहीं देनी होंगी और कोई व्यक्ति प्रविवरण की प्रति के लिए आवेदन करता है तो कम्पनी अभिदान सूची बद्ध होने से पहले उसे उपलब्ध करेगी । परन्तु प्रत्येक कम्पनी को अब अपने अंशों एवं ऋणपत्रों के आवेदन फार्म के साथ प्रविवरण की प्रमुख विशेषताओं से युक्त विवरण आवश्यक रूप से संलग्न करना पड़ता है । इसे ही संक्षिप्त प्रविवरण (abridged prospectus) भी कहते है ।

प्रविवरण के सम्बन्ध में कुछ अन्य प्रावधान

(certain other provisions regarding prospectus)

1. विद्यमान तथा भावी कम्पनी द्वारा जारी किया जा सकता है । भावी कम्पनी अपना प्रविवरण अपने समामेलन के प्रपत्रों के साथ ही रजिस्ट्रार को पंजीयन हेतु प्रस्तुत कर सकती है ।
2. विशेषज्ञ की लिखित सहमति एवं कथन बिना प्रविवरण जारी नहीं किया सकता है, जब तक की वह विशेषज्ञ उस विवरण को प्रविवरण में सम्मिलित करने की लिखित सहमति न दे दी हो, रजिस्ट्रार के पास पंजीयन हेतु प्रस्तुत करने से पूर्व उसने उस सहमति को वापस नहीं ले ली हो, एवं प्रविवरण में लिखा हो कि विशेषज्ञ द्वारा सहमति दे दी गई है तथा उसे वापस नहीं लिया गया है (धारा 58)
3. प्रविवरण में जिस विशेषज्ञ का विवरण सम्मिलित हो उस विशेषज्ञ का कम्पनी के निर्माण, प्रवर्तन या प्रबन्ध में किसी प्रकार का हित नहीं होना चाहिए ।
4. धारा 57 तथा 58 के प्रावधानों का पालन किये बिना अगर कोई प्रविवरण जारी किया जाता है तो कम्पनी एवं उस दोषी को 50000 रू. तक जुर्माना किया जा सकता है ।
5. बिना सहमति प्रविवरण में संचालक के रूप में नाम देने पर क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होते है ।
6. बिना सहमति प्रविवरण में विशेषज्ञ का विवरण देने पर, प्रविवरण के निर्गमन का अधिकार देने वाला प्रत्येक संचालक तथा अन्य व्यक्ति उस व्यक्ति की क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होते है ।
7. प्रविवरण या स्थानापन्न प्रविवरण में लिखी अनुबन्ध की शर्तों में परिवर्तन तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि उसे कम्पनी की साधारण सभा द्वारा अनुमोदित एवं परिवर्तन का अधिकार न दे दिया गया हो ।

8. अगर कोई प्रविवरण को समाचार पत्रीय विज्ञापन के रूप में प्रकाशित किया गया है तो उस विज्ञापन में सीमानियम की विषयवस्तु को प्रकट करना आवश्यक नही होगा ।
9. प्रत्येक प्रविवरण को जारी करने से पूर्व उसमें कम्पनी अधिनियम की धारा 68-A (i) को उद्धत (quote) कर देना चाहिये ।

6.7 प्रविवरण की रचना से सम्बन्धित सिद्धान्त अथवा नियम

1. प्रविवरण की रचना के सम्बन्ध में न्यायाधीश वी.सी किंडर्स ने कहा है "प्रविवरण में प्रत्येक तथ्य को बिल्कुल सही रूप में बतलाना चाहिए । उन्हे असत्य को सत्य दिखाने से बचना चाहिए । कोई ऐसी बात नहीं बतानी चाहिए जो तथ्य नहीं और कोई ऐसा तथ्य नहीं दबाना चाहिए जो उन लाभों की प्रकृति तथा गुणों पर प्रभाव डालता हो जिनके बारे में प्रविवरण द्वारा जनता में आशा पैदा की जाती है । कम्पनी के व्यवसाय की बिल्कुल सत्य तस्वीर दर्शानी चाहिए ।"
2. न्यायाधीश पेजवुड ने किंडर्सले के उपयुक्त कथन को ' स्वर्णिम नियम ' कहा । प्रविवरण किसी भी दशा में भ्रमोत्पादक नहीं होना चाहिए । इस तथ्य को पूर्ण सत्यता से प्रकट करना चाहिए ।
3. लार्ड मकेनॉटन (न्यायाधीश) के अनुसार प्रविवरण एक साथ (as a whole) देखा जाता है । प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि अर्धसत्य एक स्पष्ट झूठ से बुरा होता है । अत: पूर्व सत्य के रूप में प्रदर्शित अर्ध-सत्य मिथ्या कथन के तुल्य हो सकता है । "

यदि उपर लिखे नियमों का ठीक ढंग से पालन न हो और प्रविवरण में कोई असत्य विवरण अथवा मिथ्या प्रदर्शन किया जाता है । जिससे प्रेरित होकर कोई व्यक्ति कम्पनी के अंशों अथवा ऋणपत्रों को खरीदता है तो उसे निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हो जाते है-

(i) अंश क्रय करने के अनुबन्ध को तोड़ने का तथा
(ii) उन व्यक्तियों के विरूद्ध जिन्होंने प्रविवरण का निर्गमन किया है अथवा उन व्यक्तियों के विरूद्ध जो वैधानिक रूप से उत्तरदायी है, क्षतिपूर्ति का दावा कर सकते है ।

6.8 प्रविवरण में असत्य कथन

असत्य कथन एवं कपट से आशय जिसमे कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 65 एवं इसकी उपधाराओं में इसका स्पष्टीकरण किया गया है-

1. यदि प्रविवरण में कोई बात लिखने से छूट गई है अथवा छोड़ दी है और ऐसा होने से इसके पढ़ने वालों को धोखा हुआ है तो यह भी असत्य विवरण में सम्मिलित है ।
2. मिथ्यावर्णन तथ्यों का होना चाहिए, अधिनियम का नहीं । यदि किसी प्रविवरण में लिखा है कि कम्पनी के अंश आधे मूल्य पर दिये जायेगें तो यह अधिनियम का मिथ्यावर्णन है क्योकि अधिनियम द्वारा ऐसा करना वर्जित है ।
3. प्रविवरण में दिया गया विवरण असत्य माना जाता है यदि विवरण जिस सन्दर्भ में तथा जिस रूप में प्रयोग हुआ है, धोखे में डालने वाला हो । इस

सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि अलग-अलग पढ़ने से वह विवरण सत्य हो सकता है, किन्तु जिस संदर्भ में दिया गया है, उसके साथ पढ़ने से धोखा देता है तो यह सत्य होते हुए भी असत्य माना जाता है ।

सिद्ध करने का भार :

यदि कोई अंशधारी कम्पनी पर मिथ्यार्वस के आधार पर क्षतिपूर्ति अथवा अनुबन्ध के परित्याग के लिए वाद प्रस्तुत करता है तो पीड़ित पक्षकार (अर्थात अंशधारी) को ही यह सिद्ध करना पड़ेगा कि यदि उसे सही तथ्यों की जानकारी होती तो वह कम्पनी का अंशधारी नहीं बनता ।

6.9 भूल, असत्य कथन या मिथ्यावर्णन के प्रभाव या परिणाम (Effects of Omission, Untrue of Mis-Statement)

प्रविवरण में असत्य कथन होने की दशा में अंश ऋणपत्र क्रय करने वालों के निम्नलिखित पक्षकारों के विरूद्ध अधिकार उत्पन्न हो जाते है:

I कम्पनी के दायित्व अथवा कम्पनी के विरूद्ध अधिकार,

II संचालकों तथा प्रवर्तकों के दायित्व अथवा उनके विरूद्ध अधिकार, तथा

III विशेषज्ञों के दायित्व अथवा उनके विरूद्ध अधिकार ।

I कम्पनी के दायित्व अथवा कम्पनी के विरूद्ध अधिकार:

(Liability of Company or Right Against Company)

कम्पनी अधिनियम में प्रविवरण में भूल के लिए कम्पनी के दायित्वों का उल्लेख नहीं है फिर भी देश के सामान्य कानून (अनुबन्ध अधिनियम) के अन्तर्गत कम्पनी के कुछ दायित्व उत्पन्न हो जाते है । यदि प्रविवरण में भूल अथवा मिथ्यावर्णन है और उस कथन पर विश्वास करके किसी व्यक्ति ने अगर कम्पनी के अंश या ऋणपत्र खरीद लिये है तो उसे कम्पनी के विरूद्ध निम्नलिखित दो अधिकार प्राप्त हो जाते है-

(क) वह अनुबन्ध का परित्याग कर सकता है, तथा

(ख) वह क्षतिपूर्ति करवा सकता है ।

(क) अनुबन्ध का परित्याग करना (Rescission of the Contract)

असत्य कथन पर आधारित अंशों अथवा ऋणपत्रों के क्रय का अनुबन्ध पीड़ित पक्षकार (क्रेता) की इच्छा पर व्यर्थनीय (voidable) हो जाता है । क्रेता चाहे तो उन अंशों को लोटा कर अपनी धनराशि प्राप्त कर सकता है ।

किन्तु अनुबन्ध के परित्याग का अधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में ही प्राप्त होता है:-

(i) प्रविवरण में दिया गया कथन अथवा विवरण असत्य हो और उसमें किसी बात को छिपाने का प्रयास किया गया है व यह छिपाव किसी ऐसे महत्वपूर्ण तथ्य के सम्बन्ध में होना चाहिए जो अंशों अथवा ऋणपत्रों के क्रय करने अथवा नहीं करने के निर्णय को प्रभावित करने वाला हों ।

(ii) वह व्यक्ति उस असत्य कथन से ही अंश खरीदने के लिए प्रेरित हुआ है ।

(iii) वह प्रविवरण कम्पनी द्वारा अथवा कम्पनी की ओर से किसी अन्य अधिकृत व्यक्ति द्वारा जारी किया हुआ होना चाहिये । अनाधिकृत रूप से किसी भी अन्य व्यक्ति द्वारा जारी किये गये प्रविवरण पर विश्वास करके कोई व्यक्ति कम्पनी के अंश खरीद लेता है तो वह अंशों के क्रय के अनुबन्ध का परित्याग नहीं कर सकता है ।

(iv) उस व्यक्ति को वे अंश कम्पनी द्वारा ही आवंटित किये गये है । स्कन्ध विनिमय केन्द्र से खरीदे हुए अंशों पर कोई व्यक्ति प्रविवरण में मिथ्यावर्णन का सहारा लेकर अनुबन्ध का परित्याग नहीं कर सकता है ।

(v) असत्य कथन या विवरण की जानकारी होते ही अनुबन्ध का उचित अवधि में परित्याग करने की कार्यवाही कर दी हो ।

अनुबन्ध परित्याग के अधिकार की समाप्ति :

निम्नलिखित दशाओं में अंशधारी का अनुबन्ध के परित्याग का अधिकार समाप्त हो जाता है:

(i) यदि वह उस अनुबन्ध का अनुमोदन करता है ।

(ii) यदि अनुबन्ध के पक्षकारों को पूर्व स्थिति में पहुँचाना या प्रत्यास्थापना करना असम्भव हो गया हो ।

(iii) यदि प्रविवरण में वर्णित असत्य कथन कानून से सम्बन्धित हो ।

(iv) यदि अनुबन्ध के परित्याग के अधिकार का उपयोग करने से पूर्व ही कम्पनी समापन प्रारम्भ हो जाता है तो यह अधिकार समाप्त हो जाता है ।

(v) यदि अंशधारी ने उचित समय में अनुबन्ध के परित्याग की कार्यवाही नहीं की हो ।

(vi) यदि सदस्यता रजिस्टर में सदस्य का नाम अंकित करने सम्बन्धी सभी कार्यवाही पूरी कर ली हो तो सामान्यत: अनुबन्ध के परित्याग की अनुमति नहीं दी जाती है । किन्तु अज्ञानवश मिथ्यावर्णन की दशा में सम्पूर्ण कार्यवाही हो जाने के बाद भी अनुबन्ध के परित्याग का अधिकार दिया जा सकता है ।

(ख) क्षतिपूर्ति प्राप्त करना (claim damages) - यदि अंशधारी यह सिद्ध कर देता है कि प्रविवरण में जानबूझ कर असत्य वर्णन या कपटपूर्ण वर्णन किया गया है तो वह कम्पनी से क्षतिपूर्ति करवा सकता है । किन्तु यदि कोई व्यक्ति क्षतिपूर्ति के लिए वाद प्रस्तुत करता है तो उसे कम्पनी को अंश भी लौटाने पड़ते है । अंशधारी क्षतिपूर्ति के इस अधिकार का उपयोग कम्पनी का समापन प्रारम्म हो जाने के बाद भी कर सकता है ।

II संचालकों ,प्रवर्तकों आदि के दायित्व ((.promoters etc,liabilities of directors

जब किसी प्रविवरण में दिये गये असत्य कथन या विवरण पर विश्वास करके कोई व्यक्ति कम्पनी के अंश खरीद लेता है तो वह निम्नलिखित व्यक्तियों को उत्तरदायी ठहरा सकता है:

(i) वे व्यक्ति जो प्रविवरण जारी करने के समय कम्पनी के संचालक थे ।

(ii) वे व्यक्ति जिन्होंने प्रविवरण में अपना नाम संचालक के रूप में सम्मिलित करने की अनुमति दी हो ।

(iii) वे व्यक्ति जो कम्पनी के प्रवर्तक है, तथा

(iv) वे व्यक्ति जिन्होंने प्रविवरण के निर्गमन का अधिकार दिया है ।

प्रविवरण में असत्य कथन अथवा मिथ्या विवरण होने पर संचालकों, (धारा 62

(1) प्रवर्तकों आदि के निम्नलिखित प्रकार के दायित्व होते है ।

(क) नागरिक या दीवानी दायित्व (Civil liabilities)

(ख) दण्डनीय दायित्व (criminal liabilities)

(क) नागरिक या दीवानी दायित्व (civil liabilities):

1. **असत्य कथन के लिए क्षतिपूर्ति का दायित्व-** यदि कोई व्यक्ति यह सिद्ध कर देता है कि उसने प्रविवरण में दिये गये असत्य कथन अथवा विवरण से प्रेरित होकर ही कम्पनी के अंश अथवा ऋणपत्र खरीदे है तो ऐसा अंश या ऋणपत्रधारी उस प्रविवरण को जारी करने का अधिकार देने वाले सभी व्यक्तियों, संचालकों इत्यादि के विरूद्ध क्षतिपूर्ति का वाद प्रस्तुत कर सकता है तथा अपनी क्षतिपूर्ति करवा सकता हैं । (धारा 62(1)

   दायित्व से मुक्ति- असत्य कथन या विवरणयुक्त प्रविवरण जारी करने के लिए उत्तरदायी व्यक्ति निम्नलिखित परिस्थितियों में अपने दायित्व से मुक्त हो सकते है:

   यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि उसने संचालक बनने की सहमति देने के बाद किन्तु प्रविवरण जारी होने से पहले ही संचालक बनने के लिए दी गई अपनी सहमति वापिस ले ली थी तथा प्रविवरण उसकी सहमति अथवा अधिकार के बिना जारी किया गया है ।

(i) यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि प्रविवरण उसकी जानकारी अथवा सहमति के बिना (Without Knowledge or Consent) जारी किया गया था तथा उसके जारी होने की जानकारी मिलते ही उसने इस बात की एक उचित सार्वजनिक सूचना दे दी थी कि वह प्रविवरण उसकी जानकारी अथवा सहमति के बिना जारी किया गया है ।

(ii) यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि प्रविवरण जारी होने के बाद किन्तु अंश आवंटन के पहले विवरण में दिये गये असत्य विवरण का पता लगते ही उसने प्रविवरण जारी करने की अपनी सहमति वापस ले ली थी तथा उचित सार्वजनिक सूचना देकर प्रविवरण के सम्बन्ध में अपनी सहमति वापस लेने के कारण स्पष्ट कर दिये थे ।

(iii) यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि उसके पास प्रत्येक असत्य कथन को सत्य समझने का आधार था तथा अंशों एवं ऋण-पत्रों के आवंटन के समय तक उसे उस कथन के सत्य होने का विश्वास था ।

(iv) यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि असत्य कथन या प्रविवरण किसी विशेषज्ञ के विवरण का ही सही एवं उचित प्रतिरूप था अथवा उसी रिपोर्ट का सही सारांश या प्रतिलिपि थी । इसके अतिरिक्त उसे यह भी सिद्ध करना पड़ेगा कि वह विशेषज्ञ ऐसा विवरण देने के लिए समक्ष था तथा उसने (विशेषज्ञ ने) उस विवरण को प्रविवरण में प्रकाशन के लिए सहमति दे दी तथा उसने अपनी सहमति वापस नही ली थी ।

(v) यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि वह कथन या विवरण किसी अधिकृत व्यक्ति द्वारा दिया गया है अथवा किसी सार्वजनिक अधिकृत प्रलेख का सारांश या प्रतिलिपि है, जो उचित एवं सही है|

(vi) यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि किसी कथन या विवरण को असत्य सिद्ध करने का भार अंशधारी पर ही होता है । उसे यह भी सिद्ध करना पड़ता है कि उसने प्रविवरण में असत्य कथन से प्रेरित होकर ही अंश खरीदे है । (धारा 62)

2. **धारा 56 की अवहेलना करने पर क्षतिपूर्ति** -धारा 56 के अनुसार प्रविवरण में द्वितीय अनुसूची के प्रथम भाग में वर्णित बातें होनी चाहिए तथा इसके द्वितीय भाग में वर्णित प्रतिवेदन संलग्न करने चाहिए । यदि संचालक ऐसी किसी बात या प्रतिवेदन का प्रविवरण में समावेश करने की भूल करते है तो प्रविवरण भ्रामक या असत्य माना जाता है । ऐसे प्रविवरण से प्रेरित होकर अंश क्रय करने वाला व्यक्ति उसके संचालक को उसी क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी ठहरा सकता है । (56(4) के आधार पर)

3. **सामान्य कानून के अधीन क्षतिपूर्ति-** प्रविवरण में असत्य कथन की दशा में देश के सामान्य कानून के अधीन भी संचालकों आदि पर कपट या मिथ्यावर्णन का वाद प्रस्तुत किया जा सकता है । ऐसी दशा में भी पीड़िता पक्षकार अपनी क्षति की पूर्ति करवा सकता है । (धारा 56(6) के आधार पर)

(ख) दण्डनीय दायित्व (criminal liabilities):

यदि किसी प्रविवरण में असत्य कथन अथवा विवरण है तो उस प्रविवरण को जारी करने का अधिकार देने वाले प्रत्येक व्यक्ति को दो वर्ष तक के कारावास अथवा 50000 रू. तक के जुर्माने अथवा दोनों से दण्डित किया जा सकता है । **(2000 में संशोधित धारा 63)**

दायित्व से मुक्ति - यदि प्रवर्तक, संचालक इत्यादि निम्नलिखित बातें सिद्ध कर दें तो उनकों दण्डनीय दायित्व से मुक्त किया जा सकता है:

1. वह असत्य कथन या विवरण महत्वहीन अथवा सारहीन था, तथा
2. प्रविवरण जारी करने के समय तक उसके पास इस बात के विश्वास करने के उचित आधार थे कि वह विवरण सत्य था ।

कपटपूर्ण तरीके से धन निवेश करने हेतु उकसाने पर दण्ड- यदि कोई व्यक्ति जान-बुझकर अथवा लापरवाही से कोई ऐसी बात करता है, वर्णन करता है, वचन देता है अथवा भविष्यवाणी करता है जो असत्य अथवा धोखे में डालने वाली है अथवा जिसने महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया हुआ है और उस बात से किसी अन्य व्यक्ति को अंशों अथवा ऋणपत्रों के अभिदान के लिए प्रेरित करता है अथवा प्रेरित करने का प्रयास करता है तो ऐसे व्यक्ति को 5 वर्ष तक का कारावास अथवा 100000 रूपये तक का जुर्माना अथवा दोनों से ही दण्डित किया जा सकता है । (2000 में संशोधित धारा 68)

III विशेषज्ञों के दायित्व (liabilities of experts):

विशेषज्ञ कौन है? धारा 59(2) के अनुसार विशेषज्ञ से आशय इंजीनियर, मूल्यांकन करने वाले व्यक्ति (Valuer) लेखापाल (Accountant) अथवा अन्य ऐसे व्यक्ति से है जिसका व्यवसाय उसे ऐसे किसी विवरण को देने का अधिकार देता है ।

यदि किसी विशेषज्ञ ने किसी प्रविवरण में किसी ऐसे विवरण या प्रतिवेदन को सम्मिलित करने की लिखित सहमति दी है जो असत्य या मिथ्या है तो वह विशेषज्ञ उसके लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है । विशेषज्ञ के उस असत्य कथन पर विश्वास करके कम्पनी के अंश अथवा ऋण-पत्र खरीदने वाले व्यक्ति विशेषज्ञों को क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी ठहरा सकते है ।

यह उल्लेखनीय है कि विशेषज्ञ का दण्डनीय दायित्व नहीं होता है । (धारा 63(2))

दायित्व से मुक्ति- कोई भी विशेषज्ञ निम्नलिखित परिस्थितियों में अपने दायित्व से मुक्त हो सकता है:

1. यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि उसने प्रविवरण के निर्गमन के सम्बन्ध में अपनी सहमति देने के बाद किन्तु प्रविवरण के पंजीयन से पूर्व उसने अपनी सहमति लिखित में वापस ले ली थी, अथवा
2. यदि वह यह सिद्ध कर देता है कि उसने प्रविवरण का पंजीयन होने के बाद किन्तु उसके अनुसार अंशों का आवंटन होने से पूर्व उसे असत्य विवरण की जानकारी होते ही उसे अपनी सहमति लिखित में वापस ले ली थी तथा सार्वजनिक सूचना देकर सहमति के वापस लेने के कारण को स्पष्ट कर दिया था, अथवा
3. वह ऐसे विवरण देने के लिए सक्षम था तथा आवंटन के समय तक ऐसे विवरण की सत्यता पर विश्वास करने का उसके पास उचित आधार था तथा ऐसा विश्वास अंशों के आवंटन के समय तक भी था । (धारा 62)3)

6.10 स्थानापन्न प्रविवरण (statement in lieu of prospectus)

यदि कोई सावर्जनिक कम्पनी अपने लिए आवश्यक पूँजी अपने प्रवर्तकों संचालकों अथवा उनके मित्रों, सम्बन्धियों आदि से ही जुटा लेती है तो ऐसी दशा में प्रविवरण नहीं बनाया जाता तथा एक अन्य प्रलेख तैयार किया जाता है जिसे स्थानापत्र प्रविवरण कहते है । इसे अंश व ऋणपत्र आवंटित करने से कम से कम तीन दिन पूर्व रजिस्ट्रार के पास एक स्थानापन्न प्रविवरण प्रस्तुत करना होता है । (धारा 70(1))

स्थानापन्न प्रविवरण जारी करने की दशा (धारा 44)

(1) जब किसी सार्वजनिक कम्पनी ने प्रविवरण निर्गमित नहीं किया है । (धारा 70)

(2) एक निजी कम्पनी द्वारा तब जबकि वह एक सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित की जाती है । ऐसी कम्पनी को परिवर्तन के 30 दिनों में स्थानापन्न प्रविवरण रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत करना पड़ता है । (धारा 44)

(3) यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी प्रारम्भ में तो अंशों (अथवा ऋणपत्रों) के क्रय करने के लिए जनता को आमन्त्रित नहीं करती है और कुछ समय पश्चात् जनता को आमन्त्रित करना चाहती है तो प्रारम्भ में स्थानापन्न प्रविवरण बनाया जा सकता है ।

स्थानापन्न प्रविवरण के सम्बन्ध में वैधानिक नियम :स्थानापन्न प्रविवरण के सम्बन्ध में प्रमुख वैधानिक नियम निम्नलिखित है:-

(1) जब सार्वजनिक कम्पनी प्रविवरण जारी नही करती तो उसे स्थानापन्न प्रविवरण जारी करना पड़ता है । एवं उसे अपने अंशों का आवंटन करने से कम से कम तीन दिन पूर्व यह प्रविवरण रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत कर देना चाहिए (धारा 70)

(2) स्थानापन्न प्रविवरण अधिनियम की तृतीय अनुसूची के प्रथम भाग में दिये गये प्रारूप के अनुरूप ही होना चाहिए । इसके अतिरिक्त इसी अनुसूची के द्वितीय भाग में उल्लिखित प्रतिवेदनों को भी इस प्रविवरण में संलग्न करना चाहिए । साथ ही साथ प्रतिवेदनों को तैयार करते समय इसी अनुसूची के तृतीय भाग में दी गई व्यवस्थाओं को ध्यान में रखना चाहिए (धारा 70(1))

(3) जिनका नाम स्थानापन्न प्रविवरण में सम्मिलित है उन सभी अथवा प्रस्तावित संचालकों के हस्ताक्षर होने चहिये ।

(4) ये प्रावधान निजी कम्पनी पर लागू नहीं होते है । (धारा 70(3))

(5) यदि कोई कम्पनी स्थानापन्न प्रविवरण का तृतीय अनुसूची के अनुसार निर्माण करने तथा रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में कोई त्रुटि करती है तो इस प्रकार के उल्लंघन को अधिकृत करने वाले प्रत्येक संचालक पर 10000 रू. तक का दण्ड या जुर्माना किया जा सकता है । (सन् 2000 में संशोधित धारा 70(4)

(6) स्थानापन्न प्रविवरण में किसी बात का असत्य विवरण व उसे रजिस्ट्रेशन के लिए प्रस्तुत करने का अधिकार देने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर 50000 तक का जुर्माना अथवा दो वर्ष का कारावास अथवा दोनों ही दण्ड दिये जा सकते है । अंशधारी को अनुबन्ध के त्याग का अधिकार भी होता है । (2000 में संशोधित धारा 70(5))

(7) स्थानापन्न प्रविवरण जारी करने के लिए उत्तरदायी व्यक्ति को उसके दायित्व से मुक्त किया जा सकता है:-

(i) इसमें दिया गया असत्य विवरण महत्वहीन था अथवा

(ii) उसके पास उस असत्य विवरण को सत्य समझने का उचित आधार था ।

(8) यदि स्थानापन्न प्रविवरण सम्बन्धी प्रावधानों (धारा 70 के प्रावधानों) की अवहेलना करके अंशों का आवंटन किया जाता है तो अंश के आवेदनकर्ता की इच्छा पर आवंटन व्यर्थनीय होगा । परन्तु यह विकल्प निम्नांकित समय सीमा में ही उपलब्ध- होगा ।

(i) वैधानिक सभा होने के दो माह के भीतर, अथवा

(ii) यदि कम्पनी के लिए वैधानिक सभा बुलाना आवश्यक नहीं है अथवा वैधानिक सभा होने के बाद आवंटन किया गया है तो आवंटन की तिथि के दो माह के भीतर (धारा 71(2)

(9) स्थानापन्न प्रविवरण के पंजीयन के बाद उसमें कोई महत्वपूर्ण परिर्वतन सामान्य सभा की स्वीकृति से ही सम्भव है । सामान्य सभा की स्वीकृति के बिना परिर्वतन होने पर अंशधारी अपने अंशों के अनुबन्ध का परित्याग कर सकते है । (धारा 61)

6.11 शेल्फ प्रविवरण (self prospectus)

परिभाषा: शेल्फ प्रविवरण वह प्रविवरण है जो किसी वित्तीय संस्था या बैंक द्वारा अपनी प्रतिभूतियों या प्रतिभूतियों के वर्ग के एक या अधिक निर्गमों के लिये जारी किया गया है । (धारा 60 का स्पष्टीकरण) प्रत्येक सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाओं, बैंकों तथा अनुसूचित

बैंकों को अपने बॉण्ड़ो या अंशों के प्रत्येक निर्गमन के समय प्रविवरण निर्गमित करना पड़ता था । उनकी सुविधा को ध्यान में रखते हुये कम्पनी (संशोधन) अधिनियम 2000 के द्वारा एक नयी धारा 60 ए जोड़ी गई है । इसमें शेल्फ प्रविवरण का उल्लेख है |

शेल्फ प्रविवरण सम्बन्धी प्रावधान:-

(1) यह प्रविवरण किसी भी ऐसी सार्वजनिक वित्तीय संस्था, बैंक अथवा अनुसूचित बैंक द्वारा रजिस्ट्रार को प्रस्तुत किया जा सकता है जिसके प्रमुख उद्देश्य वित्त व्यवस्था करना है । (60 ए (1)

(2) कम्पनी/संस्था द्वारा रजिस्ट्रार को शेल्फ प्रविवरण प्रस्तुत कर देने के बाद उसे अपनी वैद्यता की अवधि में प्रतिभूतियों के प्रत्येक निर्गम के लिए दुबारा प्रस्तुत करना नहीं पड़ेगा । (धारा 60 ए (2)

(3) शेल्फ प्रविवरण की वैधता की अवधि उस प्रविवरण के अधीन प्रतिभूतियों के प्रथम निर्गम की तिथि से एक वर्ष तक रहेगी (धारा 60 ए (4)

(4) शेल्फ प्रविवरण प्रस्तुत करने वाली संस्था/कम्पनी को एक सूचना स्मरण-पत्र भी रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत करना पड़ेगा । इसमें निम्न बातों का विवरण होगा:-
   (i) नये सृजित प्रभारों के सम्बन्ध में
   (ii) संस्था की वित्तीय स्थिति में हुए प्रतिभूतियों के प्रथम, पूर्ववर्ती तथा पश्चात्वर्ती प्रस्ताव में हुए परिवर्तनों सम्बन्धी तत्व (धारा 60 ए (3)

(5) यह सूचना स्मरण पत्र केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित समय में शेल्फ प्रविवरण के अधीन प्रतिभूतियों के दूसरे या पश्चात्वर्ती निर्गम से पूर्व प्रस्तुत करना पड़ेगा । (धारा 60(3)

(6) प्रथम बार प्रस्तुत किये गये शेल्फ विवरण के साथ सूचना स्मरण पत्र और प्रतिभूतियों के प्रत्येक निर्गम के समय जब कभी नवीनतम सूचना स्मरण पत्र रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत किया जायेगा तो वह जनता को भी जारी किया जायेगा । (धारा 60 ए (4) तथा इसका परन्तुक]

6.12 सूचना स्मरण-पत्र (Information Memorendum)

पिछले कुछ वर्षो से प्रतिभूतियों का 'बुक बिल्डिंग' प्रक्रिया से निर्गमन का प्रचलन बढ गया है । ऐसी स्थिति में प्रतिभूति निर्गमनकर्ताओं को सूचना संस्मरण-पत्र जारी करना पड़ता है । कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 2000 द्वारा धारा 60 बी भी जोड़ी गई है । इसमें सूचना स्मरण पत्र सम्बन्धी प्रावधान दिये गये है । ये प्रावधान निम्नानुसार है: सार्वजनिक कम्पनी द्वारा जारी करना :-

(1) किसी भी सार्वजनिक कम्पनी को प्रतिभूतियों का निर्गमन करने से पूर्व, उसे रजिस्ट्रार को प्रविवरण प्रस्तुत करने से पहले ही सूचना स्मरण पत्र जारी कर सकती है । (धारा 60 बी (1)

(2) **प्रविवरण प्रस्तुत करना:** जो कम्पनी सूचना स्मरण पत्र के माध्यम से अभिदान आमन्त्रित करेगी उसे रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण भी प्रस्तुत करना पड़ेगा (धारा 60 बी (2)

(3) **मायावी प्रविवरण जारी करना:** जो कम्पनी सूचना स्मरण पत्र के माध्यम से अभिदान आमन्त्रित करेगी उसे प्रस्ताव खुलने के कम से कम तीन दिन पूर्व तक एक मायावी या भुलावा प्रविवरण (red herring prospectus) जारी करना पड़ेगा (धारा 60 दी (2) यहाँ मायावी प्रविवरण से तात्पर्य ऐसे प्रविवरण से है जिसमें प्रस्तावित प्रतिभूतियों की संख्या एवं मूल्य के बारे में पूरी जानकारी नहीं दी जाती है ।

(4) **प्रभाव एंव दायित्व:** सूचना स्मरण पत्र तथा मायावी प्रविवरण जारी करने का वही प्रभाव होगा तथा वे ही दायित्व उत्पन्न होगे जो प्रविवरण के निर्गमन से उत्पन्न होते है । (धारा 60 बी (3)

(5) **अन्तर या भेद को प्रकट करना:** यदि मायावी तथा सूचना स्मरण पत्र में कोई अन्तर है तो जारी करने वाली कम्पनी को उस अन्तर को स्पष्ट रूप से प्रकट करना पड़ेगा (धारा 60 बी (4)

(6) **अन्तर को व्यक्तिगत सूचित करना:** सूचना स्मरण पत्र तथा मायावी प्रविवरण में प्रकट किये गये अन्तर को उन सभी को व्यक्तिश: सूचित किया जायेगा जिनको प्रतिभूतियों के अभिदान हेतु आमन्त्रित किया गया है । (धारा 60 बी (5)

(7) **आवेदन पत्र वापस लेने की अवधि सीमा:** कोई भी आवेदनकर्ता अन्तर सम्बन्धी सूचना प्राप्त करने की तिथि से 7 दिनों के भीतर कभी भी अपने आवेदन पत्र को वापस ले सकेगा । आवेदन पत्र वापस लेने की सूचना कम्पनी एवं अभिगोपकों को देनी होंगी । (धारा 60 बी (7)

(8) **अग्रिम अभिदाताओं को सूचित करना तथा आवेदन पत्र वापस लेने का अवसर देना:** यदि प्रतिभूति निर्गमित करने वाली कम्पनी या उसके अभिगोपकों ने सूचना स्मरण पत्र तथा मायावी प्रविवरण के अन्तर को सूचित करने से पहले ही चैक या स्टॉक इन्वेस्ट से अभिदान प्राप्त कर लिया हो तो निर्गमन खुलने से पूर्व उनका नकदीकरण नहीं करवाया जायेगा जब तक कि ऐसे अभिदाताओं को किसी अन्तर को सूचित नहीं कर दिया जायेगा तथा उन्हे अपने आवेदन पत्र एवं नकद चैक, स्टॉक इन्वेस्ट आदि को वापस लेने का अवसर नहीं दे दिया जायेगा । (धारा 60 बी (6)

(9) **अन्तर की सूचना बिना कम्पनी द्वारा कार्यवाही करने पर आवेदक के अधिकार:** यदि दोनों प्रलेखों में अन्तर की सूचना दिये बिना ही या आवेदन पत्र वापस लेने का अवसर दिये बिना ही कम्पनी किसी आवेदन पत्र कार्यवाही करती है तो वह कार्यवाही व्यर्थ होंगी । अत: आवेदनकर्ता को आवेदन पत्र तथा उस चुका दी गई राशि को 15 प्रतिशत ब्याज सहित वापस प्राप्त करने का अधिकार होगा ।

(10) **अन्तिम प्रविवरण प्रस्तुत करना -** प्रतिभूतियों का प्रस्तुत करना पड़ता है, इस प्रविवरण में कुल प्राप्त ऋण या अंशपूँजी प्रतिभूतियों का अन्तिम मूल्य तथा अन्य सूचनाएँ जो मायावी प्रविरण में नही दी गयी थी, दी जायेगी ।

6.13 विक्रय हेतु प्रस्ताव / गर्भित या प्रभाव से प्रविवरण (offer for saleeprospectus by implication)

किसी भी ऐसे व्यक्ति अथवा ऐसी संस्था द्वारा जिसे जनता को पुन: आवंटित करने हेतु अंशों का आवंटन किया गया है अथवा आवंटन करने का ठहराव किया गया । (धारा-64) ऐसे प्रविवरण को एक विक्रय हेतु प्रस्ताव (offer for sale) कहते है जिसका प्रभाव भी प्रविवरण के समान ही होता है। इसी कारण ऐसे प्रपत्र को प्रभाव से प्रविवरण (Prospectus by Implication) या समझा हुआ प्रविवरण (Deemed Prospectus) भी कहते है ।

वर्तमान में इस धारा का महत्व बहुत बढ गया है । कम्पनियाँ अपने पूंजी निर्गमन के कार्य को जिन विशिष्ट संस्थाओं के हाथ सौंपती है उन्हें निर्गमन ग्रह (Issuing house) के नाम से जाना जाता है । कम्पनी इन निर्गमन ग्रहों से इस शर्त पर अंशों के आवंटन का ठहराव कर लेती है कि वे अंश जनता को विक्रय हेतु प्रस्तावित कर दिये जायेगें । तत्पश्चात् ये संस्थाएं किसी विज्ञापन, सूचना या परिपत्र द्वारा सामान्य जनता को अंशों के विक्रय का प्रस्ताव कर देती है । इस प्रपत्र (विज्ञापन) को ही प्रभाव से प्रविवरण माना जाता है । जब जनता से आवेदन प्राप्त होते है तब ये संस्थाएं अपने आवंटन का इन आवेदकों के पक्ष में परित्याग (renounce) कर देती है ।

यदि कम्पनी अपना विवरण मूल रूप से एवं अक्षरताः समाचार पत्रों में विज्ञापन हेतु देती है तो इसमें बहुत बड़ी संख्या व्यय करनी होंगी । अत: इस व्यय की राशि को कम करने के लिए यह छोटा रास्ता (short cut) अपनाया जाता है । इस विज्ञापन के अन्तर्गत कम्पनी के प्रविवरण की समस्त प्रमुख बातों का समावेश कर लिया जाता है और साथ ही उद्देश्य भी प्राप्त कर लिया जाता है । यदि कम्पनी विज्ञापन का 'प्रविवरण' दे और फिर मूल विवरण न दे केवल इसकी प्रमुख बाते ही दे तो यह गलत एवं अवैधानिक होगा जिसके दुष्परिणाम भी होगे । अत: कम्पनी विज्ञापन के शीर्षक में स्पष्ट रूप से एवं स्थूल अक्षरों में लिख देती है कि यह प्रविवरण नहीं है वरना घोषणा है वास्तव में यह प्रविवरण का ही संक्षिप्त रूप है ।

ऐसे विज्ञापनों की विषय-सामग्री:- कम्पनी अधिनियम ऐसे विज्ञापनों को प्रविवरण की मान्यता नही देता है, अत: विज्ञापनदाता इसकी सामग्री देने के लिए पूर्णत: स्वतन्त्र है, किसी प्रकार का वैधानिक बन्धन नहीं है । अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ऐसे विज्ञापनों में प्राय निम्नलिखित सामग्री दी जानी चाहिये:-

1. कम्पनी का पूरा नाम एवं उसके पंजीकृत कार्यालय का पता
2. कम्पनी की विद्यमान एवं प्रस्तावित गतिविधियाँ
3. उद्योग का स्थान यदि कोई हो
4. संचालक-मण्डल के सदस्यों के नाम, पते एवं विवरण
5. प्रबन्धक, प्रबन्ध-संचालक एवं सचिव के नाम पते व विवरण

6. अधिकृत पूंजी, अभिदत्त पूंजी, जनता को प्रस्तावित पूंजी
7. अभिदान-सूची खुलने तथा बन्द होने की विधियां
8. अंशों (अथवा ऋणपत्रों) के लिए आवेदन पत्र कही से प्राप्त किये जा सकते हैं कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय, अभिगोपकों, दलालों एवं बैंकर्स के कार्यालय से जिनके नाम व पूरे पते नीचे छपे हुए होते हैं ।
9. कम्पनी के बैंकर्स के नाम व पते
10. अंकेक्षक का नाम व पता (यदि कोई हो) ।

वैधानिक व्यवस्थाएं (legal provision)

'विक्रय हेतु प्रस्ताव' के सम्बन्ध में (धारा 64) में निम्नलिखित प्रमुख व्यवस्थाएं है:-

(1) 'विक्रय हेतु प्रस्ताव' करने वाले सभी व्यक्तियों का दायित्व ठीक उसी प्रकार का होगा जिस प्रकार प्रविवरण जारी करने (धारा 64(4)

(2) यदि विक्रय हेतु प्रस्ताव करने वाली संस्था कोई कम्पनी है तो इस प्रस्ताव पर दो संचालकों के हस्ताक्षर व संस्था साझेदारी फर्म है तो प्रस्ताव पर कम से कम आधे साझेदारी के हस्ताक्षर होना आवश्यक है । (धारा 64(5)

(3) विक्रय हेतु प्रस्ताव को भी प्रविवरण के समान ही माना जाता है । किन्तु वास्तव में निम्नलिखित परिस्थितियों में ही किसी विक्रय हेतु प्रस्ताव को प्रविवरण के समान माना जावेगा ।

(i) यदि कम्पनी द्वारा उन अंशों का आवंटन करने अथवा आवंटन का अनुबन्ध करने के छः माह के भीतर ही जनता को विक्रय हेतु प्रस्ताव कर दिया गया हो अथवा

(ii) यदि उन अंशों अथवा ऋण-पत्रों के विक्रय का जनता को प्रस्ताव करने की तिथि तक कम्पनी को अपने सम्पूर्ण अंशों का मूल्य न मिला हो (धारा 64(2)

'विक्रय हेतु प्रस्ताव' में भी उन सभी बातों का उल्लेख करना आवश्यक है जो किसी प्रविवरण में होती है । किन्तु इन बातों के साथ-साथ एक 'विक्रय हेतु प्रस्ताव' में निम्नलिखित विशेष बातों को भी सम्मिलित किया जाना आवश्यक है:-

(1) विक्रय हेतु प्रस्तावित अंशों या ऋण-पत्रों पर कम्पनी द्वारा प्रतिफल के रूप में प्राप्त की गई अथवा प्राप्त की जाने वाली राशि तथा

(2) वह समय तथा स्थान जहाँ पर उस अनुबन्ध का निरीक्षण किया जा सकता है, जिसके अन्तर्गत इन अंशों या ऋण-पत्रों का आवंटन किया गया है अथवा किया जाने वाला है । (धारा 64(3)

6.14 निजी कम्पनी के सार्वजनिक कम्पनी में परिणित होने पर निर्गमित प्रविवरण

किसी भी निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी मे, परिवर्तन होने के लिए विशेष प्रस्ताव पारित करके अपने अन्तर्नियम मे से निम्नलिखित प्रतिबन्ध को हटाना पडता है:-

(i) अंशों के हस्तान्तरण पर प्रतिबन्ध

(ii) सदस्यों की संख्या पर प्रतिबन्ध

(iii) जनता को अंशपत्र (अथवा ऋणपत्र) क्रय करने के लिए आमन्त्रित करने का निषेध ।

अन्तर्नियमों के परिवर्तन की तिथि से 30 दिन के अन्दर इस कम्पनी को अपना प्रविवरण अथवा स्थानापन्न प्रविवरण पंजीयन के लिए प्रस्तुत कर देना चाहिये । ऐसी कम्पनी द्वारा प्रविवरण में उन सब बातों का उल्लेख करना अनिवार्य है जो किसी कम्पनी के प्रविवरण में देना आवश्यक है

6.15 विदेशी कम्पनी का प्रविवरण

कोई भी व्यक्ति भारत में, भारत से बाहर सम्मिलित अथवा सम्मिलित होने वाली कम्पनी के अंश अथवा ऋण पत्र क्रय करने के लिए प्रविवरण का निर्गमन, प्रसार अथवा वितरण केवल उस दशा में ही कर सकता है जबकि ऐसे प्रविवरण पर तिथि पड़ी हो और निम्नलिखित विषयों से सम्बन्धित सूचना हों

1. कम्पनी के संविधान की व्यवस्था करने वाला प्रलेख है ।
2. वह अधिनियम जिसके अन्तर्गत कम्पनी का समामेलन हुआ है ।
3. वह देश जहाँ पर कम्पनी का समामेलन हुआ है, उसका नाम एवं समामेलन की तिथि ।
4. यदि कम्पनी ने भारत में अपना व्यवसायिक स्थान स्थापित किया है तो उसके भारत स्थित प्रमुख कार्यालय का पता ।
5. भारत में उस स्थान का पता जहां पर उपर्युक्त अधिनियम, विलेख अथवा उसकी प्रतिलिपियों का निरीक्षण किया जा सकता है ।
6. उपयुक्त के अतिरिक्त वे समस्त बातें भी प्रविवरण में लिखी होनी चाहिये जो भारतीय कम्पनियों द्वारा निर्गमित प्रविवरणों में लिखी जाती है ।

रजिस्ट्रार के यहां फाईल करना - विदेशी कम्पनी द्वारा प्रविवरण का भारत में निर्गमन, प्रसार अथवा वितरण करने के पूर्व उसकी एक प्रतिलिपि द्वारा यह प्रमाणित होने पर, कि प्रबन्ध समिति ने इसे एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकृत कर लिया है, रजिस्ट्रार के कार्यालय में पंजीयन के लिए फाईल कर देनी चाहिए ।

उपर्युक्त व्यवस्थाओं का उल्लंघन करने वाले दोषों को छः महीने का कारावास अथवा 5000 रू. तक आर्थिक दण्ड अथवा दोनों से ही दण्डित किया जा सकता हैं ।

6.16 सारांश

प्रविवरण किसी कम्पनी की आत्मकथा होती है जिसके आधार पर कम्पनी के भूत एवं भविष्य के क्रियाकलापों हेतु अंश पूंजी एवं ऋणपत्र या अन्य किसी रूप में कम्पनी को उपलब्ध कराता है|

प्रविवरण के माध्यम से विनियोजकों के हित संरक्षित करने की चेष्टा की जाती है एवं प्रविवरण में मिथ्याकथन के लिए दोषी पक्षकारों के विरूद्ध कार्यवाही के लिए कम्पनी अधिनियम में कठोर प्रावधान है ।

6.17 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास के लिए प्रश्न

अति लघुत्तरात्मक प्रश्न (Very short answer type Questions)

1. प्रविवरण से आप क्या समझते है?
   What do you mean by Prospectus?

2. कम्पनी को कब 'स्थानापन्न प्रविवरण' प्रस्तुत करना पड़ता है?
   When is a company required to file a statement in lieu of prospectus
3. विक्रय हेतु प्रस्ताव क्या है?
   what is offer for sale?
4. प्रविवरण के लक्षण बताईये?
   what is the characteristics of prospectus?
5. एक कम्पनी की ओर से प्रविवरण कौन जारी कर सकता है?
   who can issue a prospectus on behalf of a company?

लघुत्तरात्मक प्रश्न (Short answer type Questions)

1. प्रविवरण का निर्गमन कौन कर सकता है, और यह कब आवश्यक नहीं होता?
   Who can issue prospectus and when it is not required?
2. प्रविवरण की रचना से सम्बन्धित सिद्धान्त अथवा नियम बताइये?
   what is the principle or rule in respect of prospectus drafting?
3. शेल्फ प्रविविरण क्या है? एवं उससे सम्बन्धित प्रावधान क्या है?
   what is self prospectus and what are rules regarding self prospectus?
4. प्रविवरण की प्रमुख बातों की रूपरेखा बनाईए?
   Outline the main contents of a prospectus?
5. कम्पनी को कब स्थानापन्न प्रविवरण प्रस्तुत करना पड़ता है?
   when is a company required to file a statement in lieu of prospectus?

निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. उन परिस्थितियों की व्याख्या कीजिये जिनमें एक प्रविवरण का स्थानापन्न विवरण पत्र और 'एक विक्रय के लिए प्रस्ताव' किये जाते है । उनकी विषयसामग्री का वर्णन कीजिए ।
   discuss the situationa in which a statement in lieu of prospectus and proposal for a sale are issued. describe the subject matter.
2. प्रविवरण से क्या आशय है? कम्पनी अधिनियम, 1956 में प्रविवरण के रजिस्ट्रेशन के सम्बन्ध में प्रावधानों का उल्लेख कीजिए । प्रविवरण कौन जारी कर सकता है?
   what is meantby prospectus ? state the provisions in the company act, 1956 regarding registration of prospectus . who can issue prospectus?
3. एक कम्पनी के प्रविवरण में भूल, मिथ्यावर्णन और कपट के परिणामों की विवेचना कीजिए । उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिए जिनके अन्तर्गत संचालकों को उनके दायित्व से मुक्त किया जा सकता है ।
   discuss the consequence of omission ,mis-representation and fraud in connection with prospectus of a company . also narrate the circumstances under which a director may be relieved from the liability.

4. एक सार्वजनिक कम्पनी के लिए अपना प्रविवरण निर्गमित करना अनिवार्य नहीं है जबकि निजी कम्पनी को ऐसा करने की अनुमति ही नहीं होती है । इस कथन की व्याख्या कीजिए । प्रविवरण में असत्य कथन के क्या परिणाम होते है?
   "It is not compulsory for a public company to issue a prospectus while a private company is even not permitted to issue it."explain this statement .what are the consequences of mis-statement in prospectus?
5. कम्पनी के प्रविवरण से आप क्या समझते है? एक कम्पनी के प्रविवरण में क्या-क्या विवरण दिये जाते हैं? विस्तार से समझाइये?
   what do you understand by prospectus of company? what particulars are given in a company prospectus? explain in detail.

6.18 व्यावहारिक प्रश्न (Practical Questions)

1. एक कम्पनी ने मिथ्यावर्णन सहित निक्षेप प्राप्त करने के लिए एक प्रविवरण जारी किया जिसके लिए कम्पनी के विरूद्ध कार्यवाही की जा सकती है । इस प्रविवरण पर विश्वास करते हुए 500 अंश बाजार से खरीदे और कम्पनी के विरूद्ध नुकसान के लिए वाद दायर किया, क्या वह इस वाद में सफल होगा?
   संकेत : नहीं
2. अंशों के एवं आवंटी ने कम्पनी के संचालक के विरूद्ध प्रविवरण में मिथ्याकथन के लिए वाद दायर किया जिसके लिए संचालक का कहना है कि प्रविवरण प्रवर्तकों के द्वारा तैयार किया गया था अत: इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, मैने उनकी बात पर विश्वास करते हुए हस्ताक्षर किये हैं । क्या संचालक को इस आधार पर दोष मुक्त किया जा सकता है?
   संकेत :नहीं

6.19 उपयोगी पुस्तकें/संदर्भ ग्रन्थ

- पी.के. घोष, टेस्क्ट बुक ऑफ कम्पनी सेक्टीरियल प्रेक्टिस, (सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, नई दिल्ली)
- एन.डी. कपूर, ऐलीमेन्टस ऑफ कम्पनी ली, (सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, नई दिल्ली)
- डी. आर. एल. नौलखा, कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (रमेश बुक डिपो, जयपुर-नई दिल्ली)
- डी. बी.एस. माथुर एवं के.बी. सक्सेना, कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (आदर्श प्रकाशन, जयपुर)

इकाई -7: अंश पूँजी (Share Capital)

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 अंश पूँजी का आशय

7.3 अंश पूँजी के प्रकार

7.4 अंश का अर्थ एवं परिभाषा

7.5 अंशों के प्रकार

7.6 अंशों का आवंटन

7.6.1 अंश आवंटन का आशय

7.6.2 अंश आवंटन सम्बन्धी सामान्य व्यवस्थाएँ

7.6.3 सार्वजनिक कम्पनी के लिए आवंटन की शर्तें

7.7 अनियमित आवंटन

7.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

7.9 सन्दर्भ पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

कम्पनी के प्रवर्तकों को समामेलन के समय कम्पनी की अधिकतम पूँजी, जिसे रजिस्टर्ड पूँजी कहते हैं, का निर्धारण करते समय कम्पनी के व्यापार की वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखना चाहिए । कम्पनी विधान में पूँजी के कलेवर (capital structure) के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है । कम्पनी की पूँजी इतनी होनी चाहिए जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके । अतिपूँजीकरण तथा अल्प पूँजीकरण दोनों ही व्यवसाय के लिए हानिकारक हैं । एक आदर्श पूँजीकरण के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की अंश पूँजी को उसके सम्बन्धित अधिकारों के अनुसार उचित अनुपात में सम्मिलित किया जाना चाहिए । कम्पनी की अंश पूँजी को स्वामित्व पूँजी (ownership capital) कहते हैं तथा ऋणपत्रों के निर्गमन से प्राप्त पूँजी को ऋणपूँजी (loan capital) कहते हैं ।

7.2 अंश पूँजी का आशय (meaning of share capital)

जब कम्पनी अपने अंशों का निर्गमन करके पूँजी प्राप्त करती है तो उसे हम अंश पूँजी कहते हैं| अंश पूँजी कम्पनी की कुल पूँजी का वह भाग है जो कम्पनी समय-समय पर अंशों के निर्गमन द्वारा प्राप्त करती है ।

7.3 अंश पूँजी के प्रकार (kinds of share capital)

अंश पूँजी को निम्नलिखित वर्गो मे विभक्त कर सकते हैं-

(i) **रजिस्टर्ड अथवा अधिकृत पूँजी (Authorised or registered capital) -** कम्पनी विधान के अनुसार, प्रत्येक अंश पूँजी वाली कम्पनी के पार्षद सीमानियम

में पूँजी वाक्यांश के अन्तर्गत, कम्पनी की पूँजी की अधिकतम सीमा के निर्दिष्ट (specify) करना आवश्यक है । यह वह पूँजी है जिसके द्वारा कम्पनी को समामेलन किया जाता है । इसे कम्पनी की अधिकृत पूँजी कहते है । इस पूँजी के साथ कम्पनी का रजिस्ट्रेशन किये जाने के कारण इसे कम्पनी की रजिस्टर्ड पूँजी भी कहते हैं । यह कम्पनी द्वारा निर्गमित की जाने वाली पूँजी की अधिकतम सीमा है । यह पूँजी विभिन्न प्रकार के अंशों में विभाजित होती है । प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी की अंश-पूँजी, समता तथा पूर्वाधिकार अंशों (equity and preference shares) में विभाजित की जा सकती है ।

(ii) **निर्गमित पूँजी (issued capital) -** निर्गमित पूँजी अधिकृत पूँजी का वह भाग है जो जनता को अंश खरीदने के उद्देश्य से निर्गमित की जाती है । प्रायः कम्पनियाँ प्रारम्भ में अपनी सम्पूर्ण अधिकृत पूँजी को निर्गमित नहीं करती हैं । कम्पनी की आवश्यकता के अनुसार इस पूँजी के कुछ भाग को जनता को निर्गमित किया जाता है । शेष भाग को भविष्य में समय-समय पर निर्गमित करके पूँजी प्राप्त की जा सकती है । उदाहरणार्थ यदि कम्पनी 50000 साधारण अंशों में से 20000 अंश निर्गमित करती है तो इस दशा में कम्पनी की निर्गमित पूँजी 2 लाख रूपये होंगी।

(iii) प्रार्थित पूँजी (subscribed capital) - जब किसी कम्पनी के अंश जनता को खरीदने के लिए निर्गमित किये जाते हैं, तो कम्पनी की भावी प्रगति के अवसरों तथा कम्पनी के संचालकों की योग्यता से प्रेरित होकर, कई व्यक्ति कम्पनी के अंश खरीदने के लिए आवेदन-पत्र देते हैं । इस प्रकार निर्गमित पूँजी का वह भाग जो जनता द्वारा ले लिया गया है, प्रार्थित पूँजी कहलाती है |

(iv) **माँगी हुई पूँजी या याचित पूँजी called-up capital) -** याचित पूँजी आबंटन पूँजी का वह भाग है, जो आवेदकों से मांगी जाती है । प्रायः कम्पनियां अपने अंशों की राशि को एक साथ नहीं मांगती हैं । कुछ राशि आवेदन पर तथा कुछ आवंटन पर और कुछ प्रथम, द्वितीय तथा अन्तिम याचना के रूप में समय- समय पर कम्पनी की आवश्यकतानुसार अंशधारियों से मांगी जाती है ।

(v) **अयाचित पूँजी (uncalled capital) -** अयाचित पूँजी याचित पूँजी का वह भाग है जिसे कम्पनी ने अंशधारियों से नहीं मांगा है ।

(vi) **प्रदत्त पूँजी (paid-up capital) -** प्रदत्त पूँजी याचित पूँजी का वह भाग हैं जो अंशधारियों ने कम्पनी को भुगतान कर दिया है । इस प्रकार भुगतान की हुई पूँजी को प्रदत्त पूँजी कहते हैं । ऐसा होता है कि कई अंशधारी अपनी परिस्थिति के कारण, कम्पनी द्वारा मांगी हुई याचना राशि का भुगतान नहीं कर पाते हैं, ऐसी राशि को बकाया राशि अथवा 'अदत्त मांगे' (call in arrear) कहते हैं ।

(vii) **संचित पूँजी (reserve capital) -** संचित पूँजी अयाचित पूँजी का वह भाग है जिसे कम्पनी के जीवन काल में नहीं मांगा जा सकता है ।

7.4 अंश अर्थ एवं परिभाषा (Meaning & Definition of Shares)

जब किसी कम्पनी की अंश पूँजी समान एवं निश्चित मूल्य के विभिन्न हिस्सों में विभक्त होती है, तो इसका प्रत्येक हिस्सा 'अंश' कहलाता है ।

कम्पनी विधान की धारा 2(46) के अनुसार, अंश का आशय कम्पनी की अंश-पूँजी से तथा उसमें स्कन्ध (stock) को सम्मिलित किया जाता है, जब तक कि स्कन्ध और अंश में स्पष्टतया अथवा गर्भित रूप से अन्तर न किया गया हो ।

इस प्रकार अंश, कम्पनी की पूँजी की छोटी से छोटी एक इकाई होती है जिसका हस्तांतरण इसकी सम्पूर्णता में ही सम्भव होता है । यह चल सम्पत्ति है जो इसके अंशधारी के स्वामित्व का प्रमाण होता है ।

7.5 अंशों के प्रकार (kinds of shares)

कम्पनी विधान की धारा 66 के अनुसार इस अधिनियम के बाद निर्गमित पूँजी केवल दो प्रकार की हो सकती है तथा इस अधिनियम के बाद निर्मित अंशों द्वारा सीमित दायित्व वाली कम्पनी केवल दो प्रकार के अंशों का निर्गमन कर सकती है-

(अ) समता अंश (equity share)

(ब) पूर्वाधिकार अंश (preference share)

(अ) समता अंश (equity share) कम्पनी विधान की धारा 85(2) के अनुसार समता अथवा साधारण अंश उन अंशों को कहते हैं जिन्हें पूर्वाधिकार अंशों की तरह पूर्वाधिकार प्राप्त नहीं होता है ।

समता अंशों की विशेषताएँ (charcteristics of equity shares)

समता अंशों की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. समता अंशों पर लाभांश का भुगतान पूर्वाधिकार अंशधारियों को पूर्व निर्धारित दर से लाभांश का भुगतान करने के बाद किया जाता हैं । दूसरे शब्दों में समता अंशों का तात्पर्य उन अंशों से है जिसके धारक को (i) लाभांश के भुगतान में पूर्वाधिकार नहीं होता है तथा (ii) कम्पनी के समापन के समय पूँजी के पुनर्भुगतान का पूर्वाधिकार नहीं होता है ।
2. समता अंशों पर लाभांश की घोषणा कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में संचालकों की सिफारिशों के अनुसार की जाती है ।
3. इन अंशों के मालिकों को कम्पनी की सभाओं की सूचना प्राप्त करने, उनमें उपस्थित होने तथा मतदान करने का अधिकार प्राप्त होता है ।
4. समता अंशों पर लाभांश की दर पहले से निश्चित नहीं होती है ।
5. समता अंशों का शोधन (Redemption) कम्पनी के जीवनकाल में सम्भव नहीं है । इनके धारकों को पूँजी की वापसी कम्पनी के समापन के समय हो सकती है ।
6. इन अंशों के धारकों को पूँजी की वापसी, पूर्वाधिकार अंशधारियों की पूँजी लौटाने के बाद, की जाती है ।

7. समता अंशधारी ही कम्पनी के वास्तविक मालिक (Real owners) होते हैं ।

समता अंशों से सम्बन्धित अधिकार (rights atteched to equity shares) - समता अंशों पर लाभांश का भुगतान एवं पूँजी की वापसी, पूर्वाधिकार अंशधारियों को लाभांश का भुगतान एवं पूँजी की वापसी के बाद ही, सम्भव है । समता अंशों के धारकों को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं-

1. **लाभांश प्राप्ति का अधिकार-** समता अंशों के धारकों को, पूर्वाधिकार अंशों पर लाभांश का भुगतान करने के बाद, शेष लाभों में भी कम्पनी की साधारण सभा (annual general meeting) में घोषित लाभ प्राप्त करने का अधिकार है ।
2. **सभाओं की सूचना प्राप्ति का अधिकार-** समता अंशधारियों को कम्पनी की विभित्र सभाओं की सूचना प्राप्ति का अधिकार होता है ।
3. **सभा में उपस्थित होने एवं मतदान करने का अधिकार-** समता अंशधारी कम्पनी की सभाओं में उपस्थित हो सकते हैं तथा विभिन्न प्रस्तावों पर अपना मत दे सकते हैं ।
4. **मतगणना की माँग का अधिकार-** समता अंशधारी वैधानिक औपचारिकताओं को पूरा करते हुए कम्पनी की सभाओं में प्रस्तुत विभिन्न प्रस्तावों (motions) पर मतदान की मांग कर सकते हैं ।
5. **हस्तान्तरण का अधिकार-** कम्पनी के अन्तर्नियमों के अधीन एक सार्वजनिक कम्पनी के समता अंशधारियों को अपने अंशों को स्वतन्त्रतापूर्वक हस्तान्तरित करने का अधिकार होता है ।
6. **सदस्यों को प्राप्त अधिकार-** समता अंशधारियों को कम्पनी अधिनियम के अधीन सदस्यों (members) को प्राप्त होने वाले विभिन्न अधिकार भी प्राप्त होते हैं ।

समता अंशों से सम्बन्धित दायित्व (liabilities attached to equity shares)-उपर्युक्त अधिकारों के साथ-साथ समता अंशधारियों के निम्नलिखित दायित्व भी होते हैं-

1. कम्पनी द्वारा मांग (call) पर याचना राशि का निश्चित समय में भुगतान करना ।
2. कम्पनी के समापन की दशा में अंशों पर देय शेष धनराशि के लिए धनदाता के रूप में दायित्व ।

(ब) पूर्वाधिकार अंश (preference shares)

पूर्वाधिकार अंशों का तात्पर्य उन अंशों से है, जिन्हें लाभांश प्राप्त करने तथा पूँजी के पुनर्भुगतान के सम्बन्ध में पूर्वाधिकार प्राप्त होते हैं । दूसरे शब्दों में, पूर्वाधिकार अंशधारियों का अन्य अंशधारियों के पहले लाभांश प्राप्त करने का अधिकार है । पूँजी के पुनर्भुगतान के पूर्वाधिकार का तात्पर्य है कि कम्पनी के समापन की दशा में ऋणदाताओं को भुगतान करने के पश्चात् शेष धन में से पूर्वाधिकार अंशधारियों को प्रथमतः उनके अंशों के अंकित मूल्य के बराबर राशि लौटाई जाती है । यदि पूर्वाधिकार

अंशधारियों की पूँजी का भुगतान करने के पश्चात् भी कुछ धन शेष रहता है तो वह कम्पनी के साधारण अंशधारियों में वितरित किया जाता है ।

पूर्वाधिकार अंशों की विशेषताएँ (charecteristics of preference share)- पूर्वाधिकार अंशों की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ हैं-

1. इन अंशों के धारकों का लाभाँश के भुगतान में पूर्वाधिकार (preference) होता है ।
2. इन अंशों पर भुगतान किये जाने वाले लाभांश की दर पहले से निश्चित होती है ।
3. कम्पनी के अन्तर्नियम में व्यवस्था होने पर इन अंशों का शोधन (redemption) कम्पनी के जीवनकाल में भी किया जा सकता है ।

पूर्वाधिकार अंशों से सम्बन्धित अधिकार (Rights attached to preference shares)- पूर्वाधिकार अंशधारियों को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं-

1. **लाभांश प्राप्ति का पूर्वाधिकार -** पूर्वाधिकार अंशधारियों को कम्पनी के लाभों में से लाभांश प्राप्त करने का पूर्वाधिकार होता है । दूसरे शब्दों में इन अंशों के धारकों को प्राथमिकता के आधार पर लाभांश का भुगतान किया जाता है ।
2. **निश्चित दर से लाभांश प्राप्ति -** समता अंशधारियों को लाभांश देने से पूर्व इन अंशों पर एक निश्चित दर से लाभांश दिया जायेगा । कभी लाभों की कमी की दशा में अन्तर्नियमों के अधीन बकाया राशि के संचित होने का भी विशेषाधिकार होता है ।
3. **पूँजी वापसी में प्राथमिकता -** कम्पनी के समापन की दशा में अंशधारियों को पूँजी लौटाते समय सर्वप्रथम इन्हीं अंशधारियों को पूँजी वापस की जाती है । शेष बचने पर ही समता अंशधारियों को पूँजी लौटाई जाती है ।
4. **मताधिकार -** पूर्वाधिकार अंशधारियों को उन समस्त विषयों पर मताधिकार प्राप्त होता है जो इनके हितों को प्रभावित करते है ।
5. **समता अंशों में परिवर्तन -** अन्तर्नियमों के अधीन इन अंशधारियों को एक निश्चित अवधि में अपने अंशों को समता अंशों में परिवर्तन कराने का अधिकार भी दिया जा सकता है ।
6. **शोधन -** अन्तर्नियमों में व्यवस्था होने पर कम्पनी पूर्वाधिकार अंशों का शोधन कर सकती है । उल्लेखनीय है कि केवल पूर्वाधिकार अंश ही शोधनीय होते हैं, समता अंशों का शोधन सम्भव नहीं है ।

पूर्वाधिकार अंशों से सम्बन्धित दायित्व (Liabilties Attached to preference share)

1. कम्पनी द्वारा माँग पर याचना राशि का निश्चित समय में भुगतान करना ।
2. कम्पनी के समापन की दशा में अंशों पर देय धनराशि के लिए धनदाता के रूप में दायित्व ।

7.6 अंशों का आवंटन (Allotment share)

कम्पनी के प्रवर्तक, रजिस्ट्रार से कम्पनी का समामेलन प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के बाद पार्षद सीमानियम के लिखित अधिकृत अंश-पूंजी में से कुछ अथवा सम्पूर्ण अंशों को कम्पनी की आवश्यकतानुसार, निर्गमित करते हैं । अंश-पूँजी निर्गमन के लिए प्रत्येक सार्वाजनिक कम्पनी को प्रविवरण पत्र या स्थानापन्न प्रविवरण निगमित करना पड़ता है । धारा 2(36) के अनुसार प्रविवरण-पत्र में कम्पनी की अंश-पूँजी उद्देश्य, संचालक, प्रबन्ध-संचालक एवं प्रबन्धक के नाम, पते तथा व्यवसाय, कम्पनी के बैंकर्स, कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों के कुछ महत्वपूर्ण उद्धरण एवं कम्पनी द्वारा निर्गमित किया गया प्रविवरण जनता के लिए कम्पनी के अंशों अथवा ऋण-पत्रों के क्रय करने के लिए एक निमन्त्रण है । इसके अन्तर्गत ऐसे महत्वपूर्ण तथ्यों पर प्रकाश डाला जाता है जिनसे प्रेरित होकर जनता, विनियोजक तथा अन्य वित्तीय संस्थाएँ अपने सुरक्षित कोषों को कम्पनी में विनियोग करने के लिए आवेदन-पत्र देते हैं । इस प्रकार प्राप्त हुए आवेदन, सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा अंश खरीदने का प्रस्ताव कहलाता है तथा जब कम्पनी आवंटन सम्बन्धी वैधानिक प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए अंशों का आवंटन करती है तो ऐसा आवंटन कम्पनी की तरफ से उनके द्वारा अंश खरीदने के प्रस्ताव की स्वीकृति कहलाता है । इस प्रकार अंशों के आवंटन के सम्बन्ध में आवेदकों को आवंटन-पत्र प्रेषित करने से कम्पनी तथा आवेदकों के बीच एक वैध अनुबन्ध हो जाता है । आवंटन-पत्र के प्राप्त होने पर आवेदक आवंटन राशि के भुगतान के लिए उत्तरदायी हो जाते हैं ।

7.6.1 अंश आवंटन का आशय (meaning of allotment)

अंश आवंटन का अभिप्राय किन्हीं विशेष व्यक्तियों को उनके प्रार्थना-पत्रों के उत्तर में अथवा कम्पनी द्वारा पूर्व निश्चित अनुबन्धों के प्रतिफल स्वरूप कम्पनी के अंशों के विभाजन या नियोजन (appropriation) से है । वास्तव में अंशों का आवंटन कम्पनी का ऐसा कार्य है, जिसके द्वारा एक आवेदक असमायोजित (unapproprition) अंशों का धारक बन जाता है, जो कम्पनी द्वारा किसी भी अन्य आवेदक को, उसकी स्वीकृति से भी आवंटित नहीं किये जा सकते ।

कम्पनी के प्रविवरण के आधार पर आवेदकों से प्राप्त आवेदन पत्र कम्पनी के अंश खरीदने को अंशों का निर्गमन करती है तो यह प्रस्ताव की स्वीकृति कहलाती है । दूसरे शब्दों में "अंशों के आवंटन" का आशय किसी निर्दिष्ट व्यक्ति को जिसने कम्पनी के अंशों तथा ऋणपत्रों के लिए आवेदन पत्र भेजे हैं, निश्चित अंशों या ऋणपत्रों को निर्गमन हेतु सुनिश्चित करना है ।

7.6.2 अंश आवंटन सम्बन्धी सामान्य व्यवस्थाएँ (general provisions regarding allotment of shares)

एक प्रभावी आवंटन के लिए भारतीय अनुबन्ध अधिनियम 1872 के अन्तर्गत वर्णित 'प्रस्ताव' एवं 'स्वीकृति' से सम्बन्धित निम्नलिखित व्यवस्थाओं का पालन आवश्यक है -

(1) **आवंटन समुचित अधिकारी द्वारा (allotment by proper authority) -** कम्पनी की ओर से आवंटन का अधिकार संचालक मण्डल का होता है । अन्तर्नियमों में स्पष्ट व्यवस्था के अभाव में किसी अन्य व्यक्ति या अधिकारी को हस्तान्तरण नहीं किया जा सकता । संक्षेप में कहा जा सकता है कि आवंटन संचालक मण्डल अथवा अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत समुचित अधिकारी द्वारा ही किया जाना चाहिए ।

(2) **आवंटन उचित समय में (hin responsible timewit) -** अनुबन्ध अधिनियम की धारा 6, जो प्रस्ताव की स्वीकृति से सम्बन्धित है, की व्यवस्थाओं के अधीन आवंटन उचित समय में किया जाना चाहिए, अन्यथा प्रस्तावक अंश लेने से इन्कार कर सकता है

(3) **आवंटन का संवहन होना चाहिए ((allotment must be communicated-** आवेदक को आवंटन का संवहन होना चाहिए । केवल अंशों या ऋण-पत्रों के आवंटन का प्रस्ताव पारित कर लेने मात्र से ही आवेदक को दायी नहीं बनाया जा सकता । आवंटन की सूचना आवेदन पत्र में निर्धारित रीति से दी जानी चाहिए । निर्णयानुसार यदि डाकखाने को संवहन के माध्यम के रूप में किया गया है तो समुचित पता लिखकर एवं टिकिट (stamps) लगाकर डाक में डालने से ही संवहन पूरा हो जाता है भले ही आवेदक के पास नहीं पहुँचे ।

(4) **पूर्ण एवं शर्त रहित (absolute and unconditional)-** रमणभाई बनाम घासी राम के वाद में दिए गए निर्णयानुसार कम्पनी द्वारा किया गया अंशों का आवंटन आदेश पत्र में उल्लेखित शर्तों के अनुसार होना चाहिए अन्यथा आवेदक, अंशधारी के रूप में दायी नहीं होगा, किन्तु इस सम्बन्ध में आवेदक का यह कर्त्तव्य है कि वह आवेदन पत्र की शर्तों के विपरीत किये गये आवंटन को तुरन्त अस्वीकार करे । यदि वह अपने आचरण से स्पष्ट या गर्भित रूप से आवंटित अंशों के प्रति अपनी स्वीकृति दर्शाता है तो बाद में वह उन अंशों को ग्रहण करने के लिए बाध्य होगा तथा उसका अंशों को अस्वीकार करने का अधिकार समाप्त हो जायेगा ।

7.6.3 सार्वजनिक कम्पनी के लिए आवंटन की शर्तें (conditions of allotment of shares for public company)

भारतीय कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत, कम्पनी द्वारा किये जाने वाले अंशों के आवंटन से सम्बद्ध कई वैधानिक शर्तें हैं । इन शर्तों का उद्देश्य कतिपय प्रवर्तकों द्वारा प्रविवरण-पत्र निर्गमित कर जनता से कपटपूर्ण रीति से पूँजी प्राप्त करने पर रोक लगाना है । अधिनियम के अनुसार आवंटन पर निम्न रूकावटें हैं:

1. **न्यूनतम अभिदान राशि की प्राप्ति -** कोई भी सार्वजनिक कम्पनी अपने अंशों का आवंटन उस समय तक नहीं कर सकती है जब तक कि प्रविवरण अपने लिखित "न्यूनतम अभिदान राशि" (minimum subscription) अंशों के आवेदन द्वारा प्राप्त नहीं हो जाती है । प्रविवरण जारी करने वाली कम्पनी को

सेवी के दिशा निर्देशों के अनुसार अपने शुद्ध सार्वजनिक निर्गम मूल्य के 90 प्रतिशत के बराबर राशि न्यूनतम अभिदान के रूप में प्राप्त करनी पड़ती है ।

2. **न्यूनतम अभिदान राशि का नकद में प्राप्त होना -** यह राशि नकद में ही प्राप्त होनी चाहिए, अन्य किसी रूप में नहीं । नकद के अलावा अन्य प्रतिफल के लिए निर्गमित अंश न्यूनतम अभिदान राशि को उसमें शामिल नहीं किया जाता है । लेकिन चैक, ड्राफ्ट व स्टॉक इन्वेस्ट इसमें सम्मिलित रहते हैं ।
3. **कम से कम 5 प्रतिशत आवेदन राशि -** अंशों पर आवेदन राशि के रूप में प्राप्त की जाने वाली राशि, अंशों के अंकित मूल्य के 5 प्रतिशत से, कम नही होनी चाहिए । (धारा 69(3)
4. **प्राप्त राशि अनुसूचित बैंक में जमा करना -** उपर्युक्त प्रकार से प्राप्त आवेदन राशि किसी अनुसूचित बैंक में तब तक जमा रखी जानी चाहिए जब तक कि यह राशि धारा 69(v) के अनुसार आवंटन न कर सकने की दशा में आवेदकों को वापस नहीं कर दी जाती है अथवा कम्पनी अधिनियम की धारा 149 के अनुसार कम्पनी द्वारा व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त नहीं कर लिया जाता है ।
5. **न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त करने की अवधि -** यदि उपर्युक्त शर्तें प्रविवरण के प्रकाशन की तिथि के 120 दिन के अन्दर पूरी नहीं हो जाती है, तो आवेदकों से प्राप्त धन-राशि प्रविवरण के प्रकाशन की तिथि के 130 दिन के भीतर उन्हें बिना ब्याज लौटा देनी चाहिए । यदि प्रविवरण पत्र के निर्गमित करने की तिथि के 130 दिन के अन्दर यह धन-राशि आवेदकों को नहीं लौटाई जाती है तो कम्पनी के संचालक संयुक्त एवं व्यक्तिगत रूप से 130वे दिन के समाप्त होते ही इस आवेदन राशि को 6 प्रतिशत वार्षिक व्याज की दर से लौटाने के लिए उत्तरदायी हो जाते हैं । यदि संचालक यह सिद्ध कर दें कि आवेदन-राशि के लौटाने में त्रुटि उनकी लापरवाही या दुराचरण के कारण नहीं हुई है तो वे उत्तरदायी नहीं होंगे । परन्तु सेबी के नये नियमों के अनुसार यह राशि 60 दिन में प्राप्त हो जानी चाहिए । अन्यथा कम्पनी 78 दिनों में यह राशि आवेदनकर्ता को वापस कर देगी ।
6. **शर्त परित्याग का अनुबन्ध व्यर्थ -** कम्पनी के द्वारा किसी आवेदक के साथ उपर्युक्त शर्तों के परित्याग करने का ठहराव व्यर्थ होता है ।

(धारा 69(vii)

7. **अन्य आवंटन प्रतिबन्ध मुक्त -** अंशों के लिए आवेदन पर 5 प्रतिशत नकद प्राप्त करने से सम्बन्धित धारा 69(3) को छोडकर, अन्य उपर्युक्त प्रावधान कम्पनी द्वारा प्रथम आवंटन के बाद किये हुए आवंटन पर, लागू नहीं होते हैं। (धारा vii), इसका तात्पर्य यह है कि एक कम्पनी में अंशों के प्रथम आवंटन के पश्चात् अन्य कोई आवंटन आसान हो जाता है ।

8. **स्थानापन्न प्रविवरण फाइल होना -** कोई भी अंश-पूँजी वाली कम्पनी जिसने कि जनता को प्रविवरण-पत्र निर्गमित नहीं किया है, अपने अंशों का आवंटन तब तक नहीं कर सकती जब तक कि वह अपने अंशों या ऋण-पत्रों के आवंटन के 3 दिन पूर्व कम्पनी के रजिस्ट्रार के समक्ष अपना स्थानापन्न प्रविवरण पत्र प्रस्तुत नहीं कर देती है ।
9. **अभिदान सूची खुलने के समय आवंटन न हो -** यदि किसी कम्पनी ने प्रविवरण का निर्गमन किया है तो कम्पनी प्रविवरण के निर्गमन करने की तिथि के बाद, कम से कम 5 दिन पहले या प्रविवरण में उल्लिखित अन्य तिथि से पूर्व अपने अंशों का आवंटन नहीं कर सकती है ।
10. **स्कन्ध विपणि को आवेदन देना एवं आज्ञा प्राप्त करना -** यदि कम्पनी के प्रविवरण में अंशों अथवा ऋण-पत्रों के व्यवहार के लिए किसी मान्यता प्राप्त स्कन्ध विपणी को आवेदन पत्र देने या दिये जाने के सम्बंध मे उल्लेख है तो ऐसे प्रविवरण के अन्तर्गत प्राप्त आवेदनों पर किया गया आवंटन व्यर्थ होता है । यदि कम्पनी

(क) प्रविवरण के प्रथम निर्गमन के पश्चात् 10 दिन में अपने अंशों के व्यवहार के लिए स्कन्ध विपणि को आवेदन पत्र न दे दे, अथवा

(ख) अभिदान सूची खुलने के समय से 10 सप्ताह के अन्दर मान्यता प्राप्त स्कन्ध विपणि द्वारा अंशों के क्रम-विक्रय की स्वीकृति न कर ले ।

11. **स्कन्ध विपणि से आज्ञा न मिलना -** यदि उपयुक्त तरीके से अनुमति प्राप्त करने के लिए आवेदन नहीं किया गया अथवा उपयुक्त रीति से अनुमति नहीं दी गयी तो कम्पनी द्वारा आवेदकों को आवेदन पर प्राप्त राशि तुरन्त लौटा देनी चाहिए । यदि इस राशि को 8 दिन में नहीं लौटाया गया तो बाद में कम्पनी के संचालक संयुक्त तथा पृथक् रूप में 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज सहित ये समस्त ऋण लौटाने को दायी होंगे ।

    उपर्युक्त धारा 72(2)A के प्रावधानों की अनुपालना न करने पर कम्पनी तथा उसके दोषी अधिकारियों पर 5000 रूपये तक का अर्थदण्ड किया जा सकेगा । इसी प्रकार स्कन्ध विपणि द्वारा आवेदन अस्वीकृत हो जाने के 8 दिन बाद 6 माह में पुर्नभुगतान न होने पर दोषी अधिकारियों को अर्थदण्ड के अतिरिक्त 1 वर्ष तक का कारावास भी दिया जा सकेगा ।
12. **आवंटन प्रत्याय -** प्रत्येक कम्पनी को अंशों के आवंटन के 30 दिन या रजिस्ट्रार द्वारा बड़ाई अवधि के अन्दर अंशों का आवंटन-प्रत्याय रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए ।

7.7 अनियमित आवंटन (irregular allotment)

यदि कोई कम्पनी धारा 69 एवं 70 के नियमों के विरूद्ध अंशों का आवंटन करती है तो किसी आवंटन को अनियमित आवंटन कहते हैं अर्थात् आवंटन -

(1) न्यूनतम अभिदान-राशि न प्राप्त होने पर भी कर दिया गया हो, अथवा

(2) आवेदन पर 5% की राशि नकद न प्राप्त हुई हो, अथवा

(3) प्राप्त धनराशि अनुसूचित बैंक में जमा न कराई गई हो, अथवा

(4) प्रविवरण-पत्र जारी न करने की दशा में रजिस्ट्रार के समक्ष स्थानापन्न प्रविवरण-पत्र प्रेषित न किया गया हो ।

उपर्युक्त दशा या दशाओं में किया गया आवंटन अनियमित आवंटन माना जायेगा ।

अनियमित आवंटन के प्रभाव (effects of irregular allotment)

1. **अनुबन्ध व्यर्थनीय -** यदि आवंटन अनियममित है तो अंश खरीदने का अनुबन्ध आवेदक की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है । आवंटी आवंटन की तिथि के दो माह के अन्दर अनियमित आवंटन के आधार पर अंश खरीदने के अनुबन्ध का परित्याग कर सकता है । आवंटी को इस सम्बन्ध में कम्पनी को सूचना देनी चाहिए । यदि आवेदक या आवंटी कुछ ऐसा कार्य करता है, जिससे आवंटन की स्वीकृति प्रकट होती है तो अंश क्रय करने के अनुबन्ध को व्यर्थनीय बनाने का उसका अधिकार समाप्त हो जाता है ।
2. **क्षतिपूर्ति -** यदि कम्पनी का कोई संचालक जानबूझ कर अनियमित आवंटन करता है तो वह कम्पनी तथा आवंटी की क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होता है । कम्पनी या आवंटी, संचालक के विरूद्ध आवंटन की तिथि से दो वर्ष के अन्दर ही कार्यवाही कर सकते हैं ।
3. **अंश रखकर क्षतिपूर्ति कराना -** आवंटी, कम्पनी के अंशों को अपने पास रख कर भी संचालकों को जिन्होंने धारा 69 तथा 70 का उल्लंघन करके अनियमित आवंटन किया है, अनियमित आवंटन से होने वाली क्षति की **पूर्ति** के लिए, बाध्य कर सकता है ।
4. **राशि वापस प्राप्त करने हेतु अभियोग -** यदि अंशों का निर्गमन अनियमित, व्यर्थ अथवा अधिकार के बाहर है तो आवंटी प्रतिफल के पूर्ण अभाव के आधार पर कम्पनी से अपना रूपया वापिस ले सकता है । यदि आवंटी ने आवंटित अंश किसी अन्य तीसरे व्यक्ति को नहीं बेचे हैं तो वह कम्पनी द्वारा प्राप्त रकम के लिए कम्पनी पर अभियोग भी चला सकता है ।

7.8 अभ्यास के लिये प्रश्न

1. Discribe the kinds of share capital of companies in india.
   भारत में कम्पनियों की अंश-पूंजी के प्रकार बताइये ।
2. define a share. give the main charecteristics of various kinds of share issued by a company
   अंश की परिभाषा दीजिए । कम्पनी द्वारा निर्गमित विभिन्न प्रकार के अंशों की मुख्य विशेषता बतलाइए ।
3. discuss the rights and liabilities attached to different kinds of share issued by acompany in short.

कम्पनी द्वारा निर्गमित अंशों से सम्बन्धित अधिकारों तथा दायित्वों का संक्षेप में विवेचन कीजिए

4. what is the meaning of allotment of share? what conditions must be satisfied before a public company can allot its share?
   अंशों के आवंटत से क्या तात्पर्य है? एक सार्वजनिक कम्पनी अपने अंशों का आवंटन किन शर्तों की पूर्ति के बाद कर सकती है?
5. what is irregular allotment? what are the consequences of an irregular allotment?
   अनियमित आवंटन से क्या तात्पर्य है' अनियमित आवंटन के प्रभाव को समझाइये?

7.9 सन्दर्भ पुस्तकें

- एस.एम. शुक्ल एवं सहाय: कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (साहित्य भवन, आगरा) ।
- N.D.Kapoor: company law
- Avtar singh: company law
- माथुर, सक्सैना, कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति ।
- डी. आर.एल. नौलखा कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (रमेश बुक डिपो, जयपुर)।

इकाई - 8 : कम्पनी की सदस्यता तथा सदस्यों का रजिस्टर (MEMBERSHIP OF COMPANY AND REGISTER OF MEMBERS)

इकाई की रूपरेखा

8.0 सदस्यता से अभिप्राय

8.1 सदस्य और अंशधारी में अन्तर

8.2 सदस्य कौन हो सकता है

8.3 सदस्यता प्राप्त करने की विधियाँ

8.4 संयुक्त अंशधारी

8.5 सदस्यता की समाप्ति

8.6 कम्पनी के सदस्यों के अधिकार

8.6.1 व्यक्तिगत अधिकार

8.6.2 सामुहिक अधिकार

8.6.3 विशिष्ट प्रस्ताव पारित करके अधिकार प्राप्त करना

8.6.4 निश्चित अंश पूँजी के स्वामित्व द्वारा अधिकारों का प्रयोग

8.7 बहुमत का महत्व

8.8 सदस्यों के दायित्व तथा कर्तव्य

8.9 सदस्यता समाप्ति के पश्चात् सदस्यों के दायित्व

8.10 अभ्यास हेतु प्रश्न

8.11 संदर्भ पुस्तकें

8.0 सदस्यता से अभिप्राय (meaning of membership)

सामान्य बोल-चाल की भाषा में किसी कम्पनी के अंशों का धारक **(shareholder)** कम्पनी का सदस्य समझा जाता है । परन्तु वास्तव मे ऐसा नहीं है । यह विचार वैधानिक रूप से सत्य नहीं है, क्योंकि ऐसा सम्भव है कि कोई व्यक्ति किन्हीं अंशों का धारक होते हुए भी कम्पनी का सदस्य न हो उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति अपने अंश दूसरे व्यक्ति को बेच देता है और हस्तान्तरिती अंशों का धारक होते हुए भी अपना नाम सदस्यों के रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं करवाता है, तो वह कम्पनी का सदस्य नहीं माना जाता है ।

कम्पनी अधिनियम की धारा 41(1) के अनुसार एक कम्पनी के पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति कम्पनी के सदस्य माने जाते हैं और कम्पनी के रजिस्ट्रेशन के बाद सदस्यों के रजिस्टर में उनका नाम सदस्यों की तरह लिखा जाता है । इसी प्रकार धारा 41(2) के अनुसार सदस्य वह व्यक्ति है जो कम्पनी का सदस्य बनने के लिए

लिखित रूप से सहमत है और जिसका नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में प्रविष्ट कर लिया गया है ।

8.1 सदस्य और अंशधारी मे अन्तर: (difference betbeen a member and a shareholder)

आम बोलचाल की भाषा में सदस्य एवं अंशधारी पर्यायवाची शब्दों की भाँति प्रयोग में आते हैं । परन्तु कम्पनी अधिनियम के संदर्भ में सदस्य तथा अंशधारी एक दूसरे से भिन्न हो सकते हैं । कम्पनी विधान की दृष्टि से इनमें निम्नलिखित अन्तर हो सकते हैं-

1. **अंश पूँजी -** सदस्य तो अंश-पूँजी वाली एवं बिना अंश पूँजी वाली दोनो ही प्रकार की कम्पनियों में होते हैं, जबकि अंशधारी केवल उन्हीं कम्पनियों में हो सकते हैं जो अंश पूँजी रखती हैं । बिना पूँजी वाली कम्पनियों में अंशधारी हो ही नहीं सकते, क्योंकि जब कम्पनी में अंश-पूँजी ही नहीं है तो अंशधारी होने का प्रश्न ही नहीं उठता ।
2. **उत्तराधिकारी -** एक सदस्य की मृत्यु होते ही उसका उत्तराधिकारी कानून के अनुसार तत्काल मृतक के अंशों का स्वामी हो जाता है, परन्तु वह कम्पनी का सदस्य तब तक नहीं बनता है, जब तक कि उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में नहीं लिख दिया जाता है ।
3. **अंश अधिपत्र का धारक -** एक अंश-अधिपत्रधारी (Bearer of sharewarrant) कम्पनी का अंशधारी है, परन्तु सदस्य नहीं क्योंकि उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर से काट दिया जाता है । (धारा 115(1)]
4. **सभाओं की सूचना प्राप्ति व भाग लेने का अधिकार -** सामान्यत: सदस्य को ही सभा की सूचना प्राप्त करने, सभा में भाग लेने तथा मतदान का अधिकार होता है, सभी अंशधारियों को नहीं ।
5. **सदस्यों के रजिस्टर में नाम होना -** एक मृत सदस्य तब तक सदस्य कहा जा सकता है जब तक कि उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज रहता है, परन्तु उसे अंशधारी नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसकी मृत्यु के तुरन्त बाद अंशों का अधिकार उसके वैधानिक उत्तराधिकारी को प्राप्त हो जाता है ।
6. **सदस्य अंशधारी हो सकता है, किन्तु अंशधारी का सदस्य होना आवश्यक नहीं-** एक सदस्य अंशधारी हो सकता है, किन्तु यह आवश्यक नहीं कि एक अंशधारी कम्पनी का सदस्य भी हो । अंशधारी सदस्य तब तक नहीं माना जायेगा जब तक कि उसका नाम कम्पनी के सदस्य रजिस्टर में एक सदस्य के रूप में दर्ज न कर लिया जाये ।

8.2 सदस्य कौन हो सकता है? (who can become a member?)

अनुबन्ध की क्षमता रखने वाला प्रत्येक व्यक्ति - प्रत्येक व्यक्ति जिसमें अनुबन्ध करने की क्षमता है, कम्पनी का सदस्य हो सकता है । इस सम्बन्ध में प्रसंविदा अधिनियम लागू होता है ।

किन्तु निम्न प्रकार के व्यक्तियों के लिए व्यवस्थायें निम्नवत् हैं -

1. **विदेशी व्यक्ति -** एक विदेशी व्यक्ति भी कम्पनी का सदस्य बन सकता हैं परन्तु उस देश के शत्रु-देश घोषित होने पर उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है ।
2. **अवयस्क -** भारतीय अनुबन्ध अधिनियम के अनुसार अवयस्क अनुबन्ध करने की योग्यता नहीं रखता और इस कारण अवयस्क के साथ किये गये ठहराव व्यर्थ हैं । यद्यपि उसके वैधानिक संरक्षक द्वारा उसे सदस्य बनाने के लिए एक लिखित समझौता किया जा सकता है, किन्तु वह अवयस्कता की अवधि में अथवा वयस्क होने के 6 मारा में इस अनुबन्ध का खण्डन कर सकता है ।
3. **कम्पनी -** कानून में कम्पनी एक व्यक्ति होने के कारण किसी दूसरी कम्पनी की सदस्य बन सकती है, बशर्ते कि अपने पार्षद सीमानियम द्वारा अधिकृत हो |
4. **साझेदारी फर्म -** एक साझेदारी फर्म कम्पनी की सदस्यता प्राप्त नहीं कर सकती है, क्योंकि फर्म का विधानतः पृथक् अस्तित्व नहीं होता है । फर्म के साझेदार संयुक्त-अंशधारियों के रूप में कम्पनी के सदस्य हो सकते हैं ।
5. **संयुक्त हिन्दू परिवार -** संयुक्त हिन्दू परिवार अपने कर्ता के माध्यम से किसी कम्पनी के अंश क्रय करके कर्ता को कम्पनी का सदस्य बना सकता है ।
6. **दिवालिया व्यक्ति -** दिवालिया व्यक्ति तब तक कम्पनी का सदस्य बना रहेगा जब तक कि कम्पनी के सदस्यता रजिस्टर में उसका नाम दर्ज है किन्तु उसके अंशों में लाभदायक हित राजकीय प्रापक के पास ही होगा ।

8.3 सदस्यता प्राप्त करने की विधियाँ: (metheds of acquiring membership)

कोई भी व्यक्ति निम्न मे से किसी एक विधि से कम्पनी की सदस्यता प्राप्त कर सकता है।

1. **कम्पनी के पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करके (by signing the memorandum of association) -** कम्पनी विधान के अन्तर्गत सार्वजनिक कम्पनी के पार्षद सीमानियम पर कम से कम सात व्यक्ति तथा निजी कम्पनी के पार्षद सीमानियम पर कम से कम दो व्यक्तियों के हस्ताक्षर होना अनिवार्य है ।

सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वालों के लिए यह माना जाता है कि उन्होंने कम्पनी की सदस्यता को स्वीकार कर लिया है । पार्षद सीमानियम के हस्ताक्षरकर्ताओं के लिए न तो आवेदन-पत्र देने की आवश्यकता है और न उन्हें अंशों के औपचारिक आबंटन की । सीमानियम की रजिस्ट्री के उपरान्त उन हस्ताक्षरकर्ताओं के नामों की सदस्यों के रजिस्टर में प्रविष्टि अनिवार्य है ।

2. **आवेदन तथा अंशों के आबंटन द्वारा (by application and allotment of shares) -** कोई भी व्यक्ति कम्पनी के अंशों को खरीदने के लिए सार्वजनिक निर्गम के आधार पर कम्पनी को आवेदन कर सकता है । जब कम्पनी उसका आवेदन स्वीकार कर लेती है तो उसके पश्चात् उसको अंशों का आबंटन कर दिया जाता है । इस प्रकार वह कम्पनी का सदस्य बन जाता है । उसे आवंटन की सूचना दी जाती है तथा उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में अंकित कर दिया जाता है|
3. **अंशों के हस्तान्तरण द्वारा (by transfer of shares) -** यदि कोई कम्पनी का सदस्य दूसरे किसी व्यक्ति को अपने अंशों का हस्तान्तरण करता है और हस्तान्तरण कम्पनी के द्वारा रजिस्टर कर लिया जाता है तो ज्यों ही हस्तान्तरित (transferee) का नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिख दिया जाता है, वह कम्पनी की सदस्यता प्राप्त कर लेता है ।
4. **अंशों के पारेषण या उत्तराधिकार द्वारा सदस्यता (by succession or transmission of shares) -** विधान के क्रियान्वयन से (on account of operation of law) उत्तराधिकारी को पैतृक सम्पत्ति प्राप्त हो जाती है । कभी-कभी उसे कम्पनी के अंश भी उत्तराधिकार में प्राप्त हो जाते है । इसे अंशों का पारेषण या हस्तांकन कहते हैं । ऐसी अवस्था में पिता की मृत्यु के बाद अंशों का पारेषण उसके जीवित पुत्रों को हो जाता है तथा वे इस प्रकार कम्पनी की सदस्यता प्राप्त कर लेते हैं ।
5. **गत्यावरोध या प्रदर्शन द्वारा सदस्यता (by estoppel or holding out) -** यदि कोई व्यक्ति यह प्रदर्शन करे कि वह अमुक कम्पनी का सदस्य है तो फिर बाद में सदस्य के रूप में दायित्व उत्पन्न होने पर उसके इन्कार करने पर भी उसे कम्पनी का सदस्य माना जायेगा ।
6. **अंश अधिपत्र का समर्पण करके (by surrender of share warrant)-** कम्पनी विधान के अन्तर्गत अंश अधिपत्रधारी कम्पनी का सदस्य नही होता है । परन्तु उसे यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपने अंश अधिपत्र को किसी भी समय कम्पनी को समर्पित करके अपना नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में प्रविष्ट कराकर कम्पनी की सदस्यता प्राप्त कर सकता है ।
7. **नकद के अलावा अन्य प्रतिफल के रूप में कम्पनी के अंश प्राप्त करके (by having shares for consideration other than cash) -** प्रायः किसी वर्तमान व्यापार का क्रय करके कम्पनी का निर्माण किया जाता है । कम्पनी द्वारा खरीदी

गई सम्पत्तियों के मूल्य का भुगतान कम्पनी अंशतः नकद तथा अंशत: पूर्णदत्त अंश (fully paid up shares) या ऋणपत्र निर्गमन करके करती है । इस प्रकार नकद के अतिरिक्त अन्य प्रतिफल के रूप में कम्पनी के अंश प्राप्त करके सदस्यता प्राप्त की जा सकती है ।

8. **कम्पनी के संचालक बनने की सहमति देकर (by agreeing to become a director in the company) -** यदि कोई व्यक्ति कम्पनी का संचालक बनने के लिए अपनी लिखित सहमति दे देता है तो उसे योग्यता अंश भी लेने पड़ते हैं । अत: योग्यता अंश (qualification shares) खरीदकर भी कम्पनी की सदस्यता प्राप्त की जा सकती है ।

8.4 संयुक्त अंशधारी (joint shareholders)

कभी-कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति मिलकर किसी कम्पनी के अंश खरीद लेते हैं तो ऐसे व्यक्तिओं को संयुक्त अंशधारी कहते हैं । इस सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं:

1. संयुक्त अंशधारियों को एक ही अंश प्रमाणपत्र निर्गमित किया जाता है जिसमें संयुक्त अंशधारियों के नाम लिखे रहते हैं ।
2. संयुक्त अंशधारी अंशों की याचना-राशि के भुगतान के लिए संयुक्ता तथा व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं ।
3. जिस अंशधारी का नाम अंश-प्रमाणपत्र में पहले लिखा होता है वह वरिष्ठ अंशधारी कहलाता है । इस वरिष्ठ अंशधारी को कम्पनी की सभा में उपस्थित होने तथा मत देने का अधिकार प्राप्त होता है ।
4. वरिष्ठ अंशधारी को ही अंशों का लाभांश दिया जा सकता है ।
5. सभा की सूचना वरिष्ठ अंशधारी को भेजी जाती है ।

8.5 सदस्यता की समाप्ति (termination of membership)

किसी भी व्यक्ति की कम्पनी की सदस्यता निम्न प्रकार से समाप्त हो जाती है-

1. **अंशधारी द्वारा अपने अंशों का हस्तान्तरण कर देने पर (by transfer of shares) -** यदि कोई सदस्य अपने सम्पूर्ण अंश किसी अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित कर दे, तो हस्तान्तरण की रजिस्ट्री हो जाने पर उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर मे से हटा दिया जाता है । ऐसी दशा में उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है ।
2. **याचना का भुगतान न होने के कारण अंशों का हरण किये जाने पर (by forfeiture of shares on non-payment of call) -** यदि कोई सदस्य कम्पनी के द्वारा माँगी गई राशि (call money) का भुगतान निर्धारित समय पर तथा कम्पनी द्वारा बार-बार स्मरण पत्र देने पर भी नहीं करता है तो उसके अंश संचालक मण्डल के प्रस्ताव के द्वारा अपहृत किये जा सकते हैं ।

इस प्रकार अंशों के हरण होने पर उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है तथा उसका नाम सदस्य रजिस्टर से हटा दिया जाता है ।

3. **अंशों का वैध्य समर्पण करने पर (by valid surrender of shares) -** प्रत्येक सदस्य को यह अधिकार है कि वह अपने अंशों का कभी भी वैध्यसमर्पण कर सकता है । ऐसा करने से सदस्यता का अन्त हो जाता है ।
4. **जब कम्पनी किसी अंशधारी के अंशों को अपने ग्रहणाधिकार के अन्तर्गत बेच दे (when company exercies its right on lien on its shares)** - अन्तर्नियमों के अनुसार कम्पनी सदस्य के अंशों को ग्रहणाधिकार के अन्तर्गत बेच सकती है । ऐसा होने पर अंशधारी की सदस्यता समाप्त हो जाती है ।
5. **सदस्य की मृत्यु होने पर (by the death of members) -** सदस्य की मृत्यु होने पर स्वत: ही उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है तथा उसके अंश पारेषण (transmission) द्वारा उसके उत्तराधिकारी को मिल जाते हैं ।
6. सदस्य के दिवालिया हो जाने पर अंशों का स्वामित्व राजकीय प्रापक अथवा प्रापक के द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरण करने पर दिवालिया अंशधारी की सदस्यता समाप्त हो जाती है ।
7. **प्रविवरण में कपट के कारण अंशों के अनुबन्ध को निरस्त करने पर (by rescission of the contract on the ground of fraud)** - यदि कोई सदस्य कपट से प्रेरित होकर अंश खरीदता है तो वह उस अनुबन्ध को निरस्त कर सकता है, ऐसा करने से उसकी सदस्यता का अन्त हो जाता है ।
8. **कम्पनी का समापन होने पर (on winding up of the company) -** कम्पनी का समापन आरम्भ होते ही सदस्यों की सदस्यता का भी स्वत: ही अंत हो जाता है । किन्तु ऐसा व्यक्ति समापन आरम्भ होते ही अंशदाता (contributory) की स्थिति में कम्पनी के प्रति दायी होगा तथा समापन पर होने वाले आधिक्य का भी अधिकारी होगा ।
9. **जब कम्पनी के द्वारा सदस्य के अंश अनिवार्यतः वापिस ले लिये जायें (when shares are compulsorily acquired by the company) -** किसी जाँच या निरीक्षण के उपरान्त अथवा कम्पनी विधान की धारा 398 के अन्तर्गत न्यायालय के आदेशानुसार कम्पनी किसी भी सदस्य के अंशों को अनिवार्यतः वापस ले सकती है । ऐसा होने पर सदस्य की सदस्यता समाप्त हो जाती है ।
10. **अंश प्रमाण पत्र के बदले अंश अधिपत्र लेने पर (by exchange of share warrent for share certificate) -** कोई भी सदस्य अपने अंश प्रमाण-पत्र के बदले में अंश-अधिपत्र प्राप्त कर सकता है । यदि कम्पनी किसी सदस्य के अंश प्रमाण पत्र के बदले अंश-अधिपत्र निर्गमित करती है तो उस सदस्य का

नाम सदस्यों के रजिस्टर से हटा दिया जाता है । ऐसी परिस्थिति में उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है ।

11. **अंशों के शोधन द्वारा (by redemption of shares) -** यदि कोई व्यक्ति शोधनीय पूर्वाधिकार अंशों के द्वारा कम्पनी की सदस्यता प्राप्त करता है तो निश्चित अवधि के पश्चात् कम्पनी के द्वारा उन अंशों के शोधन करने पर ऐसे अंशधारी की सदस्यता समाप्त हो जाती है ।
12. **यदि धारा 388 या 397** के अधीन कम्पनी द्वारा कुछ अंश खरीद लिये जाते हैं तो तत्सम्बन्धित अंशधारी की सदस्यता का अन्त हो जाता है ।

8.6 कम्पनी के सदस्यों के अधिकार (Rights of Members)

कम्पनी के सदस्यों को पार्षद सीमानियम, अन्तर्नियम तथा सामान्य विधान के द्वारा अधिकार प्राप्त होते हैं । उसके वैधानिक अधिकारों में कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता है । एक सदस्य, कुछ अधिकार व्यक्तिगत रूप से, कुछ सामूहिक रूप से, कुछ अधिकारों को विशेष प्रस्ताव द्वारा तथा कुछ अधिकारों को निश्चित अंश पूँजी का स्वामी होकर प्रयोग में ला सकता है ।

8.6.1 व्यक्तिगत अधिकार (individual rights)

प्रत्येक कम्पनी का सदस्य निम्न अधिकारों का प्रयोग व्यक्तिगत रूप से स्वयं कर सकता है-

1. अन्तर्नियमों के अनुसार अपने अंशों का हस्तान्तरण कर सकता है ।
2. उसे वैधानिक सभा की तिथि के 21 दिन पूर्व सभा की सूचना प्राप्त करने का अधिकार है ।
3. उसे कम्पनी की वार्षिक सामान्य सभा की तिथि के 14 दिन पूर्व कम्पनी का चिट्ठा, लाभ-हानि खाता, अंकेक्षण की रिपोर्ट तथा संचालक की रिपोर्ट पाने का अधिकार है ।
4. प्रत्येक सदस्य को निम्न प्रपत्रों तथा रजिस्टरों के निरीक्षण का अधिकार है-
   (अ) सदस्यों का रजिस्टर ।
   (आ)सामान्य सभा की सूक्ष्म पुस्तिका |
   (इ) कम्पनी के संचालकों तथा प्रबन्धकों का रजिस्टर ।
   (ई) ऐसे अनुबन्धों का रजिस्टर जिसमें कम्पनी के संचालकों का हित हो ।
   (ए) कम्पनी के बन्धक तथा प्रभार का रजिस्टर ।
   (ऐ) ऋणपत्रधारियों का रजिस्टर ।
5. प्रत्येक सदस्य को निम्न प्रति लिपियों के लिए आवेदन तथा निश्चित शुल्क के भुगतान करने पर उन्हें प्राप्त करने का अधिकार है-
   (क) पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों की प्रति आवेदन करने के 14 दिन के अन्दर ।
   (ख) सदस्यों के रजिस्टर की प्रति आवेदन करने के 10 दिन के अन्दर ।
   (ग) आवेदन के सात दिन के अन्दर कम्पनी के सामान्य सभा के सूक्ष्म ।

(घ) कम्पनी के चिट्ठे तथा लाभ-हानि खाते की प्रति ।

6. प्रत्येक सदस्य को कम्पनी की सामान्य सभाओं की कार्यवाही सहित उचित सूचना पाने का, सभा में उपस्थित होने का एवं सभाओं में मत देने का अधिकार है
7. उसे कम्पनी द्वारा लाभांश घोषित करने पर लाश पाने का अधिकार है ।
8. प्रत्येक सदस्य को नियमानुसार अंशों को स्कन्ध में तथा स्कन्ध को अंशों में परिवर्तित कराने का अधिकार है ।
9. प्रत्येक सदस्य को सदस्य रजिस्टर में सुधार करने के लिए, कम्पनी की सामान्य सभा न बुलाये जाने पर न्यायालय के आवश्यक निर्देश के लिए तथा वैधानिक रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं करने पर कम्पनी के समापन के लिए, न्यायालय को आवेदन पत्र देने का अधिकार है ।

8.6.2 सामूहिक अधिकार (collective rights)

सदस्यों को कम्पनी की सामान्य सभा में साधारण मतों के बहुमत से साधारण प्रस्ताव पारित करके निम्न कार्य करने का अधिकार है-

(क) पूँजी में परिवर्तन करना ।
(ख) वैधानिक रिपोर्ट को स्वीकार करना ।
(ग) कम्पनी के सचिव की नियुक्ति करना ।
(घ) संचालकों की नियुक्ति करना ।
(ङ) लाभांश घोषित करना ।
(च) अंकेक्षक की नियुक्ति व उसका पारिश्रमिक निश्चित करना ।
(छ) सामान्य सभा की कार्यवाही करना ।
(ज) कम्पनी के कुछ व्यवसाय के विक्रय की स्वीकृति देना ।
(झ) संचालक को कम्पनी को दिये जाने वाले ऋण से मुक्त करना ।
(य) अन्तर्नियम में निर्धारित समय की समाप्ति पर या इसमें लिखित घटना के होने पर कम्पनी का समापन करना ।

8.6.3 विशिष्ट प्रस्ताव पारित करके अधिकार प्राप्त करना (acquiring rights by passing special resolution)

कम्पनी विधान के अन्तर्गत सदस्य निम्न अधिकारों का प्रयोग, कम्पनी की सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करके, कर सकते हैं । यह प्रस्ताव सदस्यों के 374 बहुमत से पारित होना चाहिए :

1. केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति लेकर कम्पनी के नाम में परिवर्तन करना ।
2. कम्पनी के उद्देश्य वाक्यांश मे परिवर्तन तथा कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय को एक राज्य से दूसरे राज्य में स्थानान्तरित करना ।
3. कम्पनी के अन्तर्नियम मे परिवर्तन करना ।
4. कम्पनी की अंश पूँजी का पुनर्गठन करना ।
5. न्यायालय की स्वीकृति से कम्पनी की अंश पूँजी में कमी करना ।

6. कम्पनी के संचालकों के दायित्व को असीमित करने के लिए पार्षद सीमानियम में परिवर्तन ।
7. पूँजी में से ब्याज देना ।
8. कम्पनी के मामलों की जाँच के लिए निरीक्षक नियुक्त करना |

8.6.4 निश्चित अंश पूँजी के स्वामित्व द्वारा अधिकारों का प्रयोग (acquiring rights by possession of prescribed holding in the company)

कम्पनी की कुल निर्गमित अंश पूँजी के 1/10 भाग पर स्वामित्व रखने वाले सदस्यों को निम्न कार्य करने का अधिकार है:

1. किसी विशेष कार्य या उद्देश्य के लिए असाधारण सभा बुलाने के लिए संचालकों को आवेदन-पत्र देना (requisition under sec. 169) ।
2. कम्पनी के प्रबन्ध सम्बन्धी मामलों से असंतुष्ट होने पर केन्द्रीय सरकार को कम्पनी की जाँच के लिए निरीक्षक नियुक्त करने के लिए आवेदन पत्र देना ।
3. मतदान (poll) की माँग करना ।

   कोई पांच सदस्य जिन्हें मताधिकार प्राप्त हैं, कम्पनी की सभा में किसी भी विषय पर निर्णय के लिए मतदान की मांग कर सकते हैं ।

8.7 बहुमत का महत्व (superemacy of majority)

कम्पनी के प्रबन्ध की प्रकृति लोकतंत्रात्मक है । जिस प्रकार प्रजातंत्र में बहुमत का महत्व है, उसी प्रकार कम्पनी में कार्यो का संचालन करते समय सदस्यों के बहुमत को ध्यान में रखा है । कम्पनी के सभी अधिकारों का प्रयोग सदस्यों के साधारण या ¾ बहुमत से किया जाता है । परंतु ऐसे बहुमत के द्वारा सदस्य कम्पनी के पार्षद सीमानियम से परे कार्य नहीं कर सकते हैं । साथ की बहुमत के द्वारा अन्तर्नियमों के विरूद्ध भी कार्य नहीं किया जा सकता है ।

8.8 सदस्यों के दायित्व तथा कर्त्तव्य (liabilities and duties of members)

कम्पनी विधान द्वारा प्रदत्त उपर्युक्त अधिकारों के साथ-साथ सदस्यों के निम्न कर्त्तव्य हैं-

1. जब उचित समय में विधान के प्रावधानों के अनुसार अंशों का आबंटन हो जाता है तो सदस्यों का अंश लेने का दायित्व होता है ।
2. अंशों का आबंटन हो जाने पर अन्तर्नियमों के अनुसार वैधानिक मांग किये जाने पर आवंटित अंशों पर भुगतान करने का दायित्व सदस्यों पर है ।
3. जब याचना राशि की वैधानिक मांग की जाती है और सदस्य उसका भुगतान निर्धारित समय में करने में असफल रहता है तो उसके अंश कम्पनी के द्वारा जब्त किये जा सकते हैं ।

4. यदि अंश हस्तान्तरण होने पर हस्तान्तरित का नाम सदस्यों के रजिस्टर में नहीं लिखा जाता है तब हस्तान्तरणकर्ता ही सदस्य के रूप में उत्तरदायी रहता है ।
5. धारा 106 व 107 के अनुसार सदस्यों के अधिकार परिवर्तन योग्य हैं ।
6. यदि किसी व्यक्ति ने सदस्य होना स्वीकार नहीं किया है और न ही वह सदस्य है और न वह सदस्य रहना चाहता है, लेकिन फिर भी उसने अपना नाम सदस्य रजिस्टर में रहने दिया है, तो वह सदस्य की तरह उत्तरदायी होता है ।
7. कम्पनी के समापन की दशा में वह अंशदाता के रूप में दायी होता है ।
8. किन्हीं दशाओं में असीमित तथा पृथक् दायित्व - यदि सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की संख्या 7 से कम तथा निजी कम्पनी की दशा में 2 से कम हो जाती है और इस प्रकार कम सदस्यों के होते हुए भी कम्पनी को व्यापार करते हुए 6 माह व्यतीत हो जाते हैं तो कम्पनी के जो भी सदस्य हैं, उनका दायित्व असीमित हो जाता है ।

8.9 सदस्यता समाप्ति के पश्चात् सदस्य के दायित्व (liabilities of members after termination of membership)

यदि सदस्यता की समाप्ति अंश हस्तांतरण द्वारा हुई है और यदि अंश हस्तान्तण के एक वर्ष में कम्पनी का समापन शुरू हो जाता है तो ऐसा सदस्य 'ब' सूची के अंशदाता की तरह दायी होता है । प्राथमिक दायित्व अ सूची के अंशदाता का अथवा अंशधारी का होता है ।

सदस्यों का रजिस्टर (register of members) - भारतीय कम्पनी अधिनियम की धारा 164 के अनुसार सदस्यों का रजिस्टर उन मामलों का प्रत्यक्षतः प्रमाण (primafacie evidance) है, जिसका उल्लेख कम्पनी अधिनियम के अनुसार इसमें करना आवश्यक है । यह लेनदारों की प्रत्याभूति होती है, अत: इसे प्रत्येक कम्पनी को उचित रूप में रखना चाहिए जिससे यह ज्ञात हो सके कि इसमें उल्लेखित नाम प्रावधान प्रमुख है

1. **सदस्यों का रजिस्टर रखना -** प्रत्येक कम्पनी को अपने सदस्यों का एक रजिस्टर रखना चाहिए जो एक या एक से अधिक पुस्तकों में हो सकता है ।
2. **रजिस्टर की विषय-सामग्री -** कम्पनी विधान की धारा 150 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपने सदस्यों का पूर्ण विवरण रखने के लिए सदस्यों के रजिस्टर में निम्न विवरण का समावेश करना चाहिए-
   (i) सदस्य का नाम, व्यवसाय तथा पता ।
   (ii) अंश-पूँजी वाली कम्पनी की दशा मे सदस्य की अंश-पूँजी के सम्बन्धों में निम्न विवरण-
      (क) प्रत्येक सदस्य द्वारा धारित अंशों की संख्या ।
      (ख) अंशों की क्रय-संख्या तथा अंशों के प्रकार ।
      (ग) अंशों पर प्राप्त रकम या प्राप्त की गई रकम ।
   (iii) सदस्यों के रजिस्टर में सदस्यों के नाम की प्रविष्टि की तिथि ।
   (iv) वह तिथि जिस पर किसी व्यक्ति ने सदस्यता छोड़ी है ।

3. **अंशों को स्कन्ध में परिवर्तित किये पर लेखा -** यदि किसी कम्पनी ने अपने अंशों का परिवर्तन स्कन्ध में कर लिया है तथा इसकी सूचना कम्पनी रजिस्ट्रार को दे दी है तो सदस्य रजिस्टर में प्रत्येक सदस्य के द्वारा लिए हुए अंशों के स्थान पर स्कन्धों की संख्या दिखाई जानी चाहिए ।
4. **अर्थदण्ड -** यदि सदस्यों के रजिस्टर से सम्बन्धित धारा 150(1) की उपर्युक्त व्यवस्थाओं का पालन करने में त्रुटि की जाती है तो कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी को त्रुटि की अवधि में, 500 रू. प्रतिदिन के हिसाब से अर्थदण्ड दिया जा सकता है । (धारा 1 50(2)] ।
5. **रजिस्टर कार्यालय मे रखना -** सदस्यों के रजिस्टर तथा सदस्यों की सूची को कम्पनी के समापन तक रजिस्टर्ड कार्यालय से रखा जाना चाहिए । (धारा 163)
6. **सदस्य रजिस्टर का निरीक्षण -** सदस्यों का रजिस्टर कम्पनी के कार्यालय में निरीक्षण के लिए प्रतिदिन कम से कम दो घण्टे के लिए खुला रहना चाहिए । कम्पनी के सदस्य तथा ऋण-पत्रधारी इसका निरीक्षण निःशुल्क कर सकते हैं तथा अन्य व्यक्ति जो कम्पनी के सदस्य नहीं है, उसका निरीक्षण निर्धारित निरीक्षण-शुल्क देकर कर सकते हैं; कम्पनी ऐसे निरीक्षण के लिए कोई समय, जो कार्यालय समय में हो, निर्धारित कर सकती है । (धारा 163(2)1
7. **रजिस्टर का उप-संक्षेप या प्रतिलिपि लेना -** एक सदस्य तथा कोई भी व्यक्ति सदस्य रजिस्टर अथवा उसके किसी भाग की प्रतिलिपि अथवा सूची की प्रतिलिपि की माँग कर सकता है । इसके लिए प्रत्येक 100 शब्द तथा उसके अंश के लिये निर्धारित शुल्क देना पड़ता है । कम्पनी को इस प्रकार मांगी हुई प्रतिलिपि, आवेदन के 10 दिन के अन्दर (छुट्टी के दिन को छोड़कर) देनी चाहिए । ऐसे 10 दिन को गिनने के लिए अकार्यशील दिन (non-working days) तथा वे दिन जिन पर कि कम्पनी की हस्तान्तरण पुस्तकें बन्द रहती हैं, सम्मिलित नहीं किये जाते हैं ।
   (धारा 1 63(3) एवं (4)
8. **निरीक्षण न कराने या प्रतिलिपि न देने पर दण्ड -** सदस्यों को रजिस्टर का निरीक्षण न करने देने अथवा प्रतिलिपि न देने पर त्रुटि की अवधि तक कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 50 रूपये प्रतिदिन तक का अर्थदण्ड किया जा सकेगा ।

   (धारा 163 (5)
9. **न्यायालय का अधिकार -** न्यायालय कम्पनी का सदस्य रजिस्टर का तत्काल निरीक्षण कराने तथा इच्छित प्रतिलिपि देने का आदेश दे सकता है । (धारा 163(6),
10. **कम्पनी के समापन की दशा में निरीक्षण का अधिकार -** केन्ट कोल फील्ड सिण्डीकेट (1898) के वाद में दिए गये निर्णयानुसार सदस्यों को कम्पनी का समापन प्रारम्भ होने से पूर्व सदस्यों के रजिस्टर का निरीक्षण करने का अधिकार होता है किन्तु समापन कार्यवाही प्रारम्भ हो जाने के बाद उनका यह अधिकार समाप्त हो जाता है ।
11. **सदस्य रजिस्टर के बन्द करने का अधिकार** - कोई भी कम्पनी आवश्यकता होने पर सदस्यों के रजिस्टर को वर्ष में कुल 45 दिन के लिए बन्द कर सकती है एक साथ रजिस्टर 30 दिन से अधिक के लिए बन्द नहीं किया जा सकता है । सदस्यों तथा

सामान्य जनता को रजिस्टर को बन्द करने की सूचना दी जानी चाहिये । कम्पनी को सदस्य-रजिस्टर बन्द करने की तिथि के सात दिन पूर्व रजिस्टर के बन्द करने की सूचना ऐसे स्थानीय समाचार-पत्रों के द्वारा देनी होती है, जहाँ कि कम्पनी का रजिस्टर्ड कार्यालय स्थित है । रजिस्टर बन्द करने की अवधि में कोई व्यक्ति इसका निरीक्षण नहीं कर सकता है तथा इस अवधि में कम्पनी अंश-हस्तांतरण भी स्वीकार नहीं करती है । (धारा 154(1)

12. रजिस्टर बन्द करने की दशाएँ

सदस्य रजिस्टर सामान्यतया निम्न दशाओं में बन्द किया जाता है-

1. वार्षिक प्रत्याय तैयार करते समय ।
2. जब अंशों पर याचना राशि माँगी जाती है तो याचना-सूची तैयार करने के लिए ।
3. लाभांश घोषित होने पर लाभांश सूची बनाने के लिए ।
4. कम्पनी की सामान्य सभा से पूर्व सदस्यों की सूची बनाने के लिए ।
5. कम्पनी वर्तमान सदस्यों को उनके अंशों के अनुपात में अतिरिक्त अंश खरीदने का प्रस्ताव रखती है, तो सदस्यों की सूचीमय अंशों के बनाने के लिए । (धारा 81)
6. पूँजी का पुनर्गठन करते समय ।

13. **अर्थदण्ड -** यदि सदस्यों के रजिस्टर को बन्द करने के सम्बन्ध में उपर्युक्त धारा 154(1) की व्यवस्थाओं का पालन नहीं किया जाता है, तो कम्पनी तथा कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी को, त्रुटि की अवधि में, 5000 रू0 प्रतिदिन के हिसाब से अर्थदण्ड दिया जा सकता है । अत: कम्पनी सचिव को रजिस्टर बन्द करते समय उपर्युक्त वैधानिक नियमों का पालन करना चाहिए|
14. **सदस्य रजिस्टर में संशोधन -** यदि किसी व्यक्ति का नाम बिना पर्याप्त कारण के सदस्य की तरह सदस्य रजिस्टर में लिखा गया है अथवा उसका नाम कम्पनी का सदस्य होते हुए भी इस रजिस्टर में प्रविष्ट नहीं किया गया है, तो वह रजिस्टर में सुधार के लिए न्यायालय को आवेदन पत्र दे सकता है । न्यायालय इस आवेदन पत्र पर विचार करके रजिस्टर में आवश्यक सुधार के लिए कम्पनी को आदेश दे सकता है अथवा आवेदन पत्र को निरस्त कर सकता है । सुधार का आदेश मय खर्चे के किया जा सकता है । इस प्रकार सदस्य रजिस्टर में सुधार की सूचना न्यायालय के आदेश के 30 दिन के अन्दर रजिस्ट्रार को दी जानी चाहिए । 30 दिन गिनने में न्यायालय के आदेश की प्रति प्राप्त करने में लगा समय सम्मिलित नहीं किया जा सकता है । (धारा 156)
15. **स्वयं न्यायालय द्वारा रजिस्टर में संशोधन -** कम्पनी के समापन की दशा में स्वयं न्यायालय को भी अंशदाताओं (contributars) की सूची निश्चित करने से पूर्व सदस्यों के रजिस्टर में संशोधन करने का अधिकार है ।
16. **न्यायालय द्वारा संशोधन की परिस्थितियाँ -** निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय द्वारा सदस्य रजिस्टर में संशोधन किया जा सकता है-

(i) जब कोई व्यक्ति मिथ्यावर्णन के आधार पर अंश क्रय करने को प्रोत्साहित हुआ हो।
(ii) जब कम्पनी ने अनुचित रूप से हस्तान्तरण का रजिस्ट्रेशन करने में उपेक्षा की हो ।
(iii) जब आवेदक को अंशों का अनियमित आवंटन हुआ हो |

(iv) जहाँ अंशों का समर्पण अनुचित रूप से किया गया हो ।

(v) जब अंशों के जाली हस्तान्तरण के आधार पर वास्तविक स्वामी का नाम रजिस्टर से हटा दिया गया है

(vi) जब कम्पनी द्वारा अनुचित रूप से अंशों का हरण किया गया हो ।

(vii) जब अंशों के क्रेता एवं विक्रेता के मध्य कोई झगड़ा हो ।

8.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (questions)

1. Distinguish between a member and ashareholder. explain the provisions of law for becoming a member.
सदस्य और अंशधारी में अन्तर बतलाइए । सदस्य होने के लिए वैधानिक व्यवस्थाओं को समझाइए ।

2. How is the membership of a company acquired? in what circumstances does it cease?
किसी कम्पनी की सदस्यता किस प्रकार प्राप्त की जाती है? किन परिस्थितियों में ऐसी सदस्यता समाप्त हो जाती है?

3. Discuss the provisions of law relating to register of members.
सदस्यों के रजिस्टर के सम्बन्ध में वैधानिक व्यवस्थाओं का विवेचन कीजिए ।

8.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. आर.सी. अग्रवाल एवं एन.एस. कोठारी : कम्पनी अधिनियम एवं सचिव पद्धति (कॉलेज बुक हाऊस)
2. एस.एम. शुक्ल एवं सहाय कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (साहित्य भवन आगरा) ।
3. N.D. Kapoor: company law
4. Avatar singh: company law
5. माथुर, सक्सैना, कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति ।
6. डी. आर.एल. नौलखा : कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (रमेश बुक डिपो, जयपुर) ।

इकाई - 9 : निदेशक मंडल तथा प्रबन्ध निदेशक (Board of directors and managing director)

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 निदेशक/संचालक-अर्थ एवं परिभाषा
9.3 संचालक-मण्डल का अर्थ
9.4 संचालकों की संख्या
9.5 छोटे अंशधारियों द्वारा संचालक का चुनाव
9.6 संचालकों की वैधानिक स्थिति
9.7 संचालकों की नियुक्ति
9.8 संचालकों की नियुक्ति पर प्रतिबन्ध
9.9 संचालकों की योग्यताएँ
9.10 संचालकों की अयोग्यताएं
9.11 संचालक-पद की संख्या पर प्रतिबन्ध
9.12 संचालकों के स्थान का रिक्त होना
9.13 संचालकों को पद से हटाना
9.14 संचालकों द्वारा त्याग-पत्र देना
9.15 संचालकों के अधिकार
9.16 संचालक-मण्डल के अधिकार
9.17 संचालक-मण्डल के अधिकारों पर प्रतिबन्ध
9.18 संचालकों के कर्तव्य
9.19 संचालकों के दायित्व
9.20 प्रबन्ध संचालक
9.21 सारांश
9.22 शब्दावली
9.23 स्वपरख प्रश्न
9.24 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप समझ सकेंगे ।

- निदेशक अथवा संचालक का अर्थ
- संचालकों की नियुक्ति की विधियाँ
- संचालक मण्डल का अर्थ, शक्तियाँ, कर्त्तव्य एवं दायित्व

- केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालक की नियुक्ति की विधियाँ
- संचालकों को हटाने की प्रक्रिया
- संचालकों के योग्यता अंश रखने सम्बन्धी प्रावधान
- प्रबन्ध संचालक का अर्थ एवं कार्य ।

9.1 प्रस्तावना

किसी भी कम्पनी की सफलता मुख्य रूप से उसके योग्य प्रबन्ध एवं संचालन पर निर्भर करती है । एकाकी व्यापार या साझेदारी में व्यापार का प्रबन्ध एवं संचालन सीधा एकाकी व्यापारी या साझेदारों के हाथ में होता है ।

कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण न तो अपने व्यवसाय को सफलतापूर्वक चला सकती है और न ही कार्यो की भली -भांति देखभाल कर सकती है । कम्पनी के व्यवसाय को सफलतापूर्वक तथा सुविधाजनक रूप से चलाने के लिए यह आवश्यक है कि कम्पनी के संचालन का कार्य मानव द्वारा कराया जाए । यद्यपि कम्पनी के वास्तविक स्वामी अंशधारी होते हैं और कम्पनी के कार्यों की देख-भाल करना उनका कर्त्तव्य है, लेकिन उनके लिए ऐसा करना सम्भव नहीं है क्योंकि कम्पनी में अंशधारियों की संख्या अधिक होती है, और सभी अंशधारियों के लिए कम्पनी के प्रबन्ध में भाग लेना सम्भव नहीं है एवं अंशधारी एक-दूसरे से बहुत दूर होते हैं इसलिए कम्पनी की योजना बनाने के लिए एक साथ इकट्ठे होना प्रायः सम्भव नहीं होता है । तथा कम्पनी का स्वामित्व (ownerships) स्वतन्त्रतापूर्वक हस्तांतरित किया जा सकता है अर्थात् अंशों को बेचा जा सकता है । जिससे अंशधारी बदलते रहते है ।

अत: कम्पनी का प्रबन्ध अंशधारियों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता है, जो संचालक अथवा निदेशक कहलाते हैं तथा सामूहिक रूप से संचालक-मण्डल या निदेशक मंडल (board of directors) कहलाते हैं । संचालक-मण्डल कम्पनी की योजना बनाने में सर्वोच्च अधिकारी हैं । यह मण्डल प्रबन्ध-संचालक, प्रबन्धक तथा सचिव की नियुक्ति करता है । संचालकों का स्थान इन प्रबन्धकों में अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

9.2 निदेशक/संचालक-अर्थ एवं परिभाषा (director-meaning and definition)

संचालक अंशधारियों द्वारा कम्पनी के कार्य को चलाने तथा उसका संचालन, प्रबन्ध व देखभाल करने के लिए निर्वाचित व्यक्ति होते हैं ।

कम्पनी अधिनियम 1956 में संचालक शब्द की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है । परन्तु अधिनियम की कई धाराओं में इसका उल्लेख निम्न प्रकार से किया गया है: धारा 2(13) के अनुसार, संचालक का आशय ऐसे व्यक्ति से है, जो संचालक का स्थान ग्रहण किए हुए हों, चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाए ।

कम्पनी अधिनियम द्वारा दी गई यह परिभाषा 'संचालक" शब्द की स्पष्ट रूप से व्याख्या नहीं करती है ।

धारा 2 (30) के अनुसार- "एक संचालक कम्पनी का अधिकारी होता है ।" यह परिभाषा केवल संचालक की स्थिति प्रकट करती है, उसका अर्थ नहीं ।

धारा 307(10) (अ) के अनुसार- "ऐसा कोई व्यक्ति जिसके निर्देशों या आदेशों के अनुसार कम्पनी का संचालक-मण्डल कार्य करता है, कम्पनी का संचालक माना जाता है | वेब्स्टर (webster) शब्दकोष के अनुसार, संचालक का आशय ऐसे व्यक्ति से है जो कम्पनी का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त किया जाता है । चूंकि एक कम्पनी में बहुत से अंशधारी होते हैं और वे सभी प्रबन्ध में भाग नहीं ले सकते, अत: कम्पनी का प्रबन्ध कुछ चुने हुए व्यक्तियों द्वारा किया जाता है, जिन्हें संचालक कहा जाता है । ये व्यक्ति प्रभावशाली, विद्वान, व्यापारिक कार्यों में कुशल तथा धनवान होते हैं ।"

वास्तव में संचालक उन व्यक्तियों में से एक व्यक्ति है जो कम्पनी का निर्देशन, नियमन, नियन्त्रण करने एवं नीति बनाने के लिए चुने अथवा नामांकित किये जाते हैं । संचालक की विभिन्न परिभाषाओं के अध्ययन से निम्न बातें स्वत: स्पष्ट हो जाती हैं ।

1. संचालक एक व्यक्ति होता है । वह हाड़-मास वाला प्राकृतिक व्यक्ति ही हो सकता है । कृत्रिम व्यक्ति, फर्मे, संस्थाएं आदि संचालक नहीं बन सकती है । (धारा 253)
2. संचालक कम्पनी की नीतियों के निर्धारण में भाग लेता है ।
3. संचालक कम्पनी की कार्यप्रणाली का निरीक्षण करने का अधिकार रखता है ।
4. संचालक वही व्यक्ति होता है जो संचालक का कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है, चाहे उसे किसी भी नाम से जाना जाता हो । उदाहरण के लिए, कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत क्लबों, संघों, संस्थाओं की नीति निर्धारित करने वाली सभा को संचालक मण्डल न कहकर प्रबन्ध समिति या कार्यकारी समिति के नाम से पुकारते हैं तथा इस समिति के सदस्यों को अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सचिव, संयुक्त सचिव, कोषाध्यक्ष आदि के नाम से पुकारते हैं । फिर भी ये सभी संचालक के रूप में कार्य करते हैं ।
5. सभी संचालकों को संयुक्त रूप से "संचालक मण्डल" के नाम से पुकारा जाता है ।
6. संचालक कम्पनी का अधिकारी होता है । (धारा 2(30)]

9.3 संचालक-मण्डल का अर्थ (meaning of board of directors)

एक कम्पनी की दशा में संचालक-मण्डल का आशय कम्पनी के संचालक-मण्डल से है । धारा 252(3) के अनुसार, "कम्पनी के संचालकों को संयुक्त रूप से इस अधिनियम में संचालक-मण्डल या मण्डल कहा जाता है ।"

केवल व्यक्ति ही संचालक हो सकते हैं । (only natural person can be directors)

किसी समामेलित संस्था, संघ या फर्म को किसी कम्पनी का संचालक नियुक्त नहीं किया जा सकता है, केवल व्यक्ति (natural person) ही संचालक की तरह नियुक्त किए जा सकते हैं । (धारा 253)

यदि किसी कम्पनी के सभी सदस्य समामेलित संस्थाएं (bodies corporate) हो, तो इस धारा की व्यवस्थाओं का केवल तभी पालन हो सकता है, जबकि-

1. कम्पनी के अन्तर्नियमों में संचालकों के योग्यता अंशों (qualification shares) की व्यवस्था न हो, ताकि बाहरी व्यक्तियों को कम्पनी के संचालक के रूप में नियुक्त किया जा सके: अथवा
2. सदस्य जो समामेलित संस्थाएँ है, अपने नामांकिती नियुक्त करके उन्हें अपने योग्यता अंश हस्तान्तरित करें ।

संचालक मण्डल कम्पनी का प्रमुख प्रबन्धकीय अंग है जिसका गठन अंशधारियों द्वारा चुने हुए संचालकों से किया जात है । संचालक मण्डल की सभाओं में कम्पनी के प्रबन्ध संचालन सम्बन्धी सभी महत्वपूर्ण निर्णय लिये जाते है । वास्तव में, कम्पनी का सम्पूर्ण प्रबन्ध तन्त्र ही 'संचालक मण्डल" में ही केन्द्रित रहता है, यही समस्त निर्णय लेता है तथा प्रबन्ध संचालक अथवा प्रबन्धक के माध्यम से समस्त निर्णयों का क्रियान्वयन करवाता है ।

9.4 संचालको की संख्या (number of directors)

कम्पनी अधिनियम की धारा 252 के अनुसार, प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी (ऐसी सार्वजनिक कम्पनी को छोड़कर जो धारा 43-ए के अन्तर्गत सार्वजनिक कम्पनी मानी गई हो) में कम से कम तीन संचालक होने चाहिए तथा प्रत्येक अन्य कम्पनी में कम से कम दो संचालक होने चाहिए । संचालकों की यह वैधानिक सीमा होती है और इसी के आधार पर कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा कम्पनी के संचालक-मण्डल की न्यूनतम तथा अधिकतम संख्या निर्धारित की जा सकती है । कम्पनी, साधारण सभा में साधारण/सामान्य प्रस्ताव द्वारा, अन्तर्नियमों में निर्धारित सीमा के अन्दर अपने संचालकों की संख्या में वृद्धि या कमी कर सकती है । कम्पनी, साधारण सभा में साधारण/सामान्य प्रस्ताव द्वारा, अन्तर्नियमों में द्वारा कम्पनी के संचालक-मण्डल की न्यूनतम तथा अधिकतम संख्या निर्धारित की जा सकती है । कम्पनी, साधारण सभा में साधारण/सामान्य प्रस्ताव द्वारा अन्तर्नियमों में निर्धारित सीमा के अन्दर अपने संचालकों की संख्या में वृद्धि या कमी कर सकती है । (धारा 258)

जब संचालको की कुल संख्या प्रस्तावित वृद्धि के कारण 12 से अधिक हो रही हो, तब उस प्रस्ताव की स्वीकृति केन्द्रीय सरकार से प्राप्त करना आवश्यक है । (धारा 259) । यह व्यवस्था ऐसी निजी कम्पनी पर लागू नहीं होती जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी न हो ।

9.5 छोटे अंशधारियों द्वारा संचालक का चुनाव (small shareholders may elect a directors)

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 2000 द्वारा धारा 252 को संशोधित करके यह व्यवस्था की गई है कि ऐसी सार्वजनिक कम्पनी (क) जिसकी प्रदत्त पूँजी पांच करोड़ रूपये या इससे अधिक हो, तथा (ख) जिसमें एक हजार या इससे अधिक छोटे अंशधारी हों, एक संचालक का चुनाव छोटे अंशधारियों द्वारा ऐसी रीति में, जो निर्धारित की जाए, करा सकती है । यही भी बताया गया है कि इस प्रावधान के प्रयोजन के लिए "छोटे अंशधारी" से आशय एक ऐसे अंशधारी से है जिसके पास 20000 (बीस हजार रूपये) रूपये या उससे कम अंकित मूल्य के अंश हो ।

उपर्युक्त प्रावधान से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं-

1. ऐसी सार्वजनिक कम्पनी की दशा में जो ऊपर बताई गई अपेक्षाओं की पूर्ति करती हो, कम से कम तीन संचालको (या अन्तर्नियम में निर्धारित उससे अधिक संचालकों) में से छोटे अंशधारियों द्वारा एक संचालक चुना जा सकता है और ऐसा चुना गया संचालक स्वयं भी कम्पनी का छोटा अंशधारी होना चाहिए । अत: छोटे अंशधारियों का प्रतिनिधित्व करने वाले संचालक की नियुक्ति करना वैकल्पिक है ।
2. छोटे अंशधारियों के प्रतिनिधि के रूप में चुने जाने वाले संचालक के चुनाव में केवल छोटे अंशधारी ही मतदान कर सकते हैं और उनमें समता अंशधारी तथा पूर्वाधिकार अंशधारी, दोनों शामिल होंगे क्योंकि 'प्रदत्त पूँजी' में समता अंश-पूँजी और पूर्वाधिकार अंश - पूँजी दोनों ही शामिल होती है ।

केन्द्रीय सरकार ने इस धारा के अधीन प्राप्त शक्ति का उपयोग करते हुए 9 मार्च, 2001 को छोटे अंशधारियों द्वारा संचालक का चुनाव करने संबंधी नियम (the companies appointment of small shareholders director rules,2001) अधिसूचित कर दिये हैं ।

इन नियमों में, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं-

1. कोई सार्वजनिक कम्पनी या तो अपने आप या छोटे अंशधारियों की कुल संख्या के कम-से कम 14 दिन पहले दिया जाना चाहिए और उसमें संचालक पद के लिए उम्मीदवार अंशधारी का नाम होना चाहिए ।
2. छोटे अंशधारियों द्वारा चुना गया संचालक एक समय पर तीन वर्ष से अधिक के लिए नहीं चुना जा सकता और उस पर बारी-बारी से (rotation) रिटायर होने की शर्त लागू नहीं होंगी ।
3. ऐसा संचालक प्रबन्ध-संचालक अथवा पूर्णकालिक संचालक के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता ।

4. कोई भी व्यक्ति एक ही समय में दो कम्पनियों से अधिक कम्पनियों में छोटे अंशधारियों द्वारा चुने गये संचालक के रूप में काम नहीं कर सकता ।

9.6 संचालकों की वैधानिक स्थिति (legal position of directors)

संचालकों की परिभाषा में संचालकों की स्थिति पर अधिक बल दिया गया है, लेकिन कम्पनी अधिनियम में संचालकों की स्थिति का न तो स्पष्ट वर्णन ही किया गया है और न ही इसे परिभाषित किया गया है । संचालकों की स्थिति का अध्ययन निम्नलिखित रूपों में किया जा सकता है:

1. प्रन्यासी के रूप में संचालकों की स्थिति (position of directors as trustees)

(क) **कानून की दृष्टि से संचालक प्रन्यासी नहीं है (legally a director is not trustee)-** न्यायाधीश जेम्स ने स्मिथ बनाम एण्डर्सन के वाद में टिप्पणी की थी प्रन्यासी वह व्यक्ति होता है जो सम्पत्ति का स्वामी होता है और वह प्रधान, स्वामी या मालिक के रूप में उसमें व्यवहार करता है । उस पर थोड़ा सा प्रतिबन्ध यह होता है कि उसे उसका हिसाब रखना पडता है और जिनके लाभ के लिए यह प्रन्यास बनाया गया है उनके हित में कार्य करना होता है । संचालक कम्पनी का वैतनिक नौकर होता है । वह स्वयं अपने नाम में कोई अनुबन्ध नहीं कर सकता है, परन्तु वह अपने मालिक (अर्थात् कम्पनी) जिसका वह संचालक है या जिसके लिए वह कार्य कर रहा है, के लिए अनुबन्ध कर सकता है ।

(ख) **संचालक कम्पनी की सम्पत्ति तथा धन के लिए उसके प्रन्यासी के रूप में -** संचालक उस सम्पत्ति तथा धन के लिए प्रन्यासी माने जाते हैं जो उनके अधिकार में कम्पनी की ओर से आती हैं । यदि मे उस सम्पत्ति या धन का दुरूपयोग करते हैं तो वे उसी प्रकार उत्तरदायी ठहराए जाएंगे जिस प्रकार प्रन्यासी ठहराए जाते हैं ।

कम्पनी की सम्पत्ति तथा के लिए वे प्रन्यासी इस अर्थ में होते हैं कि उन्हें अपने नियंत्रण में प्राप्त कम्पनी की सम्पत्ति तथा धन का पूरा हिसाब रखना पड़ता है । यदि वे कम्पनी की सम्पत्ति या धन का दुरूपयोग करते हैं: तो उन्हें इसे कम्पनी को लौटाना पड़ता है ।

(ग) **संचालक, उन्हें मिले अधिकारों के लिए प्रन्यासी के रूप में-** संचालक, उन्हें मिले अधिकारों के सम्बन्ध में प्रन्यासी इस अर्थ में होते है कि उन्हें इन अधिकारों का प्रयोग भली-भूति तथा उचित रीति से कम्पनी व अंशधारियों की भलाई के लिए करना चाहिए न कि अपने व्यक्तिगत स्वार्थो के लिए । वे निम्नलिखित अधिकारों के लिए प्रन्यासी होते हैं:

(i) कम्पनी की सम्पत्तियों को व्यापार में प्रयोग करने का अधिकार,
(ii) कम्पनी के धन को कम्पनी के हित में प्रयोग करने का अधिकार,
(iii) साधारण सभा में लाभांश घोषित करने का अधिकार,
(iv) अंश - आवंटन का अधिकार,
(v) अंशों के हस्तांतरण को स्वीकार करने का अधिकार,
(vi) अंशों के समर्पण को स्वीकार करने का अधिकार

(vii) याचनाओं पर अग्रिम राशि प्राप्त करने का अधिकार, आदि ।

(घ) संचालक, अंशधारियों के लिए प्रन्यासी के रूप में नहीं- संचालक कम्पनी के लिए ही प्रन्यासी होते हैं,अंशधारियों के लिए नहीं ।

(ङ) संचालक बाहरी व्यक्तियों के लिए प्रन्यासी के रूप में नहीं- संचालक कम्पनी के साथ अनुबन्ध करने वाले अन्य व्यक्तियों के लिए प्रन्यासियों की स्थिति में नहीं होते ।

संक्षेप में, संचालकों की स्थिति निम्न प्रकार प्रस्तुत की गई है:

(i) संचालक कानून की दृष्टि में प्रन्यासी नहीं है ।

(ii) संचालकों तथा कम्पनी के बीच विश्वासाश्रित सम्बन्ध होता है और उन्हें कम्पनी की सम्पत्ति तथा धन के लिए प्रन्यासी माना जाता है ।

(iii) वे उन्हें मिले अधिकारों के लिए प्रन्यासी के रूप में होते हैं । उन्हें इन अधिकारों का प्रयोग सत्यनिष्ठा से कम्पनी तथा अंशधारियों की भलाई दें लिए करना चाहिए न कि अपने व्यक्तिगत स्वार्थो के लिए ।

(iv) वे व्यक्तिगत अंशधारियों के लिए प्रन्यासी नहीं है ।

2. **एजेण्ट के रूप में संचालकों की स्थिति-** कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण अपने व्यवसाय की स्वयं भली-भांति देखभाल नहीं कर सकती, अत: कम्पनी का प्रबन्ध सम्बन्धी कार्य किसी प्राकृतिक व्यक्ति को सौंप दिया जाता है, जिसे संचालक कहते हैं । संचालक अंशधारियों के चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं । वे कम्पनी का व्यवसाय अंशधारियों की ओर से चलाते हैं । अत: उन्हें कम्पनी का एजेण्ट कहा जा सकता है ।

   संचालकों को कम्पनी का एजेण्ट होने के नाते अपने कर्त्तव्य ईमानदारी, सावधानी तथा कुशलता से पूरे करने चाहिए । संचालकों को अपने अधिकारों के अन्तर्गत ही कार्यकरना चाहिए क्योंकि अधिकारों के बाहर किए गए कार्यों के लिए वे स्वयं तृतीय पक्षकार के प्रति व्यक्तिगत रूप से दायी होंगे ।

   यदि संचालक सीमानियम तथा अन्तर्नियमों द्वारा दिए गए अधिकारों का उल्लंघन करते हैं, तो वे अधिकार सम्बन्धी आश्वासन भंग करने के लिए दायी होंगे । यदि संचालकों द्वारा अधिकारों के बाहर किया गया कार्य कम्पनी के अधिकारों के अन्तर्गत है, तो कम्पनी द्वारा अपनी साधारण सभा में, सभी अंशधारियों की सहमति द्वारा उसकी पुष्टि की जा सकती है । परन्तु यदि कोई कार्य कम्पनी के लिए अधिकारों के बाहर है तो फिर उसकी पुष्टि नहीं की जा सकती ।

   परन्तु यह कहना भी ठीक नहीं है कि संचालक कम्पनी के एजेण्ट से अधिक कुछ नहीं होते । उन्हें कुछ मामलों में स्वतन्त्र अधिकार होते हैं । वे सभी मामलों में अंशधारियों से सलाह लेने के लिए बाध्य नहीं होते ।

   संचालक कम्पनी के एजेण्ट माने जाते हैं परन्तु वे अंशधारियों के एजेण्ट नहीं होते हैं ।

3. **प्रबन्ध करने वाले साझेदारों के रूप में संचालकों की स्थिति-** संचालक प्रबन्ध करने वाले साझेदारों के रूप में होते हैं क्योंकि एक तरफ से कम्पनी के प्रबन्ध करने वाले साझेदारों के रूप में होते हैं तथा दूसरी तरफ वे कम्पनी के स्वयं महत्वपूर्ण अंशधारी होते हैं । संचालक सामान्य साझेदारी अधिनियम की दृष्टि से साझेदार नहीं है क्योंकि साझेदारों के दायित्व असीमित होते हैं, जबकि संचालकों के दायित्व असीमित होते हैं, जबकि

संचालकों के दायित्व होने के नाते उसके द्वारा लिए गए अंशों के अंकित मूल्य तक सीमित होते हैं ।

4. **अधिकारियों के रूप में संचालकों की स्थिति-**कम्पनी अधिनियम की धारा 2(30) के अनुसार, संचालक कम्पनी के अधिकारी होते हैं । यदि कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं का पूर्णरूप से पालन नहीं किया जाता, तो उन्हें उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।
5. **कर्मचारियों के रूप में संचालकों की स्थिति-** संचालकों को कम्पनी के कर्मचारी के रूप में भी माना जा सकता हैं क्योंकि वे एक विशेष सेवा अनुबन्ध के अधीन कम्पनी के साथ कार्य करते हैं और उसके अनुसार ही उन्हें पारिश्रमिक दिया जाता है ।
6. **संचालक कम्पनी के अंग के रूप में -** कुछ निर्णयों में संचालकों को कम्पनी के अंग के रूप में माना जाता है । जिस प्रकार एक व्यक्ति अपने हाथ-पैर-मस्तिष्क आदि को कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहरा सकता है, उसी प्रकार कम्पनी भी संचालकों उनके कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहरा सकती है | उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि संचालक का कम्पनी के साथ विश्वासाश्रित सम्बन्ध होता है, उन्हें अन्तर्नियमों के अधीन अधिकार सौंप दिए जाते हैं तथा अधिकारों का दुरूपयोग करने से हुए हानि की पूर्ति के लिए वे व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराए जाते हैं ।

9.7 संचालकों की नियुक्ति (appointment of directors)

कम्पनी अधिनियम के अनुसार संचालकों की नियुक्ति निम्न विधियों में से किसी एक द्वारा की जा सकती है

1. पार्षद सीमानियम के हस्ताक्षरकर्त्ताओं द्वारा (धारा 254)
2. कम्पनी द्वारा साधारण सभा में (धाराएं 255 से 257)
3. संचालकों द्वारा (धाराएं 260,262,313)
4. अन्य पक्षकारों द्वारा (धारा 255)
5. आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर (धारा 265)
6. केन्द्रीय सरकार द्वारा (धारा 408)

1. **पार्षद सीमानियम के हस्ताक्षरकर्त्ताओं द्वारा: धारा 254-** कम्पनी के प्रथम संचालकों का नाम सामान्यत: अन्तर्नियमों में लिखा रहता है । अन्तर्नियमों में यह भी व्यवस्था की जा सकती है कि पार्षद सीमानियम के हस्ताक्षरकर्ता संचालकों की नियुक्ति कर सकते हैं ।

   यदि अन्तर्नियमों में प्रथम संचालक का नाम दिया हुआ नहीं है और न ही उनकी नियुक्ति की कोई व्यवस्था इनमें की गई है तो पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति उस समय तक संचालकों की तरह माने जाते हैं जब तक कि संचालकों की नियुक्ति धारा 255 के अनुसार साधारण सभा में न कर दी जाए । (धारा 254)
2. **कम्पनी द्वारा साधारण सभा में-** कम्पनी के प्रथम संचालकों की कार्य-अवधि कम्पनी की प्रथम साधारण सभा तक ही होती है । कम्पनी की प्रथम सभा में ही संचालकों की

नियुक्ति होती है । इन संचालकों की नियुक्ति अथवा पुन: नियुक्ति तभी की जा सकती है जबकि अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में व्यवस्था हो । अन्तर्नियमों में व्यवस्था होने पर प्रथम साधारण सभा में सभी संचालकों को अवकाश ग्रहण करना पड़ता है और उनके स्थान पर नए संचालक नियुक्त किए जाते हैं ।

संचालकों का बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करना- यदि अन्तर्नियमों में सभी संचालकों के प्रत्येक वार्षिक सभा में अवकाश ग्रहण करने की व्यवस्था नहीं है तो सार्वजनिक कम्पनी या एक ऐसी निजी कम्पनी जो सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी है के संचालकों की कुल संख्या का कम से कम 2/3 (दो-तिहाई) संचालक बारी-बारी अवकाश ग्रहण करेंगे ।

ऐसी कम्पनी के बाकी 1/3 (एक-तिहाई) संचालक तथा निजी कम्पनी (जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी नहीं है) के सभी संचालक भी, अन्तर्नियमों की व्यवस्थाओं के अधीन, कम्पनी द्वारा साधारण सभा में नियुक्त किए जाते है ।

बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करने पर नियुक्ति- यदि अन्तर्नियमों में उपर्युक्त व्यवस्था नहीं है तो धारा 255 के अधीन निम्न व्यवस्था है-

1. कम्पनी के कुल संचालकों का 1/3 (एक - तिहाई भाग) 'पदेन' या स्थायी संचालक होंगे ।
2. शेष 2/3 दो-तिहाई संचालकों की कल संख्या में व 1/3 (एक-तिहाई) संचालक प्रत्येक वार्षिक साधारण सभा में बार-बारी से अवकाश ग्रहण करेंगे । यदि अवकाश ग्रहण करने वाले संचालकों की संख्या, पूर्णरूप से 3 अथवा 3 से विभाजित होने वाली नहीं हो तो 2/3 संख्या के निकटतम जो संख्या आती हे, उतने ही संचालक अवकाश करेंगे । उदाहरण के लिए, यदि 9 संचालक है और उनमें से 6(9x2/3) को बार-बारी से अवकाश ग्रहण करना है, तो इनमें से 2(6x1/3) संचालक अवकाश ग्रहण करेंगे और यदि संचालक 6 है और उनमें से 4 को बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करना है तो प्रतिवर्ष एक (4x1/3) संचालक अवकाश ग्रहण करेंगे और यदि संचालक 6 है और उनमें से 4 को बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करना है तो प्रतिवर्ष एक (4x1/3)=1.33 अर्थात एक) संचालक अवकाश ग्रहण करेगा ।

   बारी-बारी से अवकाश के लिए एक-तिहाई संचालक निर्धारित करने की विधि- बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करने वाले 1/3 (एक-तिहाई) संचालक वे होंगे जो (1) अपनी पिछली नियुक्ति के समय से सबसे अधिक समय तक संचालक पद पर रहे हों, (2) एक ही दिन नियुक्त हुए संचालकों की दशा में, पारस्परिक सहमति न होने पर, लाटरी द्वारा यह निर्धारित किया जाएगा कि किन संचालकों को बार-बारी से अवकाश ग्रहण करना है ।

   रिक्त स्थानों को भरना- बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करने वाले संचालकों के रिक्त स्थानों को, जो उसी सभा में (1) अवकाश ग्रहण करने वाले संचालकों की पुनर्नियुक्ति, अथवा (2) अन्य व्यक्तियों की नियुक्ति संचालक पद पर करके भरा जा सकता है ।

   अवकाश ग्रहण करने वाले संचालकों को ही संचालक मानना- यदि उस सभा में अवकाश ग्रहण करने वाले संचालक के स्थान पर किसी अन्य संचालक की नियुक्ति नहीं हुई है और सभा में उस रिक्त स्थान पर संचालक न नियुक्त करने का प्रस्ताव स्पष्ट रूप से प्राप्त नहीं किया गया है तो यह सभा स्थगित करके अगले सप्ताह में उसी दिन, उसी

समय तथा उसी स्थान पर बुलाई जाएगी । यदि यह दिन सार्वजनिक छुट्टी का हो तो उसके अगले दिन सभा होंगी । यदि इस सभा में भी नया संचालक नियुक्त नहीं किया जाता है, और उसे नियुक्त न किए जाने का स्पष्ट प्रस्ताव सभा में प्राप्त नहीं होता है तो अवकाश ग्रहण करने वाला संचालक ही पुन: नियुक्त किया हुआ संचालक समझा जाएगा, किन्तु निम्नलिखित दशाओं में ऐसा नहीं होगा-

1. उसकी पुन: नियुक्ति के लिए किया गया प्रस्ताव उस सभा में या उसके पहले की सभा में रखा गया है, परन्तु पास नहीं हुआ हो, या
2. अवकाश ग्रहण करने वाले संचालक ने कम्पनी या संचालक मण्डल को इस बात की लिखित सूचना दे दी हो कि वह संचालक नहीं रहना चाहता, या
3. वह संचालक पद पर नियुक्ति के अयोग्य है अथवा इसे अयोग्य माना गया है, या
4. उसकी नियुक्ति के लिए अधिनियम के अनुसार एक साधारण अथवा विशेष प्रस्ताव की आवश्यकता हो, या
5. दो या दो से अधिक संचालकों की नियुक्ति के लिए एक ही प्रस्ताव हो ।

अन्य किसी की नियुक्ति के लिए व 14 दिन की सूचना- अवकाश ग्रहण करने वाले संचालक के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को भी संचालक के पद पर नियुक्त किया जा सकता है, बशर्ते कि उसने या उसका नाम प्रस्तावित करने वाले किसी सदस्य ने सभा होने के 14 दिन पहले लिखित सूचना कम्पनी के कार्यालय में प्रस्तुत कर दी हो । (धारा 257)

इस सम्बन्ध में कम्पनी का भी यह कर्तव्य है कि सभा होने के 7 दिन पहले प्रस्ताव के विषय में प्रत्येक सदस्य के पास व्यक्तिगत सूचना भेजे ।

सदस्यों को उपर्युक्त विधि से सूचना भेजना आवश्यक नहीं होगा यदि सभा आयोजित होने के 7 दिन पहले, संचालक-पद पर खड़े होने वाले व्यक्ति की सूचना दो समाचार-पत्रों में विज्ञापित कर दी गई हो । ये समाचार-पत्र कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय के क्षेत्र में प्रचलित हों और उनमें से एक समाचार-पत्र अंग्रेजी भाषा का तथा दूसरा उस क्षेत्र से सम्बन्धित स्थानीय भाषा का होना चाहिए ।

उपर्युक्त व्यवस्था ऐसी निजी कम्पनी पर लागू नहीं होंगी जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी न हो । [(धारा 257(2)]

धारा 264(1) के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति, जिसका नाम संचालक पद के लिए प्रस्तावित किया गया है, संचालक की तरह कार्य करने की अपनी लिखित सहमति कम्पनी के पास प्रस्तुत करेगा । ऐसी सहमति अवकाश ग्रहण करने वाले संचालक की तरह नियुक्त किए जाने के लिए कम्पनी की सूचना दी हो ।

रजिस्ट्रार को सूचना- संचालक को अपनी नियुक्ति के 30 दिन के अन्दर संचालक की तरह कार्य करने की अपनी लिखित सहमति रजिस्ट्रार के पास भेज देनी चाहिए । यदि वह ऐसा नहीं करता है तो संचालक की तरह कार्य नहीं कर सकता है । इस प्रकार की सहमति निम्नलिखित व्यक्तियों को नहीं देनी पड़ती है-

1. बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करने के बाद अथवा अपना कार्यकाल समाप्त होने के तुरन्त बाद पुनर्नियुक्त किया गया संचालक, या

2. एक अतिरिक्त या वैकल्पिक संचालक अथवा धारा 262 के अन्तर्गत आकस्मिक रिक्त स्थान को पूरा करने वाला संचालक, या

3. कम्पनी के प्रथम रजिस्टर्ड अन्तर्नियमों के अधीन संचालक की तरह नामांकित व्यक्ति ।

दो या दो से अधिक संचालकों के लिए एक ही प्रस्ताव-सामान्यतया प्रत्येक संचालक की नियुक्ति के लिए अलग-अलग प्रस्ताव होना चाहिए । ऐसा न होने पर प्रस्ताव व्यर्थ होगा । परन्तु यदि उपस्थित सभी सदस्यों ने अनुमति दे दी है तो एक ही प्रस्ताव द्वारा दो या अधिक संचालकों की नियुक्ति की जा सकती है । (धारा 263)

3. **संचालक मण्डल हारा नियुक्ति-** संचालक-मण्डल निम्नलिखित दशाओं में संचालक की नियुक्ति कर सकता है-

(क) अतिरिक्त संचालक: धारा 260 - यदि कम्पनी अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत हो, तो संचालक-मण्डल, समय-समय पर आवश्यकता होने पर अतिरिक्त संचालक की नियुक्ति कर सकता है । परन्तु ऐसी नियुक्ति के लिए निम्न शर्त हैं-

(i) इस प्रकार नियुक्त किया गया अतिरिक्त संचालक कम्पनी की आगामी साधारण सभा तक ही कार्य करेगा |

(ii) संचालकों तथा अतिरिक्त संचालकों की संख्या मिलकर अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित अधिकतम संख्या से अधिक नहीं होनी चाहिए ।

(iii) इसके लिए, यदि आवश्यक हो, तो सभा द्वारा संचालकों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है ।

(ख) आकस्मिक रिक्त स्थान पर संचालक की नियुक्ति: धारा 262 - एक सार्वजनिक कम्पनी या उसकी सहायक निजी कम्पनी में नियुक्त किए गए संचालक का कार्यकाल समाप्त होने से पहले आकस्मिक रूप से, जैसे मृत्यु पागलपन, दिवालियापन, त्याग-पत्र, अयोग्यता आदि के कारण, स्थान रिक्त हो जाता है तो संचालक मण्डल ऐसे रिक्त स्थान पर अन्य व्यक्ति की नियुक्ति कर सकता है । ऐसी नियुक्ति की निम्न शर्तें हैं-

(i) ऐसी नियुक्ति अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत हो ।

(ii) ऐसी नियुक्ति संचालक-मण्डल की सभा में की जा सकती है ।

(iii) इरा प्रकार नियुक्त संचालक का कार्यकाल मूल संचालक के कार्यकाल की शेष अवधि तक ही होगा ।

(ग) वैकल्पिक संचालक: धारा 313 - यदि कम्पनी का संचालक-मण्डल अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत हो अथवा कम्पनी की साधारण सभा में पास किए गए प्रस्ताव द्वारा अधिकृत हो तो जिस राज्य में सामान्यत: संचालक-मण्डल की सभाएँ हुआ करती हैं, उस राज्य में किसी संचालक के कम-से-कम तीन माह अनुपस्थित रहने पर, उसके स्थान पर कार्य करने के लिए वैकल्पिक संचालक की नियुक्त कर सकता है ।

मूल संचालक के स्थान पर नियुक्त वैकल्पिक संचालक उस अवधि से अधिक समय तक इस पद पर नहीं रह सकता जो अवधि मूल संचालक के लिए निर्धारित थी ।

मूल संचालक के राज्य में लौट आने के तुरन्त पश्चात् वैकल्पिक संचालक अपने स्थान को रिक्त कर देगा ।

4. **अन्य पक्षकारों द्वारा संचालकों की नियुक्ति: धारा 255 -** यदि अन्य पक्षकार अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत हो, तो वे भी संचालकों की नियुक्ति कर सकते हैं । अन्य व्यक्तियों में बहुधा निम्न व्यक्ति आते हैं :

(क) कम्पनी को ऋण देने वाला व्यक्ति

(ख) बैंकिंग तथा वित्त निगम

(ग) ऋणपत्रधारी,

(घ) व्यापार विक्रेता ।

उपर्युक्त पक्षों द्वारा नियुक्त संचालकों पर निम्नलिखित व्यवस्थाएँ लागू होंगी-

(i) इस प्रकार नियुक्त संचालकों को बारी-बारी से अवकाश ग्रहण नहीं करना पड़ता है ।

(ii) अन्य पक्षों द्वारा नियुक्त संचालकों की संख्या संचालक-मण्डल के कुल संचालकों की संख्या के एक-तिहाई (1/3) से अधिक नहीं होनी चाहिए ।

(iii) ऋण देने वाले पक्षकारों द्वारा ऋण देते समय रखी गई शर्तों के कारण इस प्रकार की नियुक्ति की जाती है ।

5. **आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर संचालकों की नियुक्ति: धारा 265-** कम्पनी में संचालकों की नियुक्ति निम्न दो प्रकार से की जा सकती है-

(क) सीधे बहुमत पद्धति द्वारा, या

(ख) आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति द्वारा ।

सीधे बहुमत पद्धति में जिन व्यक्तियों को सबसे अधिक मत प्राप्त होंगे, उन्हें निर्वाचित घोषित कर दिया जाएगा । इस पद्धति को अधिक वैधानिक नहीं माना जाता है, क्योंकि 51 प्रतिशत बहुमत द्वारा सारे संचालकों को निर्वाचित किया जा सकता है । 49 प्रतिशत मताधिकार की क्षमता वाले व्यक्तियों को कोई भी संचालक नियुक्त करने का कोई अवसर प्राप्त नहीं होता है ।

अल्पमत वाले अंशधारियों को लाभ पहुँचाने के दृष्टिकोण से ही संचालकों की नियुक्ति की आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति शुरू की गई है । इसमें यह प्रावधान है कि कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा कुल संचालकों की संख्या के कम से कम 2/3 संचालक को एकल हस्तांतरणीय मत अथवा 'संचयी मत पद्धति' द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर नियुक्ति की व्यवस्था की जा सकती है । ऐसी नियुक्तियां प्रत्येक तीन वर्ष में एक बारी की जाती है । आकस्मिक रिक्त स्थान, अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार भरे जाने चाहिए ।

6. **केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालकों की नियुक्ति: धारा 408 -** कम्पनी में अन्याय तथा कुप्रबन्ध को रोकने के लिए केन्द्रीय सरकार स्वयं अथवा कम्पनी के कम से कम 100 सदस्यों द्वारा या कम से कम 10 प्रतिशत मताधिकार रखने वाले सदस्यों द्वारा आवेदन पत्र दिए जाने पर कम्पनी में इतने व्यक्तियों को संचालक नियुक्त कर सकती है जितने की सरकार को आवश्यकता प्रतीत हो । ऐसी नियुक्ति एक समय पर अधिकतम तीन वर्ष

के लिए की जा सकती है । इस प्रकार नियुक्त संचालकों को बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं होंगी ।

केन्द्रीय सरकार उपर्युक्त अधिकार का प्रयोग केवल तभी करेगी, जब उसे विश्वास हो जाए कि प्राप्त आवेदन-पत्र ठीक है और ऐसा करना कम्पनी तथा सदस्यों के हित में है । केन्द्रीय सरकार उपर्युक्त प्रकार से आदेश देने के स्थान पर कम्पनी को यह निर्देश दे सकती है कि वह अपने अन्तर्नियमों में इस प्रकार परिवर्तन करे कि संचालकों का चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जा सके । जब तक आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर नए संचालकों का चुनाव नहीं हो जाता तब तक केन्द्रीय सरकार द्वारा मनोनीत दो संचालक कम्पनी के अतिरिक्त संचालकों के रूप में कार्य करेंगे ।

केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किए गए संचालक को-

(अ) योग्यता अंश लेने आवश्यक नहीं है, तथा

(ब) बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करना आवश्यक नहीं है ।

ऐसा कोई भी संचालक केन्द्रीय सरकार द्वारा हटाया जा सकता है और उसके स्थान पर अन्य व्यति की नियुक्ति की जा सकती है ।

केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालक नियुक्त होने के बाद केन्द्रीय सरकार की सहमति के बिना कम्पनी के संचालक-मण्डल में किया गया कोई भी परिवर्तन व्यर्थ होगा ।

9.8 संचालकों की नियुक्त पर प्रतिबन्ध (restrictions on the appointment of directors)

निम्नलिखित व्यवस्थाओं की पूर्ति किए बिना कोई भी व्यक्ति कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा संचालक नियुक्त नहीं हो सकेगा, और किसी कम्पनी अथवा बनने वाले कम्पनी द्वारा अपने प्रविवरण या स्थानापन्न प्रविवरण में उसका नाम संचालक या प्रस्तावित संचालक के रूप में नहीं लिखा जाएगा जब तक कि-

(1) उसने संचालक के रूप में कार्य करने की अपनी लिखित सहमति हस्ताक्षर करके रजिस्ट्रार के पास न भेज दी हो, तथा

(2) अपने योग्यता अंशों के लिए अनुबन्ध या सीमानियम पर हस्ताक्षर न कर दिए हों, या

(3) कम्पनी से अपने योग्यता अंश ले लिए हों तथा उनका मूल्य चुका दिया हो या चुकाने के लिए सहमति हो गए हों, या

(4) कम्पनी में यदि उसके कोई योग्यता अंश हो तो उन्हें लेने तथा उनका मूल्य चुकाने का लिखित दायित्व हस्ताक्षर करके रजिस्ट्रार के पास भेज दिया हो, या

(5) यदि उसके योग्यता अंश हो तो रजिस्ट्रार के पास ऐसा शपथ-पत्र न भेज दिया गया हो कि उसके योग्यता अंश उसके नाम में रजिस्टर्ड हैं । (धारा 266(1)

इस धारा की व्यवस्थाएँ निम्नलिखित पर लागू नहीं होती-

1. जबकि कम्पनी बिना अंश-पूँजी वाली हो,
2. निजी कम्पनी,

3. जबकि कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी बनने से पहले निजी कम्पनी रही हो,

9.9 संचालकों की योग्यताएँ (qualifications of directors)

कम्पनी अधिनियम मे संचालक के लिए कोई शैक्षणिक या अंशों के धारण सम्बन्धी कोई योग्यता निर्धारित नहीं की गई है । जब तक कि अन्तर्नियमों में कोई अन्य व्यवस्था नहीं हो, एक संचालक को कम्पनी का अंशधारी होना अनिवार्य नहीं है । लेकिन अन्तर्नियमों में प्रायः संचालकों के योग्यता अंशों की व्यवस्था की जाती है ।

(अ) योग्यता अंश- यदि अन्तर्नियमों में ऐसी व्यवस्था हो तो संचालकों को निम्नलिखित द्वारा योग्यता अंश प्राप्त करना चाहिए:

1. संचालकों को अपनी नियुक्ति के दो महिने के अन्दर अपने योग्यता अंश लेना आवश्यक है, यदि पहले से उसके पास कोई अंश नहीं हो ।
2. यदि अन्तर्नियमों में, नियुक्ति से पहले या बाद के दो महीने से कम समय में योग्यता अंश लेने की व्यवस्था है तो ऐसी व्यवस्था व्यर्थ होंगी ।
3. योग्यता अंशों का अंतिम मूल्य 5000 रूपये से अधिक नहीं होना चाहिए । यदि एक अंश का मूल्य ही 5000 रूपये या अधिक हो तो एक अंश ही योग्यता अंश माना जाएगा ।
4. श अधिपत्र योग्यता अंश नहीं माने जायेंगे ।
5. यदि संचालक अपनी नियुक्ति के दो माह के अन्दर योग्यता-अंश लेने में असमर्थ रहते हैं तो उनका पद अपने आप ही रिक्त माना जाएगा ।
6. संचालक अपने योग्यता अंशों को कम्पनी में हित रखने वाले से भेंट स्वरूप स्वीकार नहीं करता है । उसे अपने योग्यता अंशों के लिए भुगतान करना आवश्यक है ।
7. यदि अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत हो तो, संचालक अपने अंश (क) अन्य व्यक्तियों के साथ संयुक्त रूप से भी योग्यता अंश रख सकता है । परन्तु अन्तर्नियमों के अनुसार यदि उसे अपने योग्यता अंश व्यक्तिगत नाम में रखना आवश्यक है, तो उसे ऐसा करना पड़ेगा ।
8. यदि किसी व्यक्ति को संचालकर्ता के कार्यकाल में कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन करके योग्यता अंशों में वृद्धि की जाती है तो वह यह अंश लेने के लिए बाध्य नहीं है ।
9. यदि कोई व्यक्ति निर्धारित समय में अपनी योग्यता अंश लिए बिना संचालक की तरह कार्य करता है तो उसे 50 रूपये प्रतिदिन के हिसाब से जुर्माना किया जा सकता है । (धारा 272)
10. उपर्युक्त व्यवस्थाएं, एक ऐसी निजी कम्पनी पर जो सार्वजनिक कम्पनी की सहायक नहीं है, पर लागू नहीं होती और न ही ऐसे संचालकों पर लागू होती हैं जिनकी नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 408 के अधीन की गई है ।

(ब) लिखित सहमति- कम्पनी अधिनियम की धारा 266 के अनुसार, एक व्यक्ति तभी संचालक बन सकता है जबकि-

1. उसने संचालक बनने की लिखित सहमति रजिस्ट्रार के पास भेज दी है ।
2. या उसने योग्यता अंशों के लिए अनुबन्ध या सीमानियम पर हस्ताक्षर कर दिए हों, अथवा
3. कम्पनी से उसने अपने योग्यता अंश ले लिए हैं तथा उनका मूल्य चुका दिया है या चुकाने के लिए सहमत हो गया, अथवा
4. कम्पनी में यदि उसके कोई योग्यता अंश हों तो उन्हें लेने तथा उनका मूल्य चुकाने का लिखित दायित्व हस्ताक्षर करके रजिस्ट्रार के पास भेज दिया है, अथवा
5. यदि उसके योग्यता अंश हों, तो रजिस्ट्रार के पास ऐसा शपथ-पत्र भेज दिया गया हो तो उसके योग्यता अंश उसके नाम में रजिस्टर्ड है ।

(स) केवल व्यक्ति ही संचालक- किसी समामेलित संस्था, संघ अथवा फर्म को किसी कम्पनी का संचालक नियुक्त नहीं किया जा सकता । केवल व्यक्तियों को ही संचालक नियुक्त किया जा सकता है । (धारा 253)

9.10 संचालकों की अयोग्यताएं (disqualifications of directors)

धारा 274 में कुछ ऐसी व्यवस्थाओं का उल्लेख है जिनके कारण किसी व्यक्ति को किसी सार्वजनिक कम्पनी या निजी कम्पनी का संचालक नियुक्त नहीं किया जा सकता है । अन्य शब्दों में, निम्नलिखित व्यक्ति किसी कम्पनी के संचालक पद पर नियुक्त किए जाने के अयोग्य हैं-

1. **अस्वस्थ मस्तिष्क का व्यक्ति**-यदि किसी न्यायालय ने उसे अस्वस्थ मस्तिष्क का अथवा पागल घोषित कर दिया है और यह निर्णय अभी लागू हो ।
2. **दिवालिया-** एक ऐसा दिवालिया जिसे मुक्ति प्राप्त न हुई हो ।
3. **दिवालिया घोषित** करने का आवेदन दिया हो- एक ऐसा व्यक्ति जिसने दिवालिया घोषित किए जाने के लिए आवेदन-पत्र दिया हो और उसका वह आवेदन-पत्र विचाराधीन है ।
4. **नैतिक दोष-** यदि उसे किसी न्यायालय द्वारा नैतिक दोष के अभियोग में कम से कम 6 महीने की सजा दी गई हो और इस सजा को समाप्त हुए अभी 5 वर्ष न हुए हों ।
5. **अंशों पर याचना का भुगतान न किया हो -** यदि उसने किसी अंशों की याचना की राशि का भुगतान न किया जिसका वह धारी है और याचना के भुगतान की अन्तिम तिथि समाप्त हुए 6 महीने बीत गए हों ।
6. **न्यायालय द्वारा अयोग्य घोषित-** यदि किसी व्यक्ति को किसी न्यायालय द्वारा कम्पनी के प्रवर्तन, निर्माण प्रबन्ध व संचालन तथा समापन के सम्बन्ध में कपटमय व्यवहार के कारण अयोग्य घोषित किया गया हो ।
7. **जो एक ऐसी सार्वजनिक कम्पनी का पूर्वतः संचालक है जिसने -**

(अ) 1 अप्रैल, 1999 को या उसके पश्चात् प्रारम्भ होने वाले किन्ही लगातार तीन वित्तीय वर्षो के लिए वार्षिक लेखे और वार्षिक विवरणियाँ फाइल नहीं की है, या

(ब) अपने निक्षेपों या उन पर अर्जित ब्याज का देय तिथि को भुगतान करने या अपने ऋणपत्रों की देय तिथि को अदायगी करने या लाभांश का भुगतान करने में त्रुटि एक वर्ष या अधिक के लिए जारी रहती है ।

उपवाक्य संख्या (7) के अधीन अयोग्य हो जाने वाला संचालक कम्पनी द्वारा (इस उपवाक्य में वर्णित) किसी भी त्रुटि करने की तिथि से पांच वर्ष की अवधि के लिए किसी अन्य सार्वजनिक कम्पनी के संचालक के रूप में नियुक्ति के लिए योग्य नहीं होगा । किन्तु सार्वजनिक वित्त संस्थाओं, केन्द्रीय या राज्य सरकार और बैंकिंग कम्पनियों द्वारा मनोनीत संचालकगण इस अयोग्यता से मुक्त होंगे ।

उपर्युक्त उपवाक्य संख्या (4) व (5) में दी गई अयोग्यताएँ सरकारी राजपत्र में अधिसूचना प्रकाशित करके केन्द्रीय सरकार द्वारा हटाई जा सकती है । इस धारा में निजी कम्पनी को संचालक की नियुक्ति के सम्बन्ध में अपनी अन्तर्नियम में और भी अयोग्यताएँ जोड़ने के अधिकार दिए गए हैं । इसका अर्थ यह है कि कोई सार्वजनिक कम्पनी अपनी अन्तर्नियम में संचालक की नियुक्ति के लिए कोई अतिरिक्त अयोग्यताएँ निर्धारित नहीं कर सकती (परन्तु धारा 270 के अनुसार अंश योग्यता निर्धारित की जा सकती है) ।

9.11 संचालक पद की संख्या पर प्रतिबन्ध (Restriction on number of directorship)

[(कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 2000 द्वारा संशोधित धारा 275 से 279)]

कम्पनी (संशोधन अधिनियम, 2000 के लागू होने (अर्थात 13 दिसम्बर, 2000) के बाद कोई भी व्यक्ति एक ही समय में 15 से अधिक कम्पनियों का संचालक नहीं हो सकता (पहले एक अधिकतम सीमा 20 कम्पनियां थी) यदि कोई व्यक्ति कम्पनी (संशोधन) अधिनियम 2000 के लागू होने से पहले 15 कम्पनियों से अधिक का संचालक हो तो उस उक्त अधिनियम के लागू होने की तिथि से दो महीनों के भीतर यह सुनिश्चित करना होगा कि किन 15 कम्पनियों के संचालक पद पर वह संचालक बना रहना चाहता है तथा बाकी की कम्पनियों में उसे त्यागपत्र देना होगा और यथास्थिति सम्बन्धित कम्पनियों तथा कम्पनी रजिस्ट्रार को सूचित करना होगा । यदि पहले से ही 15 कम्पनियों के रूप में कार्य कर रहे किसी व्यक्ति को किसी अन्य कम्पनी का संचालक नियुक्त किया जाता है, तो नई नियुक्ति की तारीख से 15 दिन के भीतर उसके द्वारा किसी अन्य कम्पनी में संचालक का पद वास्तव में न छोड़े जाने पर उसकी नई नियुक्ति प्रभावशील नहीं होंगी और इसे शून्य समझा जायेगा । इस 15 की संख्या की गणना करते समय निम्नलिखित को नही गिना जाएगा:

1. किसी ऐसी प्राईवेट कम्पनी में संचालक का पद जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की न तो सहायक कम्पनी हो और न ही नियन्त्रक कम्पनी है ।
2. सीमित कम्पनियों में संचालक का पद ।

3. ऐसी संस्थाओ में संचालक होना जो लाभ अर्जित करने के लिए न चलाई गई हों अथवा जिनमें लाभांश का भुगतान निषिद्ध हो ।
4. वैकल्पिक संचालक का पद ।

जो व्यक्ति उपर्युक्त व्यवस्थाओं का उल्लंघन करके संचालक के रूप में कार्य करता है उस पर पहली 15 कम्पनियों के बाद प्रत्येक कम्पनी के लिए 50,000 रूपये तक आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है ।

9.12 संचालकों के स्थान का रिक्त होना (vacation of Office of directors)

(अ) वैधानिक रूप से स्थान रिक्त माना जाना- धारा 283 के अनुसार, निम्नलिखित परिस्थितियों में एक संचालक का स्थान रिक्त हो जाएगा:

1. **योग्यता अंश न लेने की दशा में -** यदि संचालक अपनी नियुक्ति के दो महीने के अन्दर कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित योग्यता-अंश नहीं लेता अथवा किसी समय पर उसके पास निर्धारित योग्यता-अंश नहीं हों;
2. **अस्वस्थ मस्तिष्क या पागल होने की दशा में -** यदि न्यायालय द्वारा उसे अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति घोषित कर दिया गया हो;
3. **दिवालिया होने की दशा में-** यदि न्यायालय द्वारा उसे दिवालिया व्यक्ति घोषित कर दिया गया हो;
4. **दिवालिया घोषित किए जाने के लिए आवेदन करना-** यदि वह स्वयं को दिवालिया घोषित किए जाने के लिए न्यायालय को आवेदन-पत्र देता है;
5. **छः महीने का कारावास होने की दशा में-** यदि उसे किसी न्यायालय ने नैतिक पतन के लिए दोषी ठहराया हो और उसे कम से कम छ महिने का कारावास का दण्ड दिया हो;
6. **याचनाओं का भुगतान न करने की दशा में-** यदि उसने अंशों की किसी याचना के संबन्ध में याचना राशि का भुगतान करने के लिए निर्धारित अंतिम दिन से छ महीने तक भी भुगतान नहीं किया है । यह व्यवस्था उस समय लागू नहीं होती जबकि केन्द्रीय सरकार गजट द्वारा सूचना देकर इस अयोग्यता को हटा देती है;
7. **तीन लगातार सभाओं में अनुपस्थित रहने की दशा में -** यदि वह संचालक-मण्डल से छुट्टी लिए बिना ही संचालक-मण्डल की तीन लगातार सभाओं में अनुपस्थित रहता है अथवा लगातार तीन महीनों तक मण्डल की - सभाओं में अनुपस्थित रहता है (जो भी अधिक अवधि हो);
8. **कम्पनी से ऋण लेने कीं दशा में -** यदि वह (या तो स्वयं द्वारा अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अपने लाभ के लिए या अपने लिए) या वह फर्म जिसमें वह साझेदार हो या वह कम्पनी जिसमें वह संचालक हो केन्द्रीय सरकार की आज्ञा

प्राप्त किए बिना कम्पनी से ऋण लेता है अथवा कोई गारण्टी या प्रतिभूति धारा 295 के विरूद्ध स्वीकार करता है;

9. **अपना हित प्रकट करने में असमर्थ रहने की दशा में -** यदि वह धारा 299 के आदेशों का उल्लंघन करके कम्पनी के साथ किए गए या किए जाने वाले किसी अनुबन्ध में अपना हित संचालक मण्डल के सामने प्रकट नहीं करता;
10. **अयोग्य हो जाने की दशा में -** यदि वह धारा 203 के अनुसार न्यायालय के आदेश के द्वारा संचालक की तरह कार्य करने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया है;
11. **पद से हटाए जाने की दशा में -** यदि. उसे धारा 264 के अनुसार कम्पनी की साधारण सभा में साधारण प्रस्ताव द्वारा कार्यकाल समाप्त होने से पहले ही संचालक पद से हटा दिया जात है; तथा
12. **पद के समाप्त हो जाने की दशा में -** यदि वह: कम्पनी में कोई पद ग्रहण करने के कारण अन्य नियुक्ति के कारण संचालक की तरह नियुक्त हुआ हो, तो उसका स्थान उस समय रिक्त माना जाएगा जबकि वह उस पद या नियुक्ति पर नहीं रहता हूँ ।

(ब) उपर्युक्त दशाओं में कुछ के प्रभावशाली होने की अवधि-

1. उपर्युक्त दशाओं में से (4),(5) व (10) में वर्णित अयोग्यता आदेश के 30 दिन बाद संचालक द्वारा पद रिक्त हुआ माना जाएगा ।
2. यदि इन 30 दिनों में इस सम्बन्ध में कोई अपील की जाती है तो इस अपील पर निर्णय के 7 दिन के बाद संचालक का पद रिक्त माना जाएगा ।
3. यदि इन 7 दिनों के अन्दर और कोई अपील की जाती है तो इस अपील पर निर्णय लिया जाएगा ।

(स) आर्थिक दण्ड- यदि कोई संचालक यह जानते हुए कि उसकी स्थान धारा 283 की विभिन्न दशाओं मे से किसी दशा मे रिक्त हो जाता है, फिर भी संचालक की तरह कार्य करता है तो उस पर त्रुटि अवधि से प्रत्येक दिन 500 रूपये तक आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है | [धारा 283 (2-ए)]

(द) पद रिक्त होने की अन्य दशा मे - एक निजी कम्पनी जो सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी नहीं है, अपने संचालक स्थान रिक्त समझे जाने के लिए उपयुक्त वर्णित धारा 283 की दशाओं की व्यवस्था कर सकती है

1. यदि कम्पनी के विशेष प्रस्ताव की सहमति के बिना, कम्पनी का कोई संचालक कम्पनी में या उसकी सहायक कम्पनी मे लाभ का स्थान ग्रहण कर लेता है । तो उसका पद रिक्त माना जाएगा । [(धारा 314 (2)]
2. मूल संचालक के आने पर, उसके पद पर कार्य कर रहे वैकल्पिक संचालक का पद रिक्त माना जाएगा । [(धारा 313(2)]

9.13 संचालकों को पद से हटाना (removal of directors)

(अ) अंशधारियों द्वारा हटाया जाना: धारा 284- एक कम्पनी, एक विशेष सूचना देकर तथा साधारण प्रस्ताव पास करके किसी भी संचालक को उसका कार्य-काल समाप्त होने से पूर्व उसके पद से हटा सकती है । परन्तु निम्नलिखित परिस्थितियों में अंशधारियों को इस धारा के प्रवर्तन से किसी संचालक को पद से अलग करने का अधिकार नहीं होता है ।

1. **सरकारी संचालक-** जबकि वह केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 408 के अन्तर्गत अन्याय तथा कुप्रबन्ध के निवारण के लिए नियुक्त किया गया हो ।
2. **निजी कम्पनी का आजीवन-काल का संचालक-** जबकि वह 1 अप्रेल, 1952 को निजी कम्पनी में आजीवन संचालक नियुक्त किया गया हो ।
3. **आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर नियुक्त संचालक-** जबकि वह धारा 265 के अन्तर्गत आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया गया हो ।

संचालक को पद से हटाने की विधि (procedure of removal) - यदि किसी संचालक को उसका कार्य-काल समाप्त होने के पूर्व हटाया जाता है, तो निम्न विधियां अपनाई जाती हैं (धारा 284)

1. **विशेष सूचना-** किसी संचालक को हटाने के लिए प्रस्ताव की विशेष सूचना कम्पनी को देना आवश्यक है । ऐसी सूचना कम्पनी की सभा के 14 दिन पूर्व भेजनी चाहिए ।
2. **प्रस्ताव की प्रतिलिपि संचालक को भेजना-** इस धारा के अन्तर्गत किसी संचालक को हटाने के प्रस्ताव को सूचना प्राप्त होने के तुरन्त पश्चात् कम्पनी को उसकी प्रतिलिपि सम्बन्धित संचालक को भेजनी चाहिए । इस संचालक को कम्पनी की सभा में इस प्रस्ताव पर बोलने का अधिकार है|
3. **संचालक को स्पष्टीकरण का अधिकार-** हटाए जाने वाले संचालक को यह भी अधिकार है कि वह अपना लिखित स्पष्टीकरण कम्पनी के पास भेज सके । यदि स्पष्टीकरण के देर से प्राप्त होने के कारण उसकी प्रतिलिपि सदस्यों को न भेजी जा सकी हो तो वह संचालक अपने स्पष्टीकरण को सभा में पढ़े जाने की माँग कर सकता है । परन्तु यदि इस स्पष्टीकरण में कोई ऐसा विवरण है, जिसमें किसी सदस्य की मान-हानि का प्रश्न है, तो न्यायालय उसके स्पष्टीकरण को अन्य सदस्यों के पास भेजने या सभा में न पढ़े जाने का आदेश दे सकता है ।
4. **रिक्त स्थान पर अन्य संचालकों की नियुक्ति -** हटाए जाने वाले संचालक के स्थान पर अन्य संचालक की नियुक्ति उसी सभा में, जिसमें संचालक को हटाया गया है, विशेष सूचना द्वारा हो सकती है । यदि उस सभा में इस रिक्त स्थान को नहीं भरा जाता तो इसे उसी विधि से भरा जाएगा । जैसे आकस्मिक रिक्त स्थान को धारा 262 के अधीन भरा जाता है । परन्तु हटाए जाने वाले संचालक को पुनर्नियुक्त नहीं किया जा सकता है । हटाए जा जाने वाले संचालक के स्थान पर नियुक्त किए जाने वाले संचालक का कार्य-काल पूर्व संचालक की अवधि तक ही रहेगा ।

इस प्रकार अलग हुए संचालक को कम्पनी पर उस क्षतिपूर्ति के लिए दावा करने का अधिकार है जो इस तरह समय से पहले करने से हुई हो ।

(ब) केन्द्रीय सरकार द्वारा हटाया जाना: धारा 388 ई- केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार है कि कपट, कर्त्तव्य भंग, लापरवाही, विश्वास भंग आदि से सम्बन्धित प्रबन्ध कर्मचारियों के विरूद्ध मामलों को उच्च न्यायालय को जांच के लिए भेज सकती है और इस न्यायालय के निर्णय के आधार पर केन्द्रीय सरकार किसी भी संचालक को उसके पद से हटा सकती है ।

इस प्रकार हटाया गया संचालक कम्पनी के संचालक पद पर या कम्पनी व्यापार तथा प्रबन्ध से सम्बन्धित किसी अन्य पद को इस आदेश की तिथि से 5 वर्ष तक ग्रहण नहीं कर सकता परन्तु सरकार इस अवधि को कम कर सकती है ।

इस प्रकार पद से हटाए गए संचालक को अपने पद की हानि के लिए कोई भी क्षतिपूर्ति नहीं की जाएगी ।

हटाए गए संचालक के स्थान पर केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुमति से किसी अन्य व्यक्ति को संचालक नियुक्त किया जा सकता है ।

(स) न्यायालय द्वारा हटाया जाना: धारा 402- जब अन्याय तथा कुप्रबन्ध के निवारण के लिए धारा 397 या धारा 398 के अन्तर्गत न्यायालय में आवेदन-पत्र दिया जाता है तो न्यायालय भी किसी संचालक को उसके पद से हटाने का आदेश दे सकता है । इस प्रकार हटाया गया संचालक न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना पाँच वर्ष की अवधि के लिए कम्पनी मे, कोई प्रबन्धकीय पद ग्रहण नहीं कर सकता । अपनी नियुक्ति की समाप्ति के लिए वह किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति का दावा भी नही कर सकता । (धारा 407)

9.14 संचालको द्वारा त्याग-पत्र देना (resignation by the directors)

एक संचालक किसी भी समय संचालक पद से त्याग पत्र दे सकता है । यदि संचालक के त्याग पत्र देने के सम्बन्ध मे कम्पनी के अन्तर्नियमों में कोई नियम दिए हुए है, तो प्रत्येक संचालक को अपने पद से त्याग-पत्र देते समय उन नियमों का पालन करना चाहिए । यदि इस सम्बन्ध मे अन्तर्नियमों मे कोई नियम नहीं दिए गए हैं, तो वह एक उचित सूचना देकर अपने पद से त्याग-पत्र दे सकता है, चाहे कम्पनी उसे स्वीकार करे अथवा नहीं । एक बार त्याग-पत्र देने के पश्चात् उसे कम्पनी की अनुमति के बिना वापिस नही लिया जा सकता है ।

"जब कम्पनी अधिनियम या सीमानियम मे संचालक के त्याग-पत्र के सम्बन्ध में कोई व्यवस्था न हो तो संचालक या प्रबन्ध-संचालक द्वारा दिया हुआ लिखित त्याग-पत्र उस समय से लागू माना जाता है जब इसे दिया जाता है ।"

9.15 संचालकों के अधिकार (powers or rights of directors)

कम्पनी में संचालकों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है । वे कम्पनी के व्यवसाय सम्बन्धी व्यवस्था करते हैं, अत: उन्हें सभी कार्य करने का अधिकार है जिन्हें वे अन्तर्नियमों द्वारा कर सकते हैं और जिनके करने का अधिकार उन्हें कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त है । साधारणतया उन्हें निम्न अधिकार प्राप्त हैं-

1. अंशों का आवंटन करने का अधिकार,
2. याचना राशि प्राप्त करने का अधिकार,
3. ऋण -पत्रों का निर्गमन करने का अधिकार,
4. अंशों का अपहरण करने का अधिकार,
5. ऋण-पत्रों के अतिरिक्त अन्य साधनों से धन प्राप्त करने का अधिकार,
6. हस्तान्तरण की स्वीकृति व अस्वीकृति प्रदान करने का अधिकार,
7. अंशों का समर्पण स्वीकार करने का अधिकार,
8. लाभ का एक भाग रक्षित धन के रूप में रखने का अधिकार,
9. पूँजी के व्यय करने का अधिकार,
10. कम्पनी का धन उत्पादन कार्यों में लगाने का अधिकार,
11. अनुबन्ध करने का अधिकार,
12. लाभांश वितरण के लिए सिफारिश करना, आदि ।

परन्तु उपर्युक्त सभी कार्य करने का अधिकार किसी व्यक्ति को न होकर संचालक-मण्डल को होता है । इसका कारण यह है कि संचालक अंशधारियों के प्रतिनिधि होते है तथा कोई भी प्रतिनिधि व्यक्तिगत कार्य करने के लिए स्वतन्त्र नहीं होता । वह पूर्णतया उसके अधीन होता है । जिसका वह प्रतिनिधि है । संचालकों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है ।

9.16 संचालक-मण्डल के अधिकार (powers of board of directors)

संचालक-मण्डल के अधिकारों को निम्नलिखित दो भागों में बांटा जा सकता है-

(1) सामान्य अधिकार- संचालक मण्डल को उन सभी अधिकारों को उपयोग करने तथा उन सभी कार्यो को करने का अधिकार है जो कि एक कम्पनी कर सकती है, परन्तु वह ऐसे कार्य नहीं कर सकती जिन्हें इस अधिनियम या पार्षद सीमानियम या अन्तर्नियम के अनुसार कम्पनी की साधारण 7 व्यापक सभा द्वारा किया जाना चाहिए । अपने अधिकारों को प्रयोग करते समय उसे कम्पनी अधिनियम, सीमानियम और अन्तर्नियम द्वारा लगाये गए प्रतिबन्धों को ध्यान में रखना परम आवश्यक है । (धारा 291)

संचालक-मण्डल को कम्पनी के अफसरों के कार्यों पर नियन्त्रण करने का अधिकार है । कम्पनी के अफसरों में मैनेजर, प्रबन्ध-अभिकर्ता, सचिव और कोषाध्यक्ष भी आते है ।

(2) विशेष अधिकार- संचालक मण्डल निम्नलिखित अधिकारों का प्रयोग, अपनी सभा में प्रस्ताव स्वीकृत करके कर सकता है -

(क) (1) अंशों पर अदत्त धन के सम्बन्ध में याचनाएँ करना ।

(2) ऋण-पत्रों का निर्गमन करना ।

(3) ऋण-पत्रों के अतिरिक्त अन्य रूप से धन उधार लेना ।

(4) कम्पनी के धन का विनियोग करना ।

(5) ऋण देना । (धारा 292)

(ख) आकस्मिक रिक्त स्थान पर नये संचालक को नियुक्त करने का अधिकार । (धारा 262)

(ग) माल के क्रय-विक्रय, सामान कई पूर्ति और सेवाओं के लिए अनुबन्ध करना और कम्पनी के अंशों और ऋण-पत्रों का-अभिगोपन करना । (धारा 297)

9.17 संचालक-मण्डल के अधिकारों पर प्रतिबन्ध (restrictions on the powers of board of directors)

एक पब्लिक कम्पनी या उसकी सहायक प्राइवेट कम्पनी का संचालक-मण्डल बिना कम्पनी की साधारण सभा की अनुमति के निम्नलिखित कार्य नहीं कर सकता है-

(1) कम्पनी के सम्पूर्ण या अधिकांश व्यवसाय को बेचना, पट्टे पर देना या अन्य किसी तरह बिक्री करना ।

(2) किसी संचालक द्वारा भुगतान किये जाने वाले ऋण को समाप्त करना या भुगतान के लिए अधिक समय देना ।

(3) कम्पनी की अनुमति के बिना कम्पनी के किसी व्यवसाय को उसके द्वारा प्रयोग होने वाले गृहणादि को बेचने से प्राप्त धन का विनियोग प्रन्यासी प्रतिभूतियों को छोड़कर अन्य में करना ।

(4) धन उधार लेना जबकि उधार लिया गया यह धन और पहले से ही उधार लिया हुआ धन दोनों मिलाकर कम्पनी की दत्त पूंजी एवं सामान्य कोषों के कुल योग से अधिक हो जाये । यहाँ उधार लिए धन में अस्थायी ऋण शामिल नहीं है ।

(5) मई, 1969 में भारतीय संसद द्वारा पास कम्पनी (संशोधित) अधिनियम के अनुसार राजनीतिक दलों को दिए जाने वाले चन्दे को पूर्णतया समाप्त कर दिया गया है ।

9.18 संचालकों के कर्त्तव्य (duties of directors)

संचालकों के कार्यो की व्याख्या करना एक अत्यन्त कठिन कार्य है, क्योंकि ये कम्पनी के व्यापार की दशा और आकार, पर निर्भर करते हैं । जैसे- एक बैंक के संचालक और बीमा कम्पनी के संचालक के कर्त्तव्यों में भारी अन्तर होना स्वाभाविक है । "संचालको के कम्पनी के प्रति तीन प्रकार के कर्त्तव्य हैं- प्रथम, उन्हें आज्ञाकारी होना चाहिए, द्वितीय, उन्हें परिश्रमी होना चाहिए, एवं तृतीय, उन्हें सच्चाई का व्यवहार करना चाहिए ।"

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से संचालक के कर्त्तव्यों को निम्नलिखित तीन शीर्षकों के अन्तर्गत विभक्त किया जा सकता है-

(अ) कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियमों और पार्षद सीमानियम, के अनुसार कर्त्तव्य- संचालकों का यह कर्त्तव्य है कि वे ऐसा कोई भी कार्य न करें जो कि कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियमों और पार्षद सीमानियम के विरूद्ध हो ।

(ब) कम्पनी अधिनियम के अनुसार कर्त्तव्य -

1. संचालकों का कर्त्तव्य है कि वे कम्पनी के प्रविवरण में सभी आवश्यक बातों का उल्लेख कराएं |
2. कम्पनी की सभाओं को बुलाना ।
3. कम्पनी की वार्षिक सभाओं में चिट्ठा, लाभ-हानि खाता तथा रिपोर्ट प्रस्तुत करना ।
4. कम्पनी अधिनियम के अनुसार सभी आवश्यक पुस्तकों को रखना ।
5. कम्पनी के निरीक्षक के सामने कम्पनी की पुस्तकों और उनसे सम्बन्धित सभी प्रपत्रों को प्रस्तुत करना और उसके निरीक्षण कार्य में सहायता देना ।
6. अपनी नियुक्ति की तिथि से दो महीने के अन्दर (अन्तर्नियमों के अनुसार, अपने योग्यता-अंशों को खरीदना ।
7. संचालक-मण्डल की सभाओं को प्रत्येक तीन महीने की अवधि में कम से कम एक बार आयोजित करना ।
8. लाभांश की घोषणा तथा उसका भुगतान करना ।
9. वैधानिक प्रतिवेदन तैयार करना और सभा बुलाना ।
10. कम्पनी के कार्य के में वार्षिक खातों के खातों के साथ संचालकीय प्रतिवेदन प्रस्तुत करना ।
11. अपने द्वारा ग्रहण किए गए अंशों तथा ऋण-पत्रों की सम्पूर्ण सूची कम्पनी को देना ।
12. यदि किसी अन्य समामेलित संस्था में कोई पद ग्रहण कर रखा हो, तो अपनी नियुक्ति के 20 दिन के अन्दर इसे प्रकट करना ।
13. निरीक्षक के प्रतिवेदन के आधार पर केन्द्रीय सरकार को किसी व्यक्ति के विरूद्ध अभियोग चलाने में मदद करना ।
14. वार्षिक विवरण पर हस्ताक्षर करना ।
15. अपनी नियुक्ति पर लिखित स्वीकृति प्रदान करना ।
16. न्यायालय की आज्ञा से कम्पनी का समान होने की दशा में संचालकों का यह कर्त्तव्य है कि वे निस्तारक को निर्धारित फार्म पर कम्पनी की सम्पत्तियों, दायित्वों और, ऋणों से सम्बन्धित विवर्ण प्रदान करें ।
17. कम्पनी अधिनियम की अन्य सभी व्यवस्थाओं का पालन करना ।

(स) न्यायाधीशों के निर्णयानुसार संचालकों के अन्य कर्त्तव्य- संचालको का यह कर्त्तव्य है कि वे पूर्ण ईमानदारी, कुशलता और सतर्कता से कार्य करें । उन्हे ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए, जो कि कम्पनी के हितों के विरूद्ध हो ।

9.19 संचालकों के दायित्व (Liabilities of Directors)

संचालक कम्पनी के प्रमुख अधिकारी होते हैं । उन्हें कम्पनी की ओर से महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त होते हैं । इन अधिकारों के उचित प्रयोग पर ही कम्पनी का जीवन और भविष्य निर्भर रहता है, अत: उनका दुरूपयोग रोकने के उद्देश्य से संचालकों के लिए दायित्व की भी व्यवस्था की गई है । सुविधा की दृष्टि से संचालकों के दायित्व को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

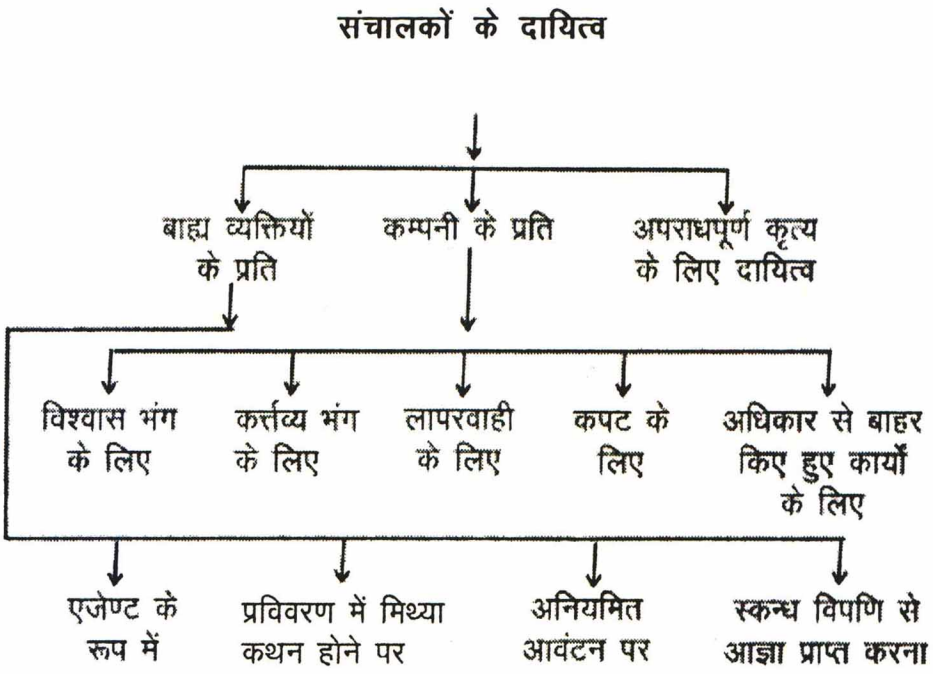

(अ) बाह्य व्यक्तियों के प्रति (To the outsider)

संचालक निम्न दशाओं में बाह्य व्यक्तियों के लिए उत्तरदायी होते है ।

1. **एजेन्ट के रूप में -** साधारणतया संचालक कम्पनी के कार्यो के लिए बाह्य व्यक्तियों के प्रति उत्तरदायी नहीं होते है । किन्तु निम्न परिस्थितियों में उन्हे एजेन्ट के रूप में उत्तरदायी ठहराया जा सकता है-

(क) यदि वे अपने नाम में कोई अनुबन्ध करते है तो उसके लिए वे उत्तरदायी होते हैं ।

(ख) यदि वे अपने अधिकारों से बाहर कार्य करते हैं किन्तु दूसरों को यह प्रकट करते हैं कि उसके द्वारा किए गए कार्य उनके अधिकारों के अन्दर आते हैं तो वे उसके लिए क्षतिपूर्ति के लिए दायी होंगे ।

2. **प्रविवरण में मिथ्या कथन होने पर-** यदि प्रविवरण मे कोई मिथ्या कथन है जिसके कारण अंशधारियों या ऋण-पत्रधारियों को हानि होती है, तो वे उस क्षति को पूरा करने के उतर दायी होंगे ।
3. **अंशों का अनियमित आबंटन होने पर-** यदि संचालक जान-बूझकर आवंटन के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम की धाराएं 69 एवं 70 का उल्लंघन करते हैं, तो वे अंशधारियों को होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होंगे ।

4. **स्कन्ध विपणि से आज्ञा प्राप्त करना-** यदि कम्पनी के प्रविवरण में यह उल्लेख है कि किसी मान्यता प्राप्त स्कन्ध-विपणि में अंशों एवं ऋण-पत्रों के क्रय-विक्रय के लिए अनुमति प्राप्त की जायेगी और यदि निश्चित अवधि में किसी मान्य स्कन्ध विपणि से अंशों तथा ऋण-पत्रों के क्रय-विक्रय के लिए अनुमति प्राप्त नहीं होती है या इसके लिए प्रार्थना-पत्र नहीं दिया जाता है, तो कम्पनी के संचालक समस्त धन को निश्चित अवधि में लौटाने के लिए उत्तरदायी होंगे ।

(ब) कम्पनी के प्रति (To the company)

निम्न दशाओं में संचालक कम्पनी के प्रति उत्तरदायी होते हैं-

1. **विश्वास भंग के लिए**-संचालक कम्पनी के प्रति विश्वास भंग करने के लिए उत्तरदायी होते हैं, जैसे गुप्त लाभ कमाना, धनका दुरूपयोग करना आदि । चूँकि कम्पनी के साथ उनके विश्वाश्रित सम्बन्ध होते हैं, अत: उन्हे पूर्ण सद्भावना से ही कार्य करना चाहिए ।
2. **दुर्व्यवहार या कर्त्तव्य भंग के लिए-** कम्पनी के संचालक दुर्व्यवहार के लिए भी कम्पनी के प्रति उत्तरदायी होते हैं । दुर्व्यवहार कम्पनी के सम्बन्ध में ऐसे प्रत्येक कार्य या भूल को कहते हैं, जिससे उसे हानि या क्षति हुई हो । ऐसी दशा में वे क्षतिपूर्ति के लिए वे उत्तरदायी होगे । असावधानी के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार के कर्त्तव्य भंग को दुर्व्यवहार कहा जा सकता है ।
3. **कपट के लिए-** यदि संचालक या संचालकों ने धोखा देने के उद्देश्य से या जान-बूझकर कोई त्रुटि की है, तो वे उससे होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होंगे ।
4. **लापरवाही के लिए-** यदि किसी संचालक की लापरवाही से कम्पनी को हानि होती है तो संचालक उस क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होंगे । यदि संचालकों ने अपने अधिकारों के अन्तर्गत कार्य किए हैं और पूरी सावधानी रखते हुए भी उनसे कुछ त्रुटियाँ हो गई हों, तो लापरवाही नही कही जाएगी ।
5. **अधिकारों के बाहर किए गए कार्यो के लिए -** अपने अधिकारों से बाहर कार्य करने पर संचालक उत्तरदायी होते हैं, जैसे- पूँजी में से लाभांश देना, आदि ।

(स) अपराधपूर्ण कृत्यों के लिए दायित्व (Criminal liability)

संचालकों को कम्पनी अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अधीन जुर्माना या कारावास या दोनों प्रकार के दण्ड दिये जा सकते हैं । इस प्रकार के मुख्य दायित्व इस प्रकार हैं-

1. यदि कम्पनी के प्रविवरण में कोई मिथ्या या कपटपूर्ण कथन हों तो 2 वर्ष की सजा या 500 रूपये तक का आर्थिक दण्ड या दोनों प्रकार के दण्ड दिये जा सकते हैं । (धारा 63)
2. प्रविवरण में जान-बुझकर जनता को धोखा देने के उद्देश्य से किए गए कपटपूर्ण कथन के लिए 5 वर्ष तक की सजा या 10000 रूपये तक आर्थिक दण्ड या दोनों दण्ड दिये जा सकते हैं । (धारा 68)

3. यदि आवेदन-पत्रों पर प्राप्त धन को किसी अनुसूचित बैंक में जमा न किया हो तो संचालको पर नियमानुसार दण्ड किया जा सकता है । (धारा 69)
4. यदि कम्पनी का लाभांश घोषित होने -के 42 दिन के अन्दर (जान-बूझकर) लाभांश का वितरण न किया हो, तो दोषी संचालको को दिन तक की साधारण कैद तथा आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है । (धारा 207)
5. यदि कम्पनी के चिट्ठे -और लाभ-हानि खाते को कम्पनी की साधारण सभा में प्रस्तुत नहीं किया गया है, तो कम्पनी से सम्बन्धित संचालको को 8 महीने तक की सजा या 1000 रूपये तक आर्थिक दण्ड या दोनों दिये जा सकते हैं । [धारा 210(5)]
6. यदि संचालको की रिपोर्ट कम्पनी के चिट्ठे के साथ साधारण व्यापक सभा में पेशे नहीं की गई है, तो कम्पनी के संचालकों को 6 महीने तक की सजा या 2000 रूपये तक आर्थिक दण्ड या दोनों दण्ड दिये जा सकते हैं । [धारा 217(5)]
7. यदि कोई संचालक 15 से अधिक संचालक बना रहता है, तो उसे प्रत्येक अतिरिक्त कम्पनी 50000 रूपये तक आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है । (धारा 279)
8. यदि किसी संचालक का कम्पनी के साथ किये गए अनुबन्ध में निजी हित होते हुए भी वह उसे प्रकट नहीं करता है तो उसको 5000 रूपये तक आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है । (धारा 279 (4)]
9. यदि कोई संचालक अपनी नियुक्ति के 20 दिन के अन्दर कम्पनी को यह प्रकट नहीं करता है कि अन्य कम्पनियों में उसकी क्या स्थिति है, तो उस पर 5000 रूपये तक का आर्थिक जुर्माना किया जा सकता है ।
10. यदि संचालक कम्पनी की समापन की अवधि में कोई अपराध किया हो तो दण्ड का भागी होगा ।
11. यदि कम्पनी का व्यापार कपटमय तरीकों से चलाया जा रहा हो, संचालक दण्ड का भागी होगा ।

9.20 प्रबन्ध संचालक (Managing Director)

धारा 2 (26) के अनुसार प्रबन्धसंचालक से आशय किसी एक ऐसे संचालक से है जिसे कम्पनी के साथ हुए किसी ठहराव के अन्तर्गत अथवा कम्पनी की सामान्य सभा में पारित किये गये विशेष प्रस्ताव के अन्तर्गत अथवा संचालक मण्डल द्वारा पारित प्रस्ताव के अन्तर्गत, अथवा पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों के अन्तर्गत प्रबन्ध सम्बन्धी पर्याप्त अधिकार प्राप्त हैं जिन्हें वह ऐसा न होने पर प्रयोग नहीं कर सकता है । इसमें ऐसा संचालक भी सम्मिलित है जो प्रबन्ध संचालक का स्थान ग्रहण किये हुए हैं, चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाता हो ।

प्रबन्ध संचालक की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं-

1. प्रबन्ध संचालक भी एक संचालक होता है । दूसरे शब्दों में, प्रबन्ध संचालक बनने के लिए संचालक होना आवश्यक है ।
2. प्रबन्ध संचालक को प्रबन्ध सम्बन्धी **पर्याप्त अथवा महत्वपूर्ण अधिकार** प्राप्त होते है । अत: यह महत्वपूर्ण निर्णय लेता हे ।
3. प्रबन्ध संचालक को ये प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार निम्न में से किसी से भी प्राप्त हो सकते है:
   (अ) कम्पनी के साथ हुए **ठहराव** के अन्तर्गत ।
   (ब) कम्पनी की सामान्य सभा द्वारा पारित **विशेष प्रस्ताव** के अन्तर्गत ।
   (स) संचालक मण्डल के द्वारा **पारित प्रस्ताव के अन्तर्गत** ।
   (द) कम्पनी के पार्षद **सीमानियम तथा अन्तर्नियमों** के अन्तर्गत ।
4. प्रबन्ध संचालक के पद पर कार्य करने वाले व्यक्ति को किसी भी **अन्य नाम से भी पुकारा** जा सकता है ।
5. प्रबन्ध संचालक, **संचालक मण्डल के निरीक्षण, नियन्त्रण एवं** निर्देशन में कार्य करता है ।
6. जब किसी व्यक्ति को कम्पनी के संचालक पद से हटा दिया जाता है। अथवा उसका संचालक मद का कार्यकाल समाप्त हो जाता है तो उसका **प्रबन्ध संचालक पद पर भी स्वत: समाप्त हो जाता है ।**
7. इसे **पुनर्नियुक्त** किया जा सकता है ।

प्रबन्ध संचालक के अधिकार तथा कर्त्तव्य

प्रबन्ध संचालक एक ऐसा व्यक्ति होता है जिसे प्रबन्ध के महत्त्वपूर्ण या पर्याप्त अधिकार तथा शक्तियाँ प्राप्त होती हैं । उसे सम्पूर्ण कम्पनी के सभी महत्वपूर्ण कार्यो को करने, समस्त नीतियों व कार्यो के क्रियान्वयन करने सम्बन्धी निर्णय करने का अधिकार होता है । उसे ये सभी कार्य सामान्यत: संचालक मण्डल के निरीक्षण, नियन्त्रण तथा निर्देशन में करने पड़ते हैं । किन्तु उसके अधिकार तथा कर्त्तव्यों का उल्लेख उसके नियुक्ति के ठहराव में किया जा सकता है । कम्पनी के सीमानियम तथा अन्तर्नियमों द्वारा भी उसके कर्त्तव्यों एवं अधिकारों को निर्धारित किया जा सकता है । कई बार कम्पनी की सामान्य सभा में प्रस्ताव पारित करके भी प्रबन्ध संचालक के अधिकार एवं कर्त्तव्यों का निर्धारण किया जाता है ।

प्रत्येक प्रबन्ध संचालक को वे ही कार्य करने का अधिकार होता है जो उसे करने हेतु सौंपे जाते हैं । इसके अतिरिक्त उसे वे सभी कार्य करने का भी अधिकार होता है जो एक सामान्य संचालक को करने का अधिकार होता है।

यदि कोई प्रबन्ध संचालक अपने अधिकारों के बाहर कार्य करता है तो उसके लिए सामान्यत: वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। किन्तु यदि अधिकारों के बाहर किये गये कार्यो का कम्पनी के संचालक मण्डल अथवा साधारण सभा द्वारा पुष्टिकरण कर दिया जाता है तो उन कार्यो के लिए उसका व्यक्तिगत दायित्व समाप्त हो जाता है।

यदि कम्पनी उन कार्यो का पुष्टिकरण नहीं करती है तो प्रबन्ध संचालक कम्पनी की क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है परन्तु यदि न्यायालय की दृष्टि में उनके कार्य ईमानदारी पूर्ण हो तो न्यायालय उसे व्यक्तिगत दायित्व से मुक्त कर सकता है । (धारा 633)

इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि यदि प्रबन्ध संचालक कोई ऐसा अनुबन्ध या कार्य करता है जो कम्पनी के अधिकार क्षेत्र में भी नहीं आता है तो उसके लिए न तो प्रबन्ध संचालक ही व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा और न कम्पनी ही ।

9.21 सारांश

कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है जिसका प्रबन्ध अंशधारियों द्वारा चुने गये व्यक्तियों के माध्यम से किया जाता है । कम्पनी का प्रबन्ध करने के लिए अंशधारियों द्वारा चुने गये व्यक्तियों को ही संचालकों के नाम से जाना एवं पुकारा जाता है ।

संचालकों की विभिन्न दृष्टिकोण से उनकी स्थिति का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संचालक न तो पूर्ण रूप से ही एजेन्ट की स्थिति में होते है और न कम्पनी के प्रन्यासी की स्थिति में ही होते हैं । वे कुछ दशाओं मे एजेन्ट, कुछ दशाओं में प्रन्यासी तथा कुछ दशाओं में प्रबन्ध भागीदार होते हैं । ऐसी स्थिति में वे निश्चित ही कम्पनी के एक महत्वपूर्ण अंग के समान होते हैं ।

कम्पनी का संचालक मण्डल उन सभी कार्यो को करने की शक्ति रखता है, जिन्हें करने की शक्ति स्वयं कम्पनी को प्राप्त है । [291(1)1] इसका तात्पर्य यह है कि कम्पनी के संचालक मण्डल की शक्तियाँ कम्पनी की शक्तियों के साथ-साथ चलती हैं । जिन शक्तियों का उपयोग जिस सीमा तक कम्पनी स्वयं करने का अधिकार रखती है, संचालक मण्डल उसी सीमा तक उन शक्तियों का उपयोग करने का अधिकार रखता है । परन्तु उन्हें अपनी शक्तियों का उपयोग करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :

1. शक्तियों का **उपयोग पूर्ण सद्भाव** से करना चाहिए ।
2. शक्तियों का उपयोग कम्पनी के **अधिकतम हित** में किया जाना चाहिए ।
3. शक्तियों का उपयोग करते समय निजी एवं कम्पनी के **हितों के बीच संघर्ष उत्पन्न नहीं** होने देना चाहिए ।
4. शक्तियों का उपयोग **वैधानिक प्रावधानों, सीमानियम एवं अन्तर्नियमों के अनुरूप** ही किया जाना चाहिए ।
5. अपनी **अधिकार सीमा के भीतर ही शक्तियों का उपयोग** किया जाना चाहिए ।

9.22 शब्दावली

कम्पनी अधिनियम 1956 में 'संचालक' शब्द की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है । परन्तु अधिनियम की कई धाराओं में इसका उल्लेख निम्न प्रकार से किया गया है: धारा 2(13)

के अनुसार, "संचालक का आशय ऐसे व्यक्ति से है, जो संचालक का स्थान ग्रहण किए हुए हो, चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाए ।"

कम्पनी अधिनियम द्वारा दी गई यह परिभाषा संचालक' शब्द की स्पष्ट रूप से व्याख्या नही करती है ।

धारा 2 (**30 के अनुसार**, "एक संचालक कम्पनी का अधिकारी होता है ।" यह परिभाषा केवल संचालक की स्थिति प्रकट करती है, उसका अर्थ नहीं ।

धारा 307 (10) (अ) के अनुसार, "ऐसा कोई व्यक्ति जिसके निर्देशों या आदेशों के अनुसार कम्पनी का संचालक-मण्डल कार्य करता है, कम्पनी का संचालक माना जाता है ।"

वैब्स्टर (Webster) शब्दकोष के अनुसार, संचालक का आशय ऐसे व्यक्ति से है जो कम्पनी का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त किया जात है । चूंकि एक कम्पनी में बहुत से अंशधारी होते हैं और वे सभी प्रबन्ध में भाग नहीं ले सकते, अत: कम्पनी का प्रबन्ध कुछ चुने हुए व्यक्तियों द्वारा किया जाता है, जिन्हें संचालक कहा जाता है । ये व्यक्ति प्रभावशाली, विद्वान, व्यापारिक कार्यो में कुशल तथा धनवान होते हैं । "

धारा 252 (3) के अनुसार "कम्पनी के संचालकों को संयुक्त रूप से इस अधिनियम में संचालक-मण्डल या मण्डल कहा जाता है ।"

कानून की दृष्टि में संचालक प्रन्यासी नहीं है (Legally a Director is not the Trustee) न्यायाधीन जैम्स ने स्मिथ बनाम एण्डर्सन के वाद में टिप्पणी की थी प्रन्यासी वह व्यक्ति होता है जो सम्पत्ति का स्वामी होता है और वह प्रधान, स्वामी या मालिक के रूप में उसमें व्यवहार करता है । उस पर थोड़ा सा प्रतिबन्ध यह होता है । कि उसे उसका हिसाब रखना पड़ता है । संचालक कम्पनी का वैतनिक नौकर होता है । वह स्वयं अपने नाम में कोई अनुबन्ध नहीं कर सकता है, परन्तु वह अपने मालिक (अर्थात् कम्पनी) जिसका वह संचालक है या जिसके लिए वह कार्य कर रहा है, के लिए अनुबन्ध कर सकता है ।

वैकल्पिक संचालक: धारा 313- यदि कम्पनी का संचालक-मण्डल अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत हो अथवा कम्पनी की साधारण सभा मे पास किए गए प्रस्ताव द्वारा अधिकृत हो तो जिए राज्य में सामान्यत: संचालक-मण्डल की सभाएँ हुआ करती हैं, उस राज्य मे किसी संचालक के कम से कम तीन माह अनुपस्थित रहने पर, उसके स्थान पर कार्य करने के लिए वैकल्पिक संचालक की नियुक्ति कर सकता है ।

सरकारी संचालक- जबकि वह केन्द्रीय सरकार द्वारा 'धारा 408 के अन्तर्गत अन्याय तथा कुप्रबन्ध के निवारण के लिए नियुक्त किया गया हो ।

धारा 2 (26) के अनुसार प्रबन्ध संचालक से आशय किसी एक ऐसे संचालक से है जिसे कम्पनी के साथ हुए किसी ठहराव के अन्तर्गत अथवा कम्पनी की सामान्य सभा में पारित किये गये विशेष प्रस्ताव के अन्तर्गत अथवा संचालक मण्डल द्वारा पारित प्रस्ताव के अन्तर्गत, अथवा पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों के अन्तर्गत प्रबन्ध सम्बन्धी पर्याप्त अधिकार प्राप्त हैं जिन्हें वह ऐसा न होने पर प्रयोग नहीं कर सकता है । इसमें

ऐसा संचालक भी सम्मिलित है जो प्रबन्ध संचालक का स्थान ग्रहण किये हुऐ हैं, चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाता हो ।

9.23 स्वपरख प्रश्न

1. संचालक क्या है?
2. प्रबन्ध संचालक क्या है?
3. प्रबन्धक का अर्थ बताइए ।
4. संचालकों के दो अधिकार बताइए ।
5. संचालकों के दो कर्त्तव्य लिखिए ।
6. 'संचालक न केवल कम्पनी के एजेन्ट होते हैं, अपितु कुछ अंशों में कम्पनी के ट्रस्टी भी होते हैं', इस कथन का विवेचन कीजिए।
7. 'कम्पनी अधिनियम द्वारा संचालकों के लिए किसी प्रकार की अंश योग्यता का प्रावधान नहीं किया गया है'। इस कथन की व्याख्या कीजिये |
8. संचालकों के क्या अधिकार है?
9. कम्पनी संचालक के अधिकारों तथा कर्त्तव्यों का विवेचन कीजिये ।
10. 'संचालक' शब्द की परिभाषा दीजिए तथा कम्पनी व अंशधारियों के सन्दर्भ में उनकी स्थिति बताइए ।
11. एक कम्पनी में संचालकों की वैधानिक स्थिति क्या है? क्या संचालक अपने कार्यो के लिए तीसरे पक्षकारों के प्रति दायी है?
12. 'कम्पनी के संचालक केवल एजेण्ट ही नहीं है, बल्कि वे कुछ दृष्टि से तथा कुछ सीमा तक प्रन्यासी अथवा प्रन्यासियों की स्थिति में है ।' इस कथन की व्याख्या कीजिए ।
13. संचालकों की नियुक्ति किस प्रकार की जाती है? संचालकों की नियुक्ति कें सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम द्वारा क्या प्रतिबन्ध लगाए गए है?
14. संचालकों की वैधानिक स्थिति क्या है? वे किस प्रकार नियुक्त किए जाते है?
15. एक पब्लिक कम्पनी में संचालकों की नियुक्ति पर क्या प्रतिबन्ध है? नियुक्ति के सम्बन्ध में उनकी योग्यताएँ तथा अयोग्यताएँ बताइए ।
16. संचालकों की अंश-योग्यता तथा अयोग्यताओं के सम्बन्ध में कानून का विवेचन कीजिए ।
17. संचालकों की नियुक्ति किस प्रकार की जाती है संचालक के आकस्मिक रिक्त स्थान को कैसे भरा जाता है?
18. संचालकों के पद के रिक्त होने तथा उनकों पद से हटाने के सम्बन्ध में वैधानिक व्यवस्थाओं का उल्लेख कीजिए ।

9.24 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

1. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - सक्सेना एवं सक्सेना
2. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - जी.एस.सुधा
3. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - एन.डी.कपूर
4. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - अवतार सिंह
5. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - नौलखा

इकाई -10 : अन्याय एवं कुप्रबन्ध का निवारण (Prevention of Oppression and Mismanagement)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 अन्याय का निवारण

10.3 अन्याय का अर्थ

10.4 कुप्रबन्ध का निवारण

10.5 अन्याय तथा कुप्रबन्ध निवारण के लिये न्यायालय में सहायता के लिए आवेदन कौन कर सकता है?

10.6 न्यायालय के अधिकार

10.7 केन्द्रीय सरकार के अधिकार

10.8 सारांश

10.9 शब्दावली

10.10 स्वपरख प्रश्न

10.11 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

10.0 उद्देश्य (Objects)

इस इकाई के अध्ययन से आप समझ सकेंगे -

- अन्याय एवं कुप्रबन्ध से आशय, इसका क्षेत्र
- अन्याय एवं कुप्रबन्ध रोकने के लिए कौन व्यक्ति आवेदन कर सकता है?
- न्यायालय के अधिकार तथा शक्तियाँ
- कम्पनी विधान मण्डल के आदेश का प्रभाव
- केन्द्रीय सरकार के अधिकार या शक्तियाँ

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रबन्ध में बहुमत की सर्वोच्चता (Supermacy of the Majority) कम्पनी अधिनियम का आधारभूत नियम है । बहुमत द्वारा लिए गए निर्णयों से सहमत न होते हुए भी अल्पसंख्यकों को उन्हें मानना पड़ता है । कम्पनी का संचालन सुचारू रूप से करने के लिए बहुसंख्यकों के अधिकारों एवं अल्पसंख्यकों के अधिकारों के बीच उचित संतुलन रखना आवश्यक हो जाता है । अत: बहुमत द्वारा अन्याय या कुप्रबन्ध की स्थिति में अल्पसंख्यक अंशधारी निम्नलिखित में से कोई एक निवारण उपाय अपना सकते हैं:-

1. वे न्यायालय से न्याय तथा 'समता' के आधार पर कम्पनी का समापन करने के लिए कह सकते हैं ।

2. वे न्यायालय से उचित (appropriate) सहायता के लिए आवेदन कर सकते हैं।
3. वे केन्द्रीय सरकार से उचित सहायता के लिए आवेदन कर सकते है ।

कम्पनी अधिनियम की धाराएँ 397 से 409, न्यायालय व केन्द्रीय सरकार को उन्हीं स्थितियों के सम्बन्ध में अधिकार प्रदान करती है ।

10.2 अन्याय का निवारण (Prevention of Oppression)

कम्पनी अधिनियम की धारा 397 के अनुसार, यदि कम्पनी के सदस्यों की एक निर्धारित संख्या को यह शिकायत है कि कम्पनी के व्यापार का संचालन 'सार्वजनिक हित' अथवा किसी अंशधारी या अंशधारियों के विरूद्ध हो रहा है, तो वे इस प्रकार के अन्याय के निवारण के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं ।

अन्याय ऐसा होना चाहिए कि न्यायालय को कम्पनी का समापन करना उचित एवं न्यायसंगत प्रतीत हो । परन्तु कम्पनी के समापन से पीड़ित अंशधारी या अंशधारियों के हित भी प्रभावित हो सकते हैं । अन्याय का उपचार कम्पनी का समापन बिल्कुल नहीं है। यह उपचार तो बीमारी से भी अधिक बुरा हो सकता है ।

यदि न्यायालय की राय मे -

1. कम्पनी के कार्यो का संचालन इस प्रकार किया जा रहा है जो सार्वजनिक हित के विरूद्ध है अथवा किसी सदस्य या सदस्यों के प्रति अन्यायपूर्ण है, तथा
2. कम्पनी का समापन करने की आज्ञा देना ऐसे सदस्यों के हितों के लिए हानिकारक होगा, तो न्यायालय शिकायत में निर्दिष्ट मामलों को सुधारने के लिए 'ऐसा कोई आदेश दे सकता है जो इस सम्बन्ध में उचित हो ।

10.3 अन्याय का अर्थ (Meaning of Oppression)

'अन्याय' शब्द को कम्पनी अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है और यह न्यायालयों पर छोड़ दिया गया है कि वे मामलों के तथ्यों पर निर्धारित करें कि अन्याय है या नहीं ।

सामान्य अर्थ में 'अन्याय' से आशय उस कष्टप्रद तथा अन्यायपूर्ण आचरण या अत्याचार पूर्ण व्यवहार से होता है जो किसी या किन्हीं व्यक्तियों के वैधानिक एवं प्राकृतिक अधिकारों पर कुठाराघात करता हो । कम्पनियों के सन्दर्भ में अन्याय से अभिप्राय ऐसा अन्यायपूर्ण अथवा अनुचित व्यवहार से होता है, जिसके परिणामस्वरूप अंशधारियों को कठोर अथवा अन्यायपूर्ण दायित्व उठाना पड़े तथा उन्हें न्यायालय की शरण लेनी पड़े जैसे कि किन्हीं सदस्यों को उनकी सदस्यता के अधिकार से वंचित करना या दो प्रतिद्वन्द्वी संचालक-मण्डलों द्वारा पृथक सभाएँ आयोजन करने से कम्पनी के वित्तीय साधनों पर अनावश्यक भार पड़ना, इत्यादि ।

प्रिवी काउंसिल ने **रिपन प्रेस कम्पनी बनाम गोपाल चेटी** के मामले मे अन्याय शब्द को निम्न प्रकार परिभाषित किया है :

"कम्पनी के प्रबन्ध कार्यो में अन्याय सिद्ध करने के लिए सत्ता या शक्ति का अनुचित दुरूपयोग तथा कम्पनी के कार्यवाहन में ईमानदारी का विश्वास भंग होना अवश्य पाया

जाना चाहिए, किन्तु यह अल्पसंख्यकों द्वारा किसी आन्तरिक नीति के मामले इत्यादि नहीं होने चाहिए । अंशधारियों के बीच स्वयं उत्पन्न होने वाले अविश्वास के लिए इस धारा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है । अन्याय में किसी सदस्य के साथ उसके अंशधारी होने के नाते स्वामित्व के अधिकार के सम्बन्ध में अनुचित व्यवहार अथवा ईमानदारी का अभाव शामिल होता है । अन्याय के लिए कम्पनी के कार्यो की व्यवस्था करने से सम्बन्धित व्यक्ति सदस्यों के प्रति छल-कपट, अधिकारों के दुरूपयोग या मिथ्याचार के दोषी अवश्य होने चाहिए । इसमें संचालकों तथा सदस्यों के बीच विवाद मात्र या नीति या प्रशासन सम्बन्धी प्रश्नों पर सदस्यों के दो समूहों में उत्पन्न अविश्वास शामिल नहीं होता है । सदस्यों तथा संचालकों की व्यक्तिगत शत्रुता से तो इसका तनिक भी सम्बन्ध नहीं होता । "

अन्याय के अर्थ के सम्बन्ध में, **न्यायाधीश कपूर** ने **एल्डर बनाम एल्डर एण्ड वाटसन लि.** के मामले में कहा -

"इस सारी बात का निचोड़ यह है कि जिस आचरण की शिकायत की गई है, वह उचित आचरण के लिए निर्धारित उन मापदण्डों से हटकर तथा उनका उल्लंघन करने वाला होना चाहिए जिन पर विश्वास करके अंशधारी कम्पनी को अपनी पूँजी सौंपते है ।"

कम्पनी अधिनियम की **धारा 397(2)** की व्यवस्था है कि सदस्यों द्वारा अन्याय के विरूद्ध शिकायत किए जाने पर, न्यायालय केवल तभी हस्तक्षेप करेगा, जब उसे यह विश्वास हो जाए कि-

1. कम्पनी के कार्य जिस प्रकार से चलाए जा रहे हैं, वे सार्वजनिक-हित के विरूद्ध हैं अथवा सदस्य या सदस्यों के लिए अन्यायपूर्ण हैं, तथा
2. परिस्थितियों के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि कम्पनी का उचित एवं न्यायसंगत आधार पर समापन कर दिया जाए, परन्तु समापन का आदेश देना अन्याय से पीड़ित सदस्यों के हित में नहीं होगा ।

न्यायालय द्वारा याचिका स्वीकार करने के उपर्युक्त दोनों आधारों का और अधिक स्पष्टीकरण **न्यायाधीश वान्चू ने शान्ति प्रसाद जैन बनाम कालिंगा ट्यूब कम्पनी** के मामले में इस प्रकार किया है-

"यद्यपि धारा 397 के अन्तर्गत याचिका देने के शुरू में यह प्रमाणित करना आवश्यक होता है कि कम्पनी के समापन का आदेश देने का उचित एवं न्यायसंगत कारण विद्यमान है, तथापि यह सिद्ध कर देना ही पर्याप्त नहीं होता है । यह भी सिद्ध किया जाना चाहिए कि सदस्यों के रूप में बहुसंख्यक सदस्यों का अध्ययन पृथक-पृथक नहीं बल्कि एक श्रृंखलाबद्ध कथानक के रूप में किया जाना चाहिए । बहुसंख्यकों द्वारा निरन्तर अन्यायपूर्ण कार्य किए जाने चाहिए तथा याचिका प्रस्तुत करने के दिन तक विद्यमान रहने चाहिए, जिससे यह सिद्ध हो जाए कि कम्पनी के कार्य जिस प्रकार चलाए जा रहे हों वे सदस्यों के कुछ भाग के प्रति अन्यायपूर्ण हैं । कार्य-संचालन दायित्व बढ़ाने वाला, कठोर तथा अनुचित प्रकार का होना चाहिए तथा बहुसंख्यक अंशाधारियो तथा अल्पसंख्यक अंशधारियों के परस्पर विश्वास का अभाव हो । किन्तु यदि वह भी कम्पनी के प्रबन्ध सम्बन्धी मामलों में बहुसंख्यकों द्वारा अल्पसंख्यकों के अन्याय के फलस्वरूप

नहीं होगा तो पर्याप्त नहीं होगा । अन्याय में किसी सदस्य के अंशधारी के रूप में स्वामित्व के अधिकारों के विषय में उसके सार्थ ईमानदारी या उचित व्यवहार का अभाव शामिल होना चाहिए । "

विस्तृत स्पष्टीकरण के लिए अन्याय के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

1. **जब बहुसंख्यकों द्वारा असहमत अल्पसंख्यकों पर नए तथा जोखिमपूर्ण उद्देश्य लादने का प्रयत्न किया जाए**- इस सम्बन्ध में हिन्दुस्तान को-ऑपरेटिव इन्श्योरेन्स सोसाइटी लि. वाद के तथ्य महत्वपूर्ण हैं, जो संक्षेप में इस प्रकार हैं:

   "हिन्दुस्तान को-ऑपरेटिव इन्श्योरेन्स कम्पनी के जीवन बीमा व्यवसाय को लाइफ इन्श्योरेन्स कॉरपोरेशन ऑफ इण्डिया (एल.आई.सी.) ने मुआवजा देकर ले लिया । संचालकों ने, जिन्हें सदस्यों के बहुमत का समर्थन प्राप्त था, इस राशि का अंशधारियों के बीच वितरित करने से इन्कार कर दिया और एक विशेष प्रस्ताव पास करके उसे कुछ नए तथा अधिक जोखिमपूर्ण उद्देश्यों में लगाने का अधिकार प्राप्त कर लिया । इसमें अल्पसंख्यकों को एक ऐसे नए व्यापार में धन लगाने के लिए बाध्य किया जा रहा था, जिसमें उन्हें वे वैद्यानिक सुरक्षाएं तथा सुरक्षाएं उपलब्ध नहीं थी जो उन्हें जीवन बीमा व्यापार में थी । अत: इसे अन्यायपूर्ण व्यवहार माना गया । "

2. **जब किसी सदस्य को उसके सामान्य सदस्यता अधिकारों से वंचित करने का प्रयत्न किया जाए-** इस सम्बन्ध में मोहन लाल चन्दुमल बनाम दी पजाब लि. वाद के तथ्य महत्वपूर्ण हैं, जो संक्षेप में इस प्रकार हैं:

   "एक कम्पनी अग्रगामी (Forward) अनुबन्धों का व्यापार करती थी । उसने अपने अन्तर्नियमों को इस प्रकार परिवर्तित किया कि उससे गैर-व्यापारी सदस्य अपने मताधिकार, सभा बुलाने के अधिकार, संचालक निर्वाचित करने के अधिकार तथा लाभांश प्राप्ति के अधिकार से वंचित हो गए । यह निर्णय दिया गया कि वह धारा 397 के अन्तर्गत अन्यायपूर्ण आचरण था । "

3. **जब कम्पनी अधिनियम या कम्पनी के अन्तर्नियमों या सीमानियमों के प्रावधानों की उपेक्षा की जाए-** इस सम्बन्ध में हिन्दुस्तान को-ऑपरेटिव इन्श्योरेन्स सोसाइटी लि. वाद उल्लेखनीय है। इसके तथ्य इस प्रकार हैं :

   "एक कम्पनी के संचालकों ने जिन्हें बहुमत का समर्थन प्राप्त था, कम्पनी की वार्षिक सामान्य सभा नहीं बुलाई और न ही बारी-बारी से अवकाश ग्रहण किया, जैसा कि कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा वांछित था । उन्होंने सदस्यों को कम्पनी के कारोबार के बारे में पूर्णत: अंधेरे में रखा । यह निर्णय दिया गया कि अल्पसंख्यक अंशधारियों के प्रति न केवल अन्यायपूर्ण आचरण ही हुआ है, अपितु कम्पनी के कारोबार का संचालन कम्पनी के हितों के विपरीत किया गया है । "

4. **जब न्यायोचित आचरण तथा व्यवहार के सिद्धान्तों को भंग किया जाए-** इस सम्बन्ध में निम्न वाद उल्लेखनीय है :

   श्रीमती गजराबाई बनाम पाटनी ट्रांसपोर्ट के वाद में, एक प्राइवेट कम्पनी के एक अंशधारी ने वसीयत द्वारा अपने कुछ अंश कम्पनी के संचालकों को तथा कुछ अंश श्रीमती 'क' के नाम लिख दिए । संचालकों ने अपने नाम लिखे हुए अंशों को तो अपने नाम पंजीकृत

कर दिया, किन्तु श्रीमती 'क' से व्यक्तिगत विवादों के कारण उसके नाम अंशों का पंजीकरण करने से मना कर दिया । न्यायालय ने निर्णय दिया कि संचालको का कार्य अन्यायपूर्ण आचरण था, क्योंकि इसमें न्यायोचित व्यवहार की शर्त भंग की गई थी, जबकि प्रत्येक अंशधारी को जो कम्पनी को अपना धन विनियोजित करता है, न्यायोचित व्यवहार पाने का अधिकारी था । "

ध्यान देने योग्य बात यह है कि अन्याय के प्रति उपचार सदस्य को केवल सदस्य के रूप में ही उपलब्ध होता है, अन्य किसी रूप में नहीं ।

एल्डर बनाम एल्डर एण्ड वाट्सन लि. के वाद में, एक अंशधारी उसी कम्पनी का सचिव भी था । कुछ समय बाद उसे पद से हटा दिया गया । उसने आरोप लगाया कि उसे पद से हटाना अनुचित था और धारा 397 के अन्तर्गत न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की । न्यायालय ने उसकी याचिका को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि सदस्य के रूप में उसके साथ कोई भी अन्याय नहीं किया गया था ।

10.4 कुप्रबन्ध का निवारण (Prevention of Mismanagement)

धारा 398 के अन्तर्गत कम्पनी के सदस्यों द्वारा कुप्रबन्ध के आधार पर निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की जा सकती है

1. यदि कम्पनी का कारोबार ऐसे ढंग से चलाया जा रहा हो जो सार्वजनिक हित या कम्पनी के हितों के विरूद्ध हो, या
2. यदि कम्पनी के संचालक-मण्डल या प्रबन्धन में परिवर्तन के कारण, या कम्पनी के अंशों के स्वामित्व में परिवर्तन के कारण या यदि कम्पनी की कोई अंश-पूँजी न हो तो सदस्यता में परिवर्तन के कारण, **कम्पनी के प्रबन्ध या नियन्त्रण में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गया हो,** तथा उस परिवर्तन के कारण ऐसी आशंका उत्पन्न हो जाए कि कम्पनी के कारोबार का संचालन ऐसे ढंग से किया जाएगा जो सार्वजनिक हित या कम्पनी के हितों के विरूद्ध होगा ।

याचिका पर विचार के फलस्वरूप. यदि न्यायालय को विश्वास हो जाए कि वह उचित है तो वह कम्पनी के कारोबार में कुप्रबन्ध निवारण के लिए उचित आदेश दे सकता है ।

इस सम्बन्ध में **राजामुन्द्री इलैक्ट्रिक सप्लाई कार्पोरेशन लिमिटेड बनाम ए. नागेश्वर राव** का वाद उल्लेखनीय है । इसके तथ्य इस प्रकार हैं :

"कुछ अंशधारियों ने कुप्रबन्ध के आधार पर कम्पनी के विरूद्ध याचिका प्रस्तुत की । जाँच करने पर यह पता चला कि कम्पनी के उपाध्यक्ष ने कम्पनी के बहुत से धन को अपने निजी उद्देश्यों के लिए प्रयोग कर लिया है, मशीनों की मरम्मत नहीं कराई गई है, सरकार के बडे-बडे बिलों का भुगतान नहीं किया गया है और उपाध्यक्ष के अतिरिक्त जो भी संचालक थे वे इन सब दोषों को दूर करने अथवा रोकने के लिए असमर्थ थे । न्यायालय ने उपर्युक्त सभी तथ्यों को कुप्रबन्ध का पर्याप्त प्रमाण मानते हुए कम्पनी के कारोबार के प्रबन्ध के लिए दो प्रशासक 6 महीने के लिए नियुक्त कर दिए और उन्हें मण्डल के सभी अधिकार सौंप दिए । "

यह उल्लेखनीय है कि केवल भूतकाल में अन्याय अथवा कुप्रबन्ध विद्यमान होना पर्याप्त नहीं है । अन्याय अथवा कुप्रबन्ध याचना प्रस्तुत करने के समय भी विद्यमान होना चाहिए, क्योंकि इस धारा का उद्देश्य भूतकाल के दोषों को देखने की अपेक्षा भविष्य में कम्पनी के प्रबन्ध को ठीक करना है ।

10.5 अन्याय तथा कुप्रबन्ध निवारण के लिये न्यायालय में सहायता के लिए आवेदन कौन कर सकता है? (धारा 399)

कम्पनी अधिनियम की धाराओं 399 तथा 401 के अनुसार निम्नलिखित कोई भी व्यक्ति अन्याय तथा कुप्रबन्ध के निवारण के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं :

(क) अंश-पूँजी वाली कम्पनी की दशा में -

1. कम्पनी के कम-से-कम 100 सदस्य अथवा सदस्यों की संख्या का 1/10 भाग (दोनों में जो भी कम हो), अथवा
2. ऐसा कोई भी सदस्य या सदस्य-समूह जो कम्पनी की निर्गमित पूँजी के कम-से-कम 1/10 भाग पर अधिकार रखते हैं परन्तु यह आवश्यक है कि उन्होंने अपने अंशों पर देय याचना की सभी राशियों का भुगतान कर दिया हो ।

(ख) बिना अंश-पूँजी वाली कम्पनी की दशा में - सदस्यों की कुल संख्या के कम-से-कम 1/5 सदस्य आवेदन कर सकते हैं ।

यह उल्लेखनीय है कि आवेदन करने का अधिकार समता अंशधारियों तक ही सीमित नहीं है, पूर्वाधिकार अंशधारी भी उचित सहायता के लिए आवेदन कर सकते हैं ।

कोई भी एक या अधिक सदस्य अन्य सदस्यों की सहमति प्राप्त करने के पश्चात् उन सबकी ओर से आवेदन कर सकते हैं । यह भी ध्यान रखना चाहिए कि आवेदन करने का अधिकार केवल अन्याय से पीड़ित अल्पसंख्यक अंशधारी को ही है ।

केन्द्रीय सरकार चाहे तो निर्धारित सदस्यों से कम सदस्यों के होते हुए भी न्यायालय में आवेदन करने की आज्ञा दे सकती है ।

केन्द्रीय सरकार स्वयं भी आवेदन कर सकती है अथवा किसी अन्य व्यक्ति को आवेदन करने का अधिकार दे सकती है (धारा 401)

आवेदन करने के पश्चात् यदि कुछ सदस्य अपनी सहमति वापस ले लेते हैं या कम्पनी की सदस्यता छोड देते हैं तो इससे आवेदन की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । इस सम्बन्ध में **राजामुन्द्री सप्लाई कार्पोरेशन लिमिटेड बनाम ए**, **नागेश्वर राव** का वाद उल्लेखनीय है, जो इस प्रकार है :

"याचिका की वैधता का निर्णय अनिवार्यतः इसके प्रस्तुतीकरण के समय विद्यमान तथ्यों के आधार पर किया जाना चाहिए और कोई भी याचिका जो प्रस्तुतीकरण के समय वैध हो, वह प्रस्तुतीकरण के बाद की घटनाओं के कारण प्रभावहीन नहीं हो जाती बशर्ते कि कानून में इसके लिए कोई व्यवस्था न हो । "

10.6 न्यायालय के अधिकार (Powers of the Court)

न्यायालय के अधिकार बहुत विस्तृत हैं । न्यायालय, मामले की परिस्थितियों के अनुसार उचित एवं न्यायसंगत शर्तों पर, कम्पनी के कारोबार के संचालन को नियमित करने का आदेश दे सकता है । धारा 402 के अनुसार, न्यायालय अन्याय तथा कुप्रबन्ध को रोकने के लिए निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में आदेश दे सकता है-

1. कम्पनी कार्य-संचालन को भविष्य में नियमित करने के लिए दिशा निर्देश दे सकता है ।
2. कम्पनी के किन्हीं सदस्यों के हितों या अंशों को अन्य सदस्य कम्पनी द्वारा क्रय किये जाने के लिए निर्देश दे सकता है ।
3. कम्पनी द्वारा उक्त अंशों के क्रय किये जाने की दशा में कम्पनी की अंश-पूँजी कम करने के लिए निर्देश दे सकता है ।
4. कम्पनी तथा उसके प्रबन्ध-संचालक या किसी अन्य संचालक या प्रबन्धक के बीच किसी समझौते को उन शर्तों पर समाप्त, रह या संशोधित करने के लिए जो न्यायालय के अनुसार उचित एवं न्यायसंगत दिशा निर्देश दे सकता है ।
5. कम्पनी तथा किसी अन्य व्यक्ति (ऊपर 4 में सम्मिलित नहीं है) के बीच किसी समझौते को समाप्त, रह अथवा संशोधित करने के लिए आदेश दे सकता है, बशर्ते कि उस अन्य व्यक्ति को सूचना दे दी गई हो तथा उसकी सहमति प्राप्त कर ली गई हो,
6. न्यायालय में आवेदन के पहले तीन महीने के अन्दर दी हुई किसी कपटपूर्ण प्राथमिकता को समाप्त करने के लिए आदेश दे सकता है ।
7. अन्य किसी मामले के लिए, जो न्यायालय उचित एवं न्यायसंगत समझे आदेश दे सकता है ।

धारा 403 के अनुसार, न्यायालय कोई अन्तिम आदेश देने से पहले, किसी पक्षकार द्वारा आवेदन प्रस्तुत किए जाने पर कम्पनी के कार्य-संचालन को नियमित करने के लिए कोई ऐसा **अन्तरिम आदेश** दे सकता है जो वह उचित एवं न्यायसंगत समझता हो ।

धारा 407 में बताया गया है कि यदि न्यायालय के आदेश द्वारा किसी समझौते की समाप्ति से किसी प्रबन्धकीय कर्मचारी का पद छिनता है, तो उसे क्षतिपूर्ति के लिए अथवा किसी भी अन्य बात के लिए मुआवजा नहीं मिल सकेगा । इसी प्रकार, यदि किसी व्यक्ति से किया गया पद सम्बन्धी समझौता न्यायालय द्वारा समाप्त किया जाता है, तो वह न्यायालय की सहमति के बिना, आदेश की तारीख से अगले पाँच वर्ष की अवधि तक कम्पनी के किसी भी प्रबन्धकीय पद पर नियुक्त नहीं किया जाएगा अथवा इस हैसियत से कार्य नहीं कर सकेगा ।

10.7 केन्द्रीय सरकार के अधिकार (Powers of Central Government)

केन्द्रीय सरकार के अधिकार इस प्रकार हैं :

1. **अन्याय तथा कुप्रबन्ध के निवारण का अधिकार-** कम्पनी के कम-से-कम 100 सदस्य या कम्पनी में कुल मताधिकार के कम-से-कम 1/10 का अधिकार रखने वाले सदस्य अन्याय तथा कुप्रबन्ध के निवारण के लिए केन्द्रीय सरकार से आवेदन कर सकते हैं । यदि जाँच करने के बाद केन्द्रीय सरकार आवश्यक समझती है तो वह कम्पनी के सदस्यों में से उपर्युक्त संख्या में (जितने वह आवश्यक समझे) व्यक्तियों को संचालक नियुक्त कर सकती है । इस प्रकार नियुक्त संचालकों का कार्यकाल किसी एक समय पर 3 वर्षो से अधिक नहीं रहेगा । ऐसे संचालकों को न तो कम्पनी के योग्यता अंश लेने होंगे और न ही उन्हें बारी-बारी से अवकाश ग्रहण करने की आवश्यकता होगी । (धारा 408) इस विधि से संचालक नियुक्त करने के बजाए, केन्द्रीय सरकार कम्पनी को अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने तथा आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति के आधार पर संचालकों की नियुक्ति करने का आदेश दे सकती है ।
2. **संचालक मण्डल में परिवर्तन को रोकने का अधिकार-**जब किसी प्रबन्ध संचालक या अन्य किसी संचालक द्वारा केन्द्रीय सरकार को यह शिकायत की जाती है कि कम्पनी के अंशों के स्वामित्व में परिवर्तन होना या सम्भावित परिवर्तन में संचालक-मण्डल में ऐसा परिवर्तन होने का भय है जो कम्पनी के हितों के लिए हानिकारक होगा तो केन्द्रीय सरकार उचित जाँच से सन्तुष्ट होने के बाद यह आदेश दे सकती है कि संचालक-मण्डल में शिकायत की तिथि के बाद परिवर्तन करने वाला कोई प्रस्ताव या कार्य तब तक प्रभावपूर्ण नहीं होगा जब तक कि केन्द्रीय सरकार उसकी पुष्टि न कर दे । अपनी जाँच पूर्ण होने से पहले भी केन्द्रीय सरकार कोई अन्तरिम आदेश जारी कर सकती है । (धारा 409)

धारा 409 उस निजी कम्पनी पर लाग नहीं होती जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी नहीं है ।

10.8 सारांश (Summary)

कम्पनियों का प्रबन्ध प्रजातान्त्रिक प्रणाली से किया जाता है । इस व्यवस्था में बहुमत वाले अंशधारियों का प्रभुत्व बना रहता है । कम्पनी की सभाओं में सामान्यत: बहुमत वाले अंशधारी वही कुछ करवाने में सफल हो जाते हैं जो अपने हितों में समझते हैं । इससे कई बार कम्पनी में अल्पमत वाले अंशधारियों के हितों के विरूद्ध कार्य होने लगता है अथवा उनके साथ अन्याय होने लगता है । कभी-कभी धीरे-धीरे सम्पूर्ण कम्पनी मे कुप्रबन्ध भी फैल सकता है जो अल्पमत वाले अंशधारियों, सम्पूर्ण कम्पनी तथा

सार्वजनिक हितों में नहीं होता । कम्पनी अधिनियम में इन दोनों की रोकथाम के उपचार दिये गये हैं ।

10.9 शब्दावली

अन्याय : 'अन्याय' शब्द को कम्पनी अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है और यह न्यायालयों पर छोड़ दिया गया है कि वे मामलों के तथ्यों पर निर्धारित करें कि अन्याय है या नहीं ।

सामान्य अर्थ में 'अन्याय' से आशय उस कष्टप्रद तथा अन्यायपूर्ण आचरण या अत्याचारपूर्ण व्यवहार से होता है जो किसी या किन्हीं व्यक्तियों के वैधानिक एवं प्राकृतिक अधिकारों पर कुठाराघात करता हो । कम्पनियों के सन्दर्भ में अन्याय से अभिप्राय ऐसा अन्यायपूर्ण अथवा अनुचित व्यवहार से होता है, जिसके परिणामस्वरूप अंशधारियों को कठोर अथवा अन्यायपूर्ण दायित्व उठाना पड़े तथा उन्हें न्यायालय की शरण लेनी पड़े जैसे कि किन्हीं सदस्यों को उनकी सदस्यता के अधिकार से वंचित करना या दो प्रतिद्वन्द्वी संचालक-मण्डलों द्वारा पृथक् सभाएँ आयोजन करने से कम्पनी के वित्तीय साधनों पर अनावश्यक भार पड़ना, इत्यादि ।

कुप्रबन्ध : धारा 398 के अन्तर्गत कम्पनी के सदस्यो द्वारा कुप्रबन्ध के आधार पर निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की जा सकती है :

1. यदि कम्पनी का कारोबार ऐसे ढंग से चलाया जा रहा हो जो सार्वजनिक हित या कम्पनी के हितों के विरूद्ध हो, या
2. यदि कम्पनी के संचालक-मण्डल या प्रबन्धन में परिवर्तन के कारण, या कम्पनी के अंशों के स्वामित्व में परिवर्तन के कारण या यदि कम्पनी की कोई अंश-पूँजी न हो तो सदस्यता में परिवर्तन के कारण, **कम्पनी के प्रबन्ध या नियन्त्रण में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गया हो,** तथा उस परिवर्तन के कारण ऐसी आशंका उत्पन्न हो जाए कि कम्पनी के कारोबार का संचालन ऐसे ढंग से किया जाएगा जो सार्वजनिक हित या कम्पनी के हितों के विरूद्ध होगा ।

याचिका : अन्याय एवं कुप्रबन्ध रोकने के लिए सक्षम न्यायालय में आवेदन प्रस्तुत करना याचिका कहलाता है ।

10.10 स्वपरख प्रश्न

1. अन्याय क्या है?
2. कुप्रबन्ध क्या है?
3. टिप्पणियाँ लिखिए:
   (अ) अन्याय (ब) कुप्रबन्ध
4. धारा 397 में प्रयुक्त 'अन्याय' शब्द से आप क्या समझते हैं?
5. अल्पसंख्यक अंशधारियों पर अन्याय तथा कम्पनी का कुप्रबन्ध रोकने के लिए. कम्पनी अधिनियम, 1956 की व्यवस्थाओं की व्याख्या कीजिए ।
6. कम्पनी के अल्पसंख्यक अंशधारियों को अन्याय या कुप्रबन्ध की स्थिति में क्या उपचार प्राप्त हैं?

7. अंशधारियों पर अन्याय (अत्याचार या अन्यायपूर्ण आचरण) तथा कम्पनी का कुप्रबन्ध रोकने से सम्बद्ध व्यवस्थाओं की व्याख्या कीजिए ।
8. कम्पनी का कुप्रबन्ध रोकने के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं की व्याख्या कीजिए ।
9. कम्पनी अधिनियम, 1956 में अल्पसंख्यकों के बहु संख्यक अंशधारियों द्वारा किए जाने वाले अन्याय तथा कुप्रबन्ध से संरक्षा सम्बन्धी व्यवस्थाओं (प्रावधानों) का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए ।
10. अन्याय तथा कुप्रबन्ध के विरूद्ध न्यायालय से सहायता के लिए आवेदन कौन कर सकता है?
11. अन्याय तथा कुप्रबन्ध की रोकथाम (निवारण) के लिए कम्पनी अधिनियम ने केन्द्रीय सरकार तथा न्यायालय को क्या अधिकार दिए हैं?
12. अन्याय तथा कुप्रबन्ध की रोकथाम के लिए कम्पनी अधिनियम में न्यायालय को जो अधिकार प्रदान किए हैं, उनका उल्लेख कीजिए ।
13. न्यायालय द्वारा किन परिस्थितियों में तथा किस याचिका पर अल्पसंख्यक अंशधारियों की सहायता के लिए आदेश दिया जाता है?

10.11 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

1. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - सक्सेना एवं सक्सेना
2. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - जी.एस सुधा
3. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - एन.डी. कपूर
4. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - अवतार सिंह
5. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - नौलखा

इकाई -11 : कम्पनी का समापन (Winding up of a Company)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 कम्पनी समापन का अर्थ एवं परिभाषा

11.3 कम्पनी का समापन तथा समाप्ति

11.4 कम्पनी के समापन तथा कम्पनी की समाप्ति में अन्तर

11.5 समापन के प्रकार

11.6 न्यायालय द्वारा समापन अथवा अनिवार्य समापन

11.7 समापन के लिए याचिका

11.8 सरकारी निस्तारक या सरकारी समापक

11.9 सरकारी निस्तारक के अधिकार

11.10 निस्तारक के कर्त्तव्य

11.11 निस्तारक के दायित्व

11.12 स्वैच्छिक समापन

11.13 स्वैच्छिक समापन के प्रकार

11.14 लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन की दशा में लागू होने वाली अवस्थाएं

11.15 सदस्यों के स्वैच्छिक तथा लेनदारों के स्वैच्छिक समापन में अन्तर

11.16 न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन

11.17 न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन आदेश के प्रभाव

11.18 न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन आदेश के लाभ

11.19 कम्पनी का विघटन

11.20 सारांश

11.21 शब्दावली

11.22 स्वपरख प्रश्न

11.23 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

11.0 उद्देश्य (Objectives)

- इस इकाई के अध्ययन से आप समझ सकेंगे :
- कम्पनी का समापन से आशय, विशेषताएँ ।
- कम्पनी का विघटन, समापन तथा विघटन में अन्तर ।
- न्यायालय द्वारा अनिवार्य समापन-समापन की परिस्थितियाँ ।
- समापन का आवेदन देने के अधिकारी व्यक्ति ।

- कम्पनी की समापन विधि ।
- कम्पनी के समापन आदेश के परिणाम ।
- कम्पनी का समापन आदेश के बाद न्यायालय के अधिकार ।
- सरकारी निस्तारक-कर्त्तव्य अधिकार ।

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

कम्पनी कानूनी प्रक्रिया द्वारा जन्म लेती है और इसके अस्तित्व को कानूनी प्रक्रिया द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है । यदि कभी कम्पनी के अस्तित्व को समाप्त करना आवश्यक प्रतीत हो तो निम्नलिखित वैधानिक प्रक्रियाओं में से किसी एक द्वारा कम्पनी का समापन किया जा सकता है-

1. न्यायालय के आदेशानुसार, पुनर्निर्माण (Reconstruction) तथा एकीकरण (Amalgamation) की योजना के अन्तर्गत कम्पनी का समापन किया जा सकता है । (धारा 394)
2. रजिस्ट्रार द्वारा किसी मृत अथवा निष्क्रिय कम्पनी (Defunct Company) का नाम अपने रजिस्टर से काटने के बाद उस कम्पनी को समाप्त किया जा सकता है । (धारा 560)
3. समापन प्रक्रिया द्वारा ।

11.2 कम्पनी समापन-अर्थ एवं परिभाषा (Winding up of a Company-Meaning and Definition)

अर्थ (Meaning) - 'समापन' कम्पनी के जीवन की अन्तिम अवस्था है । **समापन** का आशय एक ऐसी कार्यवाही से है जिसके द्वारा कम्पनी का कारोबार बन्द कर दिया जाता है । कम्पनी की सभी सम्पत्तियाँ बेच दी जाती है और इनसे प्राप्त धन को तथा अन्य प्रकार से एकत्र किए हुए धन को लेनदारों का भुगतान करने के लिए प्रयोग किया जाता है और यदि कुछ धन शेष बचता है तो उसे अंशधारियों में अर्न्तनियमों के अनुसार वितरित कर दिया जाता है । यदि समापन के समय कम्पनी के पास इतना धन एकत्र नहीं हो पाता है कि वह सब लेनदारों का पूरा-पूरा भुगतान कर सके तो कम्पनी के सदस्यों से उनके दायित्व के अनुसार राशि मांगी जाती है (यदि उनके द्वारा कोई राशि देय हो) ।

परिभाषा (Definition) - प्रोफेसर गॉवर के शब्दों में, "कम्पनी का समापन वह प्रक्रिया है जिसके अनुसार कम्पनी का जीवन समाप्त किया जाता है और उसकी सम्पत्ति को उसके लेनदारों व सदस्यों के लाभार्थ प्रयुक्त किया जाता है । निस्तारक अथवा समापक के नाम से एक प्रशासक की नियुक्ति की जाती है जो कम्पनी का नियंत्रण अपने हाथ में ले लेता है, उसकी सम्पत्तियाँ बेचकर धन एकत्रित करता है कम्पनी के ऋणों का भुगतान करता है तथा अंत में शेष आधिक्य को सदस्यों में उनके अधिकारानुसार वितरित कर देता है । "

पेनिंगटन के शब्दों में, "समापन वह प्रक्रिया है जिसके अनुसार कम्पनी का प्रबंध उसके संचालको के हाथों से ले लिया जाता है, निस्तारक द्वारा कम्पनी की सम्पत्तियाँ एवं राशि वसूल की जाती है, तथा इस प्रकार वसूल की गई राशि में से उसके ऋणों का भुगतान किया जाता है और इसके बाद शेष राशि सदस्यों को वापस कर दी जाती है । समापन के अंत में, कम्पनी के पास न तो कोई सम्पत्ति बची रहती है, और न ही उसके कोई दायित्व शेष रह जाते है । अत: उसे समाप्त करना कम्पनी के रूप में उसकी कानूनी अस्तित्व का अंत करना एक औपचारिकता ही रह जाती है ।"

11.3 कम्पनी का समापन तथा समाप्ति (Winding up and Dissolution)

सामान्यतया कम्पनी के 'समापन' तथा 'समाप्ति' दोनों शब्दों का एक ही अर्थ समझा जाता है, किन्तु वैधानिक दृष्टि से इन दोनों में अंतर है । कम्पनी का वैधानिक अस्तित्व कम्पनी के समापन का आदेश देने के पश्चात् भी बना रहता है, परन्तु समाप्ति पर कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है । रजिस्ट्रार द्वारा इसका नाम 'कम्पनियों के रजिस्टर' से हटा दिया जाता है तथा इस -तथ्य को सरकारी राजपत्र (गजट) में प्रकाशित कर दिया जाता है ।

11.4 कम्पनी के समापन तथा कम्पनी की समाप्ति में अंतर

क्र.स.	**अंतर का आधार**	**समापन**	**समाप्ति**
1.	विधि	यह कम्पनी के समापन की एक प्रक्रिया है |	इसका आशय कम्पनी के पूर्ण विघटन से है ।
2.	कम्पनी का अस्तित्व	समापन की प्रक्रिया दशा मे कम्पनी का अस्तित्व उस समय तक रहता है जब तक कि समापन पूर्ण नहीं हो जाता है |	इससे कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है ।
3.	निस्तार	कम्पनी के समापन की प्रक्रिया मे निस्तारक कम्पनी का प्रतिनिधित्व करता है |	निस्तारक का अस्तित्व नहीं रहता । कम्पनी का अस्तित्व नहीं रहता ।
4.	सम्पत्तियों की वसूली तथा वितरण	कम्पनी के समापन पर निस्तारक द्वारा सम्पतियों एवं राशि वसूल की जाती और उसका निर्धारित विधि के अनुसार वितरण कर दिया जाता है |	इसमें इन सब कार्यो के हो जाने के बाद कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है ।
5.	ऋणों को प्रमाणित करना	इसमे लेनदार अपनी राशि को सिद्ध कर सकता है |	इसमे ऋणों को प्रमाणित नहीं किया जा सकता है क्योकि कम्पनी विद्यमान ही नहीं रहती |

6.	कारण एवं प्रक्रिया	कम्पनी के समापन के कारण धारा 433, 438 तथा 522 मे दिए गये है |	समाप्ति के कारण एवं इसकी प्रक्रिया का वर्णन धारा 481, 497 व 509 मे है |
7.	प्रकार	समापन तीन प्रकार से (1) ऐच्छिक (2) न्यायालय द्वारा तथा (3) न्यायालय के निरीक्षण में होता है |	समाप्ति के कई प्रकार नहीं होते है |
8.	न्यायालय का आदेश	कम्पनी के समापन के लिए न्यायालय का आदेश अनिवार्य नहीं है, क्योकि समापन ऐच्छिक रूप से भी हो सकता है |	समाप्ति के लिए न्यायालय का आदेश अनिवार्य है |

11.5 समापन के प्रकार (Modes of Winding up)

धारा 425(1) के अनुसार कम्पनी का समापन निम्नलिखित तीन प्रकार से किया जा सकता है -

1. न्यायालय द्वारा समापन
2. स्वैच्छिक समापन
3. न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन

11.6 न्यायालय द्वारा समापन अथवा अनिवार्य समापन (Winding up by the Court or Compulsory Winding up)

जब कम्पनी का समापन न्यायालय द्वारा होता है तो उसे अनिवार्य समापन भी कहा जाता है ।

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित स्थितियों में कम्पनी का समापन किया जा सकता है -

1. **विशेष प्रस्ताव द्वारा:** जब कम्पनी ने एक विशेष प्रस्ताव पास कर लिया है कि उसका समापन न्यायालय द्वारा किया जाये । प्रस्ताव पास कर लिया है कि उसका समापन न्यायालय द्वारा किया जाये । प्रस्ताव किसी भी कारण से पास किया जा सकता है । न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश तभी देता है जबकि कम्पनी का समापन सार्वजनिक हित या कम्पनी के हितों के विरूद्ध न हो ।
2. **वैधानिक सभा बुलाने या वैधानिक रिपोर्ट देने में त्रुटि:** यदि किसी सार्वजनिक कम्पनी ने कम्पनी अधिनियम में निर्धारित विधि से तथा निर्धारित समय के अंदर रजिस्ट्रार को वैधानिक रिपोर्ट भेजने में या वैधानिक सभा बुलाने में कोई त्रुटि की है तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है । इस आधार पर रजिस्ट्रार या किसी अंशदाता द्वारा याचिका प्रस्तुत की जा सकती है । याचिका

वैधानिक सभा बुलाए जाने की अंतिम तिथि के 14 दिन के बाद प्रस्तुत की जानी चाहिए, धारा 399(7) ।

न्यायालय द्वारा समापन का आदेश देने का अधिकार उसके विवेक पर निर्भर करता है । न्यायालय समापन के आदेश के स्थान पर यह आदेश भी दे सकता है कि वैधानिक सभा बुलाई जाये या वैधानिक रिपोर्ट रजिस्ट्रार को भेजी जाये । न्यायालय त्रुटि के लिए दोषी व्यक्तियों को याचिका सम्बन्धी व्यय चुकाने का आदेश दे सकता है । [धारा 443(3)]

3. **व्यापार प्रारम्भ न करना या स्थगित रखना:** जब कम्पनी अपने समामेलन के एक वर्ष के अन्दर व्यापार प्रारम्भ नहीं करती है या पूरे एक वर्ष तक व्यवसाय को बंद रखती है तो उसे समापन का आदेश दिया जा सकता है ।

   यहाँ पर भी न्यायालय द्वारा समापन का आदेश देने का अधिकार उसके विवेक पर निर्भर करता है । यदि कम्पनी अपने व्यापार को प्रारम्भ न करने या इसको स्थगित रखने के सम्बन्ध में उचित कारण बताती है तथा उसका इरादा शीघ्र ही व्यापार प्रारम्भ करने का है तो न्यायालय समापन का आदेश देने से इंकार कर सकता है ।

4. **सदस्यों की संख्या न्यूनतम से कम होना:** यदि किसी समय कम्पनी के सदस्यों की संख्या वैधानिक न्यूनतम संख्या से कम अर्थात् पब्लिक कम्पनी की दशा में 7 से कम तथा प्राइवेट कम्पनी की दशा में 2 से कम हो जाती है तो न्यायालय इस आधार पर कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है ।

5. **ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ होना:** यदि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ है तो उसके समापन का आदेश दिया जा सकता है । धारा 434 के अनुसार, निम्नलिखित स्थितियों में कम्पनी को अपने ऋण चुकाने में असमर्थ माना जाता है ।

   जब कोई कम्पनी अपने चालू दायित्वों का भुगतान करने में असमर्थ रहती है तब वह व्यापारिक दृष्टि से दिवालिया समझी जाती है । कम्पनी के पास अपने दायित्वों का भुगतान करने के लिए पर्याप्त राशि से अधिक की सम्पत्तियाँ हो सकती हैं, किन्तु यदि सम्पत्तियाँ तुरन्त ही रोकड़ में परिवर्तित न की जा सकती हो या वे व्यापार को चालू रखने के लिए अति आवश्यक हो तो कम्पनी अपने चालू दायित्वों का भुगतान करने में असमर्थ मानी जाएगी ।

यदि उपर्युक्त स्थितियों में से कोई भी स्थिति सिद्ध कर दी जाती है तो न्यायालय अपने विवेकानुसार -

(क) कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है, या

(ख) समापन के आदेश को कुछ समय के लिए स्थगित कर सकता है, यदि न्यायालय की राय में कम्पनी शीघ्र ही अपने चालू दायित्वों का भुगतान करने में समर्थ हो जाएगी, या

(ग) समापन का आदेश देने से मना कर सकता है, यदि धन-मूल्य की दृष्टि से लेनदारों की बहुसंख्या याचिका का विरोध करती है तथा न्यायालय के समक्ष यह सिद्ध कर देती है कि

कम्पनी सभी सम्पत्तियों व दायित्वों को ध्यान में रखते हुए कम्पनी को व्यापार चालू रखना चाहिए ।

6. **उचित एवं न्यायसंगत:** यदि न्यायालय के विचार में कम्पनी का समापन उचित एवं न्यायसंगत है तो ही कम्पनी के समापन का आदेश दिया जा सकता है ।

'उचित एवं न्यायसंगत' कारण क्या है यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है । न्यायालय निम्नलिखित स्थितियों में 'उचित एवं न्यायसंगत' शीर्षक के अन्तर्गत कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है:

1. यदि कम्पनी का आधार ही समाप्त हो जाता है -

"किसी कम्पनी का आधार तब समाप्त हो जाता है जब उसके निर्माण करने का उद्देश्य निष्फल हो जाता है, अथवा जब बिना हानि उठाए कम्पनी का व्यापार चलाना असंभव हो जाता है, अथवा जब कम्पनी की वर्तमान तथा संभावित सम्पत्तियाँ उसके दायित्वों का भुगतान करने के लिए अपर्याप्त है ।"

कम्पनी का आधार निम्नलिखित स्थितियों में समाप्त हुआ माना जाता है ।

(अ) जब कम्पनी की विषय-वस्तु समाप्त हो जाती है - "एक कम्पनी का निर्माण लाटरी का व्यवसाय संचालन करने हेतु किया गया था । कम्पनी के निर्माण के समय लाटरी संचालन करना वैधानिक था परन्तु बाद में सरकार ने लाटरी संचालन के व्यवसाय को अवैधानिक घोषित कर दिया । न्यायालय को इस कम्पनी का समापन करना पूर्णतया उचित एवं न्यायसंगत लगा ।"

(ब) जब कम्पनी के समामेलन का उद्देश्य निष्फल हो जाता है : यदि कम्पनी का मुख्य उद्देश्य निकल हो जाता है, तो उसका समापन किया जा सकता है, भले ही कम्पनी अपने सहायक उद्देश्य को लेकर व्यवसाय चला रही हो ।

(स) जब बिना हानि उठाये कम्पनी का व्यापार चलाना असंभव हो: इसका तात्पर्य यह है कि व्यापार में लाभ कमाने के उद्देश्य को प्राप्त करने की कोई युक्तिसंगत आशा नहीं रह गई है । परन्तु यदि बहुसंख्यक अंशधारी इसका विरोध करते हैं तो न्यायालय किसी कम्पनी के समापन का आदेश इसलिए नहीं देगा कि कम्पनी हानि में चल रही है ।

(द) जब वर्तमान तथा संभावित सम्पत्तियाँ दायित्वों का भुगतान करने के लिए अपर्याप्त है - यदि कम्पनी अपने लेनदारों को भुगतान करने में पूर्णतया असमर्थ है, और ब्याज की राशि लगातार बढ रही है तथा अंशधारियों में तीव्र मतभेदों के कारण कम्पनी के प्रबन्ध व संचालन की स्थिति दिन-प्रतिदिन खराब होती जा रही है, तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है ।

2. यदि कम्पनी के बहुसंख्यक अंशधारी अनुचित तरीके से अपने अधिकारों का प्रयोग कर रहे हैं अथवा उन्होंने अल्पसंख्यक अंशधारियों के प्रति आक्रमणकारी तथा अत्याचारपूर्ण नीति अपनाई है।
3. यदि कम्पनी का प्रबन्ध गतिरोध के कारण पूर्ण रूप रमे ठप हो गया है: इसका तात्पर्य यह है कि यदि कम्पनी के प्रबन्ध में गतिरोध उत्पन्न हो जाने के कारण व्यापार चलाना बहुत कठिन हो गया है अर्थात् कम्पनी के लिए अपने उद्देश्यों का पालन करना संभव नहीं रह गया है तो कम्पनी का समापन करना उचित एवं न्यायसंगत है ।

4. यदि मताधिकार पर नियंत्रण रखने वाले किसी एक संचालक ने सभा बुलाने, लेखे प्रस्तुत करने या लाभांश का भुगतान करने से इंकार कर दिया है ।
5. यदि कम्पनी के प्रबन्ध ने अल्पमत की ओर ध्यान नहीं दिया है तो कम्पनी का समापन करना उचित एवं न्यायसंगत होगा ।
6. यदि कम्पनी का निर्माण अवैधानिक या कपटपूर्ण व्यापार करने के उद्देश्य से किया गया हो अथवा कम्पनी का व्यापार अवैधानिक हो गया हो । जैसे कम्पनी का मुख्य उद्देश्य लाटरी का व्यवसाय करना हो ।
7. यदि कम्पनी न तो कसी प्रकार का कोई व्यवसाय कर सकती हो और न ही उसके पास कोई सम्पत्ति हो तो कम्पनी का समापन करना उचित एवं न्यायसंगत होगा ।

11.7 समापन के लिए याचिका (Petition for Winding Up)

कम्पनी के समापन के लिए न्यायालय को दिया गया आवेदन याचिका कहलाता है । धारा 439 के अनुसार, कम्पनी के समापन के लिए न्यायालय को निम्नलिखित पक्षों में से किसी के द्वारा याचिका प्रस्तुत की जा सकती है:

1. **कम्पनी द्वारा याचिका:** कम्पनी स्वयं अपने समापन के लिए न्यायालय के समक्ष याचिका प्रस्तुत कर सकती है । परन्तु इसके लिए आवश्यक है कि कम्पनी इस आशय का एक विशेष प्रस्ताव पास करे । [धारा 439(1) (ए)]
2. **लेनदारों द्वारा याचिका:** यदि एक या अधिक लेनदारों द्वारा इस आधार पर कि कम्पनी अपने 'ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ' है समापन हेतु याचिका प्रस्तुत की जा सकती है । इसके अतिरिक्त भावी लेनदार द्वारा भी याचिका प्रस्तुत की जा सकती है बशर्ते कि उसने न्यायालय की पूर्व अनुमति प्राप्त करली हो ।
3. **अंशदाता द्वारा याचिका:** धारा 428 के अनुसार 'अंशदाता' शब्द से आशय ऐसे प्रत्येक व्यक्ति से है जो कम्पनी के समापन की दशा में कम्पनी की सम्पत्तियों में अंशदान करने के लिए दायी है ।

   धारा 439(3) के अनुसार, अंशदाता को कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत करने का वैधानिक अधिकार होता है भले ही वह पूर्णत: चुकता अंशों का धारक हो, या कम्पनी के पास कोई भी सम्पत्ति न हो, या दायित्वों का भुगतान कर देने के पश्चात अंशधारियों में वितरण के लिए कम्पनी की कोई सम्पत्ति न बची हो ।

   अंशदाता निम्नलिखित परिस्थितियों में ही कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है:

i. यदि सदस्यों की संख्या सार्वजनिक कम्पनी में 7 तथा निजी कम्पनी में 2 से कम हो गई हो; या
ii. यदि कम्पनी ने वैधानिक रिपोर्ट भेजने या वैधानिक सभा बुलाने में त्रुटि की हो; या
iii. यदि वह अंशों का मूल आवंटिती है; या
iv. यदि उसने ये अंश कम्पनी के समापन आरम्भ होने की तिथि से पहले के 18 महीनों में कम से कम 6 महीनों तक स्वयं के नाम में रखे हैं; या
v. यदि उसे ये अंश किसी भूतपूर्व अंशधारी की मृत्यु के बाद मिले हों ।

[धारा 439(4)]

4. **कम्पनी लेनदार तथा अंशदाता** द्वारा पृथक या संयुक्त रूप से भी कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत की जा सकती है । [धारा 439(1) (डी)]
5. **कम्पनी रजिस्ट्रार द्वारा याचिका:** केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुमति से रजिस्ट्रार निम्नलिखित आधारों पर कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है:

i. यदि कम्पनी, रजिस्ट्रार को वैधानिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने या वैधानिक सभा बुलाने में त्रुटि करती है ।
ii. यदि कम्पनी समामेलन की तिथि से एक वर्ष के अन्दर अपना व्यापार आरम्भ नहीं करती या पूरे एक वर्ष के लिए अपना व्यापार स्थगित कर देती है;
iii. जब सदस्यों की संख्या न्यूनतम वैधानिक संख्या से कम हो जाती है अर्थात यदि किसी सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की संख्या 7 से कम तथा किसी निजी कम्पनी में यह संख्या 2 से कम रह जाती है;
iv. यदि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ हो;
v. यदि न्यायालय के विचार में कम्पनी का समापन उचित एवं न्यायसंगत है ।

यह उल्लेखनीय है कि समापन अनुमति देने से पहले केन्द्रीय सरकार द्वारा कम्पनी को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना चाहिये ।

6. केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा याचिका-धारा 243 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार किसी भी व्यक्ति को कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत कर सकती है । धारा 243 में बताया गया है कि यदि कम्पनी के कारोबार की जांच करने वाले निरीक्षकों की रिपोर्ट से सरकार को यह प्रतीत होता है कि कम्पनी का व्यवसाय उसके लेनदारों, सदस्यों या किसी व्यक्ति को धोखा देने के उद्देश्य से चलाया जा रहा है या कम्पनी के प्रबन्धक कपट के लिए दोषी है, तो केन्द्रीय सरकार किसी भी व्यक्ति (प्रायः कम्पनी के रजिस्ट्रार) को कम्पनी के समापन के लिए याचना प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत कर सकती है ।

याचिका की वापसी: याचिका प्रस्तुत करने वाला, न्यायालय की अनुमति से कम्पनी के समापन की अपनी याचिका को वापिस ले सकता है ।

समापन का आरम्भ : सामान्यतया कम्पनी के समापन का आरम्भ न्यायालय द्वारा समापन का आदेश देने की तिथि से न होकर उस तिथि से आरम्भ हुआ माना जाता है जिस तिथि को न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की गई थी । परन्तु यदि याचिका प्रस्तुत करने से पहले कम्पनी द्वारा स्वैच्छिक समापन का प्रस्ताव पास कर लिया है तो प्रस्ताव पास करने की तिथि से समापन आरम्भ माना जाएगा । यदि समापन आदेश एक से अधिक याचिकाओं पर दिया गया हो तो समापन का आरम्भ सबसे पहली याचिका की तिथि से माना जायेगा । (धारा 442)

याचिका प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् न्यायालय के अधिकार: धारा 442 तथा 443 के अनुसार कम्पनी के विरूद्ध समापन याचिका प्राप्त होने पर न्यायालय को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते हैं:

कम्पनी के विरूद्ध कार्यवाही रोकना: समापन याचिका प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् तथा समापन आदेश से पहले किसी भी समय, न्यायालय को कम्पनी के विरूद्ध किसी भी न्यायालय में चल रही कानूनी कार्यवाही को अपने विवेकानुसार किसी भी शर्तों पर रोकने का अधिकार है । न्यायालय को इस आशय का आवेदन कम्पनी द्वारा या उसके किसी लेनदार या अंशदाता द्वारा किया जा सकता है । जिस उच्चतम न्यायालय या किसी अन्य उच्च न्यायालय में कानूनी कार्यवाही चल रही हो, तो याचिका उसी न्यायालय में दी जानी चाहिये, जिसमें कार्यवाही चल रही है । उसके पश्चात् ही वह अन्य न्यायालयों की कार्यवाही रोकने का आदेश देगा । (धारा 442)

याचिका की सुनवाई: कम्पनी के समापन की याचिका प्राप्त होने पर न्यायालय द्वारा कम्पनी को एक अधिसूचना द्वारा एक निश्चित तिथि को उपस्थित होकर अपना पक्ष प्रस्तुत करने का आदेश दिया जायेगा । न्यायालय सभी लेनदारों तथा अंशदाताओं को सुनवाई के लिए उपस्थित होकर अपनी आपत्तियाँ, यदि कोई हो, प्रस्तुत करने के लिए एक सार्वजनिक सूचना जारी करेगा । यह सूचना सुनवाई के लिए निश्चित तिथि से कम-से-कम 14 दिन पहले जारी की जायेगी । (धारा 443)

धारा 443 के अनुसार, न्यायालय सुनवाई के बाद निम्नलिखित में कोई भी कार्य करता है:

(1) लागत-व्यय सहित या उसके बिना याचिका खारिज 7 अस्वीकार कर सकता है; या
(2) शर्त सहित या बिना शर्त के सुनवाई को स्थगित कर सकता है; या
(3) अपने विवेकानुसार अंतरिम आदेश दे सकता है; या
(4) लागत-व्यय सहित या इसके बिना, कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है; या
(5) अपने विवेकानुसार अन्य कोई उचित आदेश दे सकता है ।

11.8 सरकारी निस्तारक या सरकारी समापक (Official Liquidator)

निस्तारक वह व्यक्ति होता है जो समापन सम्बन्धी कार्यवाही को पूरा करने अर्थात् कम्पनी की सम्पत्तियों को बेचकर धन प्राप्त करने तथा उसे न्यायपूर्ण विधि से लेनदारों व अंशधारियों में वितरित करने मे न्यायालय की सहायता करता है । ध्यान देने योग्य बात यह है कि न्यायालय के आदेश के अधीन एक कम्पनी के अनिवार्य समापन में केवल 'सरकारी निस्तारक' ही निस्तारक के रूप में कार्य कर सकता है । न्यायालय को किसी गैर-सरकारी व्यक्ति को कम्पनी का निस्तारक नियुक्त करने का कोई अधिकार नहीं है । (धारा 449)

प्रत्येक उच्च न्यायालय के लिए केन्द्रीय सरकार एक अधिकारी नियुक्त करती है जिसे सरकारी निस्तारक कहते हैं जो प्रायः पूर्ण समय के लिए अधिकारी होता है परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार यह समझे कि पूरे समय का काम नहीं है तो आंशिक समय के लिए निस्तारक की नियुक्ति कर सकती है । जिला न्यायालय के साथ दिवाला सम्बन्धी मामलों से सम्बन्धित सरकारी रिसीवर, जिला न्यायालय के लिए 'सरकारी निस्तारक माना जाता है । (धारा 448)

कम्पनी के लिए समापन का आदेश प्राप्त होने के बाद सरकारी निस्तारक कम्पनी का निस्तारक हो जाता है । (धारा 449)

सामयिक निस्तारक: कम्पनी समापन के लिए याचिका प्राप्त करने के पश्चात् तथा समापन का आदेश होने से पहले, न्यायालय किसी भी समय सरकारी निस्तारक को सामयिक निस्तारक की तरह नियुक्त कर सकता है । उसके वही अधिकार होंगे जो सरकारी निस्तारक के होते हैं जब तक कि न्यायालय द्वारा आदेश न दिये जायें । समापन का आदेश दिए जाने पर सरकारी निस्तारक का सामयिक निस्तारक रूपी पद समाप्त हो जाएगा और वह कम्पनी का नियमित निस्तारक हो जायेगा । (धारा 450) यह उल्लेखनीय है कि समापन किसी भी प्रकार का हो, प्रत्येक दशा में एक ही व्यक्ति को कम्पनी का निस्तारक नियुक्त किया जा सकता है, अर्थात् भित्र-भित्र प्रकार के समापन के लिए अलग-अलग निस्तारक नियुक्त करने की आवश्यकता नहीं होती है ।

11.9 सरकारी निस्तारक के अधिकार (Rights of Official Liquidator)

सरकारी निस्तारक के अधिकारों को निम्न शीर्षकों में विभाजित किया जा सकता है:

1. न्यायालय की स्वीकृति से अधिकार ।
2. न्यायालय की स्वीकृति के बिना अधिकार ।

(1) न्यायालय की स्वीकृति के अधिकार: निस्तारक निम्नलिखित अधिकारों का प्रयोग न्यायालय की स्वीकृति से कर सकता है:

i. कम्पनी के नाम में तथा कम्पनी की ओर दीवानी या फौजदारी का दावा या अन्य वैधानिक कार्यवाही करना या दूसरों के द्वारा कम्पनी के विरूद्ध इस प्रकार की कार्यवाहियाँ किए जाने पर कम्पनी की ओर से बचाव करना ।

ii. कम्पनी के लाभकारी समापन के लिए आवश्यकतानुसार कम्पनी के व्यापार को चलाना ।

iii. कम्पनी की चल तथा अचल सम्पत्ति को व्यक्तिगत अनुबन्धों या सार्वजनिक नीलामी द्वारा बेचना तथा आवश्यकतानुसार इसका हस्तान्तरण करना ।

iv. कम्पनी की सम्पत्तियों की जमानत पर आवश्यक राशि प्राप्त करना ।

v. कम्पनी के समापन तथा उसकी सम्पत्तियों के वितरण के लिए ऐसे अन्य सभी कार्य करना जिनका करना इनके लिए आवश्यक हो ।

(2) न्यायालय की स्वीकृति के बिना अधिकार: सरकारी निस्तारक न्यायालय की स्वीकृति के बिना निम्नलिखित अधिकारों का प्रयोग कर सकता है -

i. कम्पनी' के नाम में तथा उसकी ओर से सभी कार्य करना तथा सभी प्रपत्र रसीदें व अन्य प्रलेख लिखना तथा इस कार्य के लिए कम्पनी की सार्वमुद्रा का आवश्यकतानुसार प्रयोग करना ।

ii. रजिस्ट्रार के यहां किसी शुल्क का भुगतान किए बिना कम्पनी से सम्बन्धित सभी लेखों का निरीक्षण करना ।

iii. किसी भी अंशदाता के दिवालिया होने पर उसके द्वारा कम्पनी को देय राशि को प्राप्त करने के लिए दावा करना तथा दिवालिये की सम्पत्ति से लाभांश प्राप्त करना ।

iv. कम्पनी के नाम में तथा उसकी ओर से कोई विनिमय-पत्र, हुण्डी अथवा प्रतिज्ञा-पत्र लिखना, स्वीकार करना अथवा बेचान करना ।

निस्तारक द्वारा प्रयोग किए जाने वाले उपर्युक्त अधिकार न्यायालय के नियंत्रण के अधीन होंगे और कोई भी लेनदार अथवा अंशदाता उपर्युक्त अधिकारों में से किसी अधिकार के प्रयोग अथवा प्रस्तावित प्रयोग के सम्बन्ध में न्यायालय में आवेदन कर सकता है । [धारा 457(3)]

इसके अतिरिक्त, निस्तारक को अपने अधिकारों का दुरूपयोग करने से रोकने के लिए धारा 460(6) में व्यवस्था है कि निस्तारक के किसी भी कार्य का निर्णय से पीडीत कोई भी व्यक्ति न्यायालय को अपील कर सकता है तथा न्यायालय शिकायत किए गए कार्य या निर्णय की पुष्टि कर सकता है, बदल सकता है अथवा परिस्थितियों के अनुसार कोई अन्य न्यायसंगत आदेश दे सकता है ।

11.10 निस्तारक के कर्त्तव्य (Duties of Liquidator)

निस्तारक के महत्वपूर्ण कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं :-

1. **समापन की कार्यवाही का संचालन करना-** निस्तारक का कर्त्तव्य है कि वह कम्पनी के समापन की कार्यवाही का संचालन करे तथा इस सम्बन्ध में न्यायालय द्वारा निर्दिष्ट कर्त्तव्यों का पालन करें । [धारा 451]
2. **प्रारम्भिक रिपोर्ट भेजना-** कम्पनी का समापन आदेश दिए जाने के पश्चात् कम्पनी से स्थिति-विवरण प्राप्त होते ही निस्तारक द्वारा न्यायालय को निम्नलिखित के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट दी जाएगी, यह कार्य जितनी जल्दी सम्भव हो सम्पन्न किया जाना चाहिए, परन्तु इसमें कम्पनी के समापन आदेश की तिथि के बाद 6 महीने से अधिक समय नहीं लगना चाहिए ।

(1) कम्पनी की निर्गमित, प्रार्थिक एवं चुकता पूंजी तथा सम्पत्तियों व दायित्वों की अनुमानित राशि ।

(2) यदि कम्पनी असफल हो गई है, तो असफलता के कारण ।

(3) क्या उसके विचार में कम्पनी के प्रवर्तन, निर्माण, असफलता या व्यवसाय चलाये जाने के सम्बन्ध में और आगे जांच की आवश्यकता है । [धारा 455(1)]

न्यायालय निस्तारक द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में निर्धारित 6 महीने की अवधि में वृद्धि कर सकता है ।

सरकार निस्तारक यदि उचित समझे तो कम्पनी के प्रवर्तन तथा निर्माण के सम्बन्ध में अतिरिक्त रिपोर्ट भी दे सकता है । यदि उसके विचार में कम्पनी के प्रवर्तन या निर्माण के पश्चात् किसी व्यक्ति ने कोई कपटपूर्ण कार्य किया है, तो रिपोर्ट में वह इस बात का उल्लेख कर सकता है । इस रिपोर्ट में वह उन अन्य बातों का उल्लेख भी कर सकता है जो उसके विचार में न्यायालय को बताना उचित एवं आवश्यक है । [धारा 455(2)]

धारा 455(2) के अन्तर्गत सरकारी निस्तारक अतिरिक्त रिपोर्ट या रिपोर्ट देने के लिए बाध्य नहीं है । इस सम्बन्ध में धारा 455(2) स्पष्ट रूप से कहती है कि अतिरिक्त रिपोर्ट तभी प्रस्तुत की जानी चाहिए जबकि सरकारी निस्तारक उसे प्रस्तुत करना उचित समझता है ।

यदि सरकारी निस्तारक अतिरिक्त रिपोर्ट में किसी कपट का हवाला देता है, तो न्यायालय को धारा 478 के अन्तर्गत, प्रवर्तकों तथा अफसरों की सार्वजनिक जांच सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हो जाएगा । [धारा 455(3)]

3. **कम्पनी की सम्पत्ति का संरक्षण-** सरकारी निस्तारक या सामयिक निस्तारक जैसी भी स्थिति हो, कम्पनी की समस्त सम्पत्ति तथा दावों को अपने अधिकार या नियन्त्रण में लेगा । कम्पनी की सभी सम्पत्ति कम्पनी के समापन की तिथि से न्यायालय के अधिकार में समझी जाएगी । (धारा 456)
4. **निर्देशों का पालन करना-** निस्तारक का कर्त्तव्य है कि वह लेनदारों या अंशदाताओं द्वारा साधारण सभा में पास किए प्रस्तावों तथा निरीक्षण समिति के निर्देशों को ध्यान में रखकर कार्य करें । [धारा 460(1)]

   यदि लेनदारों या अंशदाताओं द्वारा किसी साधारण सभा में दिए गए निर्देशों तथा 'निरीक्षण समिति' द्वारा दिए गए निर्देशों में परस्पर विरोध हो तो लेनदारों या अंशदाताओं द्वारा दिए गए निर्देश मान्य होते हैं ।
5. **लेनदारों तथा अंशदाताओं की सभाएं** - निस्तारक जब भी उचित समझे, कम्पनी के लेनदारों तथा अंशदाताओं की इच्छा जानने के लिए उनको सभाएं बुला सकता है परन्तु वह ऐसी सभाओं को ऐस समयों पर बुलाने के लिए बाध्य है जैसा कि लेनदारों या अंशदाताओं द्वारा पास किए गए प्रस्तावों में निर्दिष्ट हो या जब लेनदारों अथवा अंशदाताओं की कुल राशि के 1/10 के धारक लिखित रूप से आवेदन करें । [धारा 460(3)]
6. **उचित पुस्तकें रखना** - निस्तारक निर्धारित विधि के अनुसार, ऐसी पुस्तकें रखेगा जिनमें वह सभाओं की कार्यवाही का विवरण तथा अन्य ऐसे विषयों का लेखा करेगा जिन्हें वह उचित समझे । कोई भी लेनदार या अंशदाता न्यायालय के नियन्त्रण के अधीन इन पुस्तकों का स्वयं या अपने एजेझट द्वारा निरीक्षण कर सकता है । धारा (461)

11.11 निस्तारक के दायित्व (Liabilities of the Liquidator)

निस्तारक के उपरोक्त अधिकारों तथा कर्त्तव्यों के साथ-साथ उसके निम्नलिखित दायित्व भी होते हैं -

1. **दावों की तिथि निश्चित करना-** निस्तारक को समाचार-पत्रों में विज्ञापन के द्वारा वह तिथि.निश्चित करनी चाहिए जिस दिन दावों का विवरण, पुस्तकों तथा प्रलेखों से लेनदारों के नाम निश्चित करने पड़ते हैं । बाद में, उन लेनदारों के पास सूचना भेजनी पड़ती है जिन्होंने अपने दावे प्रस्तुत नहीं किए है । यदि वह ऐसा नहीं करता है तो लापरवाही के लिए उत्तरदायी होगा ।

2. **दावों का प्रमाण मांगना -** निस्तारक को प्रत्येक लेनदार को अपना दावा प्रमाणित करने के लिए कहना चाहिए. क्योंकि यदि संचालकों ने दायित्व को स्वीकार कर लिया है तो इससे उसे दावे का प्रमाण मांगने से रोका नहीं जा सकता है |
3. **लापरवाही के लिए दायित्व -** यदि निस्तारक लापरवाही से किसी ऋणी से ऋण का भुगतान करने में भूल करता है तो धारा 253 के अन्तर्गत लापरवाही के लिए दोषी होगा और व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा । यदि उसने ऐसे व्यक्ति को भुगतान कर दिया है जो उसका अधिकारी नहीं है, तो लापरवाही के लिए व्यक्तिगत रूप रो उत्तरदायी होगा ।
4. **कर्त्तव्य भंग के लिए दायित्व -** यदि निस्तारक अपने कर्त्तव्यों का पालन नहीं करता तो कर्त्तव्य भंग से उत्पन्न होने वाले परिणामों के लिए दायी होगा । यदि वह अपने आचरण से लेनदारों अथवा अंशधारियों के प्रति पक्षपात करता है तो, यदि न्यायालय उचित समझे, उसे हटा सकता है ।
5. **व्यक्तिगत दायित्व-** यदि निस्तारक न्यायालय की अनुमति के बिना धारा 457 (अ) में उल्लेखित अधिकारों का प्रयोग करता है तो वह व्यक्तिगत रूप से दायी होगा ।
6. **प्राप्त राशि को रिजर्व बैंक में जमा न करने का दायित्व-** निस्तारक को धारा 455 के अन्तर्गत कम्पनी की सभी राशियां रिजर्व बैंक के कम्पनी के निस्तारक खाते में जमा करानी चाहिए । यदि वह किसी भी राशि को अपने पास रखता है तो उसे 12 प्रतिशत वार्षिक दर से ब्याज देना पड़ेगा । यदि इस दोष के कारण कुछ खर्च किया गया हो तो उसे उन खर्चो का भुगतान भी करना पड़ेगा ।

11.12 स्वैच्छिक समापन (Voluntary Winding Up)

कम्पनी अधिनियम की धारा 484 के अनुसार, निम्न दशाओं में कम्पनी का समापन किया जा सकता है

1. **अवधि समाप्त होना या घटना का घटित होना:** यदि अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित कम्पनी की अवधि समाप्त हो जाए अथवा वह घटना घटित हो जाए जिसके घटने पर कम्पनी का समापन करना अन्तर्नियमों के अनुसार निश्चित है, तो इन दशाओं में कम्पनी साधारण सभा में एक प्रस्ताव पास करके कम्पनी का समापन कर सकती है ।
2. **विशेष प्रस्ताव पास करना:** कम्पनी किसी भी समय अपने स्वैच्छिक समापन के लिए एक विशेष प्रस्ताव पास कर सकती है । कम्पनी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि जब वह इस प्रकार का विशेष प्रस्ताव पास करे तो उन सब कारणों को जनता को बताये जिसके लिए यह प्रस्ताव पास किया गया है ।

जहाँ स्वैच्छिक समापन का प्रस्ताव पास हो जाता है, वहां इसके पास होने के 14 दिन के अन्दर सरकारी गजट तथा समाचार पत्र में इस प्रकार की सूचना देना आवश्यक है । इसका उल्लंघन करने पर कम्पनी तथा इसके प्रत्येक दोषी अफसर पर त्रुटि की अवधि में, 50 रुपए तक प्रतिदिन के हिसाब से आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है । (धारा 485)

स्वैच्छिक समापन का प्रारम्भ - स्वैच्छा से समापन उस तारीख को प्रारम्भ हुआ माना जाता है जिस तारीख को ऐसा करने के लिए प्रस्ताव पास किया जाता है । (धारा 486)

स्वैच्छिक समापन का प्रभाव (Consequence of Voluntary winding-up)

1. सवैच्छिक समापन की दशा में समापन प्रारम्भ होने की तिथि से कम्पनी अपना व्यापार करना बन्द कर देगी जब तक कि इसे चलाए रखना समापन के लिए आवश्यक न हो । किन्तु कम्पनी के समामेलित अधिकार उस समय तक चलते रहेंगे जब तक कि कम्पनी समाप्त न हो जाए । (धारा 487)
2. कम्पनी की समामेलित स्थिति तथा उसके समामेलित अधिकार कम्पनी के समाप्त होने तक बने रहेंगे । (धारा 488)
3. समापन के प्रारम्भ होने के बाद कम्पनी में अंश का कोई हस्तान्तरण निस्तारक की स्वीकृति के बिना व्यर्थ होता है । [धारा 487(2)]
4. समापन के शुरू होने के पश्चात् कम्पनी के सदस्यों की स्थिति में किया गया कोई भी परिवर्तन व्यर्थ होता है । [धारा 536(2)]

11.13 स्वैच्छिक समापन के प्रकार (Types of Voluntary Winding up)

अधिनियम के अनुसार स्वैच्छिक समापन निम्न दो प्रकार का हो सकता है-

(अ) सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन-

शोधन क्षमता की घोषणा- जब कम्पनी का स्वेच्छा से समापन करने का विचार है, तो यदि कम्पनी में दो संचालक हों तो वे दो संचालक और यदि दो से अधिक संचालक हों तो उनमें से अधिकांश संचालक कम्पनी की शोधन क्षमता की घोषणा करते हैं । यह घोषणा संचालक सभा में की जानी चाहिए ।

घोषणा में निम्नांकित बातों का लेखा होना चाहिए-

1. संचालक इस घोषणा को कम्पनी की पूरी जांच करने के पश्चात् ही कर पाते हैं ।
2. इस जांच के आधार पर उनका विश्वास है कि कम्पनी पर कोई ऋण नहीं है, तथा
3. यह अपने ऋणों का पूर्ण भुगतान घोषणा में निर्धारित अवधि के अन्दर (जो समापन प्रारम्भ होने के बाद तीन वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए) कर सकते हैं । [धारा 488 (1)]

यह घोषणा कम्पनी का समापन प्रस्ताव पास होने से पहले अधिक से अधिक 5 सप्ताह की अवधि में की जानी चाहिए तथा समापन का प्रस्ताव पास होने से पहले रजिस्ट्रार के यहां फाइल कर देनी चाहिए । इस घोषणा के साथ निम्नांकित प्रपत्र शामिल होना चाहिए।

क. **अंकेक्षक की रिपोर्ट-** गत वर्ष तैयार किए गए लाभ-हानि खाते तथा चिट्ठे की तिथि से इस घोषणा से पहले की अन्तिम तिथि तक अवधि के लिए बनाए गए लाभ-हानि खाते तथा चिट्ठे के सम्बन्ध में दी गई अंकेक्षक की रिपोर्ट ।

ख. **सम्पत्तियों व दायित्वों का विवरण-** घोषणा से पहले अन्तिम तिथि तक के सम्पत्तियों व दायित्वों का विवरण ।

(ब) लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन-

यदि किसी स्वैच्छिक समापन में 'शोधन क्षमता की घोषणा' नहीं की जाती है, तो उसे 'लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन' कहते हैं ।

समापन का यह ढंग दिवालिया कम्पनियों द्वारा अपनाया जाता है । जब कम्पनी अपने दायित्वों का पूर्णतया भुगतान करने में असमर्थ होती है अर्थात् दिवालिया होती है, और फिर भी स्वैच्छिक समापन करने की इच्छुक है, तो स्वाभाविक है कि समापन प्रक्रिया पर लेनदारों का नियंत्रण हो ताकि उनके हितों की ठीक प्रकार से रक्षा हो सके । यही कारण है कि समापन की इस प्रणाली में समापन की कार्यवाही पर लेनदारों का प्रमुख रूप से नियंत्रण रहता है ।

11.14 लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन की दशा में लागू होने वाली अवस्थाएँ

कम्पनी अधिनियम की धारा 500 से 509 के अन्तर्गत लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन के सम्बन्ध में लागू होने वाली व्यवस्थाएँ दी गई हैं, जो संक्षेप में इस प्रकार हैं-

1. **लेनदारों की सभा:** कम्पनी के समापन के सम्बन्ध में जिस दिन कम्पनी के सदस्यों की सभा बुलाई जाती है उसी दिन या उसके अगले दिन लेनदारों की भी सभा बुलायी जाती है । लेनदारों के पास भी सूचना डाक द्वारा उसी समय भेजनी चाहिये जबकि सदस्यों के पास भेजी जाती है । [धारा 500(1)]

   लेनदारों की सभा की सूचना को कम-से-कम एक बार सरकारी गजट में तथा ऐसे दो समाचार-पत्रों में छपवानी चाहिये जो उस जिले में प्रचलित हो जहां कम्पनी का रजिस्टर्ड कार्यालय है । [धारा 500(2)]
2. **सभा में पास हुए प्रस्ताव की सूचना रजिस्ट्रार को देना:** लेनदारों की सभा में पास हुए प्रस्ताव की सूचना रजिस्ट्रार के पास कम्पनी द्वारा प्रस्ताव पास किए जाने की तिथि के 10 दिन के अन्दर भेजी जानी चाहिए । यदि यह सूचना नहीं भेजी जाती है तो कम्पनी और कम्पनी के प्रत्येक अधिकारी पर, त्रुटि की अवधि में, प्रतिदिन 500 रूपये तक आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है । (धारा 501)
3. **निस्तारक की नियुक्ति:** सदस्य तथा लेनदार दोनों अपनी-अपनी सभाओं में निस्तारक की नियुक्ति करते हैं । यदि दोनों पक्षों ने भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को निस्तारक के पद के लिए मनोनीत किया है, तो लेनदारों द्वारा मनोनीत किया हुआ व्यक्ति ही निस्तारक की तरह कार्य करेगा । लेनदारों द्वारा नियुक्त किये जाने वाले निस्तारक की नियुक्ति के 7 दिन के अन्दर, कम्पनी के संचालक, सदस्य अथवा लेनदार द्वारा न्यायालय में इस बात का प्रार्थना पत्र दिया जा सकता है कि लेनदारों के निस्तारक के स्थान पर अथवा सदस्यों द्वारा नियुक्त निस्तारक या लेनदारों के निस्तारक के साथ संयुक्त रूप से सदस्यों वाला निस्तारक या सरकारी निस्तारक या अन्य कोई व्यक्ति निस्तारक के पद पर नियुक्त किया जाये । यदि लेनदार किसी भी निस्तारक को मनोनीत नहीं करते हैं तो सदस्यों द्वारा मनोनीत किया हुआ

निस्तारक ही कार्य करता है और यदि सदस्य किसी भी निस्तारक को नियुक्त नहीं करते हैं तो यदि लेनदारों का निस्तारक होगा, तो वही कार्य करेगा । (धारा 502)

4. **निरीक्षण समिति की नियुक्ति:** यदि लेनदार चाहें तो अपनी प्रथम सभा में या अन्य सभाओं में अधिक से अधिक 5 व्यक्तियों की एक निरीक्षण समिति नियुक्त कर सकते हैं । इसके बाद कम्पनी के सदस्य भी इस समिति के लिए 5 सदस्यों को मनोनीत कर सकते हैं । यदि लेनदार कम्पनी के सदस्यों द्वारा मनोनीत सदस्यों पर आपत्ति करते हैं तो ये सदस्य निरीक्षण समिति में कार्य नहीं कर सकते है जब तक कि न्यायालय लेनदार के निर्णय के विरोध में, कोई आदेश न दें । इस प्रकार का प्रार्थना पत्र देने पर न्यायालय यदि उचित समझे तो इस समिति के लिए कुछ सदस्य लेनदारों के मनोनीत सदस्यों के स्थान पर मनोनीत कर सकता है । (धारा 503)
5. **निस्तारक का पारिश्रमिक:** निस्तारक का पारिश्रमिक निरीक्षण समिति द्वारा (या यदि निरीक्षण समिति न हो, तो लेनदारों द्वारा) निर्धारण किया जाता है । यदि लेनदारों द्वारा भी पारिश्रमिक निर्धारित नहीं किया जाता है, तो इसे न्यायालय निर्धारित करता है । (धारा 504)
6. **निस्तारक की नियुक्ति पर संचालकों के अधिकारों का समाप्त हो जाना:** यदि निरीक्षण समिति या लेनदार यह निश्चित न करें कि संचालकों के अधिकार बने रहेंगे, तो निस्तारक की नियुक्ति के पश्चात् संचालक-मण्डल के अधिकार समाप्त हो जाते हैं । (धारा 505)
7. **निस्तारक के रिक्त स्थान को भरना:** यदि मृत्यु त्याग-पत्र या अन्य किसी प्रकार से निस्तारक का स्थान रिक्त होता है । (न्यायालय द्वारा नियुक्त निस्तारक को छोड़कर) तो लेनदार साधारण सभा में नये निस्तारक की नियुक्ति करते हैं । (धारा 506)
8. **अंश आदि लेना-धारा 494** की तरह यहां पर भी निस्तारक कम्पनी की सम्पत्ति के हस्तान्तरण या बिक्री के प्रतिफल में दूसरी क्रेता कम्पनी के अंश आदि ले सकते हैं, लेकिन यहां ऐसा करने के लिए न्यायालय अथवा निरीक्षण समिति की आज्ञा लेना आवश्यक है । (धारा 507)
9. **प्रत्येक वर्ष के अंत में निस्तारक द्वारा अंशधारियों तथा लेनदारों की सभाएं बुलाना:** यदि समापन सम्बन्धी कार्य एक वर्ष से अधिक चलता है, तो निस्तारक समापन आरम्भ होने के एक वर्ष पश्चात या फिर प्रत्येक वर्ष के अंत में सदस्यों तथा लेनदारों की सभा बुलाता है जिसमें अपने वर्षभर की कार्य-विधि प्रस्तुत करता है । इसका उल्लंघन करने पर प्रत्येक उल्लंघन के लिए निस्तारक पर 500 रूपये तक आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है । (धारा 508)
10. **समाप्ति को न्यायालय द्वारा व्यर्थ किया जाना:** यदि समाप्ति के आदेश के दो वर्ष के अन्दर निस्तारक अथवा कम्पनी द्वारा इसे व्यर्थ करने का आवेदन किया जाता है और न्यायालय इससे सहमत हो जाता है तो समाप्ति के आदेश को व्यर्थ घोषित किया जा सकता है । (धारा 509)

11.15 सदस्यों के स्वैच्छिक तथा लेनदारों के स्वैच्छिक समापन में अन्तर

क्र.स.	अंतर का आधार	सदस्यो का स्वैच्छिक समापन	लेनदारों का स्वैच्छिक समापन
1.	ऋण भुगतान की सामर्थ्य	यह समापन उस समय होता है जब कम्पनी ऋणों के भुगतान करने में समर्थ होती है ।	यह समापन उस समय होता है जब कम्पनी ऋणों के भुगतान करने में समर्थ नहीं होती है ।
2.	शोधन-क्षमता की घोषणा	इसमें संचालकों को कम्पनी की शोधन-क्षमता की घोषणा करनी पड़ती है।	इससे ऐसी कोई घोषणा नहीं की जाती है |
3.	सभाएँ	इसमें केवल सदस्यों की सभाएँ बुलायी जाती हैं । लेनदारों की सभाएं बुलाना आवश्यक नहीं है|	इसमे सदस्यो तथा लेनदारों दोनों की सभाएं बुलायी जाती है |
4.	निस्तारक की नियुक्ति	इसमें निस्तारक की नियुक्ति कम्पनी द्वारा साधारण सभा में की जाती है ।	इसमें निस्तारक की नियुक्ति सदस्यों तथा लेनदारों, दोनों के द्वारा होती है और यदि दोनों भिन्न-2 व्यक्तियों को नियुक्त करते हैं तो लेनदारों वाला निस्तारक कार्य करता है ।
5.	पारिश्रमिक	इसमे निस्तारक का पारिश्रमिक कम्पनी की साधारण सभा में निर्धारित किया जाता है ।	इसमे निस्तारक का पारिश्रमिक निरीक्षण समिति या लेनदारों. निर्धारित किया जाता है । यदि इस प्रकार पारिश्रमिक निर्धारित नहीं होता तो इसे न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाता है ।
6.	निरीक्षण समिति की नियुक्ति	इसमे निरीक्षण समिति की नियुक्ति नहीं की जाती है |	इसमे निरीक्षण की समिति नियुक्ति की जाती है |
7.	संचालको आदि के अधिकारी का चालू रहना|	निस्तारक की नियुक्ति के बाद संचालकों व अन्य प्रबन्धकों के अधिकारों को चालू रखने का अधिकार कम्पनी की साधारण सभा तथा निस्तारक को होता है|	इसमे यह अधिकारी निरीक्षण समिति या लेनदारों को होता है |

8.	रिक्त स्थान की पूर्ति	इसमे निस्तारक के रिक्त स्थान की पूर्ति कम्पनी की साधारण सभा द्वारा होती है |	इसमे निस्तारक के रिक्त स्थान की पूर्ति लेनदारों द्वारा की जाती है |
9.	सम्पति के प्रतिफल मे अंश स्वीकार करना	इसमे निस्तारक सम्पति की बिक्री के मूल्य के लिए कम्पनी के विशेष प्रस्ताव द्वारा अंश आदि स्वीकार कर सकता है |	इसमे अंशों को स्वीकार करने के लिए न्यायालय या निरीक्षण समिति की अनुमति लेना आवश्यक है |
10.	वर्ष के अंत मे सभा बुलाना	इसमे निस्तारक समापन की दशा मे वर्ष के अंत मे सदस्यो कि सभा बुलाता है |	इसमे समापन की दशा मे प्रत्येक वर्ष के अंत मे निस्तारक सदस्यो व लेनदारों दोनों की सभाएं बुलायी जाती है |
11.	अंतिम सभा	इसमे समापन कि कार्यवाही पूरी होने पर सदस्यो की अंतिम सभा बुलायी जाती है |	इसमे समापन की कारवाही पूरी होने पर सदस्य व लेंनदार की सभाये बुलायी जाती है |

11.16 न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन (Winding up under the Supervision of the Court)

जब किसी कम्पनी का स्वैच्छिक समापन चल रहा होता है, तो निस्तारक या कोई लेनदार या अंशदाता, न्यायालय को आवेदन करके प्रार्थना कर सकता है कि कम्पनी के समापन की आगे की कार्यवाही न्यायालय के निरीक्षण के अधीन की जाये ।

न्यायालय को ऐसा आवेदन निम्नलिखित में से किसी आधार पर किया जा सकता है:

1. निस्तारक कम्पनी की सम्पत्तियों को एकत्रित करने में लापरवाही करता है; या
2. निस्तारक पक्षपाती है; या
3. समापन सम्बन्धी व्यवस्थाओं को भली-भांति पालन नहीं किया जा रहा है, जैसे पूर्वाधिकारी लेनदारों को भुगतान में प्राथमिकता न दिया जाना; या
4. बहुसंख्यक, अल्पसंख्यक के साथ कपट कर रहे हों ।

निरीक्षण का आदेश करने या उसे अस्वीकार करने में न्यायालय का पूरा विवेकाधिकार है । न्यायालय ऐसा आदेश देने से पहले लेनदारों तथा अंशदाताओं की इच्छाओं को भी पूरी तरह से ध्यान में रखेगा । यदि न्यायालय ऐसा आदेश देता है तो कम्पनी के समापन सम्बन्धी आगे की कार्यवाही न्यायालय द्वारा निश्चित शर्तों के अधीन न्यायालय के निरीक्षण में की जायेगी । (धारा 522)

11.17 न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन आदेश के प्रभाव

निरीक्षण आदेश के निम्न प्रभाव हैं.

1. **न्यायालय का क्षेत्राधिकार:** इससे न्यायालय को वादों व वैधानिक कार्यवाहियों पर उसी सीमा तक क्षेत्राधिकार प्राप्त हो जाता है जैसे न्यायालय के प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण में समापन पर प्राप्त होता है । (धारा 523)
2. **निस्तारक की नियुक्ति:** सामान्यतया ऐच्छिक समापन में नियुक्त निस्तारक को ही कार्य करने की अनुमति दे दी जाती है लेकिन न्यायालय का अधिकार है कि उसे हटाकर उसके स्थान पर नये व्यक्ति को निस्तारक नियुक्त करे । वह एक या एक से अधिक अतिरिक्त निस्तारक नियुक्त कर सकता है । न्यायालय निस्तारक की मृत्यु या त्याग-पत्र, आदि से हुए रिक्त स्थान को भी भर सकता है । (धारा 524)
3. **निस्तारक के अधिकार:** न्यायालय द्वारा लगाये गये किन्हीं प्रतिबन्धों के अधीन निस्तारक न्यायालय की स्वीकृति या हस्तक्षेप के बिना सभी अधिकारों का उसी प्रकार प्रयोग कर सकता है जैसे कि कम्पनी का ऐच्छिक रूप से समापन किया जा रहा हो । [धारा 526(1)]
4. **न्यायालय के अधिकार:** उपरोक्त (3) की व्यवस्था को छोड़कर न्यायालय ऐसे सभी अधिकारों का प्रयोग कर सकता है जिनका वह प्रयोग करता यदि न्यायालय द्वारा कम्पनी के अनिवार्य समापन के लिए आदेश दिए जाते । [धारा 526(2)]

11.18 न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन आदेश के लाभ

न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन में अनिवार्य व ऐच्छिक, दोनों प्रकार के समापन के लाभ निहित हैं । ये लाभ निम्न प्रकार हैं :-

1. निरीक्षण आदेश के अधीन निस्तारक की स्थिति वही होती है तथा उन्हीं अधिकारों का (जहाँ प्रतिबन्धों के अधीन आवश्यक हो) प्रयोग करता है जैसा ऐच्छिक समापन का निस्तारक ।
2. कम्पनी के विरूद्ध अभियोग तथा अन्य कार्यवाहियों पर अपने आप ही रोक लग जाती है और निष्पादन व्यर्थ हो जाता है जैसा अनिवार्य समापन में होता है ।
3. निस्तारण का संचालन न्यायालय के निरीक्षण के अधीन होता है जिसमें लेनदारों व अंशदाताओं, दोनों के हितों की रक्षा होती है ।
4. न्यायालय भी उन सभी अधिकारों का प्रयोग कर सकता है जो वह अनिवार्य समापन में कर सकता है ।

11.19 कम्पनी का विघटन

न्यायालय के निरीक्षण के अधीन समापन की दशा में, कम्पनी उस तिथि से विघटित मानी जाएगी जिस तिथि को इस सम्बन्ध में न्यायालय ने आदेश जारी किया है । न्यायालय द्वारा यह आदेश तब दिया जाएगा जब कम्पनी की समापन प्रक्रिया पूरी हो गई हो और निस्तारक ने न्यायालय को कम्पनी का विघटन करने के लिए आदेश देने के लिए न्यायालय को प्रतिवेदन दे दिया है ।

11.20 सारांश

कम्पनी का समापन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कम्पनी की सम्पत्तियों से धन वसूल किया जाता है तथा उस धन से ऋणदाताओं का भुगतान किया जाता है । यदि कुछ धनराशि शेष रह जाती है तो उसके सदस्यो को उनके कम्पनी में अधिकारों के अनुपात में वितरित कर दिया जाता है अर्थात् समापन एक प्रक्रिया है । इस प्रक्रिया में सम्पत्तियों का मूल्य वसूल करके ऋणदाताओं का भुगतान किया जाता है । ऋणों के भुगतान के बाद बचे आधिक्य को कम्पनी के सदस्यों में उनके अधिकारों के अनुपात में बांट दिया जाता है । कम्पनी के समापन का तात्पर्य उसे दिवालियेपन से नहीं है । किसी कम्पनी का अच्छी स्थिति में भी समापन किया जा सकता है । समापन की प्रक्रिया के प्रारम्भ होते ही कम्पनी का विघटन या अंत नहीं हो जाता है । दूसरे शब्दों में, कम्पनी के समापन एवं विघटन में अंतर होता है ।

11.21 शब्दावली

समापन "कम्पनी का समापन वह प्रक्रिया है जिसके अनुसार कम्पनी का जीवन समाप्त किया जाता है और उसकी सम्पत्ति को उसके लेनदारों व सदस्यों के लाभार्थ प्रयुक्त किया जाता है । निस्तारक अथवा समापक के नाम से एक प्रशासक की नियुक्ति की जाती है जो कम्पनी का नियंत्रण अपने हाथ में ले लेता है, उसकी सम्पत्तियाँ बेचकर धन एकत्रित करता है, कम्पनी के ऋणों का भुगतान करता है तथा अंत में शेष आधिक्य को सदस्यों में उनके अधिकारानुसार वितरित कर देता है ।"

'समाप्ति' दोनों शब्दों का एक ही अर्थ समझा जाता है, किन्तु वैधानिक दृष्टि से इन दोनों में अंतर है । कम्पनी का वैधानिक अस्तित्व कम्पनी के समापन का आदेश देने के पश्चात् भी बना रहता है, परन्तु समाप्ति पर कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है । रजिस्ट्रार द्वारा इसका नाम 'कम्पनियों के रजिस्टर' से हटा दिया जाता है तथा इस तथ्य को सरकारी राजपत्र (गजट) में प्रकाशित कर दिया जाता है ।

कम्पनी के समापन के लिए न्यायालय को दिया गया आवेदन याचिका कहलाता है ।

'अंशदाता' शब्द से आशय ऐसे प्रत्येक व्यक्ति से है जो कम्पनी के समापन की दशा में कम्पनी की सम्पत्तियों में अंशदान करने के लिए दायी है ।

निस्तारक वह व्यक्ति होता है जो समापन सम्बन्धी कार्यवाही को पूरा करने अर्थात् कम्पनी की सम्पत्तियों को बेचकर धन प्राप्त करने तथा उसे न्यायपूर्ण विधि से लेनदारों व अंशधारियों में वितरित करने में न्यायालय की सहायता करता है । ध्यान देने योग्य बात यह है कि न्यायालय के आदेश के अधीन एक कम्पनी के अनिवार्य समापन में केवल '**सरकारी निस्तारक**' ही निस्तारक के रूप में कार्य कर सकता है । न्यायालय को किसी गैर-सरकारी व्यक्ति को कम्पनी का निस्तारक नियुक्त करने का कोई अधिकार नहीं है । (धारा 449)

प्रत्येक उच्च न्यायालय के लिए केन्द्रीय सरकार एक अधिकारी नियुक्त करती है जिसे सरकारी निस्तारक कहते हैं जो प्रायः पूर्ण समय के लिए अधिकारी होता है परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार यह समझे कि पूरे समय का काम नहीं है तो आशिक समय के लिए

निस्तारक की नियुक्ति कर सकती है । जिला न्यायालय के साथ दिवाला सम्बन्धी मामलों से सम्बन्धित सरकारी रिसीवर, जिला न्यायालय के लिए 'सरकारी निस्तारक' माना जाता है । (धारा 448)

कम्पनी के लिए समापन का आदेश प्राप्त होने के बाद सरकारी निस्तारक कम्पनी का निस्तारक हो जाता है । (धारा 449)

सामयिक निस्तारक: कम्पनी समापन के लिए याचिंकी प्राप्त करने के पश्चात् तथा समापन का आदेश होने से पहले, न्यायालय किसी भी समय सरकारी निस्तारक को सामयिक निरत्तारक की तरह नियुक्त कर सकता है । उसके वही अधिकार होंगे जो सरकारी निस्तारक के होते हैं जब तक कि न्यायालय द्वारा आदेश न दिये जायें । समापन का आदेश दिए जानें पर सरकारी निस्तारक का सामयिक निस्तारक रूपी पद समाप्त हो जायेगा और वह कम्पनी का नियमित निस्तारक हो जायेगा । (धारा 450)

प्रारम्भिक रिपोर्ट: कम्पनी का समापन आदेश दिए जाने के पश्चात् कम्पनी से स्थिति विवरण प्राप्त होते ही निस्तारक द्वारा न्यायालय को निम्नलिखित के सम्बन्ध में एक रिपोर्ट दी जाती है जिसे प्रारम्भिक रिपोर्ट कहते हैं ।

शोधन क्षमता: जब कम्पनी का स्वेच्छा से समापन करने का विचार है, तो यदि कम्पनी में दो संचालक हों तो वे दो संचालक और यदि दो से अधिक संचालक हो तो उनमें ये अधिकांश संचालक कम्पनी की 'शोधन-क्षमता की घोषणा करते हैं । यह घोषणा संचालक सभा में की जानी चाहिये ।

11.22 स्वपरख प्रश्न

1. समापन की परिभाषा दीजिए ।
2. समाप्ति क्या है?
3. न्यायालय द्वारा समापन का क्या अर्थ है?
4. स्वैच्छिक समापन क्या है?
5. निस्तारक का अर्थ बताइये ।
6. टिप्पणियाँ लिखिए -
   अ. अनिवार्य समापन ब. स्वैच्छिक समापन
   स. न्यायालय के निरीक्षक के अधीन समापन द. निस्तारक
7. उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिए जिनमें न्यायालय द्वारा अपने निरीक्षण में कम्पनी के समापन का आदेश दिया जा सकता है ।
8. समापन से आप क्या समझते हैं?
9. कम्पनी के समापन से आप क्या समझते हैं? समापन तथा समाप्ति (विघटन) में अंतर स्पष्ट कीजिये । समापन के विभिन्न प्रकारों का-संक्षेप में वर्णन कीजिये ।
10. अ. किन आधारों पर किसी कम्पनी का अनिवार्य समापन किया जा सकता है?
    ब. कम्पनी के समापन के लिए न्यायालय में याचिका प्रस्तुत करने के लिए कौन अधिकृत है?

11. किन परिस्थितियों में न्यायालय द्वारा कम्पनी के अनिवार्य समापन का आदेश दिया जा सकता है? विवेचना कीजिये ।
12. उन परिस्थितियों की चर्चा कीजिए जबकि न्यायालय कम्पनी का समापन उचित एवं न्यायसंगत समझता है ।
13. अ. किन परिरिथतियो में अदालत (न्यायालय) किसी कम्पनी का समापन कर सकती है?
    ब. कौन व्यक्ति, और कब समापन के लिए याचिका दाखिल कर सकते है?
14. न्यायालय द्वारा समापन किस क्षण आरम्भ होता है? समापन आदेश के क्या परिणाम होते हैं?
15. कम्पनी के समापन का आदेश देने के सम्बन्ध में न्यायालय के सामान्य अधिकारों का वर्णन कीजिये । न्यायालय द्वारा समापन आदेश दिये जाने के क्या परिणाम होते हैं?
16. सरकारी निस्तारक (समापक) कौन होता है' उसके अधिकारों तथा कर्त्तव्यों का विवेचन कीजिए ।
17. अनिवार्य समापन में नियुक्त निरीक्षण समिति से क्या आशय है? उसके क्या कार्य होते हैं?

11.23 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

1. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - सक्सेना एवं सक्सेना
2. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - जी. एस. सुधा
3. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - एन. डी. कपूर
4. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - अवतार सिंह
5. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - नौलखा

इकाई - 12 : कम्पनी सचिव : नियुक्ति कार्य तथा शक्तियाँ (Company Secretary: Appointment, Functions and Power)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 कम्पनी सचिव

12.3 कम्पनी सचिव की योग्यताएँ

12.4 कम्पनी सचिव के गुण

12.5 कम्पनी सचिव के कार्य

12.6 कम्पनी सचिव की स्थिति

12.7 कम्पनी सचिव की नियुक्ति

12.8 नियुक्ति की विधि

12.9 कम्पनी सचिव को पद-मुक्त करना ।

12.10 कम्पनी सचिव के अधिकार

12.11 कम्पनी सचिव के कर्त्तव्य

12.12 समामेलन से पूर्व तथा समामेलन के बाद कम्पनी सचिव के कर्त्तव्य

12.13 कम्पनी सचिव के दायित्व

12.14 कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत दायित्व

12.15 सारांश

12.16 शब्दावली

12.17 स्वपरख प्रश्न

12.18 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप समझ सकेंगे -

- सचिव की परिभाषा तथा अर्थ
- कम्पनी सचिव की परिभाषा ।
- कम्पनी सचिव की स्थिति महत्व ।
- कम्पनी सचिव की नियुक्ति की विधियाँ ।
- कम्पनी सचिव की पदमुक्ति ।
- कम्पनी सचिव के गुण, अधिकार, कर्त्तव्य एवं दायित्व ।

12.1 प्रस्तावना

'सचिव' (Secretary) शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के 'सेक्रेटेरियस' (Secretarius) शब्द से हुई है जिसका अर्थ है 'लिखित पत्रों को प्रमाणित करने वाला अधिकारी' या 'विश्वस्त अधिकारी' ।

सचिव का अर्थ: (Meaning of Secretary)

ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार - "सचिव वह व्यक्ति है जिसका कार्य दूसरों के लिए लिखना है, विशेषतः वह व्यक्ति दूसरे व्यक्ति, समाज, कार्पोरेशन या सार्वजनिक संस्था के लिए पत्र व्यवहार करने, रिकार्ड रखने तथा अन्य बहुत से कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है ।

वैब्स्टर शब्दकोष: के अनुसार सचिव शब्द के अर्थ निम्नलिखित हैं -

1. एक ऐसा व्यक्ति जिसको गुप्त बातें सौंपी जाती है, एक विश्वासी अधिकारी ।
2. एक ऐसा व्यक्ति जो किसी संस्था या व्यक्ति के लिए उसके आदेशों, पत्रों आदि का निष्पादन करने के लिए तथा सामान्यतया सम्बन्धित व्यवसाय की देखभाल के लिए नियुक्त किया जाता है।
3. राज्य का एक अधिकारी, जिसका कार्य सरकार के किसी विशेष विभाग के मामलों का निरीक्षण तथा प्रबंध करना है, जो कि प्रायः उससे सम्बन्धित मुख्य कार्यकारिणी का सदस्य भी होता है ।
4. एक ऐसा व्यक्ति जो लिखने का कार्य करता है, और विशेषतः अन्य व्यक्ति के निर्देशानुसार लिखने का कार्य करता है ।

निष्कर्ष: सचिव वह है जो सचिव का कार्य करता है, चाहे उसे किसी नाम से क्यों न पुकारा जाता हो । अतः सचिव एक ऐसा विश्वस्त अधिकारी होता है जो नियोक्ता की सभी गोपनीय बातों को गुप्त रखता हैं, उसके लिए पत्र-व्यवहार करता है, अभिलेख रखता है तथा किसी संगठन या व्यक्ति द्वारा सौंपे गए कार्यो को करता है ।

12.2 कम्पनी सचिव (Company Secretary)

कम्पनी अधिनियम, 1956 में सचिव की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है । सचिव को परिभाषित करने के लिए धारा 2(30) में केवल इतना ही कहा गया है कि, "अधिकारी के अन्तर्गत कोई भी संचालक, प्रबंध अभिकर्ता, प्रबन्धक या सचिव सम्मिलित है ।"

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 द्वारा संशोधित धारा 2 (45) के अन्तर्गत कम्पनी सचिव की परिभाषा इस प्रकार दी गई है: "कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2(1)(सी) के अर्थ के अन्तर्गत सचिव का तात्पर्य किसी ऐसे व्यक्ति से है जो इन्स्टीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी ऑफ इण्डिया का सदस्य हो, या निर्देशित योग्यताएं रखने वाला हो तथा जिसे इस अधिनियम के अन्तर्गत दिए गए सचिव के कार्य तथा कोई अन्य कार्यालय अथवा प्रशासनिक कार्य करने के लिए नियुक्त किया गया हो ।"

कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2 (1) (सी) के अनुसार, "कम्पनी सचिव का तात्पर्य एक ऐसे व्यक्ति से है जो इस अधिनियम के अधीन गठित इन्स्टीट्यूट ऑफ

कम्पनी सैक्रेटीज ऑफ इण्डिया (Institute of Company Secretaries of India) का सदस्य हो ।"

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 की धारा 33(2) के अनुसार, "प्रत्येक समामेलित हो रही नई कम्पनी के लिए समामेलन की अपनी विभिन्न अवस्थाओं को पूरा करने के संदर्भ में किसी भी कार्यवाहक कम्पनी सचिव से समामेलन की औपचारिकताओं को पूरा करने का प्रमाण-पत्र लेना अनिवार्य कर दिया गया है ।"

इस प्रकार एक नई कम्पनी को समामेलन का प्रमाण पत्र लेने के लिए समामेलन सम्बन्धी औपचारिकताओं को पूरा करने के सम्बन्ध में अंकेक्षक तथा कम्पनी सचिव दोनों का प्रमाण-पत्र देना अनिवार्य है ।

अत: स्पष्ट है कि -

1. किसी फर्म या संस्था को सचिव नियुक्त नहीं किया जा सकता । केवल एक व्यक्ति को ही सचिव नियुक्त किया जा सकता है |
2. केवल वही व्यक्ति सचिव नियुक्त किया जाता है जो निर्धारित योग्यताएं रखता है ।
3. वह व्यक्ति जिसकी नियुक्ति उन कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए की गई है जो कि कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत सचिव द्वारा किए जाते हैं ।
4. वह व्यक्ति सचिव है जिसकी नियुक्ति कार्यालय तथा प्रशासन सम्बन्धी कार्यो को करने के लिए की गई हो । सचिव के कार्य प्रबन्धकीय नहीं होते हैं ।

पूर्णकालिक व्यवसाय में संलग्न सचिव (Secretary in whole-time-practice)

संशोधित कम्पनी अधिनियम, 1988 में पूर्णकालिक व्यवसाय में संलग्न सचिव की एक नवीन अवधारणा प्रारम्भ की गई है । धारा 2 (45-ए) के अनुसार, "पूर्णकालिक व्यवसाय में संलग्न सचिव का आशय ऐसे सचिव से है जो कम्पनी सचिव अधिनियम 1980 की धारा 2(2) के अनुसार व्यवसाय करता हुआ माना जाये और जो पूर्णकालिक रोजगार में नहीं हो ।"

भारतीय कम्पनी अधिनियम एवं सचिव (Indian Companies Act and Secretaries)

1. **कम्पनियों में सचिव की नियुक्ति अनिवार्य**: जिस कम्पनी की प्रदत्त पूँजी दो करोड़ से अधिक है तो ऐसी कम्पनी में एक पूर्णकालिक सचिव का रखना अनिवार्य है । {धारा 383ए (1)}
2. **संचालक का सचिव न होना:** यदि किसी कम्पनी की प्रदत्त पूँजी निर्धारित सीमा से अधिक है और ऐसी कम्पनी में दो ही संचालक है, तो उनमें से किसी भी संचालक को सचिव नहीं बनाया जा सकता है । {383ए (ए)}
3. **व्यक्ति ही सचिव:** केवल व्यक्ति ही कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्त किया जा सकता है । किसी समामेलित संस्था को सचिव के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता है । {363 ए(2)}
4. **एक ही कम्पनी में सचिव:** यदि कोई व्यक्ति संशोधित कम्पनी अधिनियम, 1974 के लागू होने के समय दो करोड़ रुपये अथवा इससे अधिक प्रदत्त पूँजी वाली एक से अधिक कम्पनियों में सचिव के रूप में कार्य कर रहा था तो उसे छ: माह के अन्दर

यह विकल्प देना था कि वह कौनसी एक कम्पनी में सचिव रहना चाहता है, अर्थात् इस अधिनियम के प्रभावी होने के पश्चात् एक व्यक्ति दो करोड़ रुपये अथवा इससे अधिक की प्रदत्त पूँजी वाली केवल एक ही कम्पनी में सचिव का कार्य कर सकेगा । {383 ए(2)}

5. **अर्थदण्ड:** यदि कोई कम्पनी उपर्युक्त धारा 383 ए(1) की अनुपालना करने में असफल रहता है तो कम्पनी और उसके प्रत्येक दोषी अधिकारी पर त्रुटि की अवधि के लिए 50 रुपये प्रतिदिन तक का अर्थदण्ड किया जा सकेगा । यदि कम्पनी और सम्बन्धित व्यक्ति यह प्रमाण करदे कि उन्होंने इस प्रावधान या व्यवस्था का पालन करने के लिए अपने सम्पूर्ण प्रयास किये थे अथवा कम्पनी की आर्थिक स्थिति ऐसी नही थी कि वह पूर्णकालिक कम्पनी सचिव की नियुक्ति का खर्च वहन कर सकती, तो इस अर्थदण्ड से मुक्त भी किया जा सकता है । {383-1ए}

12.3 कम्पनी सचिव की योग्यताएँ (Qualification of Company Secretary)

कम्पनी सचिव (नियुक्ति एवं योग्यताएँ) नियम 1988 के अनुसार कम्पनी सचिव के रूप में उसी व्यक्ति को नियुक्त किया जा सकेगा जिसमें निम्नलिखित योग्यताएँ हैं -

(क) 50 लाख रुपये या इससे अधिक प्रदत्त पूँजी वाली कम्पनियों के लिए सचिव को इंस्टीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरीज ऑफ इण्डिया का सदस्य तथा लाइसेंस प्राप्त कर्ता होना जरुरी है ।

(ख) 50 लाख रुपये से कम प्रदत्त पूँजी वाली कम्पनियों में केवल निम्नलिखित योग्यताओं में से किसी भी एक योग्यता रखने वाले व्यक्ति को भी कम्पनी सचिव नियुक्त किया जा सकता है-

1. भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान की सदस्यता ।
2. किसी भी विश्वविद्यालय की कानून (विधि) की डिग्री ।
3. इंस्टीट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउण्टेन्ट्स ऑफ इण्डिया की सदस्यता ।
4. इंस्टीट्यूट ऑफ कॉस्ट एण्ड वर्क्स एकाउण्टेन्ट्स ऑफ इण्डिया की सदस्यता ।
5. किसी भी विश्वविद्यालय अथवा प्रबंध संस्थान अहमदाबाद अथवा प्रबंध संस्थान कलकत्ता द्वारा दी गई प्रबंध में स्नातकोत्तर डिग्री या डिप्लोमा ।
6. किसी भी विश्वविद्यालय की वाणिज्य विषय में स्नातकोत्तर डिग्री ।
7. भारतीय कानून संस्थान द्वारा प्रदत्त कम्पनी अधिनियम का डिप्लोमा ।
8. इंस्टीट्यूट ऑफ कॉमर्शियल प्रैक्टिस, दिल्ली द्वारा प्रदत्त कम्पनी सचिव का पोस्ट - डिप्लोमा । यह योग्यता 5 फरवरी, 1977 से जोड़ी गई है ।
9. सचिव तथा प्रबन्धक परिषद, कलकत्ता का सदस्य । यह योग्यता 7 मई, 1977 से जोड़ी गई है ।
10. उदयपुर विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त कम्पनी कानून तथा सचिवीय पद्धति का डिप्लोमा ।

11. **प्रदत्त पूँजी में वृद्धि की दशा में योग्यताएँ** : यदि किसी कम्पनी की प्रदत्त पूंजी 50 लाख रुपये या इससे अधिक हो जाती है तो उसे ऐसी वृद्धि के एक वर्ष में भारतीय सचिव संस्थान के सदस्य को पूर्णकालिक सचिव के रूप में नियुक्त करना होगा ।
12. **विद्यमान सचिव:** इन नियमों के लागू होने के समय कार्यरत सचिवों की योग्यता निर्धारित योग्यता मान ली गई है, बशर्ते वे उसी कम्पनी में सचिव पद पर कार्य करते रहें ।
13. **धारा 25 के अधीन लाइसेंस प्राप्त कम्पनियाँ:** उपर्युक्त योग्यतायें उन सीमित दायित्व वाली कम्पनियों पर लागू नहीं होगी जिनका निर्माण कला, विज्ञान, धार्मिक तथा दान आदि उद्देश्यों के लिए किया गया है तथा जो सदस्यों का लाभांश भुगतान पर प्रतिबन्ध लगाती है ।
14. **कम्पनी सचिव अधिनियम के अन्तर्गत सदस्यता एवं योग्यताएँ:** कम्पनी सचिवों के लिए 10 दिसम्बर, 1980 से एक नया अधिनियम कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 लागू हो गया है । इस अधिनियम में सचिवों के विषय में समस्त व्यवस्था है । इस अधिनियम में 39 धाराएँ हैं इस अधिनियम के अन्तर्गत (Institute of Company Secretaries) की एक वैधानिक संस्था के रूप में स्थापना हो गई है । इस संस्था के सदस्य जो कि प्रेक्टिस करते हैं, सचिव कहलायेंगे । इंस्टीट्यूट की परीक्षा पास किये व्यक्ति ही इस संस्थान के सदस्य हो सकेंगे ।

नये अधिनियम के अन्तर्गत सचिव की निम्नलिखित अयोग्यताएँ होंगी -

21 वर्ष से कम उम्र का होना ।

1. अस्वस्थ मस्तिष्क का होना ।
2. दिवालिया होना ।
3. नैतिक अपराध के लिए न्यायालय से दण्डित होना ।
4. पेशे में दुराचरण के लिए दण्डित होना ।

12.4 कम्पनी सचिव के गुण (Qualities of Company Secretary)

कम्पनी सचिव कम्पनी का एक महत्वपूर्ण अधिकारी होता है । वह संस्था का प्रतिबिम्ब माना जाता है । **विधि विशेषज्ञ रमैया** ने कम्पनी सचिव के गुणों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि -एक अच्छा सचिव कम्पनी के व्यवसाय के सम्बन्ध में विशिष्ट ज्ञान रखता है । उसे इतना कर्मठ और बुद्धिमान होना चाहिए कि वह व्यवसाय के सम्बन्ध में सभी तरह की जानकारी प्राप्त कर सके तथा कम्पनी एवं इसके व्यवसाय के सभी पहलुओं को प्रभावित करने वाले कानूनों एवं नियमनों से अवगत रह सके ।"

(1) **पेशेवर गुण:** (Professional Qualities) प्रत्येक कम्पनी सचिव में पेशेवर गुण पाये जाने आवश्यक हैं । ये गुण कम्पनी सचिव को अपने कार्यो को कुशलतापूर्वक पूरा करने में योगदान देते हैं । पेशेवर गुणों में हम निम्नलिखित गुणों को सम्मिलित कर सकते हैं:

(i) **कम्पनी अधिनियम द्वारा निर्धारित योग्यता:** अब अधिनियम में यह प्रावधान कर दिया गया है कि प्रत्येक कम्पनी एक निर्धारित योग्यता रखने वाले व्यक्ति

को ही कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्त करेगी । इस प्रावधान के अनुसार यदि किसी कम्पनी की प्रदत्त पूँजी दो करोड़ रु. या इससे अधिक है तो वह कम्पनी केवल ऐसे व्यक्ति को ही अपने सचिव के रूप में नियुक्त कर सकती है जो 'इंस्टीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरीज ऑफ इण्डिया" का सदस्य है । दूसरी ओर जिन कम्पनियों में प्रदत्त अंश पूँजी दो करोड़ रुपये से कम है वे भी ऐसे व्यक्तियों को ही कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्त कर सकती है जो एक निर्धारित योग्यता रखते हैं ।

(ii) **कम्पनी अधिनियम का पूर्ण ज्ञान:** कम्पनी सचिव का लगभग सम्पूर्ण कार्य कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं पर निर्भर करता है । अत: उसे कम्पनी अधिनियम का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है । उसे कम्पनी अधिनियम से सम्बन्धित नवीनतम निर्णित मामलों की भी जानकारी रखनी चाहिए जिससे उसे कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं की व्याख्या करने में सहायता मिल सके ।

(iii) **सम्बन्धित व्यापारिक सन्नियमों का ज्ञान:** अपनी कम्पनी का कुशलतापूर्वक संचालन करने के लिए अन्य सम्बन्धित व्यापारिक सन्नियमों का भी ज्ञान रखना चाहिये । उसे अनुबन्ध अधिनियम, वस्तु विक्रय अधिनियम, भारतीय मुद्रांक कर अधिनियम, आयकर अधिनियम, विदेशी विनिमय अधिनियम, पेटेण्ट तथा कॉपीराइट अधिनियम, ट्रेड मार्क अधिनियम आदि सभी की सामान्य जानकारी अवश्य होनी चाहिए ।

(iv) **सचिवीय प्रक्रिया की जानकारी:** कम्पनी सचिव को अधिनियम की व्यवस्थाओं के अनुसार समस्त कार्य करना पड़ता है । अत: उसे कानूनी व्यवस्थाओं के अनुरूप कार्य करने की प्रक्रिया की जानकारी भी होनी चाहिये । उसे कानून की व्यवस्थाओं के अनुसार, सभा बुलवाने, सभा का वृतान्त लिखने, सभा का संचालन करने, कम्पनी का सामान्य कारोबार चलाने, रजिस्ट्रार को सूचनाएँ, प्रलेख तथा रिपोर्ट प्रस्तुत करने, अंशों का आवंटन करने, याचनाएँ करने, अंशों का अपहरण करने एवं उनको पुनर्निर्गमित करने एवं कम्पनी के अन्य अनेक कार्यो को करने से सम्बन्धित सचिवीय प्रक्रिया की जानकारी भी होनी चाहिये ।

(v) **कम्पनी के सम्पूर्ण व्यवसाय की जानकारी:** कम्पनी सचिव को कम्पनी द्वारा किये जाने वाले सम्पूर्ण व्यवसाय की जानकारी होनी चाहिये । व्यवसाय की जटिलताओं की सम्पूर्ण जानकारी होने पर वह संचालक मण्डल को सुदृढ़ सलाह प्रदान कर सकेगा तथा व्यावसायिक सफलता में योगदान कर सकेगा ।

(vi) **व्यावसायिक प्रशासन में कुशलता:** कम्पनी सचिव को व्यवसाय संचालन, प्रशासन तथा नीतियों के क्रियान्वयन में बहुत ही दक्ष होना चाहिये । उसमें प्रबन्ध एवं प्रशासन के सिद्धान्तों को व्यवहार में लागू करने की योग्यता होनी चाहिये । उसे कम्पनी में नियोजन, संगठन, समन्वय, नियंत्रण आदि कार्यो को करने में दक्ष होना चाहिये ।

(vii) **कार्यालय प्रक्रिया की जानकारी:** कम्पनी सचिव कम्पनी के मुख्य कार्यालय का प्रमुख होता है । इसके अतिरिक्त सचिवीय कार्य मूलत: कार्यालय कार्यो की श्रेणी

में ही आते हैं । अत: प्रत्येक सचिव को कार्यालय कार्यो की सम्पूर्ण प्रक्रिया की जानकारी होनी चाहिए । उसे फाइलिंग, अनुक्रमणिका, प्रतिलिपिकरण जैसे कार्यालय कार्यो की भी जानकारी होनी चाहिए ।

(viii) **लेखाकर्म. सांख्यिकी ज्ञान:** प्रत्येक सचिव को लेखाकर्म एवं सांख्यिकी का भी ज्ञान होना चाहिए । इन विषयों की जानकारी होने पर वह कम्पनी की वित्तीय स्थिति का भली प्रकार अध्ययन कर सकता है तथा विभिन्न प्रकार के अनुपातों, माध्यों तथा अन्य आकड़ों के आधार पर विभिन्न विभागों, संस्थाओं के बीच तुलना करके कुछ आवश्यक निष्कर्ष निकाल सकता है ।

(ix) **बैंकिंग तथा वित्तीय मामलों की जानकारी:** प्रत्येक कम्पनी सचिव को बैंकिंग तथा वित्तीय मामले की पूर्ण जानकारी होना आवश्यक है । बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ऋणों, दी जाने वाली विभिन्न सेवाओं तथा बैंकों के दिन-प्रतिदिन के कार्यो के नियमों की उसे पूर्ण जानकारी होनी चाहिए । उसे वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदान किये जाने वाले ऋणों के नवीनतम नियमों, सीमाओं तथा शर्तों की भी जानकारी होनी चाहिये ।

2. व्यक्तिगत गुण (Personal Qualities) -

एक सचिव में कुछ व्यक्तिगत गुण भी होने चाहिए, जो निम्नानुसार हैं:

(i) **प्रभावी व्यक्तित्व:** सचिव का व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिये । वह दिखने में अच्छा लगना चाहिये । इसके अतिरिक्त सचिव को हंसमुख व प्रसन्नचित्त भी होना चाहिये । उसका स्वास्थ्य भी अच्छा होना चाहिए । "अच्छा स्वास्थ्य ही व्यक्तित्व के निर्माण का सबसे बड़ा तत्व है । अच्छा स्वास्थ्य व्यक्ति को परिश्रमी तथा स्फूर्तिवान बनाता है ।

(ii) **उत्तरदायित्व की भावना:** कम्पनी सचिव का पद एक महत्वपूर्ण पद है जिस पर कार्य करने वाले व्यक्ति को अनेक महत्वपूर्ण, जोखिम युक्त तथा गोपनीय कार्य करने पड़ते हैं । अत: कम्पनी सचिव में इस पद के उत्तरदायित्वों को निभाने एवं गोपनीयता बनाये रखने की क्षमता होनी चाहिये ।

(iii) **कल्पना शक्ति:** कल्पना शक्ति एक महत्वपूर्ण गुण है जो प्रत्येक कम्पनी सचिव में पाया जाना चाहिए । कल्पना शक्ति के द्वारा ही वह किसी भी समस्या के समाधान के लिए विभिन्न विकल्प ढूँढ निकालता है तथा सही निर्णय कर लेता है जो व्यक्ति कल्पना एवं वास्तविकता में जितना अधिक समन्वय स्थापित कर सकेगा, उतना ही अधिक सफल हो सकेगा ।

(iv) **तीव्र स्मरण शक्ति:** कम्पनी सचिव को अनेक कार्य यथासमय पूरे करने पड़ते हैं । ऐसी दशा में, प्रत्येक कार्य को समय पर करना उसके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है । वह ऐसा तभी कर सकता है जबकि उसकी स्मरण शक्ति उसका साथ दे ।

(v) **दूरदर्शिता:** कम्पनी सचिव को दूरदर्शी होना चाहिये । उसमें भविष्य में आने वाली परिस्थितियों का पहले से ही अनुमान लगाने की क्षमता होनी चाहिए । भावी घटनाओं के परिणामों को मापने या नापने की भी उसमें पर्याप्त क्षमता होनी चाहिये ।

(vi) **प्रखर बुद्धि:** कम्पनी सचिव प्रखर बुद्धि का व्यक्ति होना चाहिये । उसे प्रतिदिन नई - नई समस्याओं को हल करना पड़ता है तथा अनेक व्यक्तियों के साथ व्यवहार करना पडता है । प्रखर बुद्धि के बल पर ही वह अनेक समस्याओं का तत्काल हल निकाल सकेगा तथा व्यवसाय के कुशलतापूर्वक संचालन में योगदान दे सकेगा ।

(vii) **परिपक्वता:** कम्पनी सचिव परिपक्व बुद्धि का व्यक्ति होना चाहिये । उसमें उत्तरदायित्वों को समझने एवं निभाने की क्षमता होनी चाहिये । उसमें अपनी आलोचनाओं को सुनकर भी आलोचकों की प्रशंसा करने की क्षमता होनी चाहिये । उसमें विपरीत परिस्थितियों में भी मानसिक दृष्टि से पूर्णत: संतुलित रहकर बातचीत करने की क्षमता होनी चाहिए ।

12.5 कम्पनी सचिव के कार्य (Functions of Company Secretary)

सचिव के कार्यो को निम्नलिखित दो भागों में विभाजित किया जा सकता है -

क. सचिवीय कार्य (Secretarial Functions)

ख. प्रबन्धकीय कार्य (Managerial Functions)

(क) **सचिवीय कार्य** (Secretarial Functions)

सचिवीय कार्यो को निम्नलिखित दो भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. **समामेलन से पूर्व सचिवीय कार्य:** कम्पनी के समामेलन से पहले प्रवर्तक को अनेक कार्य करने पड़ते हैं । पार्षद सीमानियम, पार्षद अन्तर्नियम आदि अनेक प्रलेख कम्पनी के रजिस्ट्रार के यहाँ भेजने पड़ते हैं । अत: प्रारम्भ में अनाधिकृत रूप से वह सचिव के रूप में कार्य करता है ।
2. **समामेलन के बाद सचिवीय कार्य:** कम्पनी समामेलन के बाद भी सचिव को अनेक कार्य सचिवीय स्वभाव के करने पड़ते हैं । वास्तव में सचिव का कार्य कम्पनी के समामेलन के बाद ही प्रारम्भ होता है ।

(ख) प्रबन्धकीय कार्य (Managerial Functions)

कम्पनी प्रबन्ध का व्यवसायीकरण हो गया है । इसका मुख्य कार्य (1) योजना बनाना, (2) संगठन करना, (3) समन्वय करना, (4) प्रेरणा देना, तथा (5) नियंत्रण करना है । कम्पनी प्रबंध कम्पनी में अनेक महत्वपूर्ण कार्य करता है । इन कार्यो को पूरा करने में कम्पनी प्रबन्ध सचिव की सहायता लेता है । इसलिए कम्पनी सचिव को 'प्रबन्ध अधिकारी' भी कहा जाता है । एक सचिव प्रबन्धकीय कार्यो में निम्न प्रकार सहायता करता है ।

1. **सचिव द्वारा नियोजन सम्बन्धी कार्य :** नियोजन सम्बन्धी कार्य प्रबन्धक द्वारा किया जाता है| सचिव योजना बनाने में बहुमूल्य अनुभव तथा सूचना देकर प्रबन्ध को सहायता प्रदान करता है।
2. **सचिव द्वारा संगठन सम्बन्धी कार्य:** 'प्रबन्ध' कम्पनी के मुख्य गौण उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए संगठन का सर्वोत्तम स्वरूप ढूँढता है, इस कार्य में सचिव प्रबन्ध को अपने बहुमूल्य सुझाव देता है ।

3. **सचिव द्वारा समन्वय सम्बन्धी कार्य:** सभी विभागों में सहयोग तथा एकता पैदा करना और कम्पनी के मुख्य उद्देश्य के अनुरूप कम्पनी के कार्यो में समन्वय स्थापित करना प्रबन्ध का कार्य है । सचिव इस कार्य में प्रबन्ध की सहायता करता है ।
4. **सचिव द्वारा प्रेरणात्मक कार्य:** प्रत्येक विभाग का एक अध्यक्ष होता है । सचिव सभी विभागों का सर्वेसर्वा होता है । वह अपने अधीनस्थ सभी विभागाध्यक्षों को कार्य लेने में सहायता करता है| सचिव हर विभाग की प्रेरणात्मक योजना बनाने और उसे क्रियान्वित करने में काफी सहायता करता है ।
5. **सचिव द्वारा नियंत्रण कार्य:** प्रबन्ध को सभी विभागों की क्रियाओं पर नियंत्रण करने के लिए अनेक तकनीकों का सहारा लेना पड़ता है । प्रबन्ध सचिव कार्यालय' के माध्यम से ही सभी विभागों के कार्यो पर नियंत्रण करने में सफल हो सकता है ।

12.6 कम्पनी सचिव की स्थिति (Position of a Company Secretary)

कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी सचिव की स्थिति को कहीं भी स्पष्ट नहीं किया गया है । किन्तु समय-समय पर विभिन्न न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के आधार पर कम्पनी सचिव की स्थिति को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है -

(1) वैधानिक स्थिति, तथा
(2) वास्तविक स्थिति

(1) **कम्पनी सचिव की वैधानिक स्थिति:** विभिन्न न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के आधार पर एक सचिव की वैधानिक स्थिति निम्न प्रकार से है -

(i) **सेवक के रूप में:** सचिव कम्पनी का सेवक होता है और कम्पनी के सेवक के रूप में ही कार्य करता है । कम्पनी सचिव की सेवक के रूप में स्थिति के बारे में **लार्ड ऐशर ने बैरीनेट होरसेज एण्ड कम्पनी लि० बनाम साउथ ट्राम्बे कम्पनी** के मामले में 1887 में निम्न विचार व्यक्त किया है:-

"एक सचिव केवल एक नौकर मात्र है, उसकी स्थिति यह है कि उसे वही करना होता है जो उसे कहा जाता है और कोई भी व्यक्ति यह कल्पना नहीं कर सकता है कि उसे किरन कार्य के लिये प्रतिनिधित्व करने का अधिकार है |"

उपरोक्त निर्णय के अनुसार अन्य कर्मचारियों की तरह सचिव भी कम्पनी का एक कर्मचारी मात्र है । अन्य कर्मचारियों की भांति सचिव को भी संचालक मण्डल द्वारा नियुक्त किया जाता है और संचालक मण्डल के सभी आदेशों का पालन करना उसका कर्त्तव्य है । बिना अधिकार के सचिव अपने किसी कार्य के लिये कम्पनी को बाध्य नहीं कर सकता । वह अपने अधिकार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संचालक मण्डल रो प्राप्त करता है । अत: स्पष्ट है कि सचिव संचालकों के आदेशानुसार कार्य करने वाला सेवक मात्र है ।

(ii) **प्रतिनिधि के रूप में:** सचिव, कम्पनी का प्रतिनिधि भी होता है । जिस प्रकार एक नियोक्ता अपने प्रतिनिधि के कार्यो के लिये उत्तरदायी होता है, उसी प्रकार कम्पनी भी

सचिव के उन सभी कार्यो के लिए उत्तरदायी होती है जो कि सचिव द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत किये जाते हैं । इस सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण है कि सचिव को संचालकों से स्पष्ट अधिकार प्राप्त होने चाहिये । अन्यथा कम्पनी सचिव द्वारा किये गये कार्यो के लिए वह उत्तरदायी नहीं होगी ।

(iii) **अधिकारी के रूप में :** भारतीय कम्पनी अधिनियम की धारा 2(30) के अन्तर्गत सचिव को एक अधिकारी के रूप में माना गया है । प्रतिष्ठा की दृष्टि से कम्पनी प्रशासनिक ढांचे में सचिव का पद प्रबन्ध संचालक या महाप्रबन्धक के बाद ही आता है । उसके अधिशासन में अंश विभाग, पत्र-व्यवहार विभाग, नत्थी तथा हिसाब विभाग, लेखा विभाग तथा कर्मचारी की नियुक्ति तथा उन्नति के सम्बन्ध में विभाग आदि सम्मिलित किये जाते हैं । कम्पनी अधिनियम के अनुसार सचिव को अधिकारी के रूप में अनेक वैधानिक दायित्वों का पालन करना होता है । इनकी अवहेलना करने पर वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है तथा दण्ड का भागी होता है । इस प्रकार सचिव की स्थिति कम्पनी में एक अधिकारी के रूप में भी होती है ।

(2) **सचिव की वास्तविक स्थिति:** कम्पनी सचिव की वास्तविक स्थिति का निम्न प्रकार से किया जा सकता है -

(i) **सचिव संचालकों के प्रवक्ता के रूप में :** सचिव को संचालकों का प्रवक्ता कहा जाता है । इसका आशय है कि संचालकों को जो भी कार्य करना होता है, वह सब सचिव के माध्यम से किया जाता है । सभाओं में सचिव ही सभाओं की कार्यवाही लिखता है तथा पास किए गए प्रस्तावों को वही क्रियान्वित करता है, लेकिन वह अपनी स्वयं की इच्छा से कोई कार्य नहीं कर सकता । इसी कारण सचिव को संचालकों के प्रवक्ता के रूप में माना जाता है ।

(ii) **सचिव संचालकों के परामर्श-दाता के रूप में :** विधान की दृष्टि में सचिव एक सेवक मात्र ही होता है, परन्तु वास्तविकता यह है कि एक सचिव सेवक होने के साथ-साथ संचालकों का परामर्शदाता भी होता है ।

(iii) **सचिव कम्पनी के सम्पर्क अधिकारी के रूप में :** सचिव कम्पनी का सम्पर्क अधिकारी भी होता है । वह संचालक, कर्मचारियों तथा कम्पनी के बीच एक मध्यस्थ का कार्य करता है । सचिव संचालको के निर्णयों को कर्मचारियों तक पहुँचाता है तथा कर्मचारियों की प्रतिक्रियाओं को संचालकों तक पहुँचाता है । अत: सचिव कम्पनी में सम्पर्क अधिकारी की भूमिका को भी निभाता है ।

(iv) **सचिव कम्पनी का आँख, कान व हाथ:** सचिव की स्थिति के सम्बन्ध में एक विद्वान का यह कथन है कि "संचालक कम्पनी का मस्तिष्क होता है. जबकि सचिव कम्पनी की आँख, कान व हाथ । " इस कथन में संचालकों को कम्पनी का मस्तिष्क तथा सचिव को उसके आँख, कान व हाथ के रूप में व्यक्त किया गया है । संचालक कम्पनी के सुसंचालन के लिए नीतियों का निर्धारण करते हैं । इसलिए इन्हें कम्पनी के मस्तिष्क की संज्ञा दी गयी है । संचालकों द्वारा निर्धारित नीतियों को सचिव क्रियान्वित करता है इसलिए उसे कम्पनी का हाथ कहा जाता है । सचिव कम्पनी के सम्पर्क अधिकारी के रूप में कार्य करता है जो कुछ वह देखता एवं

सुनता है उन्हें अपने विचारों सहित संचालकों तक पहुँचाता है । अत: सचिव को कम्पनी के आँख, कान व हाथ के रूप में व्यक्त किया जाता है, जो कुछ वह देखता एवं सुनता है उन्हें अपने विचारों सहित संचालकों तक पहुंचाता है । अत: सचिव को कम्पनी के ऑख, कान व हाथ के रूप में व्यक्त किया जाता है ।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि सचिव अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है । सचिव की कुशलता, कार्यक्षमता, योग्यता एवं नैतिकता पर कम्पनी की सफलता पूर्ण रूप से निर्भर करती है । सचिव की महत्वपूर्ण भूमिका तथा योगदान के कारण ही यह कहा जाता है, "सचिव का कम्पनी में वही स्थान होता है जो साइकिल के पहिये में धुरी का होता है ।

12.7 कम्पनी सचिव की नियुक्ति (Appointment of a Company Secretary)

प्रर्वतकों, अन्तर्नियमों अथवा संचालकों द्वारा कम्पनी सचिव की नियुक्ति की जा सकती है ।

1. **प्रवर्तकों द्वारा सचिव की नियुक्ति:** यदि सचिव की नियुक्ति कम्पनी के निर्माण से पहले होती है तो वह नियुक्ति प्रवर्तकों द्वारा की जाती है । ऐसी स्थिति में उसे चाहिए कि कम्पनी का समामेलन हो जाने के पश्चात् संचालकों की प्रथम सभा में ही अपनी नियुक्ति को पक्का करा लें और एक लिखित आदेश प्राप्त कर लें । यदि संचालक 'प्रथम सचिव' को उसके पद से अलग कर देते हैं तो वह कम्पनी पर दावा नहीं कर सकता है ।
2. **अन्तर्नियमों के अधीन सचिव की नियुक्ति:** यदि किसी व्यक्ति का नाम अन्तर्नियमों में सचिव बनने के लिए लिखा हो तो उसे संचालकों की सभा में अपनी नियुक्ति के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पास करवा लेना चाहिये तथा एक लिखित प्रसंविदा (अनुबंध) भी कम्पनी के साथ कर लेना चाहिये ।
3. **संचालकों द्वारा सचिव की नियुक्ति:** तालिका 'अ' के 82 वें नियम के अनुसार, कम्पनी के संचालक मण्डल द्वारा इस अधिनियम की व्यवस्थाओं के अधीन सचिव की नियुक्ति की जा सकती है । वे ही सचिव का कार्यकाल तथा पारिश्रमिक निर्धारित करते हैं । संचालकों द्वारा ही सचिव को उसके पद से अलग किया जा सकता है ।

12.8 नियुक्ति की विधि (Procedure of Appointment)

कम्पनी सचिव की नियुक्ति करने के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम में निम्नलिखित प्रावधान है-

1. **अनिवार्य नियुक्ति धारा 383 (अ):** प्रत्येक ऐसी कम्पनी में, जिसकी चुकता अंश-पूँजी दो करोड़ रुपये या इससे अधिक है, एक योग्यता प्राप्त पूरे समय का सचिव नियुक्त करना अनिवार्य है, यदि ऐसी कम्पनी में केवल दो ही संचालक हैं तो उनमें से कोई भी सचिव के पद पर कार्य नहीं कर सकता । अन्य कम्पनियों में, जिनकी चुकता अंश पूँजी दो करोड़ रुपये से कम है, यह संचालक-मण्डल की निर्भर है कि सचिव की नियुक्ति करे । परन्तु चुकता पूंजी दो करोड़ से कम होने वाली कम्पनी आशिक अवधि के लिए सचिव नियुक्त कर सकती है ।

2. **नियुक्ति का प्रस्ताव धारा 297:** यदि सचिव की नियुक्ति प्रवर्तकों अथवा अर्न्तनियमों द्वारा की गई है तो उसकी नियुक्ति को पक्की कराने के लिए संचालकों को अपनी प्रथम सभा में एक प्रस्ताव पास करना चाहिए । इस प्रस्ताव में सचिव की नियुक्ति की शर्तें कार्य की प्रकृति तथा सचिव को दिए जाने वाले पारिश्रमिक का उल्लेख होता है ।
3. **हित को प्रकट करना धारा 299 तथा 300 :** यदि सचिव की नियुक्ति करने में किसी संचालक का अपना निजी हित हो तो उसे इनको प्रकट करना अनिवार्य है । साथ ही सचिव को सम्बन्धित प्रस्ताव पर विचार-विमर्श एवं मतदान में हिस्सा नहीं लेना चाहिये ।
4. **रजिस्टर में प्रविष्टि धारा 303** : सचिव की नियुक्ति हो जाने पर उससे सम्बन्धित सभी तथ्य कम्पनी द्वारा इस उद्देश्य के लिए बनाए गए रजिस्टर में लिखे जाने चाहिए ।
5. **रजिस्ट्रार को सूचना धारा 303:** सचिव की नियुक्ति हो जाने पर कम्पनी द्वारा नियुक्ति की सूचना कम्पनी रजिस्ट्रार की नियुक्ति के 30 दिनों के अन्दर-अन्दर भेज देनी चाहिये । इसके लिए कम्पनी निर्धारित फार्म नं. 32 भरकर कम्पनी रजिस्ट्रार के पास भेजती है जिसमें सचिव की नियुक्ति से सम्बन्धित सभी आवश्यक तथ्य लिखे जाते हैं ।
6. **संचालक सचिव के रूप में :** यदि कम्पनी के किसी संचालक या संचालक के रिश्तेदार को कम्पनी में सचिव नियुक्त किया जाता है तो इस प्रकार की नियुक्ति के सम्बन्ध में कम्पनी की साधारण सभा में एक विशेष प्रस्ताव पास करना आवश्यक हो जाता है ।

7. सचिव बनने की अयोग्यताएँ:

- **धारा 383 (अ) के अनुसार:** किसी फर्म या संस्था को सचिव के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता । केवल एक व्यक्ति को ही सचिव नियुक्त किया जा सकता है ।
- **धारा 2 (45) के अनुसार:** भारत सरकार द्वारा निर्धारित योग्यता न रखने वाले व्यक्ति को सचिव नियुक्त नहीं किया जा सकता ।
- **धारा 383 (अ) के अनुसार:** ऐसी कम्पनी जिसके केवल दो ही संचालक हो, उनमें से कोई भी सचिव के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता है ।
- **धारा 383 (अ) के अनुसार:** 50 लाख रूपये या इससे अधिक चुकता अंश-पूँजी वाली प्रत्येक कम्पनी का सचिव किसी अन्य कम्पनी में सचिव के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता है ।
- **धारा 226 (3) के अनुसार:** कम्पनी का अंकेक्षक कम्पनी के सचिव के पद पर कार्य नहीं कर सकता है ।

12.9 कम्पनी सचिव को पद-मुक्त करना: (How Can a Company Secretary be dismissed)

सचिव को उसके पद से हटाने के सम्बन्ध में निम्न व्यवस्थाएँ हैं -

1. यदि सचिव की नियुक्ति एक **निश्चित अवधि** के लिए की गई है तो उसे इस अवधि के समाप्त होने से पहले पद-मुक्त नहीं किया जा सकता है । परन्तु सचिव के द्वारा कर्त्तव्य-भंग, लापरवाही, बेईमानी एवं अनुबंध तोड़ने पर संचालकों द्वारा उसे नियुक्ति की अवधि समाप्त होने से पहले ही सचिव पद से हटाया जा सकता है ।

2. एक सचिव को उसकी नियुक्ति के प्रसंविदे की शर्तों के अनुसार **एक नोटिस देकर उसे पद से अलग किया जा सकता है** । यदि नियुक्ति के प्रसंविदे में इस प्रकार के नोटिस की कोई भी शर्त न हो तो एक उचित नोटिस देकर उसे पद-मुक्त किया जा सकता है । यदि सचिव कोई गुप्त लाभ कमाता है तो उसकी सेवाएं बिना किसी नोटिस के ही समाप्त की जा सकती है ।
3. **कम्पनी का समापन** हो जाने पर सभी कर्मचारियों की भांति सचिव का पद भी समाप्त हो जाता है । परन्तु यदि सचिव एक निर्धारित अवधि के लिए नियुक्त किया गया है और कम्पनी के समापन के समय तक यह अवधि पूरी नहीं हुई है तो वह अनुबंध भंग के लिए क्षतिपूर्ति पाने का अधिकारी है ।

12.10 कम्पनी सचिव के अधिकार (Powers and Rights of the Company Secretary)

कम्पनी सचिव को अपने कर्त्तव्यों को निष्पादित करने के लिए कुछ अधिकार प्राप्त होते है । यद्यपि कम्पनी अधिनियम में सचिव के अधिकारों का उल्लेख नहीं किया गया है परन्तु फिर भी उसे वही अधिकार मिले रहते हैं जो उसके तथा कम्पनी के मध्य हुई सेवा शर्तों तथा निदेशक मण्डल द्वारा प्रदान किये जाते हैं जो कि निम्नलिखित हैं-

1. **विभागों का निरीक्षण करने का अधिकार:** सचिव कम्पनी के सचिवीय कार्यालय का शीर्ष अधिकारी होता है इसलिए उसे अपने अधीन समरत्त विभागों का निरीक्षण करने, नियंत्रण करने और आदेश देने का अधिकार होता है । कार्यालय के दैनिक कार्यो से सम्बन्धित विभिन्न योजनाओं के बनाने तथा आवश्यकतानुसार उनमें परिवर्तन करने का उसे पूर्ण अधिकार होता है ।
2. **वेतन लेने का पूर्वाधिकार:** सचिव कम्पनी का सेवक होता है इसलिए सेवक होने के नाते वह कम्पनी के समापन की दशा में वेतन के लिए पूर्वाधिकार लेनदारों की स्थिति में रखे जाने का अधिकारी है । इस सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण है कि यह अधिकार केवल पूर्णकालीन सचिव को ही प्राप्त होता है ।
3. **प्रपत्रों एवं कार्यवाहियों पर हस्ताक्षर करने का अधिकार:** सचिव कम्पनी का एक प्रधान अधिकारी होता है इस नाते उसे ऐसे प्रपत्रों पर हस्ताक्षर करने का अधिकार है जिन पर कम्पनी की सील होना आवश्यक नहीं है । इसके अतिरिक्त तालिका अ की 84वी व्यवस्था सचिव को यह अधिकार देती है कि जिन प्रपत्रों आदि पर कम्पनी की मोहर लगाई जाती है उन पर सचिव को हस्ताक्षर करने का अधिकार है ।
4. **कम्पनी की ओर से पत्र-व्यवहार करने का अधिकार:** कम्पनी को अनेक विषयों पर बाहरी व्यक्तियों से पत्र-व्यवहार करना होता है । कम्पनी की ओर से पत्र-व्यवहार करने का अधिकार सचिव को ही होता है । कुछ पत्रों को तो सचिव अपनी योग्यता तथा अनुबंध के आधार पर स्वयं लिखता है और कुछ पत्रों के लिए संचालकों व कम्पनी के अन्य अधिकारियों से निर्देश प्राप्त करता है ।

5. **प्रमाण-पत्र देने का अधिकार:** कम्पनी को अपने कार्यकाल में अनेक प्रकार के प्रमाण-पत्र निर्गमित करने होते है । कम्पनी की ओर से ऐसे प्रमाण-पत्रों को निर्गमित करने का अधिकार कम्पनी सचिव को ही होता है ।
6. **दैनिक कार्यवहियों से सम्बन्धित अधिकार:** कम्पनी सचिव को कम्पनी के दैनिक कार्यो से सम्बन्धित अनेक अधिकार प्राप्त होते हैं जिनके आधार पर वह कम्पनी के दैनिक प्रकृति के कार्यो का निष्पादन सफलतापूर्वक करता है ।
7. **अनुबंध द्वारा कम्पनी को उत्तरदायी ठहराने का अधिकार:** सचिव कम्पनी की ओर से तृतीय पक्षकारों के साथ अनुबंध कर सकता है तथा इन अनुबंधों के कारण जो भी उत्तरदायित्व उत्पन्न होते हैं उनके लिए कम्पनी को उत्तरदायी ठहराने का अधिकार भी रखता है, किन्तु किसी भी स्थिति में सचिव कम्पनी की ओर से ऋण लेने के लिए अधिकृत नहीं है ।
8. **अभिकर्ता के रूप में उपस्थित होने का अधिकार:** कम्पनी सचिव कम्पनी का एजेन्ट होता है । अत: किसी भी आर्थिक, सामाजिक तथा अन्य प्रकार की बैठक में कम्पनी सचिव को कम्पनी का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार होता है ।
9. **वैधानिक कार्य करने का अधिकार:** यदि संचालक मण्डल ने अथवा कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियमों ने सचिव को अधिकृत कर दिया है तो वह किसी प्रपत्र की वैधानिकता की गारंटी कर सकता है, कम्पनी के अंशों को क्रय करने के लिए जनता को प्रेरित कर सकता है, सभा बुला सकता है, अंशों का आवंटन कर सकता है, अंशों के हस्तान्तरण की रजिस्ट्री आदि कार्य भी कर सकता है ।

12.11 कम्पनी सचिव के कर्तव्य (Duties of Company Secretary)

कम्पनी अधिनियम में सचिव के कार्यो का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया है । सचिव के कार्य कम्पनी के व्यवसाय की प्रकृति, आकार व संचालक मण्डल द्वारा सौंपे गये अधिकारों पर निर्भर करते हैं । वास्तव में सचिव कम्पनी का एक प्रधान अधिकारी होता है और इसी कारण कम्पनी के सम्बन्ध में उसके कार्यो का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है । सचिव के कार्यो को निम्न वर्गो में बांटा जा सकता है -

1. **वैधानिक कर्त्तव्य:** कम्पनी सचिव का सबसे महत्वपूर्ण कर्त्तव्य विभिन्न अधिनियमों द्वारा निर्धारित वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है । भारतीय कम्पनी अधिनियम में तो यह वर्णित है कि यदि सचिव अधिनियम की विभिन्न व्यवस्थाओं का पालन नहीं करता है तो उसे कारावास, अर्थदण्ड अथवा दोनों दिए जा सकते हैं । इससे स्पष्ट होता है कि कम्पनी सचिव के वैधानिक कर्त्तव्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है । विभिन्न अधिनियमों के अधीन सचिव के कर्त्तव्य निम्नलिखित है -

(अ) कम्पनी अधिनियम के अनुसार कर्त्तव्य: कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत कम्पनी सचिव के प्रमुख कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं -

1. समामेलन के समय रजिस्ट्रार के कार्यालय मे आवश्यक प्रपत्रों, जैसे पार्षद सीमानियम, पार्षद अन्तर्नियम, प्रविवरण आदि को फाइल करना ।
2. अधिनियम के अनुसार आवश्यक रजिस्टरों तथा पुस्तकों को रखना, जैसे विनियोग रजिस्टर, सदस्यों का रजिस्टर, लेखा पुस्तकें आदि ।
3. कम्पनी की सभाओं से सम्बन्धित सभी व्यवस्था करना ।
4. कम्पनी की ओर से पत्र-व्यवहार करना ।
5. वार्षिक रिपोर्ट, वार्षिक खातों की प्रतिलिपि व विशेष प्रस्तावों की प्रतिलिपि को कम्पनी रजिस्ट्रार के पास भेजना ।

(ब) भारतीय मुद्रांक अधिनियम के अनुसार कर्त्तव्य: इस अधिनियम के अन्तर्गत सचिव का यह कर्त्तव्य है कि वह देखे कि आवंटन-पत्र, अंश प्रमाण-पत्र, ऋण-पत्र, अंश अधिपत्र, हस्तान्तरण प्रपत्र, विनिमय-पत्र प्रतिज्ञा-पत्र तथा हुण्डी आदि प्रपत्र, जो कम्पनी द्वारा निर्गमित किये जायें उन पर उचित मुद्रांक लगा है अथवा नहीं । यदि इन प्रपत्रों पर उचित मुद्रांक नहीं लगा है तो सचिव को (उचित मुद्रांक) लगवाना चाहिये, अन्यथा सचिव आर्थिक दण्ड का भागी होगा ।

(स) आयकर अधिनियम के अनुसार कर्त्तव्य: इस अधिनियम के अन्तर्गत सचिव के प्रमुख कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं-

1. कम्पनी द्वारा कर्मचारियों को दिये जाने वाले वेतन में से आय कर काटना ।
2. आयकर अधिकारी के पास कम्पनी की आय का विवरण भेजना ।
3. आयकर अधिकारी द्वारा उस आय के विवरण से सम्बन्धित यदि कोई पूछताछ की जाती है तो उसका उत्तर देना ।
4. लाभांश पाने वाले व्यक्तियों को आयकर प्रमाण-पत्र देना जिसके आधार पर वे छूट प्राप्त कर सकें ।

   इसी प्रकार प्रतिभूत नियंत्रण अधिनियम, फैक्ट्री अधिनियम, कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम, औद्योगिक संघर्ष अधिनियम, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम आदि के अन्तर्गत भी सचिव के कुछ कर्त्तव्य हैं ।

2. **संचालकों के प्रति कर्त्तव्य :** सचिव को संचालकों की लिखित आज्ञा के अनुसार ही कार्य करने चाहिए । संचालकों के प्रति एक कम्पनी सचिव के प्रमुख कर्तव्य निम्नलिखित हैं :-

1. संचालक सभाओं का आयोजन करना एवं प्रत्येक संचालन को सभा की सूचना भेजना ।
2. सभा की कार्य-सूची तैयार करने के लिए संचालकों से पत्र व्यवहार करना और कार्य सूची तैयार हो जाने पर संचालकों को भेजना ।
3. सभा के संचालन में सभापति की सहायता करना ।
4. सभा का विवरण लिखना व आगामी सभा में उनकी पुष्टि करवाना ।
5. विभिन्न वैधानिक बातें संचालकों को स्पष्ट रूप से समझाना ।
6. कम्पनी के खाते, श्रमिक, उत्पादन, वितरण आदि के सम्बन्ध में संचालकों को आवश्यक सूचना देना ।

1. संचालकों द्वारा निर्धारित नीति को कार्य रूप में परिणत करना ।

3 **अंशधारियों के प्रति कर्त्तव्य:** अंशधारी कम्पनी के स्वामी होते हैं तथा सचिव कम्पनी का अधिकारी होता है, अत: अंशधारियों द्वारा विविध प्रकार की मांगी गई सूचनाओं को प्रेषित करना सचिव का कर्त्तव्य है । सचिव अंशधारियों के पत्रों का उत्तर देने के लिए बाध्य होते हुए भी कम्पनी के हित में उसका मुख्य कर्त्तव्य है कि वह किसी भी गोपनीय बात को समय से पूर्व प्रकट न होने दे । इसके अतिरिक्त अंशधारियों की सभाओं का आयोजन करना, समस्त अंशधारियों को सभाओं की सूचना देना, सभा की कार्यवाहियों का विवरण लिखना, इन विवरणों की आगामी सभा में पुष्टि कराना आदि भी कम्पनी सचिव के प्रमुख कर्त्तव्य हैं ।

4 **जनता के प्रति कर्त्तव्य:** सचिव के माध्यम से ही कम्पनी बाह्य व्यक्तियों से अनुबंध करती है । कम्पनी की प्रगति, भावी कार्यक्रम तथा अन्य सूचनाओं को उचित माध्यमों द्वारा जनता के विचारों व भावनाओं को कम्पनी तक पहुँचाता है । कम्पनी के प्रलेखों, सदस्य रजिस्टर व अन्य वैधानिक पुस्तकों को (यदि वे दिखाये जाने योग्य हों) जनता के निरीक्षण के लिए सचिव ही उपलब्ध करवाता है । इसके अतिरिक्त बाहरी व्यक्तियों के पत्रों के उत्तर देने का दायित्व भी कम्पनी सचिव का ही है ।

5 **कार्यालय संगठन के सम्बन्ध में कर्त्तव्य:** कार्यालय संगठन तथा सुसंचालन का दायित्व भी सचिव का होता है । सचिव, सचिवीय कार्यालय का प्रधान अधिकारी होता है जिसके अधीन अनेक विभाग होते हैं । उनमें समन्वय बनाये रखें ताकि न्यूनतम व्यय पर अधिकतम कार्यक्षमता प्राप्त कर सकें ।

6 **अन्य कार्य :** सचिव कम्पनी के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता रहता है इसलिए संकट की अवधि में सचिव द्वारा कम्पनी के हितों की सावधानी पूर्व के रक्षा की जानी चाहिये । वास्तविकता यह है कि कम्पनी की सफलता बहुत कुछ सचिव के ऊपर ही निर्भर करती है ।

12.12 समामेलन से पूर्व तथा समामेलन के बाद कम्पनी सचिव के कर्त्तव्य

जब प्रवर्तकों द्वारा कम्पनी के निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया जाता है तो उन्हें एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता होती है जो विधान विशेषज्ञ हो । अत: प्रवर्तकों द्वारा प्रारम्भ में ही कम्पनी सचिव की नियुक्ति विभिन्न औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए करली जाती है । कम्पनी सचिव को कम्पनी के समामेलन के पश्चात् तो अनेक महत्वपूर्ण कार्य करने ही होते हैं, समामेलन से पूर्व भी अनेक महत्वपूर्ण कार्य करने होते हैं । इस दृष्टिकोण में सचिव के कार्यो को निम्न दो श्रेणियों में विभाजित किया जात सकता है-

(1) समामेलन से पूर्व सचिव के कर्त्तव्य

(2) समामेलन के पश्चात् सचिव के कर्त्तव्य

1 **समामेलन से पूर्व सचिव के कर्त्तव्य:** कम्पनी के समामेलन से पूर्व सचिव के निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं -

- प्रवर्तकों के आदेशानुसार पार्षद सीमानियम व पार्षद अन्तर्नियम तैयार करना ।

- प्रारम्भिक अनुबंध (यदि कोई हो) तैयार करना ।
- कम्पनी के नाम के बारे में कम्पनी रजिस्ट्रार से पूछताछ करना अर्थात रजिस्ट्रार से यह मालूम करना कि क्या प्रस्तावित नाम का प्रयोग किया जा सकता है ।
- प्रवर्तकों व कम्पनी की स्थापना में हित रखने वाले अन्य व्यक्तियों की सभा बुलाना तथा समस्त महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी स्वीकृति लेना एवं सम्बन्धित कार्यवाहियाँ नोट करना।
- पार्षद सीमानियम, अन्तर्नियम तथा अन्य प्रपत्रों पर उचित स्टाम्प लगवाना और इन्हें रजिस्ट्रार के पास शुल्क सहित जमा करना ।

2 **समामेलन के पश्चात् सचिव के कर्त्तव्य:** कम्पनी के समामेलन के पश्चात् सचिव के कर्तव्यों का आशय यहां समामेलन के तुरन्त पश्चात् पूरा किये जाने वाले कर्त्तव्यों से है । यह कर्त्तव्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है जो निम्नलिखित है -

(i) निम्न विषयों पर निर्णय लेने के लिए संचालक मण्डल की सभा बुलाना -

- ♦ अध्यक्ष की नियुक्ति ।
- ♦ कम्पनी के लिए बैंकर दलाल, प्रबन्ध संचालक, तथा सचिव की नियुक्ति ।
- ♦ सार्वमुद्रा तैयार करवाना ।
- ♦ सचिव के आवश्यक अधिकारों का निर्धारण करना ।
- ♦ कार्यवाहक संख्या का निर्धारण करना ।
- ♦ प्रविवरण पर हस्ताक्षर करना ।
- ♦ अंशों का आवंटन करना ।
- ♦ व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने हेतु आवश्यक प्रपत्र तैयार करना तथा उन्हें रजिस्ट्रार के पास भेजना ।
- ♦ कम्पनी व सम्पत्ति विक्रेता के मध्य होने वाले अनुबंध पर विचार करना ।

(ii) यदि कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय की स्थिति की सूचना समामेलन से पूर्व रजिस्ट्रार को न भेजी गई हो तो इस सूचना के 30 दिन के अन्दर भेजना । \

(iii) कम्पनी के नाम का बोर्ड कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय के बाहर लगवाना । कम्पनी के नाम का बोर्ड सामान्यतया दो भाषाओं-स्थानीय व अंग्रेजी भाषा में लिखवाया जाता है ।

(iv) कम्पनी का नाम कम्पनी की सार्वमुद्रा पर स्पष्ट रूप से खुदवाना तथा कम्पनी के समरस प्रपत्रों पर स्पष्ट रूप से छपवाना ।

12.13 कम्पनी सचिव के दायित्व (Liabities of Company Secretary)

सचिव के अपने कर्त्तव्यों का पालन पूर्ण निष्ठा, सावधानी तथा बुद्धिमता से करना चाहिये । यदि सचिव असावधानी या त्रुटि करता है तो वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराया जाता है । सचिव के दायित्वों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है -

1. **लापरवाही के लिए दायित्व:** सचिव को अपना कार्य सतर्कता के साथ करना चाहिए । यदि वह अपने कर्त्तव्यों के निष्पादन में लापरवाही के लिए सचिव ही उत्तरदायी होता

है, कम्पनी नहीं । परन्तु यदि सचिव अपने को लापरवाही के आरोप से निर्दोष प्रमाणित करने में सफल होता है तो इन दायित्वों के लिए कम्पनी उत्तरदायी होगी ।

2. **एजेण्ट के रूप में दायित्व:** कम्पनी मे सचिव की स्थिति एक एजेण्ट के रूप मे भी होती है इसलिए सचिव के वे सभी दायित्व होते हैं जो कि एक एजेण्ट के नियोक्ता के प्रति होते हैं । सचिव ने जो कार्य अपने अधिकार क्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत किया है उन कार्यो या अनुबंधों से वह कम्पनी को बाध्य करने का अधिकार रखता है । यदि सचिव अपने अधिकार क्षेत्र की सीमा से बाहर कोई कार्य करता है तो ऐसे कार्यो के लिए कम्पनी उत्तरदायी नहीं होती बल्कि स्वयं सचिव ही तीसरे पक्ष के प्रति उत्तरदायी होता है ।
3. **संचालकों के प्रति दायित्व:** कार्यालय से सम्बन्धित सभी कार्यो को उचित रूप से पूरा करने के लिए सचिव अपने संचालकों के प्रति उत्तरदायी होता है । संचालकों द्वारा दिये गये आदेशों व निर्देशों का पूर्णतया पालन करना सचिव का प्रमुख कर्त्तव्य है । इसकी अवहेलना करने पर वह दण्ड का भागी होगा ।
4. **कपट के लिए दायित्व:** यदि सचिव कम्पनी के साथ कोई कपट अथवा विश्वासघात करता है - जैसे अपने निजी हित के लिए कम्पनी की सार्वमुद्रा का प्रयोग करना, संचालकों के जाली हस्ताक्षर करना, वित्तीय मामलों में हेरा-फेरी करना आदि तो वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा ।
5. **निजी हित में किये गये कार्यो के लिए दायित्व:** सचिव की स्थिति कम्पनी में एक प्रतिनिधि के रूप में होती है अत: सचिव के कार्यो के लिए कम्पनी स्वयं उत्तरदायी होती है लेकिन जब सचिव त्रुटिपूर्ण उत्तर देता है या अपने निजी लाभ के लिए कार्य करता है तो ऐसी दशा में कम्पनी उत्तरदायी नहीं होगी बल्कि सचिव स्वयं उत्तरदायी होगा ।
6. **रजिस्ट्रार को भेजे जाने वाले प्रपत्रों के लिए दायित्व:** सचिव कम्पनी का एक महत्वपूर्ण पदाधिकारी होता है अत: इस नाते रजिस्ट्रार के पास भेजे जाने वाले प्रपत्रों के लिए वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है ।

12.14 कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत दायित्व : (Liabilities under Companies Act)

कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत सचिव के प्रमुख दायित्व निम्नलिखित हैं -

1. धारा 105 के अनुसार यदि वह कम्पनी की पूँजी में कमी करते समय किसी ऋणदाता के नाम को जान-बूझकर छिपाता है तो सचिव को अर्थदण्ड या एक वर्ष की सजा अथवा दोनों दण्ड दिए जा सकते हैं ।
2. धारा 113 के अनुसार, यदि सचिव ने अंश-आवंटन के तीन माह में तथा हस्तान्तरण प्रलेख प्रस्तुत करने के दो माह में अंश प्रमाण-पत्र या ऋण प्रमाण-पत्र जारी नहीं किया है, तो उसे 500 रूपये तक का अर्थदण्ड दिया जा सकेगा ।

3. धारा 142 के अनुसार प्रभार सम्बन्धी प्रविष्टियाँ करने में त्रुटि करने पर 500 रूपये प्रतिदिन तक का अर्थदण्ड दिया जा सकेगा ।
4. धारा 182 के अनुसार, वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने में त्रुटि करने पर सचिव पर 500 रूपये प्रतिदिन तक का अर्थदण्ड किया जा सकता है ।
5. धारा 165 के अनुसार, यदि सचिव वैधानिक सभा बुलाने में त्रुटि करता है तो उस पर 500 रूपये तक का अर्थदण्ड दिया जा सकता है ।
6. धारा 168 के अनुसार, यदि सचिव वार्षिक सामान्य सभा बुलाने में त्रुटि करता है तो उस पर 5000 रूपये तक का अर्थदण्ड दिया जा सकता है ।
7. धारा 188 के अनुसार सचिव द्वारा सदस्यों से प्राप्त प्रस्ताव के प्रसारण में त्रुटि करने पर उसे 5000 रूपये तक का अर्थदण्ड दिया जा सकता है ।
8. धारा 193 के अनुसार, यदि सचिव साधारण सभा, वैधानिक सभा या संचालक मण्डल सभा के सूक्ष्म लिखने में त्रुटि करता है तो उसे 5० रूपये तक का अर्थदण्ड दिया जा सकेगा ।
9. यदि सचिव धारा 210 के अनुसार कम्पनी के अंतिम खातों को कम्पनी की वार्षिक सामान्य सभा में प्रस्तुत नहीं करता है तो उसे छः माह के कारावास की सजा या 1000 रूपये तक का अर्थदण्ड अथवा दोनों दिए जा सकते हैं ।
10. धारा 221 के अनुसार, कम्पनी के लाभ-हानि खाते एवं चिट्ठे से सम्बन्धित भुगतानों की सूचना देने में त्रुटि करने पर सचिव पर 5000 रूपये तक अर्थदण्ड या 6 माह तक का कारावास अथवा दोनों दिए जा सकते हैं ।
11. धारा 286 के अनुसार यदि सचिव प्रत्येक संचालक को संचालक मण्डल की सभा की सूचना उचित पते पर नहीं भेजता है तो उसे 100 रूपये तक का अर्थदण्ड दिया जा सकता है ।
12. धारा 303 के अनुसार, संचालकों का रजिस्टर रखने में त्रुटि करने की दशा में सचिव पर उस समय तक 50 रूपये प्रतिदिन, जितने दिन तक त्रुटि रहती है का अर्थदण्ड दिया जा सकता है ।
13. यदि कम्पनी के समापन के समय सचिव, कम्पनी के प्रपत्रों या पुस्तकों को नष्ट करता है, तो उसे अर्थदण्ड या 7 वर्ष का कारावास अथवा दोनों दिए जा सकते हैं ।

12.15 सारांश

कम्पनी सचिव का व्यवसायिक जगत में महत्वपूर्ण स्थान है तथा उसके कर्त्तव्य, अधिकार व दायित्व अति विस्तृत है । अपने कर्त्तव्य को सफलतापूर्वक निभाने के लिए और अपने दायित्वों को कुशलतापूर्वक पूरा करने के लिए सचिव का शैक्षणिक स्तर व प्रशिक्षण उच्च कोटि का होना चाहिए । उसे विभिन्न अधिनियमों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए तथा सम्बन्धित व्यवसाय के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए । वास्तव में एक योग्य एवं प्रशिक्षित सचिव कम्पनी के लिए एक मूल्यवान सम्पत्ति है ।

12.16 शब्दावली

ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार - 'सचिव वह व्यक्ति है जिसका कार्य दूसरों के लिए लिखना है, विशेषतः वह व्यक्ति दूसरे व्यक्ति, समाज, कार्पोरेशन या सार्वजनिक संस्था के लिए पत्र व्यवहार करने, रिकार्ड रखने तथा अन्य बहुत से कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है ।.

कम्पनी अधिनियम, 1956 में सचिव की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है । सचिव को परिभाषित करने के लिए धारा 2(30) में केवल इतना ही कहा गया है कि, "अधिकारी के अन्तर्गत कोई भी संचालक, प्रबन्ध अभिकर्ता, प्रबन्धक या सचिव सम्मिलित है ।"

कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2 (1) (सी) के अनुसार, "कम्पनी सचिव का तात्पर्य एक ऐसे व्यक्ति से है जो इस अधिनियम के अधीन गठित इंस्टीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटीज ऑफ इण्डिया (Institute of Company Secretaries of India) का सदस्य हो ।"

सार्व मुद्रा - यह कम्पनी की एक कॉमन सील होती है जिस पर कम्पनी का नाम खुदा रहता है । कम्पनी के प्रत्येक प्रलेख पर सार्व मुद्रा लगाना अनिवार्य है ।

12.17 स्वपरख प्रश्न

1. सचिव का अर्थ क्या है?
2. कम्पनी सचिव का क्या आशय है?
3. सचिव के महत्व के दो बिन्दु बताइये?
4. सचिव की स्थिति 20 शब्दों में बताइये?
5. सचिव के दो कर्त्तव्य बताइये?
6. कम्पनी संगठन में सचिव की भूमिका पर प्रकाश डालिये ।
7. कम्पनी सचिव की नियुक्त के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम 1956 में क्या प्रावधान है?
8. कम्पनी सचिव की योग्यताएँ बताइये ।
9. कम्पनी सचिव के प्रमुख अधिकारों का विवेचन कीजिये ।
10. सचिव के तीन अधिकार बताइये ।
11. कम्पनी सचिव शब्द की स्पष्ट व्याख्या कीजिये । कम्पनी सचिव की उन योग्यताओं का वर्णन कीजिये जिनके द्वारा वह अपने कर्त्तव्य का पालन कुशलता से कर सकता है ।
12. कम्पनी सचिव से आपका क्या अभिप्राय है? कम्पनी सचिव की नियुक्ति पर एक टिप्पणी लिखिये । उसे पद से कब मुक्त किया जा सकता है?
13. 'जबकि संचालक कम्पनी का मस्तिष्क है, तो सचिव उसके कान, आँख व हाथ है' इस कथन की व्याख्या कीजिये ।

14. सचिव के कार्य मंत्रणा सम्बन्धी व प्रशासनिक ही होते हैं, प्रबंधकारी नहीं । ' परीक्षण कीजिये ।
15. 'कम्पनी के सचिव की स्थिति कर्त्तव्यों तथा दायित्वों से पूर्ण है । विस्तार कीजिये ।
16. कम्पनी सचिव के कर्त्तव्यों का संक्षेप में विवेचन कीजिये । उसके क्या दायित्व हैं'?
17. 'कम्पनी सचिव की स्थिति वैसी है जैसे किसी साइकिल के पहिये में धुरी की । इस कथन की व्याख्या कीजिए और कम्पनी सचिव के कर्त्तव्यों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
18. कम्पनी सचिव की स्थिति तथा दायित्वों का विवेचन कीजिये ।
19. 'सचिव, कम्पनी के संचालकों तथा अंशधारियों के बीच एक कड़ी है ।' विवेचना कीजिये।

12.18 उपयोगी/संदर्भ पुस्तकें

1. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति-सक्सेना एवं सक्सेना
2. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - जी. एस. सुधा
3. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - एन.डी. कपूर
4. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - अवतार सिंह
5. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - नौलखा

इकाई -13 : कम्पनी सचिव - कर्त्तव्य, योग्यताएँ एवं स्थिति (Company Secretary-Duties, Qualification and Position)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 कम्पनी सचिव का अर्थ एवं परिभाषा

13.3 सचिव की योग्यताएँ

13.4 कम्पनी सचिव की स्थिति

13.5 कम्पनी सचिव का महत्व

13.6 नियुक्ति की विधियाँ

13.7 कम्पनी सचिव के गुण

13.8 कर्त्तव्य

13.9 दायित्व

13.10 सारांश

13.11 स्वपरख प्रश्न

13.12 उपयोगी पुस्तकें

13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- कम्पनी सचिव के अर्थ व भूमिका को समझ सकेंगे ।
- कम्पनी सचिव की योग्यताओं को जान सकेंगे ।
- कम्पनी में सचिव की स्थिति को पहचान सकेंगे ।
- कम्पनी सचिव की नियुक्ति की विधियों को निश्चित कर सकेंगे ।
- कम्पनी सचिव के कर्त्तव्यों व दायित्वों को समझ सकेंगे ।

13.1 प्रस्तावना

कम्पनी का गठन विधान के द्वारा होता है । कम्पनी के निर्माण, निरंतर संचालन व समापन हेतु विधि के विभिन्न प्रावधानों को ध्यान में रखना होता है । अत: कम्पनी को संचालकों की सहायता हेतु दिन-प्रतिदिन के कार्य संचालन में दक्ष एक विधि विशेषज्ञ की आवश्यकता होती है जो कम्पनी के गठन, निर्बाध विधि प्रावधानों की पालना को सुनिश्चित कर सके । कम्पनी सचिव कम्पनी का प्रवक्ता व महत्त्वपूर्ण अधिकारी होता है । वह कम्पनी का कार्यालय प्रमुख एवं कम्पनी के संचालकों, सदस्यों व वाह्य जनता के बीच एक सम्पर्क सूत्र होता है ।

13.2 कम्पनी सचिव का अर्थ व परिभाषा

अंग्रेजी भाषा के शब्द सेक्रेटरी की उत्पत्ति **लेटिन भाषा** के शब्द सेक्रेटेरियस से हुयी है । इसका अर्थ, लेखक अथवा विश्वासपात्र व्यक्ति से है, जिसे कम्पनी के सम्बन्ध में अनेक उत्तरदायित्व पूर्ण करने पड़ते हैं ।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार - **"सचिव का कार्य दूसरों के लिए लिखना है, विशेषतः जो दूसरे व्यक्ति. समाज. निगम या सार्वजनिक संस्था के लिए पत्र व्यवहार करने, अभिलेख रखने और बहुत से अन्य कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है ।"**

वैब्स्टर शब्दकोष में इस शब्द को अनेक अर्थों में प्रयोग किया जाता है । जैसे -

- सचिव वह व्यक्ति है जिसे गोपनीय बातें सौंपी जाती हैं ।
- सचिव वह है जो किसी संघ अथवा सार्वजनिक संस्था अथवा व्यक्ति के लिए उसके आदेशों, निजी एवं सार्वजनिक पत्रों आदि पर ध्यान देने तथा उससे सम्बन्धित कारोबार की व्यवस्था करने के लिए नियुक्त किया जाता है ।
- सचिव सरकारी अधिकारी है जो किसी सरकारी विभाग का निरीक्षण एवं प्रबन्ध करता है एवं प्रायः मुख्य कार्यकारिणी का सदस्य होता है ।
- सचिव वह व्यक्ति है जो विशेषतः अन्य व्यक्ति के निर्देशानुसार कार्य करता है ।

सचिव अनेक प्रकार के हो सकते हैं जिनमें कुछ महत्त्वपूर्ण एवं गोपनीय कार्यो को करने वाले, कुछ केवल अपने अधिकारियों के निर्देशानुसार लेखन कार्य करने वाले कुछ सरकारी विभागों के प्रमुख अधिकारियों और कुछ किसी संस्था, समिति या संघ के कार्यो का संचालन करने वाले होते हैं ।

कम्पनी (संशोधित) अधिनियम, 1974 के अनुसार, "सचिव से आशय निर्धारित योग्यता रखने वाले ऐसे व्यक्ति से है जिसे अधिनियम के अन्तर्गत सचिव द्वारा निष्पादित होने योग्य कर्त्तव्यों और अन्य लिपिकीय व प्रशासनिक कर्त्तव्यों के निष्पादन हेतु नियुक्त किया जाता है । "

कम्पनी सचिव

भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 के अनुसार कम्पनी सचिव की नियुक्ति करना वैकल्पिक है ।

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1974 की धारा 383(1) के अनुसार प्रत्येक ऐसी कम्पनी जिसकी प्रदत्त अंश पूंजी 25 लाख रूपये या इससे अधिक थी में एक पूर्णकालिक सचिव की नियुक्ति करना अनिवार्य था । यह सीमा समय-समय पर सरकार द्वारा निर्धारित व परिवर्तित की जा सकती है । **वर्तमान में दो करोड़ रूपये या इससे अधिक प्रदत्त पूँजी** वाली कम्पनी में कम्पनीs की नियुक्ति करना अनिवार्य है ।

कम्पनी सचिव वह व्यक्ति है जो कम्पनी की ओर से पत्र व्यवहार करने, अभिलेख रखने, विभिन्न अधिनियमों के अन्तर्गत प्रतिवेदन प्रस्तुत करने तथा संचालक मण्डल द्वारा निर्धारित नीतियों एवं निर्देशों के क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी होता है ।

वैब्स्टर शब्दकोष के अनुसार **"व्ययावसायिक उपक्रम का वह अधिकारी जो संचालकों एवं अंशधारियों की सभाओं तथा स्कन्ध स्वामित्व और हस्तान्तरण का अभिलेख रखता है**

तथा कम्पनी के वैधानिक हितों के पर्यवेक्षण में सहायता करता है. कम्पनी सचिव कहलाता है । "

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 2(30) के अनुसार - **"कम्पनी के अधिकारियों में प्रबन्ध संचालक, प्रबन्धक अथवा "सचिव" सम्मिलित है ।"**

उक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि कम्पनी सचिव भी कम्पनी का एक अधिकारी है ।

कम्पनी (संशोधित) अधिनियम, 1974 की धारा 2(45) के अनुसार -

"सचिव से आशय निर्धारित योग्यता रखने वाले किसी ऐसे व्यक्ति से है जिसे इस अधिनियम के अन्तर्गत सचिव द्वारा निष्पादित होने योग्य कर्त्तव्यों और अन्य लिपिकीय व प्रशासनिक कर्त्तव्यों के निष्पादन हेतु नियुक्त किया जाता है । "

पूर्णकालिक पेशेवर सचिव

पूर्णकालिक पेशेवर सचिव संशोधित कम्पनी अधिनियम, 1988 की एक नवीन अवधारणा है । **धारा 2 (45-ए)** के अनुसार -

"**पूर्णकालिक व्यवसाय में संलग्न का तात्पर्य ऐसे सचिव से है जो कम्पनी सचिव अधिनियम 1980 की धारा 2(2) के अनुसार अभ्यास या व्यवसाय में लगा हुआ है और जो पूर्णकालिक रोजगार में नहीं लगा है ।"**

कम्पनी सचिव की नियुक्ति सम्बन्धी प्रावधान

- **व्यक्ति ही सचिव -** केवल प्राकृतिक व्यक्ति ही कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्त किया जा सकता है । अर्थात् किसी समामेलित संस्था को सचिव के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता ।
- **संचालक सचिव नहीं हो सकता -** यदि किसी कम्पनी की प्रदत्त पूंजी निर्धारित सीमा से अधिक है और ऐसी कम्पनी में दो ही संचालक हैं, तो उनमें से किसी भी संचालक को सचिव के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता ।
- नियुक्ति सम्बन्धी अनिवार्यता - जिस कम्पनी की प्रदत्त पूंजी 2 करोड़ रूपये अथवा अधिक है तो ऐसी कम्पनी में एक पूर्णकालिक सचिव रखना अनिवार्य है ।
- **एक ही कम्पनी में सचिव -** यदि कोई व्यक्ति संशोधित कम्पनी अधिनियम, 1974 के लागू होने के बाद 25 लाख रूपये अथवा इससे अधिक की प्रदत्त पूंजी वाली एक से अधिक कम्पनी में सचिव के रूप में कार्यरत था तो उसे 6 माह के भीतर यह तय करना होगा कि वह कौनसी एक कम्पनी में सचिव रहना चाहता है । इस सीमा को बढ़ाकर दो करोड़ रूपये कर दिया गया है ।
- **कम्पनी का अधिकारी -** कम्पनी अधिनियम की धारा 2(3०) के अनुसार, कम्पनी सचिव को कम्पनी का अधिकारी माना गया है और उसे कम्पनी अधिनियम में संचालक व प्रबन्धक के बराबर स्थान दिया गया है ।
- **अर्थदण्ड -** कम्पनी द्वारा धारा 383-ए(1) का उल्लंघन करने पर कम्पनी और उसके दोषी अधिकारी पर त्रुटि की अवधि के लिए 500 रूपये प्रतिदिन तक का अर्थदण्ड लगाया जा सकता है किन्तु कम्पनी व सम्बन्धित व्यक्ति द्वारा यह प्रमाणित कर देने पर कि उन्होंने सम्बन्धित प्रावधान का पालन करने हेतु पूर्ण प्रयास किए थे व कम्पनी की दशा

में उसकी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं कि वह पूर्णकालिक कम्पनी सचिव की नियुक्ति का खर्च वहन कर सकती थी, तो उन्हें अर्थदण्ड से छूट दी जा सकती है ।

13.3 कम्पनी सचिव की योग्यताएँ

भारत में केन्द्र सरकार कम्पनी सचिव की योग्यताएँ तय करने हेतु अधिकृत है । कम्पनी के सचिव की योग्यताएँ कम्पनीज (सचिव योग्यताएं) नियम, 1975 में दी हुई हैं । वर्तमान में कम्पनी सचिव की योग्यताएँ निम्नलिखित हैं :

13.3.1 निर्धारित राशि या इससे अधिक चुकता अंश पूंजी वाली कम्पनी में

ऐसी कम्पनी जिसकी चुकता अंश पूंजी 2 करोड़ रूपये या इससे अधिक है में नियुक्त किया जाने वाला सचिव भारत के कम्पनी सचिव संस्थान का सदस्य होना चाहिए ।

कम्पनीज (संशोधित) अधिनियम, 1974 के लागू होने के बाद प्रथम पांच वर्ष तक तत्कालीन ऐसा व्यक्ति नियमों की विनियोग सीमा से अधिक वाली कम्पनी का सचिव हो सकता था जो कि (Institute of Chartered Secretaries of Administrators, London) का सदस्य हो ।

13.3.2 अन्य कम्पनियों की दशा में निम्नलिखित में से कोई एक योग्यता रखने वाला व्यक्ति

1. उपर्युक्त एक में वर्णित योग्यताएं, 2. किसी भी विश्वविद्यालय से विधि स्नातक की योग्यता, 3. इन्स्टीट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउन्टेन्टस ऑफ इण्डिया का सदस्य, 4 इन्स्टीट्यूट ऑफ कॉस्ट एण्ड वर्क्स एकाउन्टेन्टस ऑफ इण्डिया का सदस्य, 5. भारत के किसी विश्वविद्यालय से या अहमदाबाद के इन्स्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेन्ट से या कलकत्ता के इन्स्टीट्यूट ऑफ कॉमर्स में स्नातकोत्तर उपाधि, 7. इण्डियन लॉ इन्स्टीट्यूट से कम्पनी ली में डिप्लोमा, 8. उदयपुर विश्वविद्यालय से कम्पनीज विधि और सचिवीय पद्धति में डिप्लोमा ।

13.3.3 विद्यमान कम्पनी सचिवों के लिये योग्यताएँ

30 अक्टूबर, 1980 से पूर्व जो व्यक्ति कम्पनी सचिव के पद पर कार्य कर रहे थे, उनके उसी कम्पनी में सचिव के पद पर कार्य करते रहने की दशा में उनकी उन योग्यताओं को ही पर्याप्त मान लिया गया जो उनमें थी, किन्तु ऐसे व्यक्ति के उस कम्पनी को छोड़कर किसी अन्य कम्पनी में सचिव के पद पर नियुक्ति की दशा में उसे ऊपर वर्णित योग्यताओं में से कोई एक योग्यता प्राप्त करना आवश्यक है । नवीन योग्यता सम्बन्धी नियम उन्हीं सचिवों पर लागू किये गये थे जो इन नियमों के लागू होने के बाद कम्पनी सचिव के पद पर नियुक्त हों । नियमों के लागू होने के पूर्व सचिव पद पर कार्य करने वाले व्यक्ति पर ये नियम लागू नहीं किये गये ।

13.3.4 पूंजी बढ़ने की दशा में योग्यताएँ

कम्पनी की चुकता अंश पूँजी में केन्द्र सरकार द्वारा तय राशि में वृद्धि की दशा में उस कम्पनी में कार्यरत सचिव इस तरह पूँजी वृद्धि की तिथि से एक वर्ष तक ही सचिव के पद पर कार्य कर सकेगा । एक वर्ष के बाद वह सचिव के पद पर तब ही कार्य कर सकेगा जबकि उसके पास पूर्णकालिक सचिव के लिए निर्धारित योग्यता हो ।

13.3.5 धारा 25 के अनुरूप लाइसेंस प्राप्त कम्पनियाँ

कम्पनी सचिव की योग्यताओं सम्बन्धी नियम धारा 25 के अधीन लाइसेंस प्राप्त कम्पनियों पर लागू नहीं हों । इस प्रकार ये नियम उन सीमित दायित्व वाली कम्पनी पर लागू नहीं होते जिनका निर्माण कला, विज्ञान, धर्म, सेवा, कल्याण व दान आदि उद्देश्यों के लिए किया गया हो और जो अपने सदस्यों को लाभांश के भुगतान पर रोक लगाती हैं।

13.4 सचिव की स्थिति

कम्पनी सचिव कम्पनी का एक महत्वपूर्ण अधिकारी होता है कम्पनी में उसकी स्थिति बहुआयामी होती है जिसे नीचे विभिन्न शीर्षकों में स्पष्ट किया गया है -

13.4.1 कम्पनी का सेवक

कम्पनी अधिनियम के अनुसार कम्पनी की सत्ता संचालक मण्डल में निहित होती है । कम्पनी सचिव को संचालक मण्डल के अधीन कार्य करना पड़ता है । कम्पनी सचिव को कम्पनी में कोई स्वतंत्र अधिकार प्राप्त नहीं हैं । वह अपने अधिकार संचालक मण्डल से प्राप्त करता है । सचिव स्वयं कम्पनी की साधारण सभा नहीं बुला सकता और न ही स्वतंत्र रूप से निर्देशों के अभाव में अंशों का आवंटन हस्तान्तरण यां हरण कर सकता है। **लार्ड ईशर** ने इस सम्बन्ध में कहा था "**सचिव एक नौकर या कर्मचारी है, उसे वही करना है जो कि उससे कहा जाये । " इसी प्रकार कृष्ण बनाम इन्डो यूनियन एसोसिएशन लिमिटेड में कहा गया कि "कम्पनी सचिव कम्पनी का एक नौकर है और इसलिए उसको उन कर्त्तव्यों का निर्वाह करना चाहिए, जो कि उसको सौंपे हुए हैं । "**

13.4.2 प्रतिनिधि या एजेन्ट के रूप में

चूँकि सचिव कम्पनी का वेतनभोगी कर्मचारी है अत: वह कम्पनी का एजेन्ट नहीं हो सकता तथापि उसकी स्थिति कम्पनी में एक एजेन्ट के समान होती है । सचिव जब सौंपे गये कार्यो को करता है तो वह ऐसे कार्यो के सम्बन्ध में कम्पनी को उसी प्रकार उत्तरदायी बनाएगा जैसे एक नियोक्ता अपने एजेन्ट के कार्यो के लिए होता है । उन कार्यो के सम्बन्ध में सचिव की स्थिति एजेन्ट के रूप में होती है व उसका कोई व्यक्तिगत दायित्व नहीं होता । जो कार्य उसके वैधानिक कर्त्तव्यों में नहीं आते किन्तु जिनके लिए संचालकों ने उसे अधिकृत किया है और जो संचालको के **"अधिकारों के बाहर"** भी न हो के लिये उसकी स्थिति एजेन्ट की भाँति होगी ।

स्पष्ट है कि कम्पनी सचिव को जो कार्य करने का अधिकार है उन्हीं के सम्बन्ध में उसकी स्थिति एजेन्ट के रूप में है । अधिकारों के बाहर कार्य करने की दशा में उन कार्यो के लिए कम्पनी उत्तरदायी नहीं हो सकती । वह स्वयं ही उनके लिये दायी होगा ।

13.4.3 अधिकारी के रूप में

सचिव कम्पनी का एक महत्वपूर्ण अधिकार भी है । कम्पनी अधिनियम की धारा 2 (30) के अनुसार सचिव को कम्पनी का अधिकारी माना गया है । एक कम्पनी के प्रशासनिक ढांचे में कम्पनी सचिव की उच्च स्थति होती है । उसके अधीन अंश, पत्राचार, फाइलिंग व रिकार्ड, लेखा और कर्मचारियों की भर्ती व पदोन्नति विभाग होते हैं । वह कम्पनी का

एक महत्तपूर्ण कार्यकारी अधिकारी होता है, क्योंकि वह संचालकों द्वारा उसे सौंपे गये अधिकारों के अन्तर्गत निर्णयों को क्रियान्वित करता है ।

शास्त्री समिति के अनुसार "यद्यपि एक सचिव की स्थिति प्रबन्धक के समान नहीं होती है और न ही कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत उसे कोई विशिष्ट कार्य ही सौंपे गये हैं फिर भी उसका महत्व कम नहीं है । कम्पनी का अधिकारी होने के कारण वह रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत किये जाने वाले विवरणों व प्रलेखों की सत्यता के लिए उत्तरदायी है तथा अधिनियम के प्रावधानों का पालन करने में जानबूझकर त्रुटि करने पर वह दण्ड का भागी होता है । "

13.4.4 कानून का पालनकर्ता

कम्पनी सचिव कानून का सेवक होता है । उसका दायित्व है कि वह अधिनियम के अनुसार समय-समय पर विभिन्न प्रकार के प्रलेख, प्रपत्र, प्रत्याय व विवरण कम्पनी पंजियक व अन्य अधिकारियों के पास भेजे, स्त्रोत पर आयकर काटे, मुद्रांक शुल्क का भुगतान करे । अधिनियम की व्यवस्थाओं का पालन न करने की अवस्था में सचिव को अधिनियम की **धारा 5** के अन्तर्गत दोषी अधिकारियों में सम्मिलित किया जाकर दण्डित किये जाने का प्रावधान है ।

13.4.5 संचालकों, अंशधारियों व कर्मचारियों के मध्य कडी के रूप में

कम्पनी सचिव संचालकों, अंशधारियों व कर्मचारियों को जोड़ने वाली कड़ी है । सचिव संचालकों से प्राप्त सूचना को अंशधारियों को व अंशधारियों को व अंशधारियों की सूचना को संचालकों तक पहुंचाकर उनके मध्य कड़ी के रूप में कार्य करता है । इसी प्रकार संचालकों व कर्मचारियों के बीच भी वह समन्वयक का कार्य करता है ।

13.4.6 सलाहकार के रूप में

समय-समय पर सचिव संचालकों को सलाह प्रदान करता है । एक तरह सचिव संचालकों का सेवक होता है, किन्तु आवश्यक होने पर वह संचालकों को सलाह भी देता है । कानूनी विशेषज्ञ होने के कारण वह संचालकों को तत्सम्बन्धी मामलों में परामर्श देता है । संगठन व प्रशासनिक समस्याओं पर भी संचालक सचिव की सलाह लेते हैं । संचालक चूंकि सदैव कम्पनी में उपस्थित नहीं रहते हैं अत: वे प्रायः सचिव की सलाह लेते हैं । इस तरह सचिव सलाह के माध्यम से संचालकों को वास्तविक स्थितियों से अवगत कराता है ।

13.4.7 पेशेवर व्यक्ति के रूप में

कम्पनी सचिव प्रायः पेशेवर व्यक्ति के रूप में सुशिक्षित होता है । भारत के कम्पनी सचिवीय संस्थान के सदस्य स्वतन्त्र रूप से अपना कार्य पेशे के रूप में चला सकते हैं । वे कम्पनी विधान मण्डल, एकाधिकार प्रतिबन्धात्मक व्यापार व्यवहार आयोग, केन्द्रीय उत्पादन व सीमा शुल्क, आयकर अधिकारीगण आदि के समक्ष उपस्थित होने एवं कम्पनी के पक्ष को प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत होते हैं ।

13.5 कम्पनी सचिव का महत्व

कम्पनी में सचिव का महत्व निरन्तर बढ़ता जा रहा है । इसे कम्पनी का एक महत्वपूर्ण अधिकारी माना जाता है । वह संचालक मण्डल को अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर परामर्श देता है । कम्पनी के विभिन्न विभागों तथा बाह्य व्यावसायिक जगत के सम्बन्ध में सूचनाएँ एकत्रित कर वह उन्हें संचालकों के समक्ष प्रस्तुत करता है । इसके अतिरिक्त, वह संचालकों को कम्पनी के कार्यो की वैधानिक स्थिति से भी अवगत करवाता है । बकनैल ने भी कहा है कि **"कम्पनी में सचिव की स्थिति ठीक उसी प्रकार होती है जिस प्रकार साईकिल के पहिये में धुरी की होती है ।"**

कम्पनी का व्यावसायिक चक्र सचिव के इर्दगिर्द ही घूमता है । कम्पनी के जितने भी महत्वपूर्ण कार्य होते हैं, कम्पनी सचिव के माध्यम से पूरे किये जाते हैं । कम्पनी का संचालक मण्डल कम्पनी की नीतियाँ निर्धारित करता है जबकि उनके क्रियान्वयन में कम्पनी सचिव को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी पड़ती है । वह कम्पनी के प्रबन्ध संचालक के साथ मिलकर कम्पनी की नीतियों के सफल क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है ।

कम्पनी सचिव का महत्व उसकी निम्नलिखित बहु आयामी भूमिका के फलस्वरूप है:

13.5.1 यदि संचालक मस्तिष्क हैं तो सचिव कान. आँखें तथा हाथ

कम्पनी एक ऐसा कृत्रिम व्यक्ति है जिसका संचालन संचालकों तथा सचिव के परस्पर सहयोग से होता है । सचिव तथा संचालक एक-दूसरे के कार्यो के पूरक हैं तथा कम्पनी के लिये दोनों ही आवश्यक हैं **। हैड, फोसेट तथा विलसन ने लिखा है कि "यदि संचालक कम्पनी के मस्तिष्क हैं तो सचिव उसके कान, आँखें तथा हाथ हैं ।"**

संचालक कम्पनी के मस्तिष्क - कम्पनी विधान द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति है । वह अदृश्य एवं अमूर्त है किन्तु कानून की दृष्टि में इसका अस्तित्व अमूर्त, अदृश्य व्यक्ति मस्तिष्कहीन होता है । इसका संचालन करने वाला व्यक्ति (संचालक) ही इसका मस्तिष्क होते हैं । वह ही कम्पनी के लिए योजनाएँ बनाता है, इसके लाभ एवं हानियों तथा हित एवं अहित पर विचार करता है । वह कम्पनी के लिए बाह्य व्यक्तियों से अनुबन्ध करते समय उस अनुबंध का कम्पनी के हितों पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन करता है । वह दिन-प्रतिदिन के कार्यो के संचालन के लिए नीतियों का निर्धारण करता है । जो कार्य एक व्यक्ति का मस्तिष्क स्वयं के लिए सोचता एवं करता है वही संचालक कम्पनी के लिए सोचता एवं करता है । अत: संचालकों को कम्पनी का मस्तिष्क कहा जाता है ।

सचिव कम्पनी के कान - सचिव कम्पनी के कान की भाँति कार्य करता है । वह विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्रदान की जाने वाली सूचनाओं, शिकायतों, कठिनाइयों तथा सुझावों को सुनता है और मस्तिष्क (संचालक) तथा पहुँचाने का कार्य करता है । वह कार्मिकों के कार्यो की प्रगति का विवरण प्राप्त करता है, सरकार से सम्पर्क स्थापित रखता है, समाज एवं जनता की बात सुनता है । अनेक सभाओं एवं सम्मेलनों में भाग लेकर वह विभित्र बातों को सुनता है तथा संचालकों तक पहुंचाने का कार्य करता है । वह

कम्पनी के अंशधारियों, कर्मचारियों, श्रमसंघों, सरकार, पूर्तिकर्त्ताओं, उपभोक्ताओं, मध्यस्थों आदि समाज के महत्वपूर्ण वर्गो से सम्पर्क स्थापित करता है तथा उनके विचारों, सुझावों, समस्याओं, अधिकारों, कर्त्तव्यों, नीतियों, सुविधाओं आदि से कम्पनी के संचालक मण्डल को अवगत करवाने का कार्य करता है । इस तरह सचिव कम्पनी के लिए कान की भूमिका का निर्वाह करता है ।

सचिव कम्पनी की आँखें - आँखें देखने का कार्य करती हैं । कानों की सुनी झूठी हो सकती है किन्तु आँखों की देखी झूठी नहीं हो सकती है । कम्पनी में सचिव केवल कानों का कार्य ही नहीं करता है बल्कि अपनी आँखों से भी वास्तविकता का अवलोकन करता है तथा सुनी हुई बातों को आँखों से देखकर वास्तविकता की जानकारी प्राप्त करता है । एक और जहाँ कम्पनी के संचालक व पूर्णकालिक उच्चाधिकारी बहुत व्यस्त होते हैं तथा कम्पनी के सभी कार्यो का स्वयं व्यक्तिश: निरीक्षण नहीं कर पाते हैं वहां कम्पनी सचिव उन सभी कार्यो की स्वयं देखभाल एवं निरीक्षण करता है जिन्हें संचालक नहीं देख पाते । सचिव जो कुछ देखता है वही संचालकों को अवगत करवाने का प्रयास करता है । वह कानों से सुनी तथा आँखों से देखी बातों को सही रूप में संचालकों के समक्ष प्रकट करने का प्रयास करता है ।

सचिव कम्पनी के हाथ - संचालक मण्डल जहाँ कम्पनी की नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं का निर्धारण करता है वहाँ कम्पनी सचिव उन्हें क्रियान्वित या कार्य रूप में परिणित करता है । अत: कम्पनी सचिव को कम्पनी के हाथ के रूप मे माना जा सकता है । वास्तव में वह कम्पनी की ओर से सभी महत्वपूर्ण कार्य करता है । वह कम्पनी के निर्माण के पूर्व से लेकर कम्पनी की समाप्ति तक सभी प्रकार के कार्य करता है । कम्पनी के दिन-प्रतिदिन के अनेक कार्य वह स्वयं ही करता है । कम्पनी का प्रविवरण तैयार करना, अंश जारी करना, सभाएं बुलाना, सभाओं का कार्य वृतान्त लिखना, अन्तिम खाते तैयार करवाना, संचालकों का प्रतिवेदन तैयार करना, संचालकों की सभाओं का आयोजन करना, समय-समय पर विभिन्न सूचनाएं तथा प्रपत्र कम्पनी के रजिस्ट्रार के पास भेजना, प्रबन्धकों द्वारा मांगी जाने वाली रिपोर्ट तथा सूचनाएं उपलब्ध करना, लाभांश वितरित करना, अंश हस्तान्तरणों का पंजीयन करना आदि महत्वपूर्ण कार्य सचिव ही करता है । इसके अतिरिक्त अंशों का आवंटन, अंशों पर याचना राशि की मांग करना, अंशों का हस्तांकन करना, अंश प्रमाण पत्र तैयार करना आदि कार्य भी वही करता है । इस तरह कम्पनी सचिव कम्पनी रूपी शरीर में हाथों की भूमिका का निर्वाह भी करता

13.5.2 संचालकों का मार्गदर्शक

सचिव संचालकों का सलाहकार या मार्गदर्शक भी होता है । प्रबन्ध सम्बन्धी अनेक मामलों में निर्णय के दौरान संचालक सचिव से परामर्श करते हैं और उसकी राय के अनुसार निर्णय कर सकते हैं । कानूनी मामलों में तो संचालक सचिव पर ही निर्भर होते है | **सचिव कानून का सेवक भी है ।** उसे संचालकों के उन आदेशों के पालन के साथ-साथ कानून की रक्षा करनी चाहिए । सचिव को विभिन्न कानूनों का समुचित ज्ञान होता है अत: वह वैधानिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सहयोग करता है ।

13.5.3 संचालकों का प्रवक्ता

सचिव संचालकों के निर्णयों से विभिन्न पक्षकारों को अवगत कराता है । कम्पनी सचिव संचालक मण्डल की सभाओं का आयोजन करता है, संचालक मण्डल की सभाओं में उपस्थित होता है, सभाओं के सूक्ष्म लिखता है और निर्णयों को क्रियान्वित करता है । अतएव संचालक मण्डल की ओर से सूचनाएं देने हेतु भी उसे अधिकृत माना जाता है । सचिव वही कहता है जो संचालकों द्वारा उसे करने के लिए कहा जाता है । वह संचालकों के विचारों को शब्द प्रदान करता है ।

13.5.4 सचिव की कम्पनी में स्थिति साइकिल के पहिये में धुरी के समान

जी.के. बकनेल के अनुसार "कम्पनी में सचिव का वही महत्व है जो साईकिल के पहिये में हब का होता है जिससे सारी ताडियां जुड़ी होती हैं ।" धूरी के बिना पहिया चल नहीं सकता । सचिव के बिना भी कम्पनी के सभी अंग सुचारू रूप से कार्य नहीं कर सकते । सचिव की कम्पनी में हब के समान केन्द्रीय स्थिति होती है । कम्पनी की सफलता बहुत सीमा तक सचिव की कार्य कुशलता पर निर्भर है ।

एक साईकिल अपनी धूरी के द्वारा संचालित होती है, ठीक उसी प्रकार कम्पनी सचिव समस्त कार्यो तथा गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु होता है । जिस प्रकार धुरी के माध्यम से साईकिल गतिमान होती है व चलने में समर्थ होती है, उसी प्रकार कम्पनी सचिव कम्पनी को गतिमान रखता है ।

13.6 नियुक्ति की विधियाँ

यद्यपि कम्पनी अधिनियम में सचिव की नियुक्ति की विधि नहीं दी गयी है तथापि कम्पनी सचिव की नियुक्ति निम्नलिखित प्रकार से की जा सकती है

- **प्रवर्तकों द्वारा नियुक्ति -** प्रथम सचिव की नियुक्ति प्रायः प्रवर्तकों द्वारा कम्पनी समामेलन के पूर्व ही कर दी जाती है । समामेलन के बाद विधिवत् रूप से उसे कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्त कर दिया जाता है एवं इस हेतु संचालक मण्डल द्वारा आवश्यक प्रस्ताव पारित कर दिया जाता है ।
- **अन्तर्नियमों द्वारा नियुक्ति** - प्रायः कम्पनी के अन्तर्नियमों में यह व्यवस्था कर दी जाती है कि कौन व्यक्ति कम्पनी का सचिव होगा । इस दशा में अन्तर्नियमों में वर्णित व्यक्ति कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्ति किया जा सकता है । किन्तु अन्तर्नियमों में किसी व्यक्ति की सचिव के रूप में नियुक्ति का प्रावधान होने से ही वह कम्पनी का सचिव नहीं बन जाता है । यदि कम्पनी अन्तर्नियमों में उल्लिखित व्यक्ति को सचिव के रूप में नियुक्ति नहीं करती है तो वह कम्पनी पर वाद प्रस्तुत करके भी कम्पनी का सचिव नियुक्त नहीं हो सकता है । इसका कारण यह है कि अन्तर्नियम कम्पनी के आन्तरिक नियम हैं जो तीसरे पक्षकारों के साथ अनुबन्धात्मक सम्बन्ध स्थापित नहीं करते । ये नियम केवल सदस्यों तथा कम्पनी के बीच के संचालन सम्बन्धी शर्तों के रूप में होते हैं जो कम्पनी तथा सदस्यों को आपस में बाध्य करते हैं, न कि किसी बाहरी व्यक्ति को । परन्तु जब अन्तर्नियमों में उल्लिखित व्यक्ति को सचिव के रूप में नियुक्त कर दिया जाता है तो उसे तब

तक नहीं हटाया जा सकता है जब तक कि अन्तर्नियमों में ही परिवर्तन नहीं कर दिया गया हो । अत: अन्तर्नियमों में उल्लिखित नाम वाले व्यक्ति की नियुक्ति होने के बाद वह व्यक्ति तब तक सेवा मुक्त नहीं किया जा सकता जब तक कि अन्तर्नियमों में आवश्यक परिवर्तन कर उसका नाम हटा नहीं दिया जाता ।

- **संचालकों द्वारा नियुक्ति** - प्रायः सचिव की नियुक्ति संचालक मण्डल द्वारा ही की जाती है । यदि कम्पनी के समामेलन के पूर्व ही प्रवर्तकों द्वारा किसी को कम्पनी सचिव के रूप में नियुक्त कर भी दिया जाता है तो भी संचालक मण्डल को उसकी नियुक्ति का अनुमोदन करने के लिए प्रस्ताव पारित करना होता है । यदि अन्तर्नियमों में किसी व्यक्ति विशेष को नियुक्ति करने की व्यवस्था है तो भी व्यवहार में अलग से ही नियुक्ति पत्र तैयार किया जाता है । उसकी नियुक्ति की शर्तें, वेतन आदि संचालक मण्डल तय करता है । अत: प्रायः कम्पनी में **कम्पनी सचिव की नियुक्ति संचालक मण्डल का ही अधिकार है । अनुसूची प्रथम की सारणी अ के नियम 82(1) में भी यही लिखा है कि कम्पनी के संचालक कम्पनी सचिव की नियुक्ति कर सकते हैं । वे उचित समझें उन शर्तों तथा पारिश्रमिक पर कम्पनी सचिव की नियुक्ति कर सकते हैं ।** इस आशय का प्रस्ताव संचालक मण्डल को पारित करना पड़ता है ।

13.7 कम्पनी सचिव के गुण

कम्पनी सचिव कम्पनी का एक महत्त्वपूर्ण अधिकारी होता है । एक तरफ वह कम्पनी के दैनिक कार्यो का निपटारा करता है तो दूसरी और प्रबन्धकों व संचालकों को सलाह प्रदान करता है । वह वैधानिक विशेषज्ञ के साथ ही व्यावहारिक गुणों से परिपूर्ण होते हैं । कम्पनी सचिव के गुणों की आवश्यकता प्रतिपादित करते हुए प्रसिद्ध विधि विशेषज्ञ रमैया ने लिखा है, "कम्पनी सचिव कम्पनी व्यवसाय का विशिष्ट ज्ञान रखता है । वह कर्मवान व तीक्ष्ण बुद्धि का होना चाहिए ताकि वह व्यवसाय सम्बन्धी सभी जानकारी रख सके तथा कम्पनी को प्रभावित करने वाले सभी वैधानिक प्रावधानों व नियमों से भली-भांति परिचित रह सके ।" एक अच्छे कम्पनी सचिव के गुणों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है:

(i)पेशेवर गुण (ii)व्यक्तिगत गुण

13.7.1 पेशेवर गुण

प्रत्येक कम्पनी सचिव में निम्नलिखित पेशेवर योग्यताएं होनी चाहिए:

- उसे कम्पनी अधिनियम के अतिरिक्त, एकाधिकार एवं प्रतिबन्धात्मक व्यापार व्यवहार अधिनियम, विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम, श्रम एवं कर सम्बन्धी अधिनियमों की अच्छी जानकारी होनी चाहिए ।
- उसे व्यापारिक व वाणिज्यिक अधिनियमों, विनिमय विपत्र अधिनियम, वस्तु विक्रय, बीमा अधिनियमों की सम्पूर्ण समझ होनी चाहिए ।
- उसे कम्पनी के व्यवसाय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए ।
- उसे लेखाकर्म के सिद्धान्तों की अच्छी समझ होनी चाहिए ।

- उसे व्यवसाय प्रशासन के सिद्धान्तों व व्यवहार की जानकारी होनी चाहिए ।
- उसे कम्पनी की सभाओं सम्बन्धी वैधानिक प्रावधानों व क्रिया-विधि की पूर्ण समझ होनी चाहिए ।
- उसे बैंकिंग व वित्तीय विषयों का ज्ञान होना चाहिए ।
- उसे कार्यालय क्रियाविधियों से भली-भांति परिचित होना चाहिए ।
- उसे अंग्रेजी एवं स्थानीय भाषा के लेखन व संभाषण पर अच्छा नियंत्रण होना चाहिए ।
- साथ ही एक अथवा अधिक विदेशी भाषाओं की जानकारी भी होनी चाहिए ।
- उसमें अन्य गुण यथा सेवा भावना, जन भावना का आदर, दूसरे व्यक्तियों के साथ व्यवहार की योग्यता एवं अच्छे सामान्य ज्ञान से युक्त होना चाहिए ।

13.7.2 व्यक्तिगत गुण

एक सचिव को अपने पेशे में उत्तकृष्ठता हांसिल करने के लिए कुछ निजी गुणों से युक्त होना चाहिए । इनमें कुछ प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं:

- प्रभावित करने वाला व्यक्तित्व
- उत्तरदायित्व की भावना
- कल्पनाशीलता
- तीक्ष्ण बुद्धि
- दूरदर्शिता
- ईमानदारी
- परिपक्वता
- विस्तृत दृष्टिकोण
- गतिशील चिंतन
- सहकारी प्रकृति
- सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, एवं
- परिस्थितियों को समझने की योग्यता
- संगठन क्षमता
- विद्धता
- मानवीय दृष्टिकोण

13.8 कम्पनी सचिव के कर्त्तव्य

कम्पनी अधिनियम में कम्पनी सचिव के कर्त्तव्यों का कोई उल्लेख नहीं है । किन्तु कम्पनी सचिव की कम्पनी में स्थिति से उसके कर्त्तव्यों का आभास होता है । उसके कर्त्तव्यों का निर्धारण कम्पनी के आकार व प्रकृति के द्वारा भी होता है । न्यायमूर्ति पामर के अनुसार, "कम्पनी सचिव के कर्त्तव्य कम्पनी के आकार, प्रकृति तथा उसके साथ किये गये अनुबन्ध पर आश्रित हैं । किन्तु प्रत्येक दशा में वह कम्पनी की सभाओं में उपस्थित रहेगा व उनके उपयुक्त तरीके से सूक्ष्म दर्ज करेगा ।" सचिव के कर्त्तव्यों को निम्नलिखित भागों में व्यक्त किया जा सकता है :

13.8.1 वैधानिक कर्त्तव्य

इन कर्तव्यों का पालन वैधानिक रूप से आवश्यक है एवं इनके उल्लंघन की दशा में ' सचिव को दण्ड दिया जा सकता है । कम्पनी सचिव के वैधानिक कर्त्तव्यों में निम्नलिखित अधिनियमों सम्बन्धी कर्त्तव्यों को सम्मिलित किया जाता है -

(अ) कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कर्त्तव्य - कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत सचिव के प्रमुख कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं -

- **पंजीयक के समक्ष प्रपत्र फाइल करना -** कम्पनी सचिव को कम्पनी पंजीयक के पास विभिन्न प्रपत्रों व सूचनाओं को फाइल करना चाहिए जैसे - प्रविवरण, वैधानिक सभा का प्रतिवेदन, वार्षिक प्रत्याय, आवंटन प्रत्याय, बंधक, प्रभारी के विवरण आदि ।
- **रजिस्टरों संबंधी कर्त्तव्य -** सचिव को विभिन्न वैधानिक पुस्तकें तैयार करना और नियमानुसार रखना चाहिए । विनियोग रजिस्टर, प्रभार रजिस्टर, सदस्यों का रजिस्टर, ऋणपत्रधारियों का रजिस्टर, लेखा पुस्तकें आदि को अधिनियम के अनुसार रखने का कर्त्तव्य भी सचिव का है ।
- **सभाओं सम्बन्धी कार्य -** कम्पनी की सभाओं से संबंधित कार्य जैसे - समय पर सभा बुलाना, सभा की सूचना, कार्यक्रम को तैयार करवाना, कार्यक्रम की सूचना, सभा के पूर्व, सभा के समय व सभा के पश्चात् के सभी कार्य सचिव द्वारा किए जाने चाहिए ।
- **अन्य कार्य** - याचना राशि प्राप्त करना, अंश हस्तान्तरण, हस्तांकन का पंजीयन, अंश हरण करना आदि कार्य भी सचिव द्वारा सम्पादित किए जाते है ।

  सचिव द्वारा कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत भी अनेक कर्त्तव्यों का पालन किया जाता है । अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन पर कुछ मामलों में उसे कारावास या आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है ।

  (ब) मुद्रांक शुल्क अधिनियम के अन्तर्गत कर्त्तव्य - इस अधिनियम के अन्तर्गत सचिव का कर्त्तव्य है कि कम्पनी के कार्यालय से निर्गमित किए जाने वाले आवंटन पत्र, अंश प्रमाण पत्र, अंश हस्तान्तरण पत्र, अंश अधिपत्र, प्रतिज्ञा पत्र, बन्धक तथा प्रभार आदि वैधानिक प्रपत्रों पर आवश्यक मुद्रांक लगवाना सुनिश्चित करें ।

  (स) आयकर अधिनियम के अन्तर्गत कर्त्तव्य - आयकर अधिनियम के अन्तर्गत भी कम्पनी सचिव को चाहिए कि वह कम्पनी में स्त्रोत पर आयकर की कटौति करे तथा कम्पनी के अधिकारियों और कर्मचारियों को दिए जाने वाले वेतन, लाभांश और ब्याज की राशि के भुगतान से पूर्व आवश्यक आयकर की राशि की कटौती करने हेतु कार्यालय को निर्देशित करें । आयकर कटौती की राशि को सरकारी कोष में जमा कर सम्बन्धित कर्मचारियों को कटौती या पत्र निर्गमित करवाएं ताकि आयकर अधिकारी से इस आधार पर आयकर की कटौती की छूट प्राप्त कर सके । सचिव को चाहिए कि कम्पनी की वार्षिक आयकर विवरणी समय पर आयकर कार्यालय में प्रस्तुत करें । आयकर अधिकारियों द्वारा और जानकारी चाहने पर सचिव को प्रस्तुत करनी चाहिए ।

  (द) एकाधिकारी एवं प्रतिबन्धात्मक व्यापार व्यवहार अधिनियम के अन्तर्गत - इस अधिनियम के अन्तर्गत सचिव को प्रतिबन्धात्मक व्यापार व्यवहारों के अन्तर्गत कुल परिसम्पत्तियाँ निर्धारित सीमा से अधिक होने की दशा में केन्द्र सरकार के पास पंजीकरण कराना होता था । तथापि अब इस प्रावधान को समाप्त कर दिया गया है ।

  (य) उत्पादन शुल्क व बिक्री कर अधिनियम के अन्तर्गत कर्त्तव्य - उक्त अधिनियमों के प्रावधानों के अनुसार सम्बन्धित अधिकारियों के समक्ष कर प्रत्याय भर कर बिक्री कर जमा कराने का कर्त्तव्य भी सचिव का होता है ।

(र) अन्य अधिनियमों के अन्तर्गत - विदेशी विनिमय प्रबन्ध अधिनियम 1999, कारखाना अधिनियम 1948, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, मजदूरी भुगतान अधिनियम, व 1936, औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947, भविष्य निधि अधिनियम 1952, बोनस भुगतान अधिनियम, ग्रेच्यूटी भुगतान अधिनियम, मातृत्व लाभ अधिनियम, श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम इत्यादि श्रम एवं औद्योगिक कानूनों तथा अन्य व्यावसायिक सन्नियमों के अन्तर्गत भी सचिव को अनेक कर्त्तव्यों का निर्वाह करना चाहिए ।

13.8.2 अंशधारियों के प्रति कर्त्तव्य

अंशधारी कम्पनी को पूँजी प्रदान करते हैं । सचिव कम्पनी का वह अधिकारी है जो कम्पनी के सदस्यों को कम्पनी के सम्बन्धी जानकारी तथा सूचना प्रदान करते हैं । सचिव द्वारा कम्पनी की सभा की सूचना प्रत्येक सदस्य को ठीक समय पर भिजवाई जानी चाहिए । निर्गमित अंशों के प्रमाण पत्र या अंश अधिपत्र सदस्यों को सुपुर्दगी हेतु समय पर तैयार रखना चाहिए । सामान्य सभा में लाभांश घोषित किये जाने पर निर्धारित समय के अन्दर इसके वितरण का प्रबन्ध करना चाहिए । अंशों के हस्तान्तरण का पंजीयन समय पर करना चाहिए । सदस्यों के रजिस्टर का निरीक्षण, उसको बन्द करने तथा उसकी प्रतिलिपि देने सम्बन्धी नियमों का पालन करना चाहिए । सचिव को कम्पनी एवं सदस्यों के हित में कार्य करना चाहिए । कर्त्तव्यों का पालन न करने की दशा में उस पर कम्पनी विद्यान के अन्तर्गत अर्थदण्ड लगाया जा सकता है या कारावास या दोनों दण्ड एक साथ दिये जा सकते हैं ।

13.8.3 संचालकों के प्रति कर्त्तव्य

सचिव संचालक मण्डल के लिए अत्यावश्यक भूमिका का निर्वाह करता है वह उनके लिए कान, आँख तथा हाथ की भाँति माना गया है । संचालको का मार्गदर्शक, सलाहकार तथा विश्वसनीय होने के नाते सचिव के निम्नांकित कर्त्तव्य होते है :

- संचालक मण्डल की वांछित सभायें बुलाना ।
- सभा की नियमानुसार समय पर सूचना देना ।
- सभाओं की व्यवस्था करना ।
- कार्यक्रम तैयार करना, सभा की कार्यवाही का आलेख तैयार करना, सभा में उपस्थित व्यक्तियों/ संचालकों के हस्ताक्षर करवाना ।
- सभा अध्यक्ष की सहायता करना ।
- संचालकों को कम्पनी की आंतरिक स्थिति की पूर्ण जानकारी देना ।
- विभिन्न विषयों पर संचालकों को उचित परामर्श देना ।
- संचालकों के निर्णयों का पालन करवाना, निर्णयों को कार्यान्वित करना ।
- खातों, आकड़ों, प्रगति घटनाक्रमों तथा श्रम समस्याओं से संचालकों का अवगत कराना।
- संचालकों के निर्णयों की जानकारी अंशधारियों तथा अन्य सम्बन्धित पक्षकारों को देना।
- वैधानिक मामलों में संचालकों को परामर्श देना ।
- संचालक मण्डल की ओर से पत्र व्यवहार करना ।

- कानूनी औपचारिकताओं के सम्बन्ध में संचालक मण्डल को जानकारी देना व उन्हें सम्पादित करवाना ।

कम्पनी सचिव संचालकों का प्रवक्ता माना जाता है अत: उसे वही कहना एवं निष्पादित करना चाहिए जैसा संचालक कहें ।

13.8.4 कार्मिकों के प्रति कर्त्तव्य

कम्पनी सचिव संचालको एवं कर्मचारियों के मध्य एक प्रभावी कड़ी है । सचिव संचालकों के निर्णय कर्मचारियों तक पहुंचाता है । उसे कार्मिक हित व कल्याण को ध्यान में रखना चाहिए । वह संचालकों एवं कर्मचारियों के बीच समन्वयक की भूमिका निभाता है ।

13.8.5 सामान्यजन के प्रति कर्त्तव्य

कम्पनी सचिव रमे सामान्य जन भी कम्पनी विषयक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं । उसे सामान्य जनता द्वारा समय-समय पर मांगी जाने वाली सूचनाएं अविलम्ब देनी चाहिए । सचिव को सामान्य जनता के साथ उचित व्यवहार करना चाहिए ताकि कम्पनी की अच्छी छवि बन सके।

13.8.6 कार्यालय सम्बन्धी कर्त्तव्य

कम्पनी सचिव को कार्यालय में आने जाने वाले पत्रों का उचित अभिलेख, वर्गीकरण एवं संरक्षण करना चाहिए । आने वाले पत्रों का समय पर प्रत्युत्तर दिया जाना चाहिए तथा उचित फाइलिंग व अनुक्रमणिका प्रक्रिया तय करनी चाहिए ।

13.8.7 ऋणदाताओं के प्रति कर्त्तव्य

ऋणदाताओं के प्रति सचिव के निम्न प्रमुख कर्त्तव्य हैं -

- यथा समय ऋणपत्रों पर ब्याज का भुगतान ।
- ऋणपत्रों के परिपक्व होने पर सूचित करना तथा भुगतान की व्यवस्था ।
- ऋणदाताओं द्वारा मांगी गई सूचना समय पर उपलब्ध कराना ।
- आवश्यक होने पर ऋणदाताओं की सभा को आयोजित करना ।
- ऋणदाताओं की समस्याओं के उचित व त्वरित निराकरण की व्यवस्था करना ।

13.8.8 विविध कर्त्तव्य

कम्पनी सचिव कम्पनी का प्रमुख एवं विश्वस्त अधिकारी होता है, उसे अनेक पक्षकारों, व्यक्तियों या संस्थाओं के साथ सम्पर्क करना पड़ता है । वह कम्पनी का प्रतिनिधित्व भी करता है तथा आकस्मिक परिस्थितियों में उसे कम्पनी के अधिकारों, हितों तथा सम्पत्तियों की रक्षा हेतु अनेक कार्य करने होते हैं ।

कम्पनी पंजीयन से पूर्व व पश्चात् कम्पनी सचिव के कर्त्तव्य -

पंजीयन से पूर्व - कम्पनी सचिव की नियुक्ति जब प्रवर्तकों द्वारा कम्पनी के पंजीयन पूर्व ही कर दी जाती है तो सचिव द्वारा कम्पनी पंजीयन से पूर्व निम्न कर्त्तव्यों का निर्वाह किया जाता है :

- नाम की अनुमति प्राप्त करना ।
- पार्षद सीमानियम व पार्षद अन्तर्नियम तैयार करना ।
- प्रारम्भिक अनुबंध का प्रारूप तय करना ।
- कम्पनी के गठन सम्बन्धी अन्य प्रपत्र तैयार करना यथा संचालकों की सहमति लेना ।

- प्रविवरण तैयार करना ।
- कम्पनी के निर्माण कार्य में हित रखने वाले व्यक्तियों की सभा बुलाना व महत्त्वपूर्ण विषयों पर उनकी स्वीकृति लेना ।
- पंजीयक के पास पार्षद सीमानियम, अन्तर्नियम आदि प्रपत्रों की प्रतिलिपियां प्रस्तुत करना ।
- पंजीयन शुल्क जमा करवाना । आवश्यक अनुमतियाँ व अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करना । . कम्पनी पंजीयन हेतु अन्य वैधानिक औपचारिकताओं को सुनिश्चित करना ।

पंजियन के बाद के कर्त्तव्य - पंजीयन के पश्चात् कम्पनी सचिव द्वारा किये जाने वाले कार्यो की सूची बहुत विस्तृत है । अत: यहां केवल समामेलन के तुरन्त बाद किये जाने वाले सचिवीय कर्त्तव्यों का वर्णन किया गया है :

- संचालक मण्डल की सभाएं बुलाना ।
- संचालक मण्डल की सभाओं में अध्यक्ष की नियुक्ति करना ।
- कम्पनी के बैंकर, दलाल, सचिव आदि की नियुक्ति करना ।
- कम्पनी की सार्वमुद्रा की पुष्टि करना ।
- कार्यवाहक संख्या निश्चित करना ।
- कम्पनी सचिव को आवश्यक अधिकार देना ।
- प्रविवरण अथवा स्थानापन्न प्रविवरण पर संचालकों के हस्ताक्षर कराना और उसकी एक प्रति रजिस्ट्रार के पास भेजना ।
- अंश आवंटन हेतु प्रस्ताव पारित कराना व आवंटन सूची तैयार करना ।
- आवंटन विवरण रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करना ।
- कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय की सूचना रजिस्ट्रार को भेजना ।
- कम्पनी के नाम का बोर्ड पंजीकृत कार्यालय के बाहर लगवाना ।
- व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र लेने के लिए आवश्यक कार्यवाही करना ।
- कम्पनी के आवश्यक प्रपत्रों को छपवाना ।

13.9 दायित्व

कम्पनी सचिव को कम्पनी में अनेक कार्य करने होते हैं । यदि वह उन कार्यो को ठीक से पूरा नहीं करता है तो उसके अनेक दायित्व उत्पत्र हो सकते हैं, जिन्हें मुख्य रूप से निम्नलिखित दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है -

13.9.1 कम्पनी के प्रति दायित्व

सचिव चूँकि कम्पनी में अनेक भूमिकाओं का निर्वाह करता है अत: उसे अपने कार्य संपादन के लिए अनेक अधिकार प्राप्त होते हैं साथ ही उसके कम्पनी के प्रति कुछ दायित्व भी होते है जो निम्नानुसार है -

(अ) लापरवाही की दशा में दायित्व - कम्पनी सचिव को कम्पनी का कार्य पूर्ण सतर्कता से करना चाहिये । यदि वह कम्पनी के कार्यो के निष्पादन में लापरवाही बरतता है और उससे कम्पनी को क्षति होती है तो ऐसी क्षति की पूर्ति के लिए सचिव उत्तरदायी होता है । यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में यह व्यवस्था भी कर दी गई हो कि सचिव लापरवाही

के लिए भी व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं होगा तो भी वह अपने दायित्व से बच नही सकता ।

(ब) कपटपूर्ण कार्यो के लिए दायित्व - कम्पनी सचिव के कपटपूर्ण तरीके से कार्य करने की दशा में सचिव को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।

(स) व्यक्तिगत हित के लिए कार्य करने की दशा में दायित्व - कम्पनी सचिव यदि अपने व्यक्तिगत हित के लिए कम्पनी के साधनों एवं धन का उपयोग करता है तो वह कम्पनी को हुयी क्षति को पूरा करने के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।

(द) अधिकारों के बाहर कार्य करने की दशा में दायित्व - जब सचिव अपने अधिकारों के बाहर कार्य करता है एवं उसके परिणामस्वरूप कम्पनी को कोई हानि उठानी पड़ती है तो सचिव कम्पनी की हानि की भरपाई के लिए उत्तरदायी होता है । किन्तु यदि सचिव कम्पनी के अधिकारों के भीतर कार्य करता है तो उसके फलस्वरूप हुयी हानि के लिए वह न तो कम्पनी और न ही बाह्य पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।

13.9.2 विधान के प्रति दायित्व

कम्पनी सचिव का कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत भी दायित्व है । यदि वह कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं का पालन नहीं करता है तो उसे दण्डित किया जा सकता है तथा कुछ दशाओं में कारावास की सजा भी दी जा सकती है । इस श्रेणी में सचिव के प्रमुख दायित्व निम्नलिखित हैं:

- **प्रमाण पत्र सुपुर्दगी हेतु तैयार करने पर -** अंश या ऋण पत्र आवंटन के तीन माह के भीतर और अंश या ऋण पत्र हस्तान्तरण हेतु आवेदन प्राप्ति के दो माह के भीतर अंश या ऋण प्रमाण पत्र सुपुर्दगी हेतु तैयार नहीं किये जाने पर कम्पनी और प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 5,000 रूपये प्रतिदिन आर्थिक दण्ड किया जा सकता है । (धारा 113)
- **ऋणदाता का नाम छुपाने पर -** कम्पनी की पूंजी कम करते समय किसी ऋणदाता के नाम को जान बूझकर छिपाने पर, जिसे पूंजी की कमी पर एतराज उठाने का अधिकार है सचिव उत्तरदायी होता है । जैसे- ऋण की प्रगति या राशि के सम्बन्ध में जानबूझकर मिथ्या वर्णन करता है, तो ऐसे दोषी अधिकारी (जिसमें सचिव भी सम्मिलित है) को एक वर्ष तक के कारावास या आर्थिक दण्ड या दोनों दिये जा सकते हैं । (धारा 105)
- **अंश अधिपत्र की प्रविष्टि -** अंश अधिपत्र निर्गमन किये जाने पर उसकी प्रविष्टि सदस्यों के रजिस्टर में नहीं करने पर सचिव पर 500 रूपये प्रतिदिन तक आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है । (धारा 115)
- **प्रभार सम्बन्धित प्रविष्टि -** प्रभार से सम्बन्धित प्रविष्टियां करने से त्रुटि करने पर दोषी अधिकारी पर 5000 रू. तक प्रतिदिन की दर से जुर्माना किया जा सकता है । यह जुर्माना तब तक जारी रहेगा जब तक त्रुटि चलती रहेगी । (धारा 142)
- **विशेष प्रस्तावों का पंजीयन -** सचिव द्वारा विशेष प्रस्ताव का पंजीयन करने में त्रुटि किये जाने पर उसे 250 रूपये प्रतिदिन तक अर्थदण्ड दिया जा सकेगा । [धारा 192(5)]

- **कम्पनी का नाम का प्रकाशित न करने पर -** यदि कम्पनी के नाम का पट्ट पंजीकृत कार्यालय पर अथवा बिलों, लेटरहेड, विज्ञापन आदि में मुद्रित नहीं किया जाता है अथवा कम्पनी की सील पर कम्पनी का नाम खुदवाया नहीं जाता है, तो सचिव पर 500 रू. तक का अर्थदण्ड किया जा सकता है । (धारा 147)
- **सदस्यों का रजिस्टर -** कम्पनी के सदस्यों के नाम, पते उनके नाम द्वारा धारित अंशों की संख्या, सदस्य बनने की तारीख, सदस्यता छोड़ने की तारीख आदि से युक्त सदस्य-रजिस्टर न रखने पर कम्पनी और कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 5० रू. प्रतिदिन तक अर्थदण्ड किया जा सकता है । (धारा 150)
- **मण्डल सभा की सूचना -** यदि सचिव प्रत्येक संचालक को मण्डल सभा की सूचना उचित पते पर नहीं भेजता है तो उस पर 1000 रूपये का अर्थदण्ड दिया जा सकेगा । (धारा 266)
- **सदस्यों की सूची -** यदि २रचिव कम्पनी के सदस्यो या ऋणपत्रधारियों का रजिस्टर व उनकी अनुक्रमणिका बनाने में त्रुटि करता है तो उसे 500 रूपये प्रतिदिन तक के अर्थदण्ड से दण्डित किया जा सकता है । [धारा 303(3)]
- **सदस्य रजिस्टर का निरीक्षण करना -** यदि सदस्य रजिस्टर के निरीक्षण कराने में कोई त्रुटि की जाती है तो उस पर 500 रूपये तक का अर्थदण्ड किया जा सकता है । (धारा 304)
- **वैधानिक सभा बुलाने व वैधानिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने में त्रुटि-** कम्पनी द्वारा वैधानिक सभा बुलाने व वैधानिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने में त्रुटि करने पर सचिव सहित प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 5000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड किया जा सकता है । (धारा 163)
- **वार्षिक प्रत्याय -** यदि कम्पनी धारा 159,160,161 के प्रावधानों के अनुसार रजिस्ट्रार के पास वार्षिक प्रत्याय प्रस्तुत करने में त्रुटि करती है, तो कम्पनी तथा सचिव कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 500 रूपये प्रतिदिन का अर्थदण्ड किया जा सकता है । (धारा 162)
- **वार्षिक साधारण सभा बुलाने में त्रुटि -** कम्पनी की तरफ से धारा 166 व 167 के अनुसार समय पर वार्षिक साधारण सभा न बुलाने पर दोषी अधिकारी पर 50000 रूपये तक आर्थिक दण्ड किया जा सकता है । (धारा 168)
- **वार्षिक सभा में चिट्ठा व लाभ-हानि खाता प्रस्तुत न करना -** कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में वार्षिक चिट्ठा व लाभ-हानि प्रस्तुत न करने पर दोषी अधिकारी को 6 माह तक का कारावास या 50000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड या दोनों दिये जा सकते हैं । (धारा 210)
- **वार्षिक खातों के साथ संचालकों का प्रतिवेदन नत्थी न करना-** कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में वार्षिक चिट्ठा या लाभ-हानि खाता के साथ संचालकों की रिपोर्ट संलग्न नहीं करने पर दोषी अधिकारी पर 20000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड या 6 माह का कारावास या दोनों दिये जा सकते हैं । (धारा 217)

- **सभा के सूक्ष्म लिखने में त्रुटि -** कम्पनी की सभाओं व संचालक मण्डल की सभाओं के सूक्ष्म लिखने में त्रुटि करने पर कम्पनी के दोषी अधिकारी पर 500 रूपये तक का आर्थिक दण्ड किया जा सकता है । (धारा 193)
- **प्रस्तावों का प्रसारण -** सदस्यों द्वारा कम्पनी को भेजे प्रस्तावों को सदस्यों में प्रसारित नहीं किये जाने पर दोषी अधिकारी पर 5000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड किया जा सकता है । (धारा 188)
- **संचालकों इत्यादि का दायित्व असीमित करने पर सूचना देना - धारा 322** के अधीन संचालकों इत्यादि का दायित्व असीमित किए जाने पर उसे नियमानुसार सूचित नहीं किया जाता है तो एक हजार रूपये तक के अर्थदण्ड के साथ उन्हें होने वाली क्षति की पूर्ति का दायित्व सचिव का होगा । (धारा 322)

13.10 सारांश

कम्पनी सचिव की भूमिका कम्पनी में अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है । वह कम्पनी की नीतियों के निर्धारण, कार्य सम्पादन व उद्देश्यों की अधिप्राप्ति में योगदान देता है । वह संचालकों का प्रवक्ता' होता है तथा कम्पनी रूपी शरीर में वह नाक, कान व हाथ का कार्य करता है । वह संचालकों, अंशधारियों, अन्य हित समूहों व सामान्यजन के मध्य समन्वयक की भूमिका निभाता है । वह कम्पनी का कार्यालय प्रमुख होता है तथा कम्पनी से सम्बद्ध सभी वैधानिक प्रावधानों का विशेषज्ञ होता है । कम्पनी सचिव की कुछ तय योग्यताएँ हैं । वह एक पेशेवर व्यक्ति है जिसे अनेक कर्त्तव्यों का निर्वाह करना होता है । अपने कर्त्तव्यों को ठीक से पूरा न करने की दशा में उसे आर्थिक एवं शारीरिक रूप से दण्डित किया जा सकता है ।

13.11 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी सचिव से क्या आशय है? पूर्णकालिक सचिव कौन हो सकता है?
2. कम्पनी सचिव की योग्यताएं बतलाइये ।
3. कम्पनी में कम्पनी सचिव की स्थिति को विस्तारपूर्वक समझाइये ।
4. "सचिव संचालकों का प्रवक्ता होता है । " व्याख्या कीजिए ।
5. "कम्पनी सचिव कानून का सेवक होता है । "व्याख्या कीजिए ।
6. कम्पनी सचिव को परिभाषित कीजिए । उसकी नियुक्ति की विधियों व कर्त्तव्यों का वर्णन कीजिए ।
7. '"कम्पनी सचिव की स्थिति साइकिल के पहिए में धुरी के समान होती है ।" समझाइए ।
8. कम्पनी सचिव के दायित्वों को विस्तार से समझाइए ।

13.12 उपयोगी सन्दर्भ पुस्तकें

1. **आर.एल. नौलखा :** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2008)
2. **जोशी एवं गोयल.** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (अजमेरा बुक कम्पनी, जयपुर, 2008)

इकाई - 14 : अंश आवंटन कार्यविधि
(Share Allotment Process)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 आवंटन से आशय

14.3 आवंटन का प्रभाव

14.4 अनियमित आवंटन

14.5 आवंटन का परित्याग

14.6 आवंटन सूचना व खेद पत्र का नमूना

14.7 आवंटन पत्र का विभाजन

14.8 आवंटन प्रत्याय का विवरण

14.9 आवंटन प्रत्याय का प्रारूप

14.10 अंशों के आवंटन के सम्बन्ध में सचिवीय कार्यविधि

14.11 सारांश

14.12 शब्दावली

14.13 स्वपरख प्रश्न

14.14 उपयोगी पुस्तकें

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- अंश आवंटन के अर्थ को जान सकेंगे ।
- आवंटन के प्रभाव को समझ सकेंगे ।
- अंश आवंटन प्रक्रिया के चरणों की जानकारी कर सकेंगे ।
- आवंटन परित्याग के आशय को समझ सकेंगे ।
- आवंटन सूचना अथवा खेद पत्र के प्रारूप की जानकारी ले सकेंगे ।
- आवंटन प्रक्रिया में सचिवीय पद्धति को समझ सकेंगे ।

14.1 प्रस्तावना

कम्पनी का समामेलन होने के बाद अंश विक्रय कर आवश्यक पूँजी एकत्र करने की प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है । इस हेतू कम्पनियां प्रविवरण का निर्गमन करती हैं, जिसके साथ ही अंश क्रय करने हेतु आवेदन पत्र का प्रारूप संलग्न किया जाता है । प्रविवरण वास्तव में कम्पनी के द्वारा जनता को स्वयं के अंश क्रय हेतु आवेदन करने का निमन्त्रण है |

14.2 आवंटन से आशय

कम्पनी अधिनियम 1956 में, 'आवंटन' शब्द का प्रयोग अनेक स्थानों पर किया गया है, किन्तु आवंटन को परिभाषित कहीं भी नहीं किया गया है । तथापि आवंटन का शाब्दिक अर्थ 'वितरण' होता है ।

परिभाषाएँ

भारत के सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार, (गोपाल जालान एण्ड कं. बनाम कलकत्ता स्टॉक एक्सचेंज लि., 1984) - "कम्पनी की पूर्व समायोजित पूँजी में से अंशों की कुछ संख्या का एक व्यक्ति को समायोजन ही अंशों का आवंटन है ।"

न्यायाधीश चिट्टी के अनुसार, "आवंटन कम्पनी द्वारा अंश खरीदने के प्रस्ताव की स्वीकृति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है ।"

अत: कम्पनी की जो पूँजी पहले कभी आवंटित नहीं हुई है, वो आवेदक को देना आवंटन कहलाता है । किन्तु जब्त किये गये अंशों का पुनर्निर्गमन किया जाता है तो इसे आवंटन नहीं कहते हैं ।

अंश आवंटन का आशय संचालक मण्डल द्वारा पारित प्रस्ताव के आधार पर अंश-आवेदकों के नाम निश्चित संख्या मे अंशों का वितरण करने से है । आवंटन के द्वारा कम्पनी तथा अंश-आवेदकों के मध्य एक वैध अनुबन्ध का निर्माण होता है जिसके आधार पर आवेदक, कम्पनी के कुछ निश्चित अंशों को खरीदने के लिए एवं कम्पनी आवेदक के नाम अंश आवंटित करने के लिए परस्पर वचनबद्ध होते हैं ।

न्यायाधीश **सरकार** के अनुसार - "आवंटन से आशय कम्पनी की पहले से असमायोजित पूंजी में से अंशों की कुछ संख्या को एक व्यक्ति को समायोजित करने से हैं ।"

आवंटन की विशेषतायें

आवंटन की परिभाषाओं के विश्लेषण से इसकी निम्नलिखित विशेषताएं प्रकट होती हैं:-

- आवंटन से अंशों पर **आवेदक को क्रयाधिकार** प्रदान किया जाता है ।
- अंशों के आवंटन हेतु आवेदक, आवेदक पत्र भेजकर अंश **क्रय करने का प्रस्ताव भेजता है ।**
- आवंटन निश्चित व्यक्ति को उसके आवेदन पर निश्चित संख्या में **अंशों का समायोजन** है ।
- आवेदन पत्र की **स्वीकृति** संचालक मण्डल की सभा में प्रस्ताव पारित कर दी जाती है।
- आवेदन **लिखित या मौखिक** हो सकता है । **अथनर स्पिनिंग एवं विविंग मिल्स लि. बनाम वी.वी.वी. राजेन्दरन** के विवाद में कहा गया कि कम्पनी अधिनियम में कहीं भी यह प्रावधान नहीं है कि अंशों के आवंटन के लिए लिखित आवेदन ही हो ।
- आवंटन द्वारा अंशों व ऋणपत्रों को **भौतिक अस्तित्व** प्राप्त होता है ।
- आवेदित की तुलना में **अल्प संख्या** में भी आवंटन किया जा सकता है ।
- आवंटन के पश्चात् आवेदक व कम्पनी के मध्य **अनुबन्ध व तत्सम्बन्धी दायित्वों का जन्म** हो जाता है ।

- अपहरित अंशों का **पुर्ननिर्गमन आवंटन नहीं** कहलाता है ।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कम्पनी का प्रविवरण प्रस्ताव के लिए निमंत्रण है । अंश खरीदने के लिए आवेदन अंश खरीदने का प्रस्ताव है एवं अंशों का आवंटन प्रस्ताव की स्वीकृति है।

14.3 आवंटन का प्रभाव

- अंशों के लिए आवेदन, अंश क्रय करने के लिए जनता द्वारा कम्पनी के समक्ष प्रस्ताव है।
- जब कम्पनी आवेदन-पत्रों के आधार पर किसी आवेदक को अंशों का आवंटन कर देती है तो यह कम्पनी द्वारा आवेदक के प्रस्ताव (अंश खरीदने) की स्वीकृति है ।
- प्रस्ताव एवं उसकी स्वीकृति से अनुबन्ध का उदय हो जाता है अत: कम्पनी द्वारा अंशों के आवंटन कर देने का प्रभाव यह होता है कि कम्पनी एवं आवेदक के मध्य अनुबन्धात्मक सम्बन्धों का उदय हो जाता है ।
- अनुबन्धात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाने के कारण उनके मध्य वैधानिक दायित्व उत्पन्न हो जाते हैं ।
- वैधानिक दायित्व उत्पन्न हो जाने के कारण -
  (i) कम्पनी को अधिकार है कि वह आवेदकों से आवंटित अंशों पर शेष राशि वसूल कर सकती है, और
  (ii) आवेदक कम्पनी का अंशधारी हो जाता है एवं उसे अंशधारी के समस्त अधिकार प्राप्त हो जाते हैं ।

अंशों के आवंटन के सम्बन्ध में प्रभावी प्रावधानों को दो भागों में बांट कर अध्ययन किया जा सकता है -

(1) सामान्य प्रावधान या नियम
(2) कम्पनी अधिनियम में प्रावधान या शर्तें

(1) **सामान्य प्रावधान -** आवेदकों के प्रस्ताव पर अंशों के आवंटन पर कम्पनी व आवेदकों के मध्य अनुबन्धात्मक सम्बन्धों का उदय होता है । उनके बीच वैध अनुबन्धात्मक सम्बन्धों की स्थापना के लिए अंशों का आवंटन उचित रूप से किया जाना चाहिए । इस हेतु अंशों का आवंटन करते समय निम्नलिखित नियमों का पालन करना अनिवार्य है -

1. **उचित अधिकारी द्वारा आवंटन -** अंशों का आवंटन कम्पनी के उचित एवं अधिकार प्राप्त व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के द्वारा किया जाना चाहिए । सामान्यत: अंशों का आवंटन करने का अधिकार संचालक मण्डल का होता है । संचालक मण्डल चाहे तो इस अधिकार का प्रत्यायोजन भी कर सकता है, लेकिन अन्तर्नियमों में प्रावधान होने पर ही संचालक मण्डल अंश आवंटन का अधिकार प्रबन्ध संचालक प्रबन्धक अथवा किसी अन्य व्यक्ति को सौंप सकता है ।
2. **अंशों का आवंटन व तत्सम्बन्धी सूचना उचित समय में -** भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 6 में कहा गया है कि प्रस्ताव पर स्वीकृति उचित समय में दी जानी चाहिए । यह बात अंशों के आवेदन पत्रों की स्वीकृति (आवंटन) के सम्बन्ध में भी लागू होती है ।

यदि आवेदन के बाद कम्पनी अंशों का आवंटन उचित समय में नहीं करती है तो कम्पनी आवेदकों को उन अंशों को लेने के लिए बाध्य नहीं कर सकती । अंश आवंटन की सूचना भी उचित समय में दी जानी चाहिए ।

3. **आवंटन निर्णय का संवहन -** आवेदक को आवंटन अर्थात् प्रस्ताव की स्वीकृति का संवहन होना चाहिए । कम्पनी द्वारा अपनी संचालक मण्डल की सभा में अंशों के आवंटन का प्रस्ताव पारित कर लेने मात्र से ही आवेदक को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता । आवंटन की सूचना आवेदक के पास अवश्य ही भेजी जानी चाहिए । वैध अनुबन्ध निर्माण हेतु स्वीकृति का संवहन होना अनिवार्य है । केवल मानसिक स्वीकृति को स्वीकृति नहीं माना जा सकता है । यदि आवेदक को आवंटन की सूचना नहीं भेजी जाती है तो आवेदक उक्त आवंटन से बद्ध नहीं होता है अतएव उसे उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है **। डनलप बनाम हिगिन्स** तथा **हाउस होल्डर फायर इन्श्योरेंस कम्पनी बनाम ग्राण्ट** के वादों में दिये गये निर्णयों के अनुसार यदि डाक द्वारा संवहन की दशा में सही पता लिखकर एवं पर्याप्त टिकिट लगाकर पत्र डाक में डाल दिया जाए तो संवहन पूर्ण हो जाता है, चाहे वह आवेदक को वास्तव में प्राप्त न हुआ हो ।
4. **आवंटन पूर्ण एवं शर्त रहित -** अंशों का आवंटन पूर्ण तथा शर्त रहित होना चाहिए । यदि आवेदक ने आवेदन पत्र के साथ कुछ शर्तें लगा रखी हैं तो आवंटन उन शर्तों के अनुसार होना चाहिए अन्यथा आवेदक उस आवंटन से बाध्य नहीं होगा और उसकी इच्छा पर वह व्यर्थनीय होगा । कम्पनी अपनी ओर से आवंटन के साथ कोई शर्त नहीं लगा सकती है, लेकिन कम्पनी द्वारा आवंटन के साथ कोई शर्त लगा देने पर वह आवंटन व्यर्थ होगा । **रमनभाई बनाम घासीराम के** वाद में आवेदक ने इस शर्त पर 400 अंश क्रय करने का प्रस्ताव किया कि उसे कम्पनी में खजांची के पद पर नियुक्त किया जाये । कम्पनी ने उसे अंशों का आवंटन तो कर दिया पर खजांची के पद पर नियुक्त नहीं किया । न्यायालय ने निर्णय दिया कि आवेदक उस आवंटन से बाध्य नहीं हैं, किन्तु यदि आवेदक शर्त पूरी न होने पर भी अंशों के आवंटन को स्वीकार कर लेता है तो वह अपनी शर्त पूरी कराने के अधिकार को खो देता है और उक्त आवंटन से बद्ध हो जाता है । यदि आवेदन पत्र में आवंटन के पश्चात् कोई शर्त कभी भी पूरा करने की बात लिखी गई हो तो आवेदक आवंटन से बाध्य होगा भले ही उसकी शर्त पूरी करने का अवसर ही नहीं आये । **मोतीलाल चुन्नीलाल बनाम ठाकोरलाल चमनलाल** के वाद में आवेदक की शर्त थी कि उसे अंशों का आवंटन तभी मान्य होगा जब कम्पनी लाभांश देगी । कम्पनी ने अंशों का आवंटन कर दिया, किन्तु कम्पनी का लाभांश बाटने से पूर्व ही समापन हो गया । इस दशा में आवेदक के आवंटन द्वारा अंशधारी के रूप में उत्तरदायी ठहराया गया ।
5. **प्रस्ताव एवं स्वीकृति -** कम्पनी द्वारा निर्गमित प्रविवरण अंश बेचने का प्रस्ताव नहीं होकर अंश क्रय करने हेतु प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण मात्र होता है । आवेदक द्वारा अंश क्रय करने हेतु दिया गया आवेदन पत्र अंश क्रय का प्रस्ताव माना जाता है और आवंटन इस प्रस्ताव की स्वीकृति । इस प्रकार आवेदन व आवंटन के द्वारा कम्पनी और आवेदक के मध्य अनुबन्ध का निर्माण होता है ।

(2) कम्पनी अधिनियम में दिये गये प्रावधान - कम्पनी अधिनियम में निजी कम्पनी द्वारा अंशों व ऋणपत्रों के आवंटन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं हैं, किन्तु अंशों द्वारा सीमित दायित्व वाली सार्वजनिक कम्पनी द्वारा अंशों व ऋणपत्रों के आवंटन पर कुछ प्रतिबन्ध लगाये हैं जिन्हें निम्नलिखित दो भागों में विभाजित किया गया है -

1. जब अभिदान हेतु जनता को आमंत्रित नहीं किया जाता है अर्थात् प्रविवरण निर्गमन न करने की दशा में प्रतिबन्ध ।
2. जब अभिदान हेतु जनता को आमंत्रित किया जाता है ।

(अ) जब जनता को आमन्त्रित नहीं किया जाता अर्थात् प्रविवरण निर्गमन नहीं करने की दशा में -

1. **स्थापन्न प्रविवरण फाइल किया जाना** - यदि एक सार्वजनिक कम्पनी अपने अंशों अथवा ऋणपत्रों को क्रय करने के लिए जनता को आमन्त्रित नहीं करती है अर्थात् प्रविवरण का निर्गमन नहीं करती है तब वह अपने अंशों अथवा ऋणपत्रों का आवंटन तब तक नहीं कर सकती है जब तक कि वह प्रथम आवंटन करने के कम से कम तीन दिन पूर्व कम्पनी रजिस्ट्रार के कार्यालय में स्थानापन्न प्रविवरण फाइल न कर दे । इस **स्थानापन्न प्रविवरण** पर प्रत्येक ऐसे व्यक्ति अथवा उसके अधिकृत प्रतिनिधि के हस्ताक्षर होने चाहिए जो संचालक के रूप में नामांकित है अथवा प्रस्तावित संचालक है । **[धारा 70(1)]**
2. **उल्लंघन का प्रभाव -** यदि उपरोक्त प्रावधान का पालन नहीं किया जाता है तो आवंटन अनियमित आवंटन होगा । ऐसा आवंटन आवंटितों की इच्छा पर व्यर्थनीय होगा । इसके अतिरिक्त कम्पनी तथा उसके प्रत्येक संचालक पर, जो जानबूझकर इस उल्लंघन के लिए उत्तरदायी है, एक हजार रूपये तक का अर्थदण्ड किया जा सकता है । [धारा 70(4)]

(ब) अभिदान हेतु जनता को आमन्त्रित किया जाता है अर्थात् प्रविवरण के निर्गमन की दशा में -

जब कोई सार्वजनिक कम्पनी अपने अंशों के विक्रय हेतु जनता को आमन्त्रित करती है तो अंशों का प्रथम बार आवंटन करने से पूर्व निम्नलिखित वैधानिक प्रावधानों अथवा प्रतिबन्धों का पालन करना अनिवार्य है -

1. **न्यूनतम अभिदान राशि की प्राप्ति -** प्रविवरण निर्गमन करने वाली सार्वजनिक कम्पनी अपने अंशों का आवंटन उस समय तक नहीं कर सकती जब तक प्रविवरण में लिखित **"न्यूनतम अभिदान राशि"** के लिए अंशों के आवेदन प्राप्त नहीं हो जाते हैं । न्यूनतम अभिदान राशि वह राशि है जो कि संचालको की सम्पत्ति में कम्पनी के प्रारम्भिक कार्य संचालन तथा अग्रलिखित खर्चो की पूर्ति के लिए पर्याप्त हो
   (क) कम्पनी द्वारा क्रय की गई अथवा क्रय की जाने वाली किसी **सम्पत्ति का क्रय-मूल्य।**
   (ख) कम्पनी द्वारा देय **प्रारम्भिक व्यय** तथा अभिगोपन व्यय ।
   (ग) उपरोक्त कार्यो के लिए कम्पनी द्वारा उधार लिये गये **धन को चुकाने** के लिए आवश्यक राशि ।

(घ) **कार्यशील पूंजी:** न्यूनतम अभिदान की राशि किसी भी दशा में निर्गमित पूंजी के 90 प्रतिशत से कम नहीं होगी ।

2. **राशि का नकद या चैक या अन्य प्रलेख के रूप में प्राप्त होना-** न्यूनतम अभिदान हेतु प्राप्त आवेदनों की आवेदन राशि नकद में या चैक या अन्य प्रलेख के रूप में प्राप्त होनी चाहिये और उसका भुगतान प्राप्त हो जाना चाहिये । नकद के अलावा अन्य प्रतिफल के लिए निर्गमित अंश न्यूनतम अभिदान राशि की पूर्ति के लिए नहीं गिने जाते हैं ।
3. **न्यूनतम 5 प्रतिशत आवेदन राशि -** अंशों पर आवेदन राशि के रूप में प्राप्त राशि अंशों के अंकित मूल्य के 5 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिए । **[धारा 69(3)]**
4. **आवेदन राशि अनुसूचित बैंक में जमा करना -** अंश आवेदन राशि किसी अनुसूचित बैंक में जमा की जानी चाहिए । धारा 6(5) के अधीन आवंटन न कर सकने की दशा में जब तक यह राशि आवेदकों को वापस नहीं कर दी जाती है अथवा आवंटन की दशा में धारा 149 के अनुसार कम्पनी द्वारा जब तक व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं कर लिया जाता है, तब तक यह राशि अनुसूचित बैंक में जमा रखनी चाहिये । इस प्रावधान के उल्लंघन के लिए दोषी प्रत्येक प्रवर्तक, संचालक एवं अन्य व्यक्ति पर पांच हजार रूपये तक का अर्थदण्ड किया जा सकता है । **[धारा 64(4)]**
5. **न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त करने की अवधि -** न्यूनतम अभिदान राशि प्रविवरण के प्रकाशन की तिथि के 120 दिन के अन्दर नकद में प्राप्त हो जानी चाहिये, अन्यथा आवेदकों से प्राप्त धन-राशि, प्रविवरण प्रकाशन तिथि के 130 दिन के भीतर आवेदकों को नहीं लौटाने पर कम्पनी के संचालक संयुका एवं व्यक्तिगत रूप से 130 वे दिन के समाप्त होते ही 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज सहित लौटा ने के लिए बाध्य होंगे । यदि संचालक यह सिद्ध कर दें कि आवेदन राशि को लौटाने में त्रुटि उनकी लापरवाही या दुराचरण के कारण नहीं हुई है तो वे उत्तरदायी नहीं होगें । **[धारा 69(5)]**
6. **शर्त परित्याग का अनुबन्ध व्यर्थ -** यदि कोई कम्पनी अपने अंशों के आवेदकों के साथ कोई ऐसी शर्त रखती है जिससे उपर्युक्त प्रावधानों के पालन से कम्पनी को मुक्ति का आशय हो तो ऐसी शर्त अथवा मुक्ति व्यर्थ मानी जायेगी । **(धारा 69)**
7. **बाद में आवंटन पर प्रावधानों से मुक्ति या छूट -** प्रथम आवंटन के पश्चात् किये जाने वाले किसी भी आवंटन पर 5 प्रतिशत नकद आवेदन राशि के प्रावधान को छोड़कर धारा 69 के शेष कोई प्रावधान लागू नहीं होंगे । [धारा 89(7)]
8. **प्रविवरण के निर्गमन के बाद पाँचवें दिन के प्रारम्भ तक आवंटन न होना** - प्रविवरण निर्गमन की तिथि के बाद पांचवें दिन के प्रारम्भ होने के पहले अथवा ऐसे अधिक समय के पहले जिसे प्रविवरण में निर्धारित किया गया हो, अंशों का आवंटन कर दिया जाता है तो आवंटन वैध होते हुये भी कम्पनी तथा उसके प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 50000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड किया जा सकेगा । **(धारा 72)**
9. **स्कन्ध विपणि में अंशों में लेन-देन करने हेतु प्रार्थना-पत्र - कम्पनी (संशोधन) अधिनियम. 1988** के अनुसार प्रत्येक ऐसी कम्पनी को, जो कि जनता को अंश अथवा ऋणपत्र विवरण द्वारा अभिदान के लिए प्रस्तावित करना चाहती है, को ऐसा करने से

पूर्व एक या एक से अधिक (यदि प्रविवरण में अधिक का उल्लेख हो तो स्कन्ध विपणियों में 'लेन-देन की अनुमति प्राप्त करने के लिए प्रार्थना-पत्र देना होगा । [धारा 73(1)]

10. **प्रविवरण में उल्लेख - कम्पनी (संशोधन) अधिनियम. 1988** के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपने प्रविवरण में उस स्कन्ध विपणि अथवा उन विपणियों का' उल्लेख करना होगा जिनमें उक्त कम्पनी ने अपने अंशों अथवा ऋण पत्रों में लेन देन करने कें लिए प्रार्थना पत्र दिया है । **[धारा 73(1ए)]**
11. **अनुमति प्राप्त न होने पर आवंटन व्यर्थ -** कम्पनी (संशोधन अधिनियम, 1988 के अनुसार यदि अभिदान सूची बन्द होने के 10 सप्ताह के अन्दर प्रविवरण में उल्लेखित स्कन्ध विपणि अथवा विपणियों से अंशों अथवा ऋणपत्रों में लेन-देन करने की अनुमति प्राप्त नहीं होती है, और अंशों का आवंटन कर दिया जाता है, तो ऐसा आवंटन व्यर्थ होगा । किन्तु स्कन्ध विपणि के अनुमति न देने के निर्णय के विरूद्ध अपील कर देने पर ऐसा आवंटन तब तक व्यर्थ नहीं माना जायेगा जब तक कि अपील निरस्त नहीं कर दी गई हो: । [धारा 73 (ए)]
12. **अनुमति न मिलने पर धन की वापसी -** यदि स्कन्ध विपणि की अनुमति के लिए आवेदन नहीं किया गया है, अथवा स्कन्ध विपणि की अनुमति प्राप्त नहीं हुई है, तो कम्पनी को आवेदकों से प्राप्त समस्त धनराशि तुरन्त वापस करनी होगी । देय तिथि से 8 दिन के भीतर रकम नहीं लौटाने पर कम्पनी के संचालक संयुक्त एवं पृथक रूप से 8 दिनों के पश्चात् रकम को 15 प्रतिशत वार्षिक ब्याज सहित लौटाने के लिए दायी होंगे । परन्तु यदि संचालक सिद्ध कर देता है कि धनराशि वापस लौटाने में देरी उसकी लापरवाही या उपेक्षा के कारण नही हुई है तो वह दायी नहीं होगा । प्रत्येक दोषी संचालक पर 50000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है । [धारा 73(2)]
13. **अधिक धनराशि लौटाना -** स्कन्ध विपणि से अंशों के क्रय विक्रय (सूचीयन) के लिए आज्ञा प्राप्त हो जाने पर अंशों का आवंटन कर देना चाहिए एवं आवंटित अंशों की राशि को काटकर शेष धनराशि अनुमति प्राप्त होने के 8 दिन के भीतर लौटा देनी चाहिए । अतिरिक्त धनराशि नहीं लौटाने पर कम्पनी का प्रत्येक संचालक पृथक एवं संयुक्त रूप से ऐसी धनराशि को 15 प्रतिशत ब्याज के साथ लौटाने के लिए उत्तरदायी होगा । [धारा 73 (2ए)]

    उपर्युक्त प्रावधानों के उल्लंघन पर कम्पनी एवं प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 50000 रूपये तक का अर्थदण्ड किया जा सकता है और 8वें दिन से 6 माह में 15 प्रतिशत व्याज सहित शेष धनराशि नहीं लौटाने पर उत्तरदायी व्यक्तियों को एक वर्ष तक के कारावास की सजा भी दी जा सकती है **[धारा 73(2बी)]**
14. **आवंटन का विवरण पत्र प्रस्तुत करना** - अंशों के आवंटन के 30 दिन या रजिस्ट्रार द्वारा बढ़ाई गई अवधि में 'अंशों का आवंटन प्रत्याय' रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत करना होगा । **[धारा 75 (1)]**
15. **कृत्रिम नाम में आवंटन पर प्रतिबन्ध -** अंशों का आवंटन कृत्रिम नाम में नहीं किया जा सकता है । इतना ही नहीं, धारा 68-ए में स्पष्ट लिखा हुआ है कि कोई भी व्यक्ति किसी कम्पनी के अंश खरीदने के लिए कृत्रिम नाम में आवेदन करता है अथवा कम्पनी

को अपने या अन्य किसी व्यक्ति के कृत्रिम नाम से अंशों का आवंटन, पंजीयन अथवा हस्तान्तरण करने के लिए प्रेरित करता है तो उसे 5 वर्ष तक के कारावास की सजा दी जा सकती है । इस धारा का मुख्य उद्देश्य बेनामी आवंटन अथवा अंश हस्तान्तरण को रोकना है, ताकि व्यक्ति अंशों की आयकर की चोरी न कर सके ।

कम्पनी अधिनियम में यह प्रावधान कर दिया गया है कि कोई कम्पनी प्रविवरण का निर्गमन करती है तो उसे अपने प्रविवरण में तथा अंशों के आवेदन-पत्र पर स्पष्ट रूप से यह व्यवस्था घोषित कर देनी चाहिए । जो व्यक्ति काल्पनिक नाम से अंश खरीदता है वह स्वयं अंशधारी के रूप में दायी हो जाता है ।

16. **आबंटन प्रत्याय -** प्रत्येक अंश-पूँजी वाली कम्पनी को अंशों के आवंटन के 30 दिन के भीतर अथवा रजिस्ट्रार द्वारा बढ़ाई गई अवधि कें भीतर, रजिस्ट्रार के कार्यालय में आवंटन का विवरण (अर्थात् प्रत्याय) फाइल करना अनिवार्य है । इस प्रत्याय में निम्नलिखित तथ्यों का विवरण दिया जाता है-
    i. आवंटित किए गए **अंशों की संख्या तथा उनका अंकित मूल्यों, आवंटन के नाम. पते व व्यवसाय और प्रत्येक अंश पर प्राप्त राशि तथा देय राशि (यदि कोई हो) का विवरण ।**
    ii. कम्पनी इस प्रत्याय में उन **अंशों को प्रदर्शित नहीं करेगी जिनका आवंटन नकदी के लिए तो किया गया है,** किन्तु ऐसे आवंटन के सम्बन्ध में वास्तव में नकदी प्राप्त नहीं की गई है ।
    iii. यदि कम्पनी ने **नकदी के अतिरिक्त अन्य किसी प्रतिफल के लिए** पूर्णदत्त अथवा आंशिकदत्त अंशों का आवंटन किया है तो कम्पनी को ऐसे लिखित अनुबन्धों की प्रति को रजिस्ट्रार के पास निरीक्षण व परीक्षण के लिए फाइल करना चाहिए । इन पर उचित स्टाम्प लगा होना चाहिए ।
    iv. **बोनस अंशों की दशा में आवंटन**-प्रत्याय में ऐसे आवंटित अंशों की संख्या तथा अंकित मूल्य और आवंटियों के नाम, पते तथा व्यवसाय का विवरण देना चाहिए तथा ऐसे अंशों के निर्गमन का अधिकार प्रदान करने वाले प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि भी भेजनी चाहिए ।
    v. **बट्टे पर निर्गमित अंशों की दशा में** आवंटियों का विवरण देना चाहिए और साथ में ऐसे निर्गमन को अधिकृत करने के लिए कम्पनी द्वारा पास किए गए साधारण प्रस्ताव की प्रतिलिपि तथा इसके साथ कम्पनी ली बोर्ड के उस आदेश की प्रतिलिपि जो निर्गमन को स्वीकृत प्रदान करता है, रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए । यदि बट्टे की दर 10 प्रतिशत से अधिक है तो केन्द्रीय सरकार के अनुमति पत्र की प्रति भी भेजनी चाहिए ।
17. **डिमेटीरियलाइज़्ड अंशो का आवंटन -** कम्पनी अधिनियम 1956 में एक नवीन धारा 68बी जोड़ी गई है । इसके अनुसार 10 करोड़ रूपये या अधिक का जन निर्गम करने वाली प्रत्येक सूचीबद्ध कम्पनी को अपने अंश "डीमेट" रूप में निर्गमित करना आवश्यक है।

14.4 अनियमित आवंटन तथा उसके प्रस्ताव

कम्पनी अधिनियम, 1956 में अंशों के आवंटन से सम्बन्धित दिये गए प्रावधानों के विरूद्ध यदि कोई कम्पनी आवंटन करती है तो इसे अनियमित आवंटन कहते हैं (धारा-71) । अंशों के आवंटन से सम्बन्धित प्रावधान अधिनियम की धारा 69 व 70 में दिये गए हैं । इन प्रावधानों के अनुसार अनियमित आवंटन निम्नलिखित दशाओं में माना जाता है -

1. **न्यूनतम अभिदान प्राप्त किए बिना आवंटन -** यदि न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त नहीं हुई है, किन्तु आवंटन कर दिया गया हो, अथवा
2. **आवेदन पर 5 प्रतिशत राशि प्राप्त न होने पर -** आवेदन पर अंशों के अंकित मूल्य की कम-से-कम 5 प्रतिशत की राशि नकद प्राप्त न हुई हो, अथवा
3. **अनुसूचित बैंक में राशि जमा नहीं कराने पर -** आवेदन पत्रों पर प्राप्त राशि अनुसूचित बैंक में जमा नहीं कराई गयी हो, अथवा
4. **प्रविवरण फाइल किए बिना -** प्रविवरण अथवा स्थानापन्न-प्रविवरण को फाइल किये बिना ही आवंटन कर दिया हो, अथवा
5. **न्यूनतम अभिदान राशि 120 दिनों में प्राप्त न होना -** यदि प्रविवरण निर्गमन की तिथि से 120 दिन के भीतर न्यूनतम अभिदान की राशि प्राप्त नहीं होती है और अंशों का आवंटन कर दिया जाता है अथवा
6. **अभिदान सूची खुलने से पूर्व** - यदि प्रविवरण के निर्गमन करने की तिथि के पश्चात् कम-से-कम 5 दिन पूर्व अथवा प्रविवरण में उल्लिखित अभिदान-सूची खुली रहने की तिथि से पूर्व अंशों का आवंटन कर दिया गया हो ।
7. **स्टॉक एक्सचेंज से अनुमति प्राप्त न होने पर -** यदि प्रविवरण में घोषित किया गया हो कि किसी एक या अधिक स्टॉक एक्सचेंज में अंशों के क्रय-विक्रय के लिए आवेदन किया जाएगा या किया गया है, तो (i) ऐसा आवेदन प्रविवरण निर्गमन के दस दिनों के भीतर नहीं किया गया हो, अथवा (ii) अभिदान सूची बन्द हो जाने के दस सप्ताह के भीतर स्टॉक-एक्सचेंज ने अनुमति न दी हो और फिर भी आवंटन किया जाता है तो इसे अनियमिति आवंटन कहते हैं ।

अनियमित आवंटन के प्रभाव -

1. **व्यर्थनीय -** यदि आवंटन अनियमित है तो अंश खरीदने का अनुबन्ध, आवंटी की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है । यदि आवंटी चाहे तो वैधानिक सभा **बुलाने की तिथि से दो महीने के भीतर** (यदि कम्पनी को वैधानिक सभा बुलाने की आवश्यकता नहीं है **अथवा यह सभा आवंटन के पहले ही कर ली गई है) अथवा आवंटन की तिथि से 2 महीने के भीतर,** अनियमित आवंटन के आधार पर अंश खरीदने के अनुबन्ध का परित्याग कर सकता है । यह अधिकार तभी प्राप्त होगा यदि आवंटी ने, इस आधार पर अनुबन्ध परित्याग की सूचना कम्पनी को दे दी है । यह उल्लेखनीय है कि यदि आवंटी ने कोई ऐसा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष कार्य किया है जिससे आवंटन की

स्वीकृति प्रकट होती है तो अनुबन्ध को व्यर्थनीय बनाने का उसका अधिकार लुप्त हो जाता है । **मौखिक आधार पर** किया गया आवंटन आरम्भ से ही व्यर्थ होता है । आवेदक को अनियमित आवंटन को व्यर्थनीय समझने का अधिकार उस स्थिति में भी बना रहता है जबकि कम्पनी के समापन की कार्यवाही चल रही हो ।

2. **आवंटन निश्चित अवधि में न करने पर -** यदि प्रविवरण के प्रथम निर्गमन की तिथि के पश्चात् 120 दिनों के बाद आवंटन किया जाता है तो यह अनियमित आवंटन होगा और आवेदकों को 10 दिन के भीतर (अर्थात् 130वे दिन तक) उनकी राशि लौटा देनी चाहिए ।
3. **अभिदान सूची खुलने के पूर्व का आवंटन-** यदि अभिदान सूची 'खुलने' की तिथि के पूर्व ही आवंटन कर दिया जाता है तो आवंटन अनियमित, किन्तु वैध होता है । इस दिशा में कम्पनी व प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 5000 रूपये तक का अर्थ-दण्ड लगाया जा सकता है ।
4. **स्टॉक एक्सचेंज द्वारा अस्वीकृति -** यदि स्टॉक एक्सचेंज में इन अंशों में व्यवहार करने के लिए आवेदन किया है, किन्तु स्टॉक एक्सचेंज ने इसे अस्वीकार कर दिया है अथवा निश्चित समय में उत्तर नहीं दिया है तो आवंटन व्यर्थ हो जाता है और कम्पनी को आवेदकों से प्राप्त राशि लौटानी पड़ती है । त्रुटि होने पर कम्पनी व दोषी अधिकारी अर्थदण्ड के भागी होते हैं ।
5. **संचालकों द्वारा क्षतिपूर्ति -** यदि कोई संचालक जान-बूझकर अनियमित आवंटन के लिए उत्तरदायी है तो वह **आवंटन की तिथि से दो वर्ष** तक कम्पनी तथा आबंटी की क्षति की पूर्ति के लिए उत्तरदायी होगा ।
6. **अभिदान सूची खुलने से पूर्व आवंटन -** यदि संचालकों ने अभिदान सूची खुलने से पूर्व अंशों का आवंटन कर दिया है तो यह अनियमित आवंटन कहलाता है तथा प्रत्येक दोषी संचालक इस दशा में 50000 रूपये तक के आर्थिक दण्ड का भागी होगा ।
7. **प्रविवरण निर्गमन करने के 120 दिन बाद -** यदि प्रविवरण निर्गमन की तिथि से 120 दिन के भीतर अंशों का आवंटन नहीं होता है तो 10 दिन के भीतर (अर्थात् 130वे दिन तक) आवेदकों को राशि लौटा देनी चाहिए । यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो 130वे दिन के पश्चात् दोषी संचालक व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से 6 प्रतिशत वार्षिक व्याज की दर से इस राशि को चुकाने के लिए दायी होंगे ।

14.5 आवंटन का परित्याग

यदि कम्पनी के अन्तर्नियम अनुमति देते हों तो भारतीय कम्पनी अधिनियम, **1956** में आवंटन परित्याग की स्पष्ट अनुमति दी गई है **। अंशों के आवंटन के परित्याग से आशय है कि आबंटी स्वयं के नाम से आबंटित समस्त अथवा कुछ अंशों को खरीदने का अधिकार अपने द्वारा मनोनीत व्यक्ति को दे देता है** और स्वयं उन अंशों का परित्याग कर देता है । इस प्रकार उस मनोनीत व्यक्ति को, जिसने अंश क्रय करने के लिए आवेदन नहीं दिया था, आवंटित अंशों को अपने नाम से आवंटन कराने का अधिकार

प्राप्त हो जाता है । इसी कारण, कम्पनी आवंटन पत्र के साथ ही परित्याग पत्र भी भेजती है । व्यवहार में देखा गया है कि प्रायः इस परित्याग-पत्र को आवंटन पत्र के पीछे ही मुद्रित करवा दिया जाता है ।

निजी कम्पनी के आवेदकों को परित्याग का अधिकार नहीं होता क्योंकि ऐसा अधिकार देने से अवांछित व्यक्ति भी अंशधारी हो सकते हैं ।

कम्पनी आवंटन को परित्याग करने की अवधि, आवंटन-पत्र में ही दे देती है । इस निर्धारित अवधि में ही आवंटन का परित्याग किया जा सकता है । परित्याग, **सदस्यों का रजिस्टर एवं अंश प्रमाण-पत्र तैयार करने से पूर्व ही किया** जा सकता है । उल्लेखनीय है कि **अंश प्रमाण-पत्र तैयार होने के पश्चात्** यदि किसी अन्य व्यक्ति को अंश हस्तान्तरित किए जाते हैं तो उसे **अंशों का हस्तान्तरण** कहते हैं ।

आवंटन के परित्याग करने का अधिकार प्रदान करने का केवल एक ही प्रमुख उद्देश्य प्रतीत होता है, वह है - अंशों के हस्तान्तरण को सुविधाजनक बनाना । इसमें आवंटी को अंश हस्तान्तरण की औपचारिकताएँ पूरी करने की आवश्यकता नहीं पड़ती हस्तांतरण में विलम्ब नहीं लगता एवं मुद्रांक-कर देने की भी आवश्यकता नहीं होती । आवंटन परित्याग हेतु निम्नलिखित प्रक्रिया को अपनाया जाता है :

1. आवंटी, आवंटन-पत्र तथा परित्याग-पत्र को प्राप्त करने की प्रतीक्षा करता है क्योंकि जब तक ये प्राप्त नहीं हो पाते हैं, तब तक परित्याग सम्बन्धी कार्यवाही प्रारम्भ नहीं की जा सकती है । कुछ कम्पनियाँ तो पृथक् ही परित्याग-पत्र मुद्रित करवा लेती हैं और आवंटन पत्र के साथ संलग्न कर देती हैं । व्यवहार में प्रायः कम्पनियाँ इस परित्याग-पत्र को आवंटन पत्र के पीछे ही मुद्रित करवा लेती हैं ।
2. इनको प्राप्त करने के पश्चात् आवंटी, 'परित्याग-पत्र' को भरकर व अपने हस्ताक्षर करके आवंटन पत्र सहित उस व्यक्ति को सौंप देता है जिसके पक्ष में वह आवंटन का परित्याग करना चाहता है ।
3. वह व्यक्ति इस सम्बन्ध में प्रार्थना-पत्र, परित्याग-पत्र तथा आवंटन-पत्र सहित निर्धारित अवधि के भीतर कम्पनी कार्यालय में भेज देता है ।
4. तब कम्पनी मूल आवंटी के नाम में आवंटित अंशों को रह करके, उसके मनोनीत व्यक्ति के नाम अंश हस्तान्तरित कर देती है ।

आवंटन परित्याग एवं अंश हस्तान्तरण में भेद

आवंटन परित्याग एवं अंश हस्तान्तरण का अन्तिम प्रभाव यही होता है कि अंशों के मूल धारक के समस्त अंश अथवा कुछ अंश उसकी इच्छा से उनके द्वारा अनुमोदित एवं मनोनीत व्यक्ति के नाम हस्तान्तरित हो जाते हैं, किन्तु तकनीकी दृष्टि से इनमें अन्तर किया गया है जो इस प्रकार है :

1. **आवंटन सूची में आवश्यक परिवर्तन -** जिस व्यक्ति ने आवंटन का परित्याग किया है, यदि उसने समस्त अंशों का परित्याग किया है तो उसका नाम आवंटन सूची में से काट दिया जाता है और उसके मनोनीत व्यक्ति का नाम उसके स्थान पर लिख दिया जाता है । अगर कुछ अंशों का परित्याग किया है तो आवश्यक परिवर्तन कर दिये जाते हैं और मनोनीत व्यक्ति का नाम और जोड़ दिया जाता है । सदस्य-रजिस्टर में परिवर्तन करने

का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि तब तक वह तैयार ही नहीं हो पाता है । अंश हस्तान्तरण की दशा में आवंटन सूची में परिवर्तन नहीं किया जाता है और सदस्य रजिस्टर में आवश्यक लेखे कर दिये जाते हैं ।

2. **समय** - आवंटन परित्याग आवंटन के समय तक अथवा सदस्य रजिस्टर और अंश-प्रमाण-पत्र तैयार होने के पूर्व तक ही किया जाता है । अंश हस्तान्तरण इनके बाद कभी भी हो सकता है । इस प्रकार आवंटन-परित्याग के लिए समय काफी कम मिलता है जबकि अंश-हस्तान्तरण के लिए बहुत समय मिलता है ।
3. **मुद्रांक कर** - आवंटन परित्याग में मुद्रांक कर की आवश्यकता नहीं होती है जबकि अंश हस्तान्तरण में इसकी आवश्यकता होती है ।
4. **व्यावहारिकता -** आवंटन-परित्याग के मामले या तो बिल्कुल नहीं आते हैं अथवा कम आते हैं, किन्तु अंश-हस्तान्तरण के मामले बहुत अधिक आते हैं ।

14.6 आवंटन सूचना व खेद पत्र

आवंटन प्रस्ताव पारित हो जाने तथा तदनुरूप सचिव को कार्यवाही करने का आदेश मिलने के पश्चात् कम्पनी का सचिव उन आवेदकों को अंश आवंटन पत्र भेजता है जिनको अंशों का आवंटन किया गया है । लेकिन जिन आवेदकों को अंशों का आवंटन नहीं किया जाता है उन्हें खेद-पत्र प्रेषित किये जाते हैं ।

स्वस्थ परम्पराओं के अनुसार जिन आवेदकों को अंश आवंटन नहीं किया जा सकता है उन्हें खेद-पत्र भेजे जाने चाहिए, लेकिन आज- कल कई कम्पनियाँ खेद-पत्र भेजने के स्थान पर धन वापसी-पत्र भिजवाती है जिसे खेद-पत्र मान लिया जाता है ।

आवंटन पत्र का नमूना

(Specimen of Allotment Letter)

..... कं. लि.

क्रम संख्या..... दिनांक.....

श्री/श्रीमती/कुमारी.....

प्रिय महोदय/महोदया,

संदर्भ..... रू. अंकित मूल्य..... अंशों के निर्गमन के क्रम में

आपके आवेदन पत्र संख्या..... दिनांक..... के उत्तर में मुझे आपको सूचित करने का आदेश मिला है कि संचालक मण्डल ने आपको निम्न लिखित समता अंशों का आवंटन किया है ।

आपसे निवेदन है कि आप आवंटन पर देय राशि..... रूपये जो.....रू. प्रति अंश के हिसाब से..... समता अंशों पर दिनांक..... तक अवश्य बैंक में जमा करवा दें ।

खाता पृष्ट सं.	आवेदित अंश	आवंटित अंश	आवेदन पर चुकायी राशि रू.	शेष देय राशि रू.	आवंटन सूचना संख्या	भुगतान की अन्तिम तिथि

यदि उक्त राशि का भुगतान आपने निर्धारित तिथि तक नहीं किया तो बाद में आप यह राशि 12 प्रतिशत व्याज सहित चुकाने के लिए उत्तरदायी होंगे । यदि यह राशि आपने भुगतान नहीं की तो आपके अंशों को जब्त कर लिया जायेगा ।

रसीद

उपर्युक्त उल्लिखित समता अंशों पर देय राशि ..... रू. नकद /चैक /ड्राफ्ट संख्या..... दिनांक..... जो..... बैंक पर जारी किया गया, प्राप्त की ।

राजस्व टिकिट

बैंक की मुद्रा सहित
बैंक अधिकारी के हस्ताक्षर
(छिद्रांकित रेखा)

संचालक मण्डल की आज्ञा से
..... कम्पनी लि. के लिए
(हस्ताक्षर)
सचिव

(यह भाग मुद्रित होता है जिसे बैंक में धन जमा कराने पर मुद्रांकित एवं हस्ताक्षरित करके लौटा दिया जाता है ।)

..... क. लि.

खाता पृष्ठ सं.	आवंटन सूचना सं.	आवंटित अंश	बकाया राशि

आवंटन पर देय राशि ..... श्री श्रीमती ..... से नकद चैक / ड्राफ्ट सं..... दिनांक..... द्वारा प्राप्त हुई ।

बैंक मुद्रा सहित बैंक अधिकारी के हस्ताक्षर

खेद पत्र का नमूना

..... कं. लिमिटेड

रजिस्टर्ड कार्यालय.....

श्री/श्रीमती.....

.....

प्रिय महोदय/ महोदया,

संदर्भ..... रू. वाले..... समता अंशों के निर्गमन के क्रम में,

आपके अंश आवेदन पत्र संख्या..... दिनांक के संदर्भ में मुझे आपको सूचित करने को आदेश मिला है कि संचालक मण्डल आपके द्वारा कम्पनी में प्रकट किये विश्वास के लिए धन्यवाद ज्ञापित करते हैं तथा आपको अंशों का निर्गमन न कर पाने के कारण खेद प्रकट करते हैं।

आपके द्वारा आवेदन पत्र के साथ जमा करवायी गयी राशि का पुनर्भुगतान करने के लिए आपको इस पत्र के साथ वापसी भुगतान पत्र (Refund Letter) संलग्न किया जा रहा है ।

संलग्न-वापसी भुगतान पत्र संख्या.....

भवदीय

..... कं. लि. के लिए

हस्ताक्षर

सचिव

14.7 आवंटन-पत्र का विभाजन

कम्पनी प्रत्येक अंशधारी को एक ही आवंटन- पत्र निर्गमित करती है । चाहे उसे एक अंश आवंटित किया गया हो या बहुत से, कभी- कभी ऐसे अंशधारी जिनके पास बहुत अधिक अंश होते हैं, कम्पनी के पास एक बात का प्रार्थना-पत्र भेजते हैं कि उसके आवंटन-पत्र को उनकी इच्छानुसार बांट दिया जाय । जैसे, यदि एक अंशधारी के पास किसी कम्पनी के 500 अंश हैं और वह इन्हें 5 हिस्सों में बंटवाना चाहता है, तो वह, कम्पनी के पास इस बात का प्रार्थनापत्र दे सकता है कि उसके 500 अंशों वाले आवंटन पत्र को 100-100 अंशों के 5 आवंटन पत्रों में विभक्त कर दिया जाय । कम्पनी उसकी इच्छानुसार एक आवंटन पत्र के स्थान पर पांच आवंटन पत्र जिसमें से प्रत्येक 100 अंशों का है, दे देती है । आवंटन-पत्र के बांटने की इस क्रिया को **'आवंटन-पत्र विभाजन'** कहते हैं । ऐसा करवाने के लिए आवेदक को कम्पनी के पास अपना मूल आवंटन-पत्र तथा आवश्यक मुद्रांक और प्रत्येक विभाजन के लिए आवश्यक शुल्क जमा करना पडता है । कम्पनी आवेदन और आवंटन सूची में आवेदक नाम के सामने **अधिकतर लाल स्याही से एक ऐसा निशान लगा देती है** जिससे यह ज्ञात हो सके कि इस अंशधारी के आवंटन-पत्र का विभाजन किया जाना है, परन्तु विभाजन सम्बन्धी सूचनाएं एक अलग कागज पर लिखी जाती हैं । जब आवंटन विभाजन-पत्र, बनाये जाते हैं तो उन्हें उचित मुद्रांक लगा लगाकर आवेदकों के पास भेज दिया जाता है । इसके पश्चात् आवंटन सूची में आवश्यक संशोधन किये जाते हैं ।

14.8 आवंटन प्रत्याय का विवरण

कम्पनी अधिनियम की धारा 75 के अनुसार जब अंश पूँजी वाली कम्पनी अंशों का आवंटन करती है तो उसे आवंटन तिथि के 30 दिन के भीतर रजिस्ट्रार के समक्ष

आवंटन का विवरण प्रस्तुत करना होता है, इसे आवंटन प्रत्याय या विवरण कहते हैं । यदि रजिस्ट्रार उचित समझे तो वह इस 30 दिन की अवधि को बढ़ा सकता है । आवंटन प्रत्याय में निम्नलिखित तथ्यों का समावेश किया जाता है ।

1. आवंटित अंशों की संख्या, उनका अंकित मूल्य, आवंटियो के नाम, पते एवं व्यवसाय की सूचना, प्रत्येक अंश पर प्राप्त एवं देय राशि । इसमें नकद के अतिरिक्त अन्य प्रतिफल के बदले जारी अंशों की संख्या का उल्लेख नहीं किया जाता ।
2. उन लिखित अनुबन्धों का वर्णन जिसके अन्तर्गत नकद के अतिरिक्त अन्य प्रतिफल के बदले अंश जारी किये गये हैं ।
3. बोनस अंशों के निर्गमन की दशा में उनकी कुल संख्या, अंकित मूल्य, आवंटियों के नाम, पते एवं व्यवसाय की सूचना तथा उस प्रस्ताव की प्रतिलिपि जिसके अन्तर्गत उन अंशों का निर्गमन किया गया है ।
4. बट्टे. पर अंशों के निर्गमन की दशा में संचालक मण्डल के प्रस्ताव की प्रतिलिपि तथा कम्पनी विधान मण्डल की स्वीकृति की प्रतिलिपि जिनके अनुसार इन अंशों का बट्टे पर निर्गमन किया गया है ।
5. दण्ड: यदि कम्पनी आवंटन प्रत्याय प्रस्तुत करने सम्बन्धी उपरोक्त नियमों का पालन नहीं करती है तो प्रत्येक प्रवर्तक या दोषी अधिकारी को 5000 रू. तक के अर्थ दण्ड से दण्डित किया जा सकता है ।

14.9 आवंटन प्रत्याय का प्रारूप

कम्पनी की संख्या. .....

अधिकृत पूँजी.....

कम्पनी अधिनियम 1956

आवंटन प्रत्याय

धारा 75(1) के अनुसार

कम्पनी का नाम ..... लि./ प्राइवेट लि. प्रस्तुतकर्ता ..... अंशों के आवंटन का विवरण जो निम्नलिखित तारीख पर प्रस्तुत किया गया और धारा 75(1) के अनुसार कम्पनियों के रजिस्ट्रार को फाइल किया गया ।

(1) नकद में आवंटित किये जाने वाले अंश

अंशो का वर्ग	आवंटित अंशो की संख्या	अंकित राशि		प्रीमियम को छोड़ते हुए प्रार्थना पत्र के साथ प्राप्ति	आवंटन पर गई या देय राशि		अंशों पर बटे की भुगतान की जाने वाली प्रीमियम की राशि (यदि कोई हो)	बट्टे की राशि यदि कोई हो
		प्रति अंश	कुल		चुकाई गई	देय राशि		
1	2	3	4	5	6	7	8	9

(2) नकद के अतिरिक्त अन्य प्रतिफल के बदले निर्गमित अंशों का विवरण:

i. समता अंश..... रू.

ii. पूर्वाधिकार अंश..... रू.

iii. शोध्य पूर्वाधिकार अंश ..... रू.

अंशों की संख्या ..... रू.

अंशों का अंकित मूल्य ..... रू.

प्रत्येक अंश पर प्रदत्त मानी गयी राशि ..... रू.

उस प्रतिफल का वर्णन जिसके बदले इन अंशों को जारी किया गया है ।

प्राप्त की गई सम्पत्तियों एवं परिसम्पत्तियों का वर्णन ..... रू.

ख्याति ..... रू

सेवाऐं (सेवा की प्रकृति का वर्णन दीजिए) ..... रू.

अन्य मदें (विवरण सहित)..... रू.

(3) बट्टे पर निर्गमित अंशों की संख्या :

अंशों का अंकित मूल्य ..... रू.

प्रति अंश बट्टे की राशि ..... रू.

प्रति अंश चुकाई गई राशि ..... रू.

(4) निर्गमित बोनस अंशो की संख्या

अंशों की अंकित राशि..... रू

प्रति अंश चुकता मानी जाने वाली राशि..... रू.

(5) आवंटियों के नाम. पते एवं व्यवसाय का विवरण:

आवंटन की तिथि	आवंटी का पूरा नाम	आवंटी का व्यवसाय तथा पता	समस्त अंश	आवंटित अंशों की संख्या	
				शोध्य पूर्वाधिकार अंशों के अतिरिक्त पूर्वाधिकार अंश	शोध्य पूर्वाधिकार अंश
1	2	3	4	5	6

दिनांक ..... हस्ताक्षर .....

पद नाम .....

नोट: (i) यदि आवंटन प्रत्याय में विभिन्न तिथियों पर किये गये अंशों के आवंटन को शामिल किया गया है तो आवंटन प्रत्याय के मुख पृष्ठ पर प्रत्येक आवंटन की वास्तविक तिथि का उल्लेख करना चाहिए तथा इस प्रत्याय को प्रस्तुत करने के समय की गणना प्रथम आवंटन को तिथि से की जानी चाहिए ।

(ii) आवंटन से पूर्व सचिव द्वारा यह देख लिया जाना चाहिये कि धारा 69 व 70 की वैधानिक शर्तें पूरी कर ली गई हैं ।

14.10 अंशों के आवंटन के सम्बन्ध में सचिवीय कार्यविधि

अंश आवंटन के सम्बन्ध में कम्पनी सचिव द्वारा किये जाने वाले कार्यो या सचिवीय कार्यविधि का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है -

1. संचालकों द्वारा अंश आवंटन का कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व सचिव को यह देखना चाहिए कि धारा 69 व 7० की वैधानिक शर्तें पूरी कर ली गई हों । ये शर्त हैं - न्यूनतम अभिदान की राशि की प्राप्ति, अंशों के अंकित मूल्य के कम से कम 5 प्रतिशत भाग की प्राप्ति, इस राशि को किसी अनुसूचित बैंक में जमा रखना, प्रविवरण निर्गमन के कम से कम चार दिन बीत जाना ।
2. यदि प्रविवरण का निर्गमन न किया गया हो, तो सचिव को चाहिए कि वह प्रविवरण का स्थानापन्न विवरण तैयार करके रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करे । ऐसे विवरण के प्रस्तुत करने के तीन दिन बाद आवंटन का कार्य किया जा सकता है ।
3. यदि प्रविवरण में इस बात का उल्लेख किया गया है कि कम्पनी के अंशों के किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में व्यवहार हेतु आज्ञा लेने के लिए आवेदन-पत्र दिया जायेगा तो सचिव का यह कर्तव्य है कि वह यह देखे कि प्रविवरण निर्गमन के दस दिन के भीतर ऐसा आवेदन-पत्र दे दिया गया है और निर्धारित समय में ऐसी आज्ञा ले ली गई है ।
4. सचिव का यह कर्तव्य है कि आवेदन-पत्रों की जाँच करे और उन्हें क्रमबद्ध करके अंश आवेदन और आवंटन सूची में इनकी प्रविष्टि करे ।
5. अधिक आवेदन-पत्रों की प्राप्ति होने पर सचिव को चाहिए कि वह संचालक मण्डल के द्वारा संचालकों की एक समिति की नियुक्ति कराये जो पर्याप्त विचार के पश्चात् आवंटन के लिए प्रयोग किये जाने वाले आधार पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करे ।
6. प्रतिवेदन की प्राप्ति पर सचिव संचालक मण्डल की सभा बुलाने की व्यवस्था करता है, जिसमें आवंटन के लिए प्रयोग किये जाने वाले आधार पर अन्तिम रूप से निर्णय लिया जाता है ।
7. अंश आवेदन एवं आवंटन सूची के प्रत्येक पृष्ठ पर संचालक मण्डल के अध्यक्ष के हस्ताक्षर कराना ।

8. अंश आवंटन के अनुमोदन के लिए संचालक मण्डल द्वारा प्रस्ताव पारित कराना । इसी प्रस्ताव द्वारा संचालक सचिव को आवंटन-पत्र और खेद-पत्र निर्गमित करने का भी अधिकार देते हैं ।
9. संचालक मण्डल द्वारा प्रस्ताव पारित किये जाने के बाद सचिव अंश आवेदकों को अंश, आवंटन-पत्र 7 खेद-पत्र निर्गमित करता है ।
10. कम्पनी के बैंकर द्वारा अंश आवंटन राशि लेने (जिन्हें आवंटन-पत्र जारी किये -गये हो) व आवेदन राशि लौटाने (जिन्हें खेद पत्र जारी किये गये हो) की व्यवस्था करना ।
11. परित्याग-पत्र की प्राप्ति की अवस्था में पुराने आवंटिती के स्थान पर नये व्यक्ति का नाम अंश आवेदन एवं आवंटन सूची में लिखना ।
12. अन्त में अंश प्रमाण-पत्र निर्गमित करने और रजिस्ट्रार के पास आवंटन का विवरण प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक कदम उठाना और सदस्यों के रजिस्टर व अन्य रजिस्टरों में आवश्यक प्रविष्टियाँ करना ।

कम्पनी (संशोधन अधिनियम 1993) के अनुसार कम्पनी द्वारा निर्गमित किये जाने वाले अंश प्रमाण-पत्र की लम्बाई 297 मिलीमीटर तथा चौड़ाई 210 मिलीमीटर होगी । यह संशोधन 1 जनवरी, 1994 से लागू हो गया है ।

स्टॉक इनवेस्ट प्रपत्र का प्रचलन (9-1-1992) - सरकार के पास बहुत सी शिकायतें आयी हैं कि कम्पनी द्वारा आवेदन-पत्र की राशियां या तो लौटायी नहीं जाती हैं या देर से लौटायी जाती हैं । इस सम्बन्ध में भारत के प्रतिभूति विनिमय बोर्ड [Securities and Exchange Board of India(SEBI)], के सुझाव पर एक नया प्रपत्र स्टॉक इनवेस्ट स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा बनाई गयी स्कीम के आधार पर प्रारम्भ किया गया है । यह योजना धारा 69(1) के निम्नांकित प्रावधान के अन्तर्गत प्रारम्भ की गयी है । इसके अनुसार आवेदन-पत्र की राशि नकदी में, चैक से या अन्य प्रपत्र से (In cash or cheque or other instrument) भुगतान की जा सकती है । अत: इस अन्य प्रपत्र के अन्तर्गत स्टॉक इनवेस्ट का निर्गमन हुआ है । यह निम्न प्रकार है:

एक अंश लेने वाला अपने उस बैंक से जिसमें उसका निक्षेप खाता है, उतनी राशि के लिए, जितनी उसे लिये जाने वाले अंशों के आवेदन पर देनी है, एक स्टॉक इनवेस्ट लेता है । बैंक इस पर तारीख डालकर, हस्ताक्षर करेगा और बैंक विनियोजक के खाते पर उस राशि के लिए ग्रहणाधिकार (Lien) कर लेगा जिसके लिए स्टॉक इनवेस्ट प्रपत्र दिया गया है । अंशों का आवेदक इसे अपने अंश आवेदन-पत्र के साथ कम्पनी को भेजता है । यदि कम्पनी इसे अंश आवंटित करती है तो वह कम्पनी इस स्टॉक इनवेस्ट के आधार पर सम्बन्धित बैंक से राशि ले लेती है और यदि आवंटन नहीं करती है तो इसे आवेदक को लौटा देती है । इस प्रकार आवेदक की राशि कम्पनी को तभी मिलेगी, जबकि कम्पनी उसे अंश आवंटित करेगी । अब अंश आवंटित न करने पर राशि लौटाने का झगड़ा इस प्रपत्र के कारण नहीं रहा है ।

14.11 सारांश

जनता के अंश क्रय के प्रस्तावों को कम्पनी द्वारा स्वीकार करना ही अंशों का आवंटन कहलाता है अंशों के आवंटन के सम्बन्ध में कुछ सामान्य व्यवस्थाएँ हैं तो कुछ व्यवस्थाएँ कम्पनी अधिनियम, 1956 में दी गयी हैं जिनकी पालना करना अनिवार्य है । जब कम्पनी अपने अंशों के आवंटन में कम्पनी अधिनियम की धारा 69 एवं 70 की अवहेलना करती है तो उसे अनियमित आवंटन कहा जाता है । ऐसा आवंटन आवेदक की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है । अंशों के आवंटन के समय अधिनियमों के प्रावधानों के साथ-साथ केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाये गये नियमों को ध्यान में रखते हुए आवेदन प्रक्रिया पूरी करनी होती है । अंश पूँजी वाली कम्पनी की दशा में आवंटन की तिथि के 3० दिन के भीतर कम्पनी को आवंटित अंशों के सम्बन्ध में एक प्रत्याय रजिस्ट्रार के समक्ष प्रस्तुत करना होता है । आवंटन की पूरी प्रक्रिया में कम्पनी सचिव की भूमिका महत्वपूर्ण होती है ।

14.12 शब्दावली

अंश आवंटन	:	अनियोजित पूंजी में से कुछ अंश नियोजित करना ।
न्यूनतम अभिदान	:	कुल निर्गमन के कम से कम 90 प्रतिशत अंशों के लिए अभिदान/आवेदन ।
अनुगामी आवंटन	:	प्रथम आवंटन के बाद किए जाने वाले आवंटन।
अभिदान सूची	:	अंशों के आवेदन को स्वीकार करने की अवधि।
अनियमित आवंटन	:	अंशों के आवंटन में कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 69 एवं 70 का उल्लंघन कर किया गया आवंटन ।
आवंटन प्रत्याय	:	रजिस्ट्रार के समक्ष अंश आवंटन के 30 दिन के भीतर प्रस्तुत किया जाने वाला विवरण ।

14.13 स्वपरख प्रश्न

1. अंशों के आवंटन से क्या आशय है । एक सार्वजनिक कम्पनी अपने अंशों का आवंटन किन शर्तों की पूर्ति के बाद कर सकती है ।
2. भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 में अंश आवंटन के सम्बन्ध में क्या व्यवस्थाएँ है? अनियमित आवंटन का अभिप्राय और इसके क्या प्रभाव होते हैं ।?
3. अंशों के आवंटन सम्बन्धी नियमों एवं प्रक्रिया का वर्णन कीजिए ।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए:
   (i) आवंटन का प्रत्याय
   (ii) आवंटन पत्र का विभाजन
5. आवंटन-पत्र व खेद-पत्र का नमूना बताइए ।

14.14 उपयोगी पुस्तकें

1. **आर.एल. नौलखा :** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2008)
2. **जोशी एवं गोयल:** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (अजमेरा बुक कम्पनी, जयपुर, 2008)
3. **माथुर एवं सक्सेना :** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2008)

इकाई - 15 : याचनाओं तथा अंशों के हरण के लिए सचिवीय कार्यविधि (Secretarial Procedure pertaining to calls & Forfeiture of Shares)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 याचना के सम्बन्ध में वैधानिक प्रावधान

15.3 याचना के सम्बन्ध में सचिवीय क्रियाविधि

15.4 अंशों का हरण

15.5 अंशों के हरण सम्बन्धी वैधानिक प्रावधान

15.6 अंश हरण की क्रियाविधि व सचिवीय कर्त्तव्य

15.7 अंश हरण के प्रभाव

15.8 हरित अंशों का पुनर्निर्गमन

15.9 अंशों का समर्पण

15.10 सारांश

15.11 स्वपरख प्रश्न

15.12 उपयोगी पुस्तकें

15.0 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

1. कम्पनी द्वारा अंशधारियों से उनके द्वारा लिए गये अंशों की याचना के अर्थ व विशेषताओं को समझ सकेंगे ।
2. याचना के सम्बन्ध में वैधानिक प्रावधानों व सचिवीय क्रियाविधि को जान सकेंगें ।
3. अंश हरण की क्रियाविधि, सचिवीय कर्त्तव्य व अंशहरण के प्रभावों की पहचान कर सकेंगे।
4. हरित अंशों के पुनर्निर्गमन व अंश समर्पण की प्रक्रिया को समझ सकेंगे ।

15.1 प्रस्तावना

पूंजी निर्गमन की दशा में कम्पनियाँ अपने अंशों के अंकित मूल्य की सम्पूर्ण राशि एक ही किस्त में एकत्र निर्गमन के समय अंशों के अंकित मूल्य की आशिक राशि तो आवेदन के समय तथा कुछ भाग आवंटन के समय मांग लेती है । अंशों के आवंटन के बाद आवश्यकता होने पर कम्पनी प्रस्ताव पारित कर शेष अदत्त धन मांग सकती है । इस प्रकार अंशों पर शेष अदत्त राशि मांगने को ही याचना (Call) कहा जाता है ।

यहाँ उल्लेखनीय है कि आवंटन पर मांगी जाने वाली राशि याचना की श्रेणी में नहीं आती है ।

बहल के अनुसार - "याचना से आशय अंश आवंटन के पश्चात् अपने जीवनकाल में किसी भी समय कम्पनी द्वारा अपने अंशधारियों से की गई उस मांग से है जिसके द्वारा प्रत्येक अंश पर देय सम्पूर्ण अथवा आशिक प्रदत्त राशि के भुगतान के लिए कहा जाता है ।"

याचना के लक्षण अथवा विशेषताएँ

उक्त परिभाषाओं के आधार पर अंश याचना की निम्नलिखित विशेषताएँ प्रकट होती हैं:

- याचना कम्पनी के अंशधारियों से की जा सकती है ।
- अंशों के अंकित मूल्य की अदत्त राशि की मांग ही याचना है ।
- याचना अंशों के आवंटन के बाद ही की जा सकती है ।
- याचना सम्पूर्ण अथवा आशिक अदत्त राशि के लिए की जा सकती है ।
- याचना का अधिकार संचालन-मण्डल को होता है जिसे संचालक मण्डल की सभा में प्रस्ताव पारित कर क्रियान्वित किया जा सकता है ।
- याचना के प्रस्ताव में याचना की राशि व भुगतान की अवधि दोनों का उल्लेख आवश्यक है अन्यथा वह अवैध मानी जायेगी ।
- याचना अंशधारियों से कम्पनी की मांग पर देय ऋण की भांति होती है जिसको मांग के साथ ही भुगतान करना अंशधारी का दायित्व होता है ।
- याचना प्रावधानों का उल्लेख कम्पनी के अन्तर्नियमों में होता है और उनके अनुसार ही याचनाएं की जाती है ।
- याचना का भुगतान तय तिथि तक कर दिया जाना चाहिये । विलम्बन की अवधि के लिए कम्पनी ब्याज मांग सकती है ।
- अनेक स्मरण पत्रों के बाद भी भुगतान नहीं करने पर कम्पनी अंशों का हरण कर सकती है ।

15.2 याचना सम्बन्धी वैधानिक प्रावधान

भारतीय कम्पनी अधिनियम में याचना सम्बन्धी प्रावधानों का उल्लेख किया गया है इसके अतिरिक्त कम्पनी के अन्तर्नियमों में भी याचना सम्बन्धी प्रावधान दिये रहते हैं । सारणी 'अ' के नियम 13 से 19 में याचना सम्बन्धी नियमों का उल्लेख किया गया है जो निम्नलिखित है:

15.2.1 संचालक मण्डल द्वारा प्रस्ताव पारित करना

याचना हेतु संचालक मण्डल की सभा में याचना सम्बन्धी प्रस्ताव पारित किया जाना आवश्यक है । याचना की वैधता के लिए आवश्यक है कि संचालक विधिवत् नियुक्त एवं योग्य हो, मण्डल की सभा उचित रूप से बुलाई गई हो, सभा में संचालकों की न्यूनतम कार्यवाहक संख्या उपस्थित हो ।

मण्डल द्वारा पारित याचना सम्बन्धी प्रस्ताव में याचना राशि, तिथि, भुगतान की विधि एवं स्थान का भी उल्लेख होना आवश्यक है । याचना का अधिकार संचालक मण्डल का

अधिकार है जिसे किसी अन्य को गैर प्रत्यायोजनीय हस्तान्तरित या प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है ।

15.2.2 अन्तर्नियमों के अनुरूप

याचना के सम्बन्ध में कम्पनी के अन्तर्नियमों की व्यवस्थाओं का पालन किया जाना चाहिये । किसी कम्पनी के अन्तर्नियमों में याचना सम्बन्धी नियम नहीं है तो उस कम्पनी को कम्पनी अधिनियम की प्रथम अनुसूची की सारणी अ के 13 से 17 तक के निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिये:

- याचना, अंशों के अंकित मूल्य के 25 प्रतिशत से अधिक की नहीं होनी चाहिये ।
- याचना राशि के भुगतान हेतु न्यूनतम 14 दिनों की सूचना अनिवार्य है जिसमें भुगतान की जाने वाली राशि, भुगतान के समय ' व स्थान की जानकारी दी जानी चाहिए ।
- संचालक मण्डल अपने विवेक से याचना खण्डन या स्थगन कर सकता है ।
- याचना तब की हुई मानी जाती है जब इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जाता है।
- संयुक्त अंशधारक याचना भुगतान करने के लिए संयुक्त एवं पृथक रूप से उत्तरदायी होते हैं ।
- निर्धारित समय में याचना राशि का भुगतान नहीं किये जाने पर 5 प्रतिशत की दर से ब्याज अथवा संचालक मण्डल द्वारा निर्धारित इससे कम दर पर व्याज वसूला जा सकता है ।
- संचालक मण्डल व्याज की सम्पूर्ण या आशिक राशि का परित्याग भी कर सकता है।

15.2.3 सद्भावना

याचना का अधिकार प्रन्यासी प्रकृति का है जिसे सद्भावनापूर्वक तथा कम्पनी हित में प्रयोग में लाया जाना चाहिये । यदि संचालक याचना इसलिये करते हैं कि उन्हें' निजी लाभ हेतु धन मिल सके तो यह सद्भावनापूर्वक की गई याचना नहीं कही जा सकती ।

15.2.4 समरूपता

एक वर्ग या श्रेणी के अंशों पर एक समान याचना ही की जानी चाहिये । कुछ ही अंशधारियों से याचना करने पर अथवा कुछ अंशधारियों से अधिक राशि के लिए व कुछ से कम राशि के लिए याचना की जाती है तो ऐसी याचना वैद्य नहीं होगी ।

15.2.5 अग्रिम याचना

अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत होने पर कम्पनी किसी अंशधारी से अंशों की अदत्त राशि याचना पूर्व अग्रिम, 'के रूप में स्वीकार कर सकती है । इसे 'अग्रिम याचना कहा जाता है याचना राशि का अग्रिम भुगतान करने के बावजूद इस राशि के सम्बन्ध में कोई मताधिकार तब तक प्राप्त नहीं होगा जब तक कि यह याचना देय न हो जाये ।

15.2.6 सुरक्षित पूँजी

कम्पनी विशेष प्रस्ताव पारित करके अपने अयाचित पूंजी के कुछ भाग को सुरक्षित पूँजी में रखना तय कर सकती है । इस राशि को कम्पनी समापन की दशा में ही मांग सकती है एवं संचालक मण्डल इस राशि को याचना के रूप में नहीं मांग सकता है ।

याचना राशि का भुगतान नकद में ही होना चाहिये । नकदी के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से याचना का भुगतान नकद भुगतान ही माना जायेगा ।

15.2.7 याचना के लिये ऋणों की तरह उत्तरदायी होना

याचना राशि अंशधारियों पर कम्पनी का ऋण होती है । अतएव प्रत्येक अंशधारी याचना राशि के भुगतान के लिए ऋण के समान उत्तरदायी होता है ।

15.2.8 अंश हस्तान्तरण पर रोक

याचना राशि की मांग के बाद कम्पनी को यह भी अधिकार होता है कि वह याचना राशि के प्राप्त होने तक अंशों के हस्तान्तरण पर रोक लगा दे ।

15.2.9 अंशों का आवंटन होने के पश्चात्

याचना राशि की मांग सदैव अंशों का आवंटन होने के पश्चात् की जाती है, पहले नही । आवंटन राशि याचना नहीं कहलाती है ।

15.3 याचनाओं के सम्बन्ध में कार्यविधि

कम्पनी द्वारा याचना हेतु अपनायी जाने वाली कार्यविधि एवं सचिव के कर्तव्य निम्नलिखित हैं-

15.3.1 संचालक मण्डल का प्रस्ताव

सचिव द्वारा सर्वप्रथम संचालक. मण्डल की सभा बुलानी चाहिए । इस सभा में संचालक मण्डल याचना हेतु आवश्यक प्रस्ताव पारित करता है । ऐसा प्रस्ताव कम्पनी के अन्तर्नियमों की व्यवस्थाओं के अनुसार होना चाहिये और इसमें निम्न बातों का समावेश होना चाहिए, याचना के सम्बन्ध में संचालक मण्डल द्वारा पारित किये जाने वाले प्रस्ताव का नमूना निम्नानुसार है:

- याचना राशि
- याचना से प्रभावित अंशों के प्रकार
- याचना राशि की भुगतान की तिथि
- राशि जमा कराये जाने वाले बैंक का नाम व स्थान

प्रस्ताव का नमूना

"प्रस्तावित किया जाता है कि कम्पनी को 10 रुपये प्रति अंश के 500 समता अंशों पर 2.50 रूपये प्रति अंश की दर से प्रथम याचना की जाये और अंशधारियों रो याचना की राशि को दिनांक..... को या इससे पूर्व कम्पनी के बैंक..... ..... बैंक में जमा कराने को कहा जाये । इस तिथि तक जिन याचनाओं का भुगतान न हो, उन पर इस तिथि से..... प्रतिशत की दर से भुगतान की तिथि तक ब्याज लिये जायेगा । सचिव को याचना पत्र निर्गमन का अधिकार दिया जाता है ।"

15.3.2 सदस्य रजिस्टर को बंद करने का प्रस्ताव

याचना प्रस्ताव पारित करते समय संचालक मण्डल एक निश्चित समय के लिए सदस्यों के रजिस्टर और हस्तांतरण पुस्तक को बंद करने का भी प्रस्ताव पारित करता है ।

15.3.3 याचना सूची तैयार करना

संचालक मण्डल द्वारा आवश्यक प्रस्ताव पारित करने के बाद सचिव रजिस्टर के आधार पर याचना सूची तैयार करता है । इस सूची में उन सभी सदस्यों के नामों को सम्मिलित किया जाता है, जिनसे याचना राशि ली जानी है । याचना सूची में सदस्यों के नाम व पते, प्रत्येक सदस्य द्वारा धारित अंशों की संख्या, याचना राशि, याचना राशि के भुगतान की तिथि आदि बातों का उल्लेख होता है । याचना सूची का नमूना नीचे दिया गया है

..... कम्पनी लिमिटेड

याचना सूची

रूपये प्रति अंश के..... समता अंशों पर..... रूपये प्रति अंश की प्रथम याचना की तिथि..... याचना भुगतान तिथि..... तक ।

याचना-पत्र की संख्या	अंशधारी का नाम व पता	सदस्य रजिस्टर की पृ0 सं0	धारित अंशों की संख्या	... रू0 प्रति अंशों के हिसाब से देय राशि	भुगतान की तिथि	रोकड़ बही की पृष्ठ संख्या	भुगतान की गई राशि	शेष अप्राप्त राशि (यदि कोई हो)	विवरण
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10

15.3.4 याचना-पत्र तैयार करना

याचना सूची तैयार किये जाने के बाद सचिव याचना-पत्र या याचना सूचना तैयार करता है । इसमें सभी बातों का उल्लेख होता है, जैसे याचना राशि, भुगतान की अंतिम तिथि, बैंकर का नाम आदि । यह पत्र तीन भागों में बंटा होता है । प्रथम भाग में याचना की सूचना होती है, द्वितीय भाग में याचना राशि प्राप्ति की रसीद होती है और तृतीय भाग में याचना पर्ची या पर्ण को याचना राशि सहित कम्पनी के बैंक में प्रस्तुत करें । याचना-पत्र में प्रविष्टियाँ करने के बाद याचना-पत्र के प्रथम दो भाग अर्थात् याचना की सूचना व याचना राशि प्राप्ति की रसीद सदस्य को लौटा देता है । तीसरा भाग अर्थात् याचना पर्ची बैंक स्वयं अपने पास रख लेता है जिसे बाद में कम्पनी को भेज दिया जाता है ।

याचना-पत्र का प्रारूप निम्नानुसार होता है :

याचना - पत्र

.....कम्पनी लिमिटेड

प्रथम याचना की सूचना

संख्या..... दिनांक.....

सेवा में,

.....

.....

महोदय/महोदया,

मुझे आपको सूचित करने का आदेश हुआ है कि..... कम्पनी लिमिटेड की दिनांक..... की सभा में संचालक मण्डल ने यह प्रस्ताव पारित किया है कि..... रूपये प्रति अंश के..... समता अंशों पर..... रूपये प्रति अंश की प्रथम याचना की जाये ।

आपके नाम कम्पनी के..... समता अंश रजिस्टर्ड हैं जिन पर..... रूपये प्रति अंश के हिसाब से..... रूपये याचना राशि के रूप में देय है । यह राशि दिनांक..... को या इससे पूर्व कम्पनी के बैंक..... लिमिटेड में याचना-पत्र सहित जमा करा दे । याचना राशि जमा करा देने पर बैंक याचना की सूचना भुगतान प्राप्ति की रसीद आपको वापिस कर देगा जिसे आप कम्पनी के कार्यालय में भेजने हेतु सुरक्षित रखें क्योंकि अंश प्रमाण-पत्र के साथ इसे भी कम्पनी को भेजा जाता है ।

देय तिथि तक याचना राशि जमा न कराने पर इस तिथि से वास्तविक भुगतान की तिथि तक..... प्रतिशत की दर से ब्याज लिया जायेगा ।

संचालक मण्डल के आदेश द्वारा

हस्ताक्षर.....

सचिव

इस रसीद को याचना-पत्र से पृथक न किया जाये ।

(बैंक द्वारा हस्ताक्षर करके इसे अंशधारी को लौटा दिया जाये)

श्री..... निवासी..... विकास कम्पनी लिमिटेड के लिए प्रथम याचना के सम्बन्ध में..... रूपये आज दिनांक..... को प्राप्त हुए ।

कार्पोरेशन बैंक के लिये

रसीद टिकट

(लेखाकार)

निम्न वर्णित पर्ची बैंक अपने पास रखता है और कम्पनी को हिसाब भेजते समय इसे भी भिजवा देता है -

याचना पर्ची

..... विकास कम्पनी लिमिटेड

प्रथम याचना..... रूपये	संख्या.....
..... रूपये प्रति अंश	भुगतान की तिथि.....
अंशधारी का नाम व पता.....	राशि प्राप्त करने वाले बैंक के हस्ताक्षर
..... (अंशधारी द्वारा स्वयं भरा जाये)	

15.3.5 याचना-पत्रों को भिजवाना

इन पत्रों में अंशधारियों के नाम लिखे जाते हैं और याचना राशि, भुगतान की तिथि आदि का विवरण भरकर सदस्यों के स्थायी पते पर भेज दिया जाता है । कुछ कम्पनियाँ याचना-पत्र की सूचना प्रमुख समाचार पत्रों में भी प्रकाशित करवाती हैं ।

15.3.6 याचना राशि एकत्र करने के लिए खाता खोलना

सचिव से अपेक्षित है कि वह कम्पनी की ओर से कम्पनी के बैंक में एक विशेष जाता खुलवाये जिसमें अंशधारियों से याचना राशि एकत्र की जा सके ।

15.3.7 याचना सूची में प्रविष्टियाँ करना

अपने बैंकर से याचना पर्चियाँ प्राप्त होने पर कम्पनी सचिव याचना सूची और सदस्यों के रजिस्टर में आवश्यक प्रविष्टियाँ करता है और उन दोषी सदस्यों की सूची भी बनाता है. जिनसे याचना राशि प्राप्त नहीं हुई है ।

15.3.8 बकाया याचनाएँ

कुछ सदस्यों के निर्धारित समय में याचना राशि चुकाने में असमर्थ रहने पर अदत्त राशि को बकाया याचनाओं के नाम से जाना जाता है । सचिव द्वारा ऐसे दोषी सदस्यों और उन पर बकाया याचना राशि की सूची तैयार की जाती है एवं उसे आवश्यक कार्यवाही हेतु संचालक मण्डल की सभा में प्रस्तुत किया जाता है । ऐसे सदस्यों से बकाया याचना राशि वसूल करने के लिए संचालक मण्डल निम्नलिखित में से कोई कदम उठा सकता है :

- दोषी सदस्यों के पास स्मरण पत्र भेजना । इसके अन्तर्गत सदस्यों को किसी बढ़ाई निर्धारित अवधि तक व्याज सहित या व्याज रहित याचना राशि का भुगतान करने के लिए कहा जाता है ।
- अन्तर्नियमों में प्रावधान होने पर संचालक मण्डल द्वारा ऐसे दोषी सदस्यों को कम्पनी द्वारा देय किसी राशि. जैसे लाभांश आदि के साथ बकाया याचना राशि के समायोजन का निर्णय लिया जा सकता है ।
- सदस्यों से याचना राशि की वसूली हेतु वैधानिक कार्यवाही करने को कह सकता है |
- दोषी सदस्यों को उचित सूचना देकर याचना राशि का भुगतान न मिलने पर अंशों का हरण कर सकता है । प्रायः कम्पनी के अन्तर्नियम याचना राशि का भुगतान न करने पर संचालकों को अंशों के हरण का अधिकार देते हैं ।

15.4 अंश हरण अथवा अपहरण

अंशहरण का अर्थ एवं परिभाषाएँ

अंशहरण का तात्पर्य अंशों पर की गई याचना राशि का भुगतान न किए जाने की दशा में दण्ड स्वरूप अंशधारी के अंशों को जज करना है । अंश आवंटन के बाद कम्पनी अंशों पर अदत्त राशि की माँग करती है । यदि कोई अंशधारी अपने अंशों पर दी गई याचनाओं का भुगतान करने में असमर्थ रहता है, तो अन्तर्नियमों में दिए गए प्रावधानों के अधीन दण्ड स्वरूप कम्पनी उस अंशधारी के अंशों को जज कर लेती है । इसे "अंश हरण करना कहते है । **शेरलेकर** के शब्दों में अंशों पर देय याचना का भुगतान न करने पर अंतिम उपचार व दण्ड के रूप में सदस्य तथा अंशधारी के स्वामित्व को समाप्त करना ही अंश हरण है ।"

जब इस प्रकार अंशों का हरण कर लिया जाता है तो त्रुटि करने वाले अंशधारी का नाम कम्पनी के सदस्य रजिस्टर से पृथक कर दिया जाता है और अंशों पर उसके द्वारा

प्रदत्त राशि पर उसका अधिकार समाप्त हो जाता है । अंशों का हरण करने के लिए कम्पनी के अन्तर्नियमों में स्पष्ट प्रावधान होना आवश्यक होता है । जिसका पालन किया जाना चाहिए अन्यथा अंशों के हरण को गैर वैधानिक माना जाता है ।

15.5 हरण सम्बन्धी प्रावधान

कम्पनी अधिनियम में अंश हरण के लिए कोई प्रावधान नहीं है । कम्पनी को अंश हरण का स्वत: अधिकार नहीं है । अत: यह अधिकार उसे अन्तर्नियमों द्वारा प्रदान किया जाना चाहिये । दिये गये नियम (19 से 31 तक) लागू होते हैं । किन्तु अन्तर्नियमों में स्पष्ट नियम न होने की दशा में एवं तालिका अ के प्रयोग पर भी प्रतिबन्ध होने पर कम्पनी द्वारा अंशों का हरण नहीं किया जा सकता है । अतएव अंश हरण हेतु कम्पनी अन्तर्नियमों में प्रावधान होना आवश्यक है । इस सम्बन्ध में अनियमितता की दशा में अंश का हरण व्यर्थ, अवैध एवं अमान्य माना जाता है । अंश हरण के लिए निम्नलिखित नियमों का पालन किया जाना चाहिए:

15.5.1 अन्तर्नियमों के प्रावधान

अंशों का हरण करने हेतु कम्पनी के अन्तर्नियमों में स्पष्ट प्रावधानों का होना परम आवश्यक है अन्यथा संचालक इस अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकते है ।

15.5.2 याचना राशि के भुगतान में त्रुटि की दशा में

यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में स्पष्ट प्रावधान हो तो केवल याचना राशि का भुगतान न किये जाने पर ही अंशों का हरण किया जा सकता है । इस सम्बन्ध में **विश्वनाथ प्रसाद जालान बनाम होलेण्ड सिनेटोन लि०** का वाद उल्लेखनीय है ।

15.5.3 हरण पूर्व सूचना

अंशों का हरण करने से पूर्व यह भी आवश्यक है कि दोषी सदस्य को बकाया योजना राशि का भुगतान करने के लिए सूचना दी जानी चाहिये । यह पूर्व सूचना अन्तर्नियमों के अनुसार दी जानी चाहिए अन्यथा हरण अवैध माना जायेगा । यदि अन्तर्नियमों में सूचना देने सम्बन्धी प्रावधान नहीं हैं तो तालिका अ के नियमों का पालन करना चाहिए जिसमें कम से कम 14 दिन पूर्व सूचना देने का प्रावधान है ।

15.5.4 अंश हरण का प्रस्ताव

उपर्युक्त सूचना का पालन होने पर संचालक-मण्डल द्वारा अंशों के हरण के सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिए । इस सम्बन्ध में प्रमिला देवी बनाम पीपल्स बैंक ऑफ नार्दन इण्डिया का वाद उल्लेखनीय है जिसमें अंशों के हरण की पूर्व सूचना देने के पश्चात् कम्पनी के संचालकों ने कोई भी प्रस्ताव पारित नहीं किया था । न्यायालय द्वारा यह निर्णय दिया गया कि अंशों के हरण की प्रक्रिया पूरी नहीं हुई अतएव अंश हरण व्यर्थ है ।

15.5.5 सद्भावना के साथ एवं कम्पनी के अधिकतम हित में

अंशों के हरण का अधिकार विश्वासश्रित अधिकार है इसका प्रयोग पूर्ण सद्भावना एवं कम्पनी हित में किया जाना चाहिये । यदि संचालक अपने निकट व्यक्तियों को अंशों के प्रति अपने दायित्व से बचान के लिए अंश हरण करते हैं तो हरण व्यर्थ माना जायेगा।

15.6 अंश हरण की क्रियाविधि

अंशों के हरण हेतु निम्नलिखित क्रियाविधि का प्रयोग किया जाता है :

15.6.1 अन्तर्नियमों के प्रावधान

अंशों का हरण करने की कार्यविधि प्रारम्भ करने से पूर्व कम्पनी के अन्तर्नियमों के प्रावधानों को देखना चाहिये । इसमें दिये गये नियमों के अनुसार ही अंशों का हरण किया जा सकता है । यदि अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में प्रावधान नहीं है तो कम्पनी की सामान्य सभा में एक विशेष प्रस्ताव पारित करके अंशों के हरण सम्बन्धी नियम बनाये जाने चाहिए, उसके बाद ही अंशों का हरण किया जाना चाहिये ।

15.6.2 दोषी अंशधारियों की सूची

याचना भुगतान की अंतिम तिथि व्यतीत हो जाने पर सचिव द्वारा याचना का भुगतान न करने वाले दोषी सदस्यों की सूची तैयार की जाती है और आवश्यक कार्यवाही हेतु उसे संचालक मण्डल की सभा में प्रस्तुत किया जाता है ।

15.6.3 संचालक मण्डल की सभा बुलाना

उक्त चरणों के बाद संचालक मण्डल की सभा बुलायी जाती है और उसमें दोषी सदस्यों की सूची प्रस्तुत की जाती है । इस सभा में संचालक मण्डल द्वारा एक प्रस्ताव पारित करके सचिव को आदेश दिया जाता है कि यह याचना राशि का भुगतान न करने वाले दोषी सदस्यों को याचना-स्मरण-पत्र भिजवाये जायें । इन पत्रों में दोषी सदस्यों को आगे बढ़ायी गई किसी निर्धारित तिथि तक एक निश्चित ब्याज सहित बकाया राशि के भुगतान के लिए कहा जाता है । याचना स्मरण-पत्र का नमूना नीचे दिया गया है-

याचना स्मरण - पत्र

वक्रांगी टेक्नोलोजी लिमिटेड

संख्या..... पता:.....

दिनांक:.....

सेवा में,

.....

.....

महोदय/महोदया,

संचालक मण्डल के आदेश के अनुरूप मैं आपको स्मरण कराता हूँ कि कम्पनी को अभी तक आपके..... अंशों पर..... रूपये की याचना राशि जिसका भुगतान दिनांक..... तक होना था, प्राप्त नहीं हुई है । आपसे निवेदन है कि आप उक्त राशि को अन्तर्नियमों के अनुसार..... प्रतिशत ब्याज सहित दिनांक..... तक जमा करा दें ।

मैं आपको यह भी स्मरण दिलाता हूँ किए जब तक आप बकाया याचना राशि का भुगतान नहीं करेंगे, आप अपने अंशों का हस्तांतरण नहीं कर सकेंगे एवं भविष्य में आपके अंशों का हरण भी किया जा सकता है ।

संचालक मण्डल के आदेश द्वारा,

हस्ताक्षर.....

(सचिव)

15.6.4 स्मरण-पत्र प्रेषित करना

स्मरण- पत्र तैयार होते ही उन्हें सम्बन्धित अंशधारियों के पंजीकृत पते पर डाक से भेजा जाता है ।

15.6.5 पंजीकृत पत्र द्वारा स्मरण

यदि स्मरण-पत्र देने के बाद भी दोषी सदस्य द्वारा याचना राशि का भुगता नहीं किया जाता तो कम्पनी द्वारा एक और पत्र (रजिस्टर्ड) भेजा जाता है, जिसमें निर्धारित तिथि तक (जो पत्र प्राप्ति से कम 14 दिन के बाद की होनी चाहिए) निश्चित ब्याज सहित याचना राशि का भुगतान करने के लिए कहा जाता है । इसमें इस बात का भी उल्लेख होता है कि निश्चित समय पर याचना राशि न जमा कराने पर अंशों का हरण किया जा सकता है ।

15.6.6 हरण की दूसरी चेतावनी

उक्त पत्र या सूचना के बावजूद सदस्य द्वारा बकाया याचना राशि का भुगतान न करने पर कम्पनी द्वारा दूसरा चेतावनी पत्र भेजा जा सकता है । (यद्यपि ऐसा करना आवश्यक नहीं है ।) इसमें इस बात का उल्लेख होता है कि निर्धारित समय तक याचना राशि का भुगतान न करने पर अंशों का हरण कर लिया जायेगा । चेतावनी का नमूना नीचे दिया गया है -

चेतावनी पत्र

वक्रांगी टेक्नोलोजी लिमिटेड

संख्या..... पता:.....

दिनांक:.....

सेवामें,

.....

.....

महोदय/महोदया,

संचालक मण्डल के आदेश द्वारा मैं आपको पुनः स्मरण कराता हूँ कि कम्पनी द्वारा स्मरण पत्र (दिनांक.....) भेजने के बावजूद अभी तक आपके..... अंशों पर..... रूपये की याचना राशि प्राप्त नहीं हुई है ।

संचालक मण्डल अन्तर्नियमों के अनुसार आपसे निवेदन करता है कि उक्त याचना राशि..... प्रतिशत ब्याज सहित आप दिनांक..... तक जमा करा दें ।

निर्धारित तिथि तक याचना राशि क भुगतान न करने पर इस राशि से सम्बन्धित आपके अंशों का कम्पनी द्वारा हरण कर लिया जायेगा एवं हरण के बाद भी आपको इन अंशों पर बकाया राशि का भुगतान करना पड़ेगा ।

संचालक मण्डल के आदेश द्वारा,

हस्ताक्षर.....

(सचिव)

15.6.7 संचालक मण्डल की सभा बुलाना एवं अंशों के हरण का प्रस्ताव पारित करना

यदि उक्त पत्र के बावजूद भी दोषी सदस्य द्वारा याचना राशि का निर्धारित समय में भुगतान नहीं किया जाता तो सचिव द्वारा संचालक मण्डल की सभा का आयोजन किया जाता है और सम्बन्धित तथ्यों को सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है । तत्पश्चात् मण्डल द्वारा सम्बन्धित अंशों के हरण हेतु एक औपचारिक प्रस्ताव पारित किया जाता है । ऐसे प्रस्ताव का नमूना नीचे दिया गया है -

"प्रस्तावित किया जाता है कि..... अंश..... रूपये प्रति अंश, क्रमांक..... से ..... तक जिन पर प्रति अंश..... रूपये चुकाये जा सके हैं जो इस प्रस्ताव की तिथि को श्री..... निवासी..... के नाम रजिस्टर्ड है, कम्पनी द्वारा की गई प्रथम याचना की राशि व उस पर ब्याज का भुगतान न करने के कारण हरित किये जाते हैं तथा इन अंशों के सम्बन्ध में संचालक जैसा भी उचित समझे, कार्यवाही करें ।"

15.6.8 अंशों के हरण की सूचना देना

संचालक मण्डल द्वारा अंश हरण का प्रस्ताव पारित करने के बाद सचिव द्वारा सभी सम्बन्धित सदस्यों को रजिस्टर्ड डाक से अंश हरण की सूचना भेज दी जाती है और उनसे अंश प्रमाण-पत्र वापसी के लिए कहा जाता है । प्रायः अंश हरण की सूचना समाचार-पत्रों में भी दे दी जाती है और जनता को ऐसे अंशों में व्यवहार करने से मना किया जाता है । सम्बन्धित सदस्यों को भेजी जाने वाली अंश हरण की सूचना का नमूना आगे दिया गया है -

हरण की सूचना

वक्रांगी टेक्नोलोजी लिमिटेड

संख्या..... पता:.....

दिनांक:.....

सेवा में,

.....

.....

महोदय/महोदया,

कम्पनी द्वारा भेजे गये चेतावनी पत्र दिनांक..... के द्वारा आपको यह कहा गया था कि आप निर्धारित देय तिथि तक बकाया याचना राशि ब्याज सहित आवश्यक रूप से जमा करा दें अन्यथा आपके अंशों का हरण कर लिया जायेगा । आपके द्वारा याचना राशि का भुगतान न कर पाने के कारण मुझे आपको यह सूचित करने का आदेश हुआ है कि दिनांक..... को संचालक मण्डल की सभा द्वारा आवश्यक प्रस्ताव पारित करके अंश संख्या..... से. ..... तक जो आपके नाम रजिस्टर्ड थे, का हरण कर लिया गया है ।

संचालक इन अंशों को पुनर्निर्गमित कर सकेंगे या जो भी वे उचित समझें वैसा करने का उन्हें अधिकार होगा । मुझे आपको यह भी याद दिलाने का आदेश हुआ है कि

अंशों के हरण के बावजूद आप अभी भी इन अंशों पर देय याचना राशि चुकाने के लिए बाध्य हैं । आपसे निवेदन है कि आप उपर्युक्त उल्लिखित अंशों से सम्बन्धित 'आशिक दत्त' अंश प्रमाण-पत्र कम्पनी को वापस भेज दें ।

अंश हरण से सम्बन्धित संचालक मण्डल के प्रस्ताव की एक प्रति संलग्न है ।

संचालक मण्डल के आदेश द्वारा,

हस्ताक्षर.....

(सचिव)

15.6.9 सदस्य रजिस्टर से नाम हटाना

अन्त में दोषी सदस्यों के नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में से काट दिये जाते हैं और हरित किये गये अंशों पर कुल प्राप्त राशि को 'हरित अंश खाता में हस्तान्तरित कर दिया जाता है ।

अंशों के हरण के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य

अंश हरण के सम्बन्ध में सचिवीय कर्तव्यों का उल्लेख निम्न प्रकार है -

- **अन्तर्नियमों में प्रावधान:** सचिव का कर्तव्य है कि वह कम्पनी के अन्तर्नियमों के अंश हरण से सम्बन्धित सभी नियमों को मालूम करें और उनका पालन कठोरता से करें । इन नियमों का उल्लंघन किये जाने पर अंश हरण अवैध हो सकता है ।
- **अन्तर्नियमों में आवश्यक परिवर्तन:** यदि अंशों के हरण के सम्बन्ध में अन्तर्नियमों के अधीन आवश्यक अधिकार प्राप्त नहीं है तो ऐसा अधिकार प्राप्त करने के लिए कम्पनी के अन्तर्नियमों में आवश्यक परिवर्तन किए जाने चाहिये । तत्पश्चात् ही सचिव को अंशों के हरण की कार्यविधि प्रारम्भ करनी चाहिये ।
- **दोषी सदस्यों की सूची:** सचिव याचना राशि का निर्धारित समय में भुगतान न करने वाले दोषी सदस्यों की सूची तैयार करता है ।
- **संचालक मण्डल की सभा बुलाना:** तैयार की गई सूची पर विचार हेतु सचिव द्वारा संचालक मण्डल की सभा की व्यवस्था की जाती है और सूची को संचालक मण्डल के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है । संचालक मण्डल अपनी सभा में प्रस्ताव पारित करता है और सचिव को आदेश देता है कि याचना का भुगतान न करने ' वालों के पास भुगतान करने का स्मरण-पत्र भेजा जाये ।
- **स्मरण-पत्र तैयार करना:** संचालक मण्डल के प्रस्ताव द्वारा अधिकृत किये जाने पर सचिव याचना राशि का भुगतान न करने वाले दोषी सदस्यों को याचना स्मरण-पत्र भेजता है । ऐसे पत्र में दोषी सदस्यों से यह कहा जाता है कि वे निर्धारित समय के भीतर (जो 14 दिन से कम नहीं हो) ब्याज रहित याचना राशि का भुगतान कर दें । ऐसा न करने पर उनके अंशों का हरण कर लिया जायेगा ।
- **स्मरण-पत्र भेजना:** सचिव का यह कर्तव्य है कि वह उपर्युक्त वर्णित स्मरण-पत्र उचित रीति से बनाये और उसे पंजीकृत पत्र द्वारा भिजवाये ।
- **चेतावनी पत्र भेजना:** स्मरण-पत्र देने के बाद भी दोषी सदस्यों द्वारा याचना राशि का भुगतान न करने पर संचालक मण्डल के प्रस्ताव के अधीन सचिव द्वारा चेतावनी पत्र भेजा जाता है । इसमें अन्तर्नियमों का हवाला देते हुए यह कहा जाता

है कि निर्धारित तिथि तक (चेतावनी पत्र प्राप्ति के कम से कम 14 दिन बाद की कोई तिथि) याचना राशि का भुगतान कर दिया जाये अन्यथा अंशों का हरण कर लिया जायेगा ।

- **संचालक मण्डल की सभा बुलाना एवं हरण का प्रस्ताव पारित होना:** चेतावनी पत्र में उल्लिखित निर्धारित अवधि तक भी याचना राशि का भुगतान न करने पर सचिव द्वारा संचालक मण्डल की सभा बुलाने की व्यवस्था की जाती है । इस सभा में अंशों के हरण का प्रस्ताव पारित किया जाता है ।
- **हरण की सूचना भेजना:** तत्पश्चात सचिव द्वारा अंश हरण की औपचारिक सूचना सम्बन्धित सदस्यों को भेजी जाती है । साथ ही इस बात का उल्लेख भी किया जाता है कि इन अंशों के सम्बन्धित अंश प्रमाण-पत्र भी कम्पनी को वापिस कर दिया जाये । यदि आवश्यक हो तो समाचार पत्रों के माध्यम से अंश हरण की सूचना भी दे दी जाती है ।
- **सदस्यों के रजिस्टर से नाम हटाना:** सदस्यों के रजिस्टर में से दोषी सदस्यों के नाम काट दिये जाते हैं ।
- **धनराशि अंश हरण खाते में हस्तांतरित:** अंशों के हरण की हुई राशि को अंश हरण खाते में हस्तान्तरित कर दिया जाता है ।

15.7 अंश हरण के प्रभाव

अंशों का हरण करने का निम्नलिखित प्रभाव होता है:

- **स्वामित्व की समाप्ति:** अंशधारी का अंशों पर स्वामित्व समाप्त हो जाता है । हरण करने के पश्चात् उन अंशों पर कम्पनी का अधिकार हो जाता है ।
- **सदस्यता की समाप्ति:** अंशों का हरण होने के पश्चात् सम्बन्धित अंशधारी का नाम सदस्य रजिस्टर से काट दिया जाता है एवं उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है । लाभांश पाने का अधिकार समाप्त: अंशों के हरण होते ही अंशधारी का भविष्य में लाभांश पाने का अधिकार भी समाप्त हो जाता है ।
- **सभी अधिकारों की समाप्ति**: जिस व्यक्ति के अंशों का हरण कर लिया जाता है उसके अंशों से सम्बन्धित सभी अधिकार समाप्त हो जाते है ।
- **प्राप्त धनराशि जब्त होना:** हरण किये गये अंशों पर सम्बन्धित अंशधारियों से जितनी धनराशि कम्पनी को प्राप्त हो जाती है उसे जक कर लिया जाता है एवं उस पर कम्पनी का अधिकार हो जाता है । कम्पनी उसे अंश हस्तान्तरण खाते में हस्तान्तरित कर देती है ।
- **अंशधारी का देनदार के रूप में दायित्व:** अंशों का हरण करने के पश्चात् सम्बन्धित अंशधारी बकाया राशि के सम्बन्ध में साधारण देनदार बन जाता है और इसके रूप में वह उत्तरदायी हो जाता है । उस पर वाद भी प्रस्तुत किया जा सकता है ।
- **अंशदाता बना रहना:** यदि अंशों का हरण किये जाने के एक वर्ष के अन्दर कम्पनी का समापन होना प्रारम्भ हो जाता है तो अंशधारी सूची 'ब' के अंशदाता के रूप में उत्तरदायी बना रहता है ।

- **हरण किये अंशों का पुनर्निर्गमन:** हरण किये गये अंशों का संचालक मण्डल अन्तर्नियमों में दिए गए प्रावधानों के अनुसार पुनर्निर्गमन कर सकता है ।
- **हरण को रद्द करना:** यदि अंशों का हरण हो जाने के पश्चात् मूलधारक अंशों के हरण को रह करने की माँग करता है तो संचालक-मण्डल अन्तर्नियमों के अधीन ऐसे हरण को रह कर सकता है । ऐसी स्थिति में उसे बकाया याचना राशि ब्याज सहित चुकानी होगी ।
- **पूँजी में कमी नहीं:** कम्पनी अधिनियम की दृष्टि से अंशों का हरण होने पर कम्पनी की पूँजी में कमी होना नहीं माना जाता है ।

15.8 हरित अंशों का पुनर्निर्गमन

संचालक मण्डल को अधिकार है कि वह हरित अंशों को रह कर सकता है या किसी को पुनर्निर्गमित कर सकता है । प्रायः संचालक हरित अंशों का पुनर्निर्गमन करते हैं । हरित अंशों का पुन: विक्रय करना ही उनका पुनर्निर्गमन कहलाता है । हरित अंशों का पुनर्निर्गमन कटौती पर किया जा सकता है । परन्तु कटौती की राशि कम्पनी द्वारा उन अंशों पर प्राप्त राशि से अधिक नहीं हो सकती । यह उल्लेखनीय है क हरित अंशों के प्रीमियम पर पुनर्निर्गमन करने पर कोई रोक नहीं है ।

हरित अंशों का पुनर्निर्गमन अंशों का विक्रय माना जाता है । अत: ऐसा करने के बाद कम्पनी को आवंटन का विवरण रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है ।

हरण किए गए अंशों के पुनर्निर्गमन सम्बन्धी प्रावधान अथवा सचिवीय पद्धति

हरण किये गये अंशों के पुनर्निर्गमन सम्बन्धी प्रावधान एवं अपनायी जाने वाली क्रियाविधि निम्नलिखित है -

15.8.1 संचालक मण्डल द्वारा

कम्पनी का संचालक मण्डल चाहे तो हरण किये गये अंशों का कम्पनी के अन्तर्नियमों के अन्तर्गत पुनर्निर्गमन कर सकता है ।

15.8.2 पुनर्निर्गमन से पूर्व अंशों को निरस्त करना

यदि कोई अंशधारी जिसके अंशों का हरण किया गया है ऐसे अंशों का अंश प्रमाण-पत्र कम्पनी द्वारा माँगे जाने पर भी नहीं लौटाता है तो संचालक मण्डल अपनी सभा में प्रस्ताव पारित करके हरण किए गए अंशों को निरस्त कर सकता है । इस सम्बन्ध में सार्वजनिक सूचना स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित करनी पड़ती है ।

15.8.3 प्रतिफल

अंशों का पुनर्निर्गमन प्रीमियम पर, बट्टे पर अथवा अंकित मूल्य पर किया जा सकता है । यदि हरण किये गये अंशों को बट्टे पर निर्गमित किया जाता है तो पुनर्निर्गमन पर दी जाने वाली छूट ऐसे अंशों पर पहले प्राप्त की गई धनराशि से अधिक नहीं होनी चाहिये ।

15.8.4 संचालकों द्वारा लिखित घोषणा

हरण किये गये अंशों के पुनर्निर्गमन से पूर्व कम्पनी के किसी संचालक अथवा प्रबंध संचालक अथवा प्रबन्धक अथवा सचिव द्वारा लिखित एवं उचित रूप में एक वैधानिक घोषणा करनी चाहिए । इस घोषणा में इस बात का उल्लेख रहता है कि अंशों का हरण

किया जा चुका है । ऐसी घोषणा अंशों के हरण का अकाट्य प्रमाण मानी जाती है । इस घोषणा का उद्देश्य अंशों के नए क्रेता को इस बात का विश्वास दिलाना है कि सम्बन्धित अंशों का विधिवत हरण किया जा सकता है और इन अंशों पर अब अन्य किसी व्यक्ति का कोई अधिकार नहीं है ।

15.8.5 पुनर्निर्गमन का प्रस्ताव पारित होना

तत्पश्चात् संचालक मण्डल की सभा बुलायी जाती है और इसमें हरण किए गए अंशों के पुनर्निर्गमन हेतु प्रस्ताव पारित किया जाता है ।

15.8.6 अनियमितताओं का नये क्रेता पर प्रभाव नहीं

उपर्युक्त वैधानिक घोषणा के पश्चात् अंशों के नए क्रेता पर पूर्व में अंशों के हरण अथवा विक्रय में की गई अनियमितताओं का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है ।

15.8.7 भुगतान की रसीद

जैसे ही संचालक मण्डल की सभा में हरण किए गए अंशों के पुनर्निर्गमन सम्बन्धी प्रस्ताव पारित होता है वैसे ही अंशों के नए क्रेताओं को एक रसीद निर्गमित कर दी जाती है जो कि इस बात का प्रमाण होती है कि उन्होंने अंशों के निर्गमन पर निर्धारित धन राशि जमा कर दी है एवं उन्हें अंशों का निर्गमन कर दिया गया है ।

15.8.8 अंश प्रमाण-पत्र का निर्गमन

तत्पश्चात् इस रसीद के बदले में नवीन अंशधारी को अंश प्रमाण-पत्र निर्गमित कर दिया जाता है । इस पर दो संचालकों के हस्ताक्षर होते हैं तथा कम्पनी की सार्वमुद्रा अंकित होती है ।

15.8.9 आवंटन प्रत्याय भेजना आवश्यक नहीं

हरण किए गए अंशों के पुनर्निर्गमन के लिए कम्पनी द्वारा रजिस्ट्रार को आवंटन प्रत्याय भेजना आवश्यक नहीं है ।

15.8.10 सदस्य रजिस्टर में नाम अंकित करना

अंश प्रमाण-पत्र निर्गमित हो जाने के पश्चात नए अंशधारी -का नाम कम्पनी के सदस्य रजिस्टर में लिख दिया जाता है । सचिव उसके सम्बन्ध में सभी सूचनाएँ सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज करता है ।

हरित अंशों के पुनर्निर्गमन के प्रस्ताव का नमूना

"प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि प्रति अंश..... रूपये के अंश..... जिन पर ..... रूपये प्रति अंश के हिसाब से भुगतान हो चुका है, जिनकी क्रम संख्या..... से..... तक है और जो संचालक मण्डल के प्रस्ताव द्वारा दिनांक..... को हरित किए थे, वे राधेश्याम तिवारी निवासी जयपुर को..... रूपये प्रति अंश के हिसाब से भुगतान करने पर पूर्णदत्त अंशों के रूप में पुनर्निर्गमित कर दिये जाये । उक्त हस्तान्तरण रजिस्ट्री के लिए स्वीकार किया जाता है । कम्पनी की सार्वमुद्रा लगाकर श्री राधेश्याम तिवारी को हस्ताक्षर सहित नया अंश प्रमाण-पत्र दिया जाये ।"

15.9 अंशों का समर्पण

कभी-कभी अंशधारी अपनी इच्छा से बिना किसी प्रतिफल के अपने अपूर्णदत्त अंशों को निरस्त करने के लिए कम्पनी को वापस कर देता है तो यह 'अंशों का समर्पण' कहलाता है । प्रायः अंशधारी अपने अंशों पर बकाया याचना राशि का भुगतान करने में असमर्थ रहने पर अपने अंशों को जल होने से बचाने एवं याचनाओं के दायित्व के भुगतान से बचने के लिए अंश कम्पनी को समर्पण कर देता है । इस प्रकार कोई अंशधारी याचना राशि का भुगतान करने में असमर्थ होने के कारण अथवा अन्य किसी कारण से अन्तर्नियमों के अधीन स्वेच्छा से बिना किसी शर्त व प्रतिफल के निरस्त करने के लिये अपने अंश कम्पनी को लौटा देता है तो यह अंशों का समर्पण कहलाता है ।

समर्पण के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम और तालिका "अ" में प्रावधान नहीं होने पर भी न्यायाधीशों ने अंशों के समर्पण को उचित ठहराया है । अत: कम्पनी के अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में नियम दिये जाते हैं, किन्तु ये नियम कम्पनी अधिनियम के विरोध में नहीं होने चाहिये, अन्यथा समर्पण अवैध एवं अमान्य होगा । पूर्णदत्त अंशों का समर्पण स्वीकार नहीं किया जा सकता । ऐसा करने से कम्पनी की पूँजी में कमी होती है । ऐसा तभी संभव है जबकि ऐसे पूर्णदत्त अंशों के समर्पण पर उतनी ही कीमत के दूसरे पूर्णदत्त अंश जारी किए जाते है ।

अंशों के वैध समर्पण के लिये आवश्यक शर्तें

- अंशों के हरण के लिए निम्नलिखित शर्तों का पूरा होना आवश्यक है :
- अंशों के समर्पण के सम्बन्ध में कम्पनी के अन्तर्नियम में स्पष्ट व्यवस्था होनी चाहिये ।
- अंशों पर याचना की जानी चाहिए ।
- अंशधारी अंशों पर की गयी याचना राशि के भुगतान में असमर्थ होना चाहिये ।
- अंशों का समर्पण स्वेच्छा से किया जाना चाहिये ।
- अंशों का समर्पण बिना किसी शर्त के किया जाना चाहिये ।
- सामान्यत: पूर्णदत्त अंशों का समर्पण नहीं किया जा सकता, किन्तु यदि ऐसे समर्पण से पूंजी में कमी नहीं हो तो पूर्णदत्त अंशों का समर्पण भी संभव है ।

अंशों के समर्पण पर सचिवीय कार्यविधि

- अन्तर्नियमों में तत्सम्बन्धी प्रावधान होने चाहिए । प्रावधान न होने पर अन्तर्नियमों में परिवर्तन किया जाना चाहिये क्योंकि अन्तर्नियमों में प्रावधान होने पर ही संचालक मण्डल समर्पण को स्वीकार कर सकता है ।
- अंशधारी द्वारा समर्पण हेतु प्रार्थना पत्र दिया जाना आवश्यक है ।
- प्रार्थना पत्र के आधार पर संचालक मण्डल द्वारा समर्पण हेतु प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिये ।
- संचालक मण्डल द्वारा पारित प्रस्ताव की सचिव' द्वारा सम्बन्धित अंशधारी को सूचना दी जानी चाहिये ।

- अंत में सम्बन्धित अंशधारी के नाम को कम्पनी के सदस्य रजिस्टर में से काट दिया जाता है ।
- अंशधारी का सदस्य रजिस्टर में से नाम कटते ही उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है ।

15.10 सारांश

याचना अंश आवंटन के बाद कम्पनी द्वारा अपने जीवन काल में मांगी गयी वह राशि जो अंशों पर अदत्त है । आवेदन व आवंटन पर मांगी गयी राशि याचना नहीं है । जब कम्पनी के सदस्य याचना राशि के भुगतान में त्रुटि करते हैं तो कम्पनी अन्तर्नियमों की व्यवस्था के अनुरूप अंशों का अपहरण कर सकती है । अपहरित अंशों पर कम्पनी का ही अधिकार होता है और कम्पनी उन्हें अपने अन्तर्नियमों की व्यवरथा के अनुरूप पुनर्निर्गमित कर सती है । जब कोई सदस्य अपने अंशों को स्वयं की इच्छा से बिना किसी शर्त एवं प्रतिफल के कम्पनी को वापस कर देता है तो उसे अंशों का समर्पण कहते हैं । ऐसा सदस्य अंश अपहरण से बचने व याचनाओं के दायित्व से बचने के लिए कर सकते हैं । उक्त सभी विषयों से सम्बन्धित वैधानिक प्रावधान, क्रियाविधि एवं सचिवीय कर्त्तव्य इस इकाई की विषयवस्तु है ।

15.11 स्वपरख प्रश्न

1. अंशों पर की जाने वाली याचना से क्या आशय है? याचना से सम्बन्धित क्रियाविधि को बतलाइये ।
2. अंशों के अपहरण एवं समर्पण के लिए अपनायी जाने वाली क्रियाविधि को समझाइये ।
3. अंश अपहरण के प्रभाव बताइये । कम्पनी द्वारा अपहरित अंशों के पुनर्निर्गमन के लिए अपनायी जाने वाली क्रियाविधि का वर्णन कीजिये ।
4. अंश हरण व समर्पण में अंतर कीजिये । अंश हरण के लिए उचित प्रस्ताव का प्रारूप तैयार कीजिये ।

15.12 उपयोगी पुस्तकें

1. **आर.एल. नौलखा:** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2008)
2. **जोशी एवं गोयल:** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (अजमेरा बुक कम्पनी जयपुर, 2008)
3. **माथुर एवं सक्सेना:** कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति (रमेश बुक डिपो जयपुर, 2008)

इकाई - 16 : कम्पनी की सभाएँ : समान्य परिचय (Meetings of Company : General Introduction)

इकाई की रूपरेखा

16.0 सभा का आशय
16.1 सभाओं के प्रकार
16.2 सभा की सूचना
16.3 सभी की कार्यावली या कार्यक्रम या कार्यसूची
16.4 कार्यावली के प्रारूप
16.5 कार्यवाहक संख्या
16.6 प्रति पुरूष
16.7 सभा के सूक्ष्म
16.8 अभ्यासार्थ प्रश्न
16.9 उपयोगी पुस्तकें

16.0 सभा का आशय (Meaning of meetings)

कम्पनी में बहुत से ऐसे मामले व विषय होते हैं जिनमें कम्पनी के अंशधारियों को मिलजुल कर निर्णय लेने होते है । कम्पनी के संचालकों को भी विभिन्न विषयों पर विचार विमर्श करके निर्णय लेने होते हैं ऐसे निर्णय सीमाओं के माध्यम से ही लिए जा सकते है ।

सामान्य अर्थ में दो या दो से अधिक व्यक्तियों का किसी निश्चित कार्य को पूरा करने के लिए किसी विषय पर आपस में विचार-विमर्श करने तथा उस पर निर्णय लेने के उद्देश्य से एकत्रित होना ही सभा है ।

शार्प बनाम डेविस के मामले में न्यायाधीश महोदय ने इस प्रकार परिभाषित किया सभा से आशय, वैधानिक उद्देश्य से एकत्रित समूह से है अथवा किसी वैधानिक उद्देश्य के लिए कम से कम दो व्यक्तियों का मिलना है ।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पूर्व निर्धारित सूचना के आधार पर दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी निश्चित कार्य को पूरा करने के लिए किसी निश्चित स्थान पर एकत्रित होकर विचार विमर्श द्वारा किसी निर्णय पर पहुँचते हैं उसे सभा कहते है ।

16.1 सभाओं के प्रकार (Types of Meetings)

सभाएं अनेक प्रकार की होती है जिनका निम्न आधारों पर वर्गीकरण किया जा सकता है

1 **अंशधारियों या सदस्यों की सभाएँ**

(1) वैधानिक सभा
(2) वार्षिक साधारण सभा
(3) असाधारण सभा

(4) वर्ग सभाएँ ।

2 **संचालकों की सभाएँ**

(1) संचालक मण्डल के सदस्यों की सभा

(2) संचालक समिति की सभा ।

3 **ऋणदाताओं की सभाएँ**

(1) ऋणपत्रधारियों की सभाएँ

(2) ऋणदाताओं की सभाएँ

16.2 सभा की सूचना (Notice of Meeting)

सूचना से अभिप्राय कम्पनी के अधिकृत व्यक्ति द्वारा ऐसी सूचना से है जिसमें कम्पनी की सभा में भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति को सभा के दिन, तिथि, स्थान, समय व विषय की सूचना दी जाती है । एक सभा उसी स्थिति में वैध मानी जाती है जब सभा में उपस्थित होने वाले प्रत्येक व्यक्ति को सभा की उचित एवं पर्याप्त सूचना दे दी जाए ।

सूचना कब आवश्यक नही है? (When notice is not necessary?)

1. यदि सदस्यों के पते आदि शत्रु देश में रह गये हों ।
2. यदि अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत हो तो ऐसे सदस्यों को सूचना भेजने की आवश्यकता नहीं होती जो देश के बाहर निवास करते हों ।
3. स्थगित सभा की सूचना देना आवश्यक नहीं होता है ।
4. यदि युद्ध के समय सदस्य शत्रु देश में रह गये हों ।

सूचना किसे भेजी जानी चाहिए? (To whom notice must be sent?)

1. कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को
2. मूल सदस्य के उत्तराधिकारी को ।
3. दिवालिया सदस्य के राजकीय प्रापक को ।
4. कम्पनी के अंकेक्षक को ।

सूचना की विषय सामग्री (Contents of notice)

1. सभा की प्रकृति
2. सभा का दिन, स्थान व समय ।
3. सभा बुलाने का उद्देश्य ।
4. सभा में स्वीकार किये जाने वाले अनुबन्धों का विवरण ।
5. सभा में पारित किये जाने वाले प्रस्ताव ।
6. सूचना देने की तिथि ।
7. सभा बुलाने का अधिकार प्रदान करने वाली कम्पनी अधिनियम की धारा ।

सूचना किसके द्वारा? (Notice by whom?)

सभा की सूचना अधिकृत व्यक्ति द्वारा ही भेजी जानी चाहिए । यदि कोई व्यक्ति बिना अधिकारों के सभा बुलाता है तो सभा की सूचना वैध नहीं मानी जाती ।

कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं के आधार पर निम्नांकित के द्वारा कम्पनी की सभाएं बुलायी जा सकती है :-

1. वैध सभा केवल उचित प्राधिकारी या व्यक्ति द्वारा ।
2. वैधानिक सभा, वार्षिक साधारण सभा, असाधारण सभा तथा संचालक मण्डल की सभा बुलाने का अधिकार संचालक मण्डल को है ।
3. संचालक मण्डल द्वारा वार्षिक साधारण सभा बुलाने में त्रुटि की दशा में केन्द्रीय सरकार भी सभा बुला सकती हैं ।
4. कम्पनी विधान ट्रिब्यूनल भी कुछ परिस्थितियों में सभा बुला सकता है ।
5. न्यायालय द्वारा सभा बुलाने का आदेश ।
6. निस्तारक द्वारा समापन की दशा में सभा बुलाना ।

सूचना की अवधि (Period of notice)

साधारण सभा के लिए सूचना, सभा की तिथि से कम-सें-कम 21 दिन पूर्व सदस्यों को प्राप्त हो जानी चाहिए । इस सूचना की अवधि में डाक में डालने की अवधि को सम्मिलित नहीं किया जाता है ।

सूचना की स्पष्ट अवधि	21 दिन
डाक में डालने के पश्चात् सूचना पहुँचना	2 दिन
सूचना प्राप्ति का दिन	1 दिन
सभा का दिन	1 दिन
कुल	25 दिन

16.3 सभा की कार्यावली या कार्यक्रम या कार्यसूची (Agenda)

कार्यावली से आशय किसी सभा में किए जाने वाले कार्यो की एक व्यवस्थित सूची है । सभा में किए जाने वाले कार्यों का विवरण देने के लिए कार्यावली या कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं ।

एस. ए. सर्लेकर के अनुसार : "कार्यक्रम या कार्यावली का आशय किसी सभा में किये जाने वाले कार्यो के विवरण से होता है ।"

कार्यावली निर्माण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है:

1. सचिव संचालक मण्डल के परामर्श से विचारणीय विषयों की सूची तैयार करें ।
2. प्रत्येक विषय के सामने क्रम संख्या लिखी होनी चाहिए ।
3. कार्यावली में सभा का नाम, स्थान, समय, तिथि, सदस्यो की संख्या आदि का उल्लेख होना चाहिए ।
4. समान प्रकृति के कार्यो को एक साथ रखा जाना चाहिए ।
5. कार्यावली में ऐसे विषयों को रखा जाना चाहिए जिस पर विचार करने के लिए सभा अधिकृत है।
6. सदस्यों को दी जाने वाली कार्यावली की सभी प्रतियां समान होनी चाहिए ।
7. अध्यक्ष एवं सचिव को कम से कम एक कार्यावली की प्रति रखनी चाहिए ।
8. जिन विषयों पर सभा में विचार करना है, वे सभी कार्यावली में सम्मिलित कर लिये गये है ।

16.4 कार्यावली के प्रारूप (Forms of Agenda)

कार्यावली दो प्रकार से तैयार की जाती है:

1. संक्षिप्त कार्यावली एवं
2. विस्तृत कार्यावली ।

1. संक्षिप्त कार्यावली (Skeleton Agenda)

इस कार्यावली में सभा में किये जाने वाले कार्यों का संक्षिप्त विवरण दिया जाता है उनको विस्तार से नहीं दिया जाता है ।

संक्षिप्त कार्यावली का नमूना

..... कम्पनी का नाम

दिनांक ..... समय .....

स्थान ..... पर होने वाली 55 वीं वार्षिक सभा की कार्यावली

1. संचालकों के प्रतिवेदन पर विचार
2. अंकेक्षकों के प्रतिवेदन पर विचार, संचालकों का चुनाव
3. लाभांश की घोषणा
4. अंकेक्षकों का पारिश्रमिक
5. अन्य कोई विषय

2. विस्तृत कार्यावली (Detailed Agenda)

इस प्रकार की कार्यावली में शीर्षक के साथ ही कार्यो का विवरण भी दे दिया जाता हैं इस कार्यावली से सूक्ष्म लिखने में सुविधा रहती है ।

विस्तृत कार्यावली का नमूना (Specimen of detailed Agenda)

मेहरा प्रकाशन लिमिटेड

दिनांक ..... को समय .....स्थान .....पर होने वाली 55 वीं वार्षिक साधारण सभा की कार्यावली

क्रम संख्या	कार्यावली	अध्यक्ष द्वारा टिप्पणी
1.	सचिव द्वारा सभा बुलाने की सूचना का पढ़ा जाना	पढ़ी गई
2.	अंकेक्षकों का प्रतिदिन-सचिव द्वारा पढ़ा जाना |	पढ़ी गई
3.	संचालको का प्रतिदिन -अध्यक्ष द्वारा पूछा जाना की पढ़े हुए मान लिए गये, पढ़ा जावे अथवा पढ़ा हुआ मान लिया जावे |	पढ़े हुए मान लिए गए
4.	अध्यक्ष द्वारा भाषण पढ़ना - कम्पनी के अंकेक्षकों द्वारा	श्री.....द्वारा अनुमोदन
5.	अध्यक्ष द्वारा प्रश्न आमन्त्रित करना तथा उत्तर देना ।	प्रश्न पूछे गये व उत्तर दिये गये ।
6.	अध्यक्ष द्वारा प्रस्ताव रखना एवं परिणाम घोषित करना ।	प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया व स्वीकृत ।

7.	लाभांश की घोषणा - अध्यक्ष घोषणा करेंगे कि 31 मार्च ..... को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए 15 प्रतिशत लाभांश की सिफारिश की गई है जो कि 28 फरवरी ... को सदस्य रजिस्टर में अंकित अंशधारियों को देय हैं । अध्यक्ष श्री .....(संचालक) को अनुमोदन हेतु कहेंगे |	श्री.....द्वारा अनुमोदन किया गया ।
8.	अध्यक्ष प्रस्ताव को सभा के समक्ष विचारार्थ रखेंगे तथा परिणाम घोषित करेंगे ।	प्रस्ताव पारित
9.	संचालक/संचालको का चुनाव - अध्यक्ष प्रस्तावित प्रस्ताव प्रस्तुत करेंगे कि श्री ..... जो अभी संचालक है तथा पारी से अवकाश ग्रहण कर रहे है कम्पनी के संचालक पुन: चुने जाये ।	प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया
10.	अध्यक्ष श्री ..... को प्रस्ताव का अनुमोदन करने को कहेंगे |	श्री..... द्वारा अनुमोदित
11.	अध्यक्ष की अनुमति से अन्य कोई विषय	कोई नहीं
12.	अध्यक्ष द्वारा धन्यवाद प्रस्ताव का उत्तर देना तथा सभा समाप्ति की घोषणा	

16.5 कार्यवाहक संख्या (Quorum)

किसी भी सभा की वैधता के लिए न्यूनतम संख्या में सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक होती है । इस प्रकार की सभा में लिए गये निर्णय वैध माने जाते है इसके अभाव में लिये गये निर्णय अवैध माने जाते हैं ।

साधारण शब्दों में कार्यवाहक संख्या से आशय सभा में उपस्थित होने के लिए अधिकृत व्यक्तियों की वह न्यूनतम संख्या है जो कि नियमानुसार सभा की वैधता के लिए आवश्यक है ।

कार्यवाहक संख्या के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बातें -

1. **व्यक्तिगत रूप से उपस्थिति आवश्यक** - कार्यवाहक संख्या की गणना में अधिकृत व्यक्तियों की व्यक्तिगत उपस्थिति ही मान्य हैं । प्रतिपुरूष (Proxy) के रूप में उपस्थित व्यक्तियों की गणना कार्यवाहक संख्या में नही की जाती है ।
2. **निरन्तर उपस्थिति**: कार्यवाहक संख्या में सदस्य सभा में हमेशा उपस्थित रहे । यदि इस दौरान कार्यवाहक सदस्य संख्या उपस्थित नहीं रहती है तो किसी भी सदस्य द्वारा ध्यानाकर्षण कराये जाने पर सभा की कार्यवाही रोकी जा सकती है ।
3. **कार्यवाहक संख्या के अभाव में पारित किए गए प्रस्ताव व्यर्थ:** आवश्यक कार्यवाहक संख्या के अभाव में सभा की कार्यवाही नहीं की जा सकती, यदि ऐसा कर दिया गया है तो सभा में पारित प्रस्ताव तथा अन्य कार्यवाही अवैध मानी जाएगी ।
4. **न्यूनतम कार्यवाहक संख्या -** (1) कम्पनी अधिनियम की धारा 174 के अनुसार सार्वजनिक कम्पनी की दशा में - 5

अन्य कम्पनियों की दशा में - 2

(2) यदि अन्तर्नियमों में न्यूनतम कार्यवाहक संख्या अधिक निर्धारित की गई है तो वहीं मान्य होगी ।

(3) यदि अन्तर्नियमों में न्यूनतम कार्यवाहक संख्या कम निर्धारित की गई है तो यह मान्य नहीं होगी ।

5. **कार्यवाहक संख्या उपस्थित नहीं होना -** यदि न्यूनतम संख्या में सदस्य उपस्थित नहीं होते है तो निम्न व्यवस्थाएं लागू होगी:

(1) सभा प्रारम्भ नहीं की जा सकती है ।

(2) यदि सभा की कार्यवाही प्रारम्भ कर दी जाती है तो वह अनियमित सभा हो जाती है ।

(3) सभा में की गई समस्त कार्यवाही अवैधानिक हो जाती है ।

(4) यदि आधे घंटे तक निर्धारित कार्यवाहक संख्या उपस्थित नहीं होती है तो उस सभा को स्थगित कर दिया जाता है ।

(5) स्थगित सभा का आयोजन अगले सप्ताह उसी दिन, समय व स्थान पर होता है ।

6. **स्थगित सभा में कार्यवाहक संख्या -** स्थगित सभा में भी आधे घंटे तक कार्यवाहक संख्या उपस्थित नहीं होती है तो जितने सदस्य उपस्थित होते है उस सभा के लिए उन्हें कार्यवाहक संख्या मान लिया जाता है ।

16.6 प्रति पुरूष (PROXY)

"प्रतिपुरूष" एक ऐसा व्यक्ति जो अन्य व्यक्ति की ओर से किसी कम्पनी की सभा में उपस्थित होने तथा मत देने के लिए नियुक्त किया जाता है ।

दूसरे शब्दों में प्रतिपुरूष से आशय ऐसे अधिकार पत्र से है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति का कम्पनी की सभा में प्रतिनिधित्व करने का अधिकार प्राप्त होता है ।

जे. सी. बहल (J.C.Behl) के अनुसार, " प्रतिपुरूष से आशय ऐसे व्यक्ति से है जो एक व्यक्ति के स्थान पर मत देने के लिए अधिकृत किया जाता है |, यद्यपि सामान्यत: इसका अर्थ एक ऐसे प्रलेख से लगाया जाता है जिसके द्वारा प्रतिपुरूष की नियुक्ति की जाती है ।"

ली एण्ड बार (Lee and Barr),- " प्रतिपुरूष से आशय एक एसे व्यक्ति से है जो सभा में अन्य व्यक्ति के लिए कार्य करने तथा मत देने के लिए अधिकृत किया गया है, यद्यपि इसका आशय ऐसे प्रपत्र से भी लगाया जाता है जिससे प्रतिपुरूष की नियुक्ति की जाती है ।"

अत: प्रतिपुरूष के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि इस शब्द का प्रयोग व्यक्ति के लिए व उस संलेख के लिए किया जाता है, जिसके द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को किसी सदस्य के प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया जाता है ।

प्रतिपुरूष सम्बन्धी वैधानिक प्रावधान

1. किसके द्वारा प्रतिपुरूष नियुक्त किया जा सकता है कम्पनी अधिनियम की धारा 176 तथा धारा 187 के अन्तर्गत प्रतिपुरूष की नियुक्त अग्रांकित द्वारा की जा सकती है

(1) कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को जिसे सभा में उपस्थित होकर मत देने का अधिकार है, दूसरे व्यक्ति को सभा में उपस्थित होने व मत देने के लिए प्रतिपुरूष नियुक्त कर सकता हे ।

(2) कम्पनी अधिनियम की धारा 187 ए के अन्तर्गत राष्ट्रपति व राज्यपाल किसी कम्पनी के सदस्य है तो वे किसी भी अन्य व्यक्ति को प्रतिपुरूष नियुक्त कर सकते है ।

2. प्रतिपुरूष किसे नियुक्त किया जा सकता है?

किसी भी व्यक्ति को प्रतिपुरूष के रूप में नियुक्त' किया जा सकता है' चाहे वह कम्पनी का सदस्य न हो।

3. प्रतिपुरूष नियुक्त करने की विधि

(1) प्रतिपुरूष सदैव लिखित में होता है |

(2) फार्म में नियुक्त किये गये प्रतिपुरूष का नाम लिखा जाता है ।

(3) निर्धारित स्थान पर नियुक्त करने वाले सदस्य के हस्ताक्षर होने आवश्यक है ।

(4) प्रतिपुरूष की नियुक्ति के लिए निर्धारित फार्म पर निर्धारित राशि, के मुद्रांक लगाना आवश्यक है ।

(5) प्रतिपुरूष की नियुक्त हेतु फार्म सभा प्रारम्भ, होने के 48 घंटे पूर्व कम्पनी कार्यालय मे जमा करवाया जा सकता हैं ।

(6) प्रतिपुरूष फार्म के अन्त में 100 रू. का राजस्व टिकट लगाना आवश्यक है ।

प्रतिपुरूष फार्म (Form of Proxy)

.....कम्पनी लिमिटेड

.....पंजीकृत कार्यालय

.....खाता पृष्ठ संख्या

मैं/हम .....निवासी .....हूँ जो कम्पनी का सदस्य होने के कारण श्री .....निवासी .....को मेरी ओर से कम्पनी की 25 जुलाई 2008 को होने वाली 25 वीं वार्षिक साधारण सभा में उपस्थित होने तथा मत देने के लिए प्रतिपुरूष के रूप में नियुक्त करता हूँ ।

इसके सदस्य स्वरूप मैंने आज दिनांक..... को हस्ताक्षर किये ।

1.00 रूपए

रेवेन्यू

4. प्रतिपुरूष के अधिकार -

(1) सभा में उपस्थित हो सकता है ।

(2) प्रतिपुरूष सामान्य सदस्य की तरह बोल सकता है, प्रश्न पूछ सकता है तथा विचार विमर्श में भाग ले सकता है ।

(3) प्रत्येक प्रतिपुरूष को मतदान करने का अधिकार होता हैं ।

(4) प्रतिपुरूष मतगणना की मांग कर सकते हैं ।

(5) विशेष प्रतिपुरूष केवल उसी प्रस्ताव पर मतदान कर सकता है जिसके लिए उसे नियुक्त किया गया है ।

(6) यदि अन्तर्नियमों में व्यवस्था हो तो प्रतिपुरूष हाथ उठाकर मतदान करने का अधिकार रखता है ।

5. प्रतिपुरूष फार्म का निरीक्षण

कम्पनी का प्रत्येक ऐसा सदस्य जिसे सभा में उपस्थित होने तथा मतदान करने का अधिकार प्राप्त है वह सभा के 24 घंटे पूर्व से लेकर सभा के समय तक किसी भी समय कम्पनी को प्राप्त प्रतिपुरूष फार्मों का निरीक्षण कर सकता है ।

6. कम्पनी के खर्च पर प्रतिपुरूष का आमन्त्रण

कम्पनी के खर्च पर किसी व्यक्ति को प्रतिपुरूष नियुक्त करने का निमंत्रण जारी नहीं किया जावेगा और यदि ऐसा निमन्त्रण जारी किया जाता है तो ऐसा अधिकारी जिसने ऐसा किया है, उसे 10,000 रू. तक के जुर्माने से दण्डित किया जा सकता है |

7. **प्रतिपुरूष फार्म रद्द होना-**

निम्न आधारों पर प्रतिपुरूष फार्म को रद्द किया जा सकता है:-

(1) उचित राशि के मुद्रांक नहीं लगाये गये हैं ।

(2) वह पूर्ण नहीं है ।

(3) सदस्य के हस्ताक्षर नमूने के हस्ताक्षर से मेल नहीं खाते है ।

(4) नियुक्त करने वाले सदस्य ने प्रतिपुरूष के आधिकारों का खण्डन कर दिया हो ।

(5) प्रतिपुरूष नियुक्त करने वाले सदस्य की मृत्यु अथवा पागलपन की दशा में भी प्रतिपुरूष फार्म रद्द किया जा सकता है ।

16.7 सभा के सूक्ष्म (Minutes of meetings)

सभा द्वारा किये कार्यों, लिये गये निर्णयों तथा पारित किये गये प्रस्तावों के लिखित विवरण को सूक्ष्म कहा जाता है । इसके लिखने का उद्देश्य कम्पनी की सभाओं में किये हुए कार्यों, निर्णयों तथा पारित किये गये प्रस्तावों का लिखित विवरण रखना हैं । सभापति के हस्ताक्षर के पश्चात् सूक्ष्म कम्पनी का स्थायी रिकार्ड हो जाता है ।

ली एण्ड बार के अनुसार " सूक्ष्म एक ऐसा लिखित अभिलेख होता है जिसमें अंशधारियों की सभा संचालक-मण्डल की सभा में की गई कार्यवाहियों का विचार किये गये विषयों और सभा द्वारा उन पर लिये गये निर्णयों का सही और ठीक विवेचन होता हैं ।

सूक्ष्म से सम्बन्धित वैधानिक प्रावधान (Legal provision regarding to minutes)

कम्पनी की सभाओं के सूक्ष्म के सम्बन्ध में निम्न प्रावधान है:-

1. **लिखना आवश्यक -** प्रत्येक कम्पनी को साधारण सभा तथा संचालक मण्डल की सभाओं के सूक्ष्म लिखना आवश्यक हैं । [धारा 193(1)]
2. **अवधि** - सभा के सूक्ष्म सभा की समाप्ति के 30 दिनों के भीतर लिखा जाना आवश्यक है । **[धारा 193(1)]**

3. **पुस्तिका में लिखना-** सूक्ष्म निर्धारित सूक्ष्म पुस्तिका में लिखे जाने चाहिए । **[धारा 193(1)]**
4. **हस्ताक्षर -** सूक्ष्म पुस्तिका के प्रत्येक पृष्ठ पर निम्न में से किसी एक के हस्ताक्षर होने चाहिए:

(i) संचालक मण्डल की सभा अथवा संचालक मण्डल की समिति की सभा की दशा में उस सभा के अध्यक्ष या सभापति द्वारा ।

(ii) साधारण सभा की दशा में उस सभा के अध्यक्ष या सभापति द्वारा । अध्यक्ष की मृत्यु पागलपन या दिवालिया की दशा में संचालक मण्डल द्वारा अधिकृत किसी संचालक द्वारा ।

[धारा 193(1)]

5. **सूक्ष्म चिपकाना नहीं -** सूक्ष्म पुस्तिका में सूक्ष्म लिखे जाते है उन्हें चिपकाना नहीं चाहिए । **[धारा 193(बी)]**
6. **उचित व सही** - सभा के सूक्ष्म में सभा की कार्यवाही का उचित व सही विवरण होना चाहिए । **[धारा 193(2)]**
7. **अधिकारियों के नियुक्ति का आदेश** - यदि सभा में किसी महत्वपूर्ण अधिकारी की नियुक्ति की गयी है तो उस अधिकारी की नियुक्ति का उल्लेख होना चाहिए । । **[धारा 193(3)]**
8. **संचालक मण्डल के सूक्ष्म -** संचालक मण्डल तथा उसकी किसी समिति की सभा के सूक्ष्म में निम्न बातों का उल्लेख होना चाहिए

(1) उपस्थित संचालकों के नाम,

(2) असहमत संचालकों के नाम **[धारा 193 (4)]**

9. **अर्थदण्ड** - यदि उपर्युक्त प्रावधानों के पालन मैं त्रुटि की जाती है तो प्रत्येक दोषी हक अधिकारी पर 500 रूपये प्रतिदिन तक जुर्माना किया भी सकता हैं

[धारा 193(6)]

10. **सूक्ष्म कार्यवाही का प्रथमदृष्ट्या प्रमाण -** (धारा 193) की विभिन्न उपधाराओं के प्रावधानों के अनुसार लिखे गये सूक्ष्म सभा की कार्यवाही का प्रथमदृष्टया प्रमाण होते है ।

(धारा 194)

11. **सभा का आयोजन व नियुक्ति विधि मान्य -** सभा के सूक्ष्म सभा की कार्यवाही का प्रथमदृष्ट्या 'प्रमाण माने जाते है ।

(धारा 195)

12. **पुस्तिकाएँ रखने का स्थान** - सूक्ष्म पुस्तिका कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखी जानी चाहिए **।**

(धारा 196)

13. **प्रतिलिपि प्राप्त करना** - कम्पनी के किसी भी सदस्य द्वारा आवेदन किये जाने एवं आवश्यक शुल्क जमा कराने के सात दिन के भीतर उसे सभा की कार्यवाही की प्रतिलिपि भेजी जानी चाहिए ।

(धारा 196)

14. **दण्ड की व्यवस्था -** कोई कम्पनी अपने सदस्य को सूक्ष्म पुस्तिका निरीक्षण हेतु उपलब्ध नहीं कराती है अथवा प्रतिलिपि निर्धारित अवधि में उपलब्ध नहीं कराती है तो प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 5000 रू. तक जुर्माना किया जा सकता है ।

(धारा 196)

15. **सूक्ष्म का प्रकाशन -** कम्पनी अपने खर्चे पर सभाओं की कार्यवाही का तब तक प्रकाशन नहीं कर सकती जब तक कि उन्हें धारा 193 के अनुसार लिख नहीं लिया जाता है तथा उस पर सभापति द्वारा हस्ताक्षर नहीं किये जाते हैं । यदि कोई कम्पनी इस धारा का पालन नहीं करती हैं तो उस कम्पनी तथा प्रत्येक दोषी अधिकारी पर प्रत्येक अपराध के लिए पाँच हजार रू. तक का जुर्माना किया जा सकता है ।

(धारा 197)

16.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्रतिपुरूष को परिभाषित कीजिए। प्रतिपुरूष के सम्बन्ध में वैधानिक व्यवस्थाओं तथा सचिव के कार्यो की व्याख्या कीजिए ।
   Define proxy. Describe the legal provisions and secretarial work regarding the proxy.
2. प्रतिपुरूष की परिभाषा दीजिए । प्रतिपुरूष के प्रयोग सम्बन्धी नियम क्या है? प्रतिपुरूष प्रपत्र का नमूना दीजिए |
3. सभा के सूक्ष्म पर एक टिप्पणी लिखिए ।
4. कम्पनी की सभा की सूचना की अवधि को समझाइए ।

16.9 उपयोगी पुस्तकें

1. एम.जे.मैथ्यू - कम्पनी लॉ ।
2. आर.एल.नौलखा - कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति ।
3. जोशी एवं गोयल - कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति ।

इकाई 17 : वैधानिक सभा (Statutory meeting)

इकाई की रूपरेखा

17.0 वैधानिक सभा की परिभाषा
17.1 वैधानिक सभा के सम्बन्ध में कानूनी प्रावधान
17.2 वैधानिक सभा के कर्तव्य
17.3 वार्षिक साधारण सभा
17.4 वार्षिक साधारण सभा के सम्बन्ध में वैधानिक प्रावधान
17.5 वार्षिक साधारण सभा के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य
17.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
17.7 उपयोगी पुस्तकें

17.0 वैधानिक सभा की परिभाषा (Definition of statutory meeting)

कम्पनी के सदस्यों की कम्पनी के जीवन काल में बुलाई जाने वाली प्रथम सभा, जो कम्पनी के व्यापार प्रारम्भ करने के प्रमाण-पत्र प्राप्त होने के 1 माह के पश्चात तथा छ माह के अन्दर बुलाई जाती है, कम्पनी की वैधानिक सभा कहलाती है । यह सभा कम्पनी के जीवन काल में एक बार ही बुलाई जाती है । यह सभा वैधानिक रूप से बुलानी अनिवार्य है इसलिए इसे वैधानिक सभा कहते हैं ।

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 165 (1) के अनुसार, प्रत्येक अंशों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी और प्रत्येक प्रत्याभूति द्वारा सीमित कम्पनी को (जो अंश पूंजी वाली हों), जिस दिन व्यापार प्रारम्भ करने का अधिकार प्राप्त होता है, उससे कम से कम 1 माह बाद और अधिक से अधिक 6 माह के अन्दर कम्पनी के सदस्यों की एक सभा बुलानी होती है, जिसे वैधानिक सभा कहते है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वैधानिक सभा सार्वजनिक कम्पनी के सदस्यों? की वह सभा है जो कम्पनी द्वारा व्यवसाय प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के 1 महिने के बाद व 6 माह के भीतर बुलायी जाती हैं ।]

17.1 वैधानिक सभा के सम्बन्ध में कानूनी प्रावधान (Legal provision relating to statutory meeting)

वैधानिक सभा के सम्बन्ध में कानूनी प्रावधान निम्नलिखित है:-

1. **वैधानिक सभा बुलाने का दायित्व -** प्रत्येक अंशों द्वारा सीमित तथा गारन्टी द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी को जिसमें अंश पूंजी हो, वैधानिक सभा बुलानी आवश्यक होती हैं

धारा 165(1)

2. **वैधानिक सभा बुलाने का समय -** उपर्युक्त प्रकार की कम्पनी को व्यवसाय प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के 1 माह बाद व 6 माह के भीतर वैधानिक सभा बुलानी आवश्यक है ।

धारा 165(1)

3. **वैधानिक सभा के दायित्व से मुक्त कम्पनियाँ** - निम्न कम्पनियों को वैधानिक सभा बुलाना आवश्यक नहीं है:
   (1) स्वतन्त्र निजी कम्पनियाँ
   (2) असीमित दायित्व वाली कम्पनियों
   (3) गारन्टी द्वारा सीमित कम्पनियाँ जिनमें अंश पूंजी न हों ।
   (4) सार्वजनिक कम्पनी की सहायक निजी कम्पनी ।
   (5) धारा 43 ए के अन्तर्गत मानी गयी सार्वजनिक कम्पनियाँ यदि किसी निजी कम्पनी को उसके समामेलन के 6 माह के अन्दर ही धारा 43 ए के अन्तर्गत सार्वजनिक कम्पनी मान लिया जाता है तो उसे वैधानिक सभा बुलानी आवश्यक है ।
4. **सभा की सूचना -** सभा की सूचना स्पष्ट रूप से 21 दिन पहले दी जानी चाहिए इन दिनों में सूचना प्राप्ति का दिन व सभा का दिन सम्मिलित नहीं किया जाता है । इससे कम अवधि की सूचना से सभा तभी बुलायी जा सकती है जबकि चुकता पूंजी के 95 प्रतिशत भाग पर अधिकार रखने वाले सदस्य इस हेतु अपनी स्वीकृति प्रदान कर दें । इस सूचना में इस बात का उल्लेख कर देना चाहिए कि यह वैधानिक सभा हैं ।

[धारा 165 (2)]

5. **वैधानिक रिपोर्ट को संचालको द्वारा प्रमाणित करना** - वैधानिक सभा की सूचना के साथ वैधानिक रिपोर्ट सदस्यों को भेजी जाती है इसे प्रमाणिक किया जाना चाहिए । प्रमाणन के सम्बन्ध में निम्न व्यवस्थाएं हैं :
   (1) कम रो कम दो संचालकों द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए जिसमें एक प्रबन्ध संचालक होना चाहिए ।
   (2) यदि प्रबन्ध संचालक नहीं है तो दो संचालकों द्वारा ही प्रमाणन पर्याप्त है ।

[धारा 165(4)]

6. **अंकक्षकों द्वारा प्रमाणित कराना -** तत्पश्चात् के अंकेक्षक उस रिपोर्ट के निम्नांकित विवरणों को प्रमाणित करते है:
   (1) अंशों के आवंटन का विवरण,
   (2) अंशों पर प्राप्त धन
   (3) कम्पनी का प्राप्तियाँ एवं भुगतान ।

[धारा 165 (4)]

7. **वैधानिक रिपोर्ट सूचना के साथ सदस्यों को भेजना -** सभा की सूचना के साथ वैधानिक रिपोर्ट की प्रमाणित प्रतिलिपि भी भेजी जाती है । यह रिपोर्ट कम से कम 21 दिन पहले पहुंच जानी चाहिए ।

[धारा 165 (2)]

8. **वैधानिक रिपोर्ट की प्रति रजिस्ट्रार को भेजना -** सदस्यों के साथ-साथ वैधानिक रिपोर्ट की एक प्रमाणित प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के पास भेजी जानी आवश्यक है

[धारा 165 (5)]

9. **सदस्यों को कार्यावली भेजना -** सभा में पूरे किये जाने वाले कार्यक्रमों का विवरण सभा की सूचना के साथ सभी सदस्यों को भेजा जाता है । जिसे कार्यावली के नाम से जाना जाता है ।

[धारा 165 (4)]

10. **सभा का आयोजन -** निर्धारित समय व तिथि पर सभा का आयोजन किया जाता है । इस सभा में वैधानिक रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है ।
11. **सभा का स्थगन -** वैधानिक सभा का स्थगन किया जा सकता है । इस सभा में वे सभी प्रस्ताव पारित किये जा सकते है जिनके लिए कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार आवश्यक सूचना दे दी गयी हो, इस सभा को वे सभी अधिकार प्राप्त है जो मूल सभा को है ।

[धारा 165 (8)]

12. **अर्थदण्ड -** यदि धारा 165 के पालन में त्रुटि की जाती है तो कम्पनी के दोषी संचालक व अन्य अधिकारी पर पाँच हजार रू. तक का जुर्माना किया जा सकता है ।

[धारा 165(9)]

13. समापन के लिए न्यायालय को आवेदन - यदि निर्धारित अवधि में कोई कम्पनी वैधानिक सभा नहीं बुलाती है या वैधानिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने में त्रुटि करती है तो कोई भी सदस्य ऋणदाता अथवा रजिस्ट्रार निर्धारित अवधि बीतने के 14 दिन पश्चात् कम्पनी के समापन की मांग करते हुए न्यायालय को आवेदन पत्र प्रस्तुत कर सकता है ।

[धारा 433 (b)]

17.2 वैधानिक सभा के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य (Duties of secretary regarding statutory meeting)

वैधानिक सभा कम्पनी के जीवनकाल में एक बार बुलायी जाती है। यह कम्पनी की महत्वपूर्ण सभा है । वैधानिक सभा के सम्बन्ध में सचिव को बहुत से कार्य करने होते हैं । इन कर्त्तव्यों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:

(I) सभा पूर्व के कर्तव्य ।

(II) सभा के दौरान कार्यविधि से सम्बन्धित कर्तव्य ।

(III) सभा के बाद के कर्तव्य

(I) सभा पूर्व के कर्तव्य - इसके अन्तर्गत वे सब कर्तव्य सम्मिलित है जो वह सभा बुलाने से पूर्व करता हैं । इसके सम्बन्ध में सचिव के निम्न कर्तव्य है:

1. **निश्चित अवधि में सभा बुलाना** - कम्पनी सचिव को यह ध्यान रखना चाहिए कि वैधानिक सभा व्यापार प्रारम्भ करने के प्रमाण-पत्र प्राप्ति के एक माह बाद तथा 6 माह के पहले बुलाई गई हो ।

2. **वैधानिक रिपोर्ट तैयार करना** - सचिव को यह देखना चाहिए कि वैधानिक रिपोर्ट को विधान के अनुसार तैयार किया गया है । इस रिपोर्ट में आवंटित अंशों की संख्या, प्राप्त राशि, संचालकों का विवरण, प्रारम्भिक अनुबन्ध, अभिगोपन दलाली तथा कमीशन आदि का, विवरण सम्मिलित है ।
3. **वैधानिक रिपोर्ट प्रमाणित कराना -** वैधानिक रिपोर्ट का प्रमाणन कम्पनी सचिव द्वारा कम्पनी के कम से कम दो संचालकों द्वारा किया जाना चाहिए जिनमें से एक प्रबन्ध संचालक हो । अंकेक्षकों से भी वैधानिक रिपोर्ट प्रमाणित करवायी जानी चाहिए ।
4. **सभा की उपयुक्त सूचना भेजना** - सभी सदस्यों को 21 दिन पूर्व सभा की सूचना दी गयी है सचिव को यह देख लेना चाहिए । सभा की सूचना में निम्न बातों का उल्लेख होना चाहिए:
   (i) यह कम्पनी की वैधानिक सभा हो,
   (ii) सभा का स्थान,
   (iii) तिथि,
   (iv) समय
5. **रजिस्ट्रार को रिपोर्ट भेजना -** सचिव प्रमाणित वैधानिक रिपोर्ट की एक प्रति कम्पनी के रजिस्ट्रार को प्रस्तुत करेगा ।
6. **सदस्यों को रिपोर्ट भेजना -** वैधानिक रिपोर्ट की, एक प्रति कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को भेजने का प्रबन्ध भी कम्पनी सचिव द्वारा किया जाना चाहिए । यह सूचना रजिस्टर में दिये गये पते पर भेजी जानी चाहिए ।
7. **सूचना का प्रकाशन -** वैधानिक सभा की सूचना को किसी क्षेत्रीय समाचार पत्र में भी प्रकाशित करवा देना चाहिए ।
8. **सदस्य, सूची तैयार करना -** सचिव, सदस्यों की सूची तैयार करता है इस सूची में सदस्य का नाम. पता, व्यवसाय, धारित अंशों की संख्या आदि का विवरण होता है ।
9. **सभा स्थल की व्यवस्था -** सभा स्थल पर बैठने की व्यवस्था, पेयजल की व्यवस्था, अध्यक्ष, सचिव, संचालकों आदि के बैठने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए ।
10. **अध्यक्ष की मेज पर प्रपत्र रखना -** अध्यक्ष की मेज पर आवश्यक प्रपत्र जैसे सभा की सूचना, कार्यावली वैधानिक रिपोर्ट, सदस्यों की सूची अन्य' प्रस्ताव आदि रख देने चाहिए।

(II) सभा के दौरान कार्यविधि से सम्बन्धित कर्तव्य - वैधानिक सभा के दौरान सचिव को निम्न कार्य करने होते हैं -

1. **हस्ताक्षर कराना -** कम्पनी सचिव को सभा के दौरान उपस्थित सभी सदस्यों के हस्ताक्षर करवाने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए । सचिव को यह देख लेना चाहिए कि उपस्थित सभी सदस्यों ने रजिस्टर में हस्ताक्षर कर दिये है ।
2. **कार्यवाहक संख्या** - सचिव उपस्थिति रजिस्टर के माध्यम से उपस्थित हुए सदस्यों की संख्या ज्ञात करता है तथा इसके आधार पर यह देखता हैं कि निर्धारित कार्यवाहक संख्या में सदस्य उपस्थित हुए है या नहीं । यदि कार्यवाहक संख्या पूर्ण है तो सभी की कार्यवाही जारी रहती है । यदि कार्यवाहक संख्या पूरी नहीं हैं तो सचिव सभापति को इस तथ्य की जानकारी देता है ।

3. **सूचना पढ़ना -** इसके बाद अध्यक्ष सचिव को आदेश देता है कि वह सभा की सूचना को पढ़े । सामान्यतया यह सूचना सचिव द्वारा पढी- नहीं जाती बल्कि पढी हुई मान ली जाती है क्योंकि सभा की सूचना की प्रति सभी सदस्यों को पहले ही भेज दी जाती है ।
4. **सदस्य सूची प्रस्तुत करना -** सचिव को वैधानिक सभा की कार्यवाही शुरू होते ही सदस्यों की सूची प्रस्तुत करनी होती है । 'इस सूची मे सदस्य का नाम, पता, व्यवसाय, धारित अंशों की संख्या आदि का उल्लेख होता है ।
5. **अध्यक्ष को भाषण के लिए निवेदन करना -** सचिव अध्यक्ष से निवेदन करता है कि वह अपना भाषण दे । अध्यक्ष सदस्यों से पूछता है कि वैधानिक रिपोर्ट को सभा में पढ़ा जाए अथवा उसे पढ़ी हुयी मान ली जाये ।
6. **संचालन में सहायता -** सचिव को सभा की कार्यवाही के दौरान अध्यक्ष की सहायता करनी चाहिए । अध्यक्ष द्वारा मांगे गये प्रपत्र तथा सूचनाएँ सचिव द्वारा उपलब्ध करानी चाहिए ।
7. **टिप्पणी लिखना -** सभा की कार्यवाही को सचिव संक्षेप में लिखता रहता हैं । सचिव इन्हीं के आधार पर सभा के सूक्ष्म तैयार करता है ।

(III) सभा के बाद के कर्तव्य

(i) **सूक्ष्म लिखना -** सभा समाप्त हो जाने के बाद सचिव द्वारा सभा के सूक्ष्म सभा की समाप्ति के 30 दिनों के भीतर लिखे जाने आवश्यक है ।

(ii) **अध्यक्ष द्वारा सूक्ष्म की पुष्टि -** सभा के लिखे गये सूक्ष्म पर सभा के अध्यक्ष द्वारा सभा तिथि से 30 दिन के भीतर हस्ताक्षर करवा लेना चाहिए । सूक्ष्म की पुष्टि सभा के अध्यक्ष द्वारा की जाती है ।

(iii) **निर्णयों एवं प्रस्तावों को क्रियान्वित करना -** सचिव का यह कर्तव्य है कि वह सभा में लिए गये निर्णयों एवं प्रस्तावों का सही प्रकार क्रियान्वयन करवाए ।

(iv) **स्थगित सभा बुलाना -** यदि किन्हीं कारणों से सभा स्थगित कर दी जाती है तो सचिव को चाहिए कि वह यथा समय स्थगित सभा बुलाये ।

17.3 वार्षिक साधारण सभा (Annual General Meeting)

वार्षिक साधारण सभा से आशय (Meaning of Annual General Meeting)

कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपने सदस्यों की प्रतिवर्ष एक सभा बुलानी होती है जिसे वार्षिक साधारण सभा कहते है । वार्षिक साधारण सभा के सदस्यों की ऐसी सभा होती है जो वर्ष में एक बार बुलाई जाती है ।

प्रत्येक कम्पनी अन्य सभाओं के अतिरिक्त कम्पनी के अंशधारियों की एक साधारण सभा भी बुलाती है जिसे वार्षिक साधारण सभा कहते हैं । इस सभा को बुलाई जाने पर यह उल्लेख किया जाता है कि यह कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा हैं । सदस्यों की इस सभा में प्रतिवर्ष जो कार्य किये जाते हैं उन्हें साधारण कार्य कहते है ।

17.4 वार्षिक साधारण सभा के सम्बन्ध मे वैधानिक प्रावधान (Statutory Provisions regarding Annual General Meeting)

कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा के सम्बन्ध में वैधानिक प्रावधान कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 166,167 व 168 में दिये गये है । प्रमुख वैधानिक प्रावधान निम्नलिखित है :-

3. **दो सभाओं के मध्य अन्तर** - कम्पनी की किन्हीं दो साधारण सभाओं में 15 महीनों से अधिक समय का अन्तर नहीं होना चाहिए ।

[धारा 166(1)]

4. **सभा की अवधि में वृद्धि -** यदि रजिस्ट्रार सन्तुष्ट हों तो वह सभा की अवधि को, विशेष कारणों के आधार पर, अधिक से अधिक 3 महीने तक बढा सकता हैं ।

[धारा 166(1)]

5. **सभा का समय -** कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा कम्पनी के कामकाज के समय बुलायी जानी चाहिए । यदि सभा कामकाज के घंटों में प्रारंभ कर दी जाती हैं तो वह सभा कामकाज के घंटों की समाप्ति के बाद तक भी जारी रह सकती है ।

[धारा 166(2)]

6. सभा का दिन - किसी सार्वजनिक अवकाश के दिन कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा नहीं बुलायी जानी चाहिए । सार्वजनिक अवकाश के दिन से आशय ऐसे दिन से है जिसे विनिमय साध्य अधिनियम, 1981 के अन्तर्गत सार्वजनिक अवकाश का दिन घोषित कर रखा हो । इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक रविवार व अन्य सार्वजनिक अवकाश के अतिरिक्त प्रत्येक वर्ष की 30 जून व 31 दिसम्बर की तारीख के दिन भी सार्वजनिक अवकाश के दिन घोषित है **।**

[धारा 166 (2)]

7. सभा का स्थान - प्रत्येक कम्पनी को वार्षिक. साधारण सभा पंजीकृत कार्यालय में किसी कारण से सभा संभव न हो तो कम्पनी का यह कार्यालय जिस नगर, कस्बे अथवा गाँव में स्थित हैं, उसी नगर, कस्बे व गॉव में किसी उपयुक्त स्थान पर ऐसी सभा की जानी चाहिए । किन्तु ऐसे स्थान की सूचना सदस्यों को भेजी जानी आवश्यक हैं ।

[धारा 166(2)]

8. **केन्द्रीय सरकार द्वारा छूट -** केन्द्रीय सरकार कम्पनी को सभा के स्थान तथा तिथि के सम्बन्ध में उपर्युक्त प्रावधानों से छूट प्रदान कर सकती हैं ।

धारा 167 (2)

9. **सभा की सूचना** - कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा की सूचना में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए-
   (i) कम्पनी के प्रत्येक सदस्य का नाम ।
   (ii) सभा का स्थान, तिथि एवं समय ।

(iii) सभा में किये जाने वाले कार्य ।

(iv) अंकेक्षकों की रिपोर्ट ।

(v) संचालकों की रिपोर्ट ।

(vi) कम्पनी की कौनसी वार्षिक साधारण सभा है ।

(vii) मृतक सदस्य का उत्तराधिकारी ।

(viii) दिवालिया सदस्य का निस्तारक

सभा की सूचना लिखित में 21 दिन पूर्व भेजी जानी चाहिए । **[धारा 171 (1)]**

10. **कार्यवाहक संख्या -** कार्यवाहक संख्या अन्तर्नियमों के प्रावधान के अनुसार निजी कम्पनी की दशा में 2 तथा सार्वजनिक कम्पनी की दशा में 5 व्यक्तियों की उपस्थिति कार्यवाहक संख्या मानी जाती हैं ।

(धारा 174)

11. **सभा का स्थगन -** वार्षिक साधारण सभा का अध्यक्ष सभा की सहमति से उचित प्रतीत होने पर किसी भी समय सभा का स्थगन कर सकता है । यदि सभा 30 दिन से अधिक के लिए स्थगित की जाती है तो स्थगित सभा के 21 दिन पूर्व की सूचना पुन: भेजी जानी चाहिए ।

12. **केन्द्रीय सरकार द्वारा सभा बुलाना** - यदि कोई कम्पनी वार्षिक साधारण सभा नहीं बुलाती हैं तो कम्पनी का कोई भी सदस्य केन्द्रीय सरकार से आवेदन करके सभा के आयोजन. की मांग कर सकता हैं । केन्द्रीय सरकार यदि आवश्यक समझे तो कम्पनी की सभा बुला सकती हैं । या बुलाने, का आदेश दे सकती हैं ।

(धारा 167)

13. **आर्थिक दण्ड -** यदि कोई कम्पनी वार्षिक साधारण सभा नहीं बुलाती हैं या केन्द्रीय सरकार द्वारा ऐसी सभा बुलाने के आदेश के बाद भी सभा नहीं बुलायी जाती हैं तो कम्पनी तथा कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 50000 रू. तक जुर्माना लगाया जा सकता है । ऐसा दोष निरन्तर रहने पर प्रथम दिन छोडकर शेष अवधि के लिए 2500 रू. प्रतिदिन तक जुर्माना लगाया जा सकता है ।

14. **सभा के कार्य -** वार्षिक साधारण सभा में निम्नलिखित कार्य किये जाते है-

(अ) साधारण कार्य (ब) विशेष कार्य

(अ) साधारण कार्य - इसके अन्तर्गत निम्न कार्य किये जाते हैं-

(i) संचालकों की रिपोर्ट पर विचार एवं अनुमोदन ।

(ii) लाभांश घोषित करना |

(iii) नये संचालकों की नियुक्ति ।

(iv) अंकेक्षकों की नियुक्ति व पारिश्रमिक निर्धारण ।

(v) अंकेक्षित वार्षिक खातों तथा अंकेक्षकों की रिपोर्ट पर विचार एवं अनुमोदन ।

(ब) विशेष कार्य

(i) कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन ।

(ii) कम्पनी की अधिकृत पूंजी में वृद्धि ।

(iii) प्रबन्धक अथवा प्रबन्ध संचालक की नियुक्ति ।

(iv) नये संचालकों की नियुक्ति ।

(v) पार्षद सीमा नियम में परिवर्तन ।

17.5 वार्षिक साधारण सभा के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य

कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा प्रतिवर्ष नियमित रूप से की जाती है इस सभा के सम्बन्ध में सचिव के निम्नलिखित कर्तव्य हैं

(I) सभा पूर्व के कर्तव्य ।

(II) सभा के दौरान कार्यविधि से सम्बन्धित कर्तव्य ।

(III) सभा के बाद के कर्तव्य |

(I) **सभा पूर्व के कर्तव्य -** इसके अन्तर्गत वे सब कर्तव्य सम्मलित है जो वह सभा बुलाने से पूर्व करता है । इसके सम्बन्ध में सचिव के निम्न कर्तव्य है-

(1) **वार्षिक खाते तैयार करवाना -** सचिव को सबसे पहले वित्तीय वर्ष समाप्त होते ही कम्पनी के वार्षिक खाते तैयार करवाने चाहिए । सचिव को ध्यान रखना चाहिए की अन्तिम खाते, वित्तीय वर्ष की समाप्ति के 6, माह कें अन्दर वार्षिक साधारण सभा के सामने प्रस्तुत करने पड़ते है ।

(2) **संचालकों द्वारा खातों का प्रमाणन** - सचिव को अंतिम खातों (लाभ हानि खाता व चिट्ठा) का प्रमाणन कम से कम दो संचालकों से करवाना चाहिए । यदि कम्पनी का प्रबन्ध संचालक है तो प्रबन्ध संचालक तथा एक अन्य संचालक के हस्ताकक्षर 'इन अन्तिम खातों के प्रमाणन के लिए करवा लेने चाहिए ।

(3) **अंकेक्षकों की रिपोर्ट -** सचिव इन खातों की अंकेक्षण हेतु अंकेक्षकों के पास भेजता है और अंकेक्षकों की रिपोर्ट प्राप्त करता है ।

(4) **संचालकों की रिपोर्ट -** सचिव को संचालकों के परामर्श से संचालकों की रिपोर्ट तैयार करनी चाहिए । इस रिपोर्ट में कम्पनी की प्रगति, समस्याएँ, भावी योजनाएँ, बाधक परिस्थितियॉ, संचालकों द्वारा लाभांश की घोषणा आदि. का उल्लेख करना चाहिए ।

(5) **संचालक मण्डल की सभा बुलाना -** सचिव संचालक मण्डल के अध्यक्ष की सलाह से संचालक मण्डल की सभा बुलाने की व्यवस्था करता है । इस सभा में अंतिम खातों पर विचार तथा लाभांश का अनुमोदन किया जाता है ।

(6) **सभा की सूचना तैयार करना** - सचिव वार्षिक साधारण सभा की सूचना तैयार करता है । इस सूचना में वह कम्पनी के साधारण कार्यो के साथ-साथ, विशेष कार्यो का भी उल्लेख करता है ।

(7) **वार्षिक खाते व अन्य प्रपत्र छपवाना -** सचिव को वार्षिक प्रतिवेदन आदि को छपवाने की व्यवस्था करनी चाहिए ।

(8) **सभा की सूचना भेजना** - कम्पनी सचिव वार्षिक साधारण सभा की सूचना उपस्थित होने तथा मतदान करने के अधिकृत सभी व्यक्तियों को भेजता हैं यह सूचना 21 दिन पूर्व सदस्यों के पास पहुंच जानी चाहिए । सभा की सूचना के साथ ही अंकेक्षकों की रिपोर्ट, कार्यावली, अंतिम खाते आदि प्रलेख भी सदस्यों के पास भेज देने चाहिए ।

(9) **सभा की सूचना प्रकाशित करवाना -** सचिव वार्षिक साधारण सभा के आयोजन की सूचना समाचार पत्रों में प्रकाशित करने की व्यवस्था करता हैं । सचिव यह सूचना भी. प्रकाशित करवाता है कि कम्पनी के सदस्यों का रजिस्टर अमुक अवधि में बन्द रहेगा ।

(10) **अध्यक्ष का भाषण -** वार्षिक साधारण सभा में अध्यक्ष द्वारा पढा जाने कला भाषण सचिव द्वारा पहले ही तैयार कर लिया जाता है । कोई सदस्य यदि' प्रश्न पूछता है तो सचिव सम्बन्धित सूचना अध्यक्ष को दे देता है ताकि वह सही उत्तर दे सके ।

(11) **आवश्यक प्रपत्र तैयार करना -** सचिव आवश्यक प्रपत्र जैसे लाभांश, पूंजी, लाभांश अधिपत्र आदि तैयार करवाता है तथा सदस्य रजिस्टर को पूरा करता है ।

(12) **लाभांश की घोषणा** - अध्यक्ष यह प्रस्ताव करता हैं कि लाभांश का प्रतिशत जिसकी संचालकों ने सिफारिश की है, स्वीकार कर लिया जाए । सामान्यतया यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता है । कभी-कभी कोई सदस्य इस सम्बन्ध में सुझाव देता है अथवा कोई प्रश्न पूछता है तो अध्यक्ष के आदेश पर, सचिव उन प्रश्नों के उत्तर देता हैं और अन्त में प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता हैं ।

(13) **प्रतिपुरूष फार्म प्राप्त करना -** यदि कोई सदस्य सभा मे उपस्थित नहीं होना चाहे तो वह प्रतिपुरूष की नियुक्ति कर सकता है । यदि कोई सदस्य प्रतिपुरूष नियुक्त करता है तो सचिव वार्षिक साधारण सभा से पूर्व प्रतिपुरूष फार्म प्राप्त करने की व्यवस्था करता है । प्रतिपुरूष फार्म कम्पनी के कार्यालय में सभा शुरू होने से कम से कम 48 घण्टे पूर्व जमा करवाना पडता है ।

(14) **प्रतिपुरूष फार्मों की जाँच -** कम्पनी सचिव निर्धारित समय के बाद प्रतिपुरूष फॉर्म की जाँच की व्यवस्था करता हैं, उसमें देखा जाता है कि उचित टिकिट लगा हो, सदस्य के हस्ताक्षर नमूने के हस्ताक्षर से मेल खाते हो, सदस्य एक समामेलित संस्था है तो उसकी सार्वमुद्रा प्रतिपुरूष फॉर्म पर अंकित है अथवा नहीं, आदि ।

(15) **अंकेक्षकों की नियुक्ति एवं पारिश्रमिक -** कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में अगले वर्ष के लिए अंकेक्षक की नियुक्ति की जाती है एवं पारिश्रमिक निर्धारित किया जाता. हैं । प्रायः नियुक्त अंकेक्षकों की ही पुनर्नियुक्ति कर दी जाती है । सचिव को यह देखना चाहिए कि अंकेक्षकों की नियुक्ति के सम्बन्ध में वैधानिक आवश्यकताओं का पालन किया गया है ।

(16) **मतगणना की व्यवस्था** - किसी प्रस्ताव पर मतगणना की मांग पर सचिव का कर्तव्य है कि वह पहले से ही इसकी व्यवस्था रखे ।

(17) **सभा स्थल की व्यवस्था -** सभा से पूर्व सचिव सभा स्थल की समुचित व्यवस्था करता है । अध्यक्ष के आसन व सदस्यों के बैठने हेतु यथोचित व्यवस्था करता है । यह भी देखना चाहिए कि सभा स्थल पर आवश्यक सुविधाएँ भी उपलब्ध हो ।

(18) **सम्बन्धित प्रपत्र तैयार रखना -** वार्षिक साधारण सभा के दौरान किन सूचनाओं व प्रपत्रों की आवश्यकता पड़ सकती है, सचिव उनकी सूची बनाता है तथा इन्हें सुरक्षित रखता है ताकि आवश्यकता पड़ने पर अध्यक्ष या अन्य व्यक्तियों को उपलब्ध करवायी जा सके ।

(II) सभा के दौरान कार्यविधि से सम्बन्धित कर्तव्य -

वार्षिक साधारण सभा के दौरान सचिव को निम्न कार्य करने होते है -

1. **प्रवेश पत्र एकत्र करना** - कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में केवल अधिकृत व्यक्ति ही भाग ले सकते है इसके लिए सचिव को प्रत्येक अधिकृत व्यक्ति के लिए प्रवेश पत्र निर्गमित कर देने चाहिए । सभा-स्थल पर प्रवेश करते समय सदस्यों से प्रवेश पत्र वापिस ले लिये जाने चाहिए । अत: इस कार्य के लिए सचिव को चाहिए कि प्रवेश द्वार पर एक कर्मचारी नियुक्त करे । प्रवेश पत्र प्राप्त करने के बाद सचिव उपस्थिति पंजिका घुमा कर भी सदस्यों की उपस्थिति प्राप्त कर सकता हैं ।
2. **प्रवेश पत्रों की जाँच -** सचिव प्रवेश पत्रों की जाँच करके यह देखता हैं कि सही व्यक्ति सभा स्थल में प्रवेश पा सका हैं । यदि प्रतिपुरूष नियुक्त किया गया है तो प्रतिपुरूष के हस्ताक्षर प्रतिपुरूष फार्म में दिये गये हस्ताक्षरों से मेल खाते हैं या नहीं ।
3. **कार्यवाहक संख्या ज्ञात करना -** सचिव को यह देखना चाहिए कि सभा की कार्यवाही के लिए आवश्यक कार्यवाहक संख्या उपस्थित है या नहीं । यदि कार्यवाहक संख्या में सदस्य उपस्थित नहीं है तो सचिव इस बात की सूचना सभा के अध्यक्ष को प्रदान करता है । कार्यवाहक संख्या के अभाव में सभा की आगे की कार्यवाही का संचालन नहीं किया जा सकता है ।
4. **सभा की सूचना पढ़ना -** आवश्यक कार्यवाहक संख्या पूरी होने के बाद सभा की कार्यवाही शुरू की जाती है । सबसे पहले सचिव सभा की सूचना पढ़ता है । सभा की सूचना में कार्यावली का उल्लेख भी होता हैं ।
5. **संचालकों की रिपोर्ट पढना** - सचिव अध्यक्ष की अनुमति से संचालकों की रिपोर्ट पढ़ कर सुनाता है । इसे सामान्यतया पढ़ा हुआ मान लिया जाता हैं ।
6. **अंकेक्षकों की रिपोर्ट पढना -** अंकेक्षक की अनुपस्थिति में अध्यक्ष के आदेश पर सचिव उसकी रिपोर्ट को सभा में पढता है । सामान्यत: इसे पढा हुआ मान लिया जाता है ।
7. **अध्यक्ष का भाषण** - वार्षिक साधारण सभा में अध्यक्ष का भाषण सचिव द्वारा पहले से ही तैयार कर लिया जाता है । यदि कोई सदस्य प्रश्न पूछता है तो सचिव सम्बन्धित सूचना अध्यक्ष को दे देता है ताकि वह उचित उत्तर दे सके ।
8. **आवश्यक प्रपत्र उपलब्ध कराना -** सभा के दौरान किसी प्रकार के प्रपत्र, फाईल, सूचना, सीमानियम, अन्तर्नियम आदि की आवश्यकता पड़ती है तो सचिव उसे उपलब्ध करवाता है ।
9. **अंकेक्षकों की नियुक्ति एवं पारिश्रमिक -** वार्षिक साधारण सभा में अगले वर्ष के लिए अंकेक्षकों की नियुक्ति की जाती है एवं पारिश्रमिक निर्धारित किया जाता है । सचिव का कार्य है कि वह यह देखे कि अंकेक्षकों की नियुक्ति के सम्बन्ध में समस्त वैधानिक आवश्यकताओं का पालन किया गया है ।
10. **मतदान की व्यवस्था -** किसी प्रस्ताव पर मतदान की मांग पर सचिव अध्यक्ष को मतदान की व्यवस्था करने में सहायता करता है तथा मतगणना आदि का समुचित प्रबन्ध करता है ।
11. **धन्यवाद प्रस्ताव एवं सभा समाप्ति की घोषणा -** सचिव, अध्यक्ष एवं संचालकों के प्रति धन्यवाद प्रस्ताव रखता है जिसका अनुमोदन किया जाता है और पारित कर दिया जाता है । अध्यक्ष इसको उत्तर देता है एवं सभा समाप्ति की घोषणा करता हैं ।

12. **सभा की कार्यवाही की टिप्पणी लिखना -** सचिव सभा की कार्यवाही के दौरान महत्वपूर्ण विषयों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखता रहता हैं । इन टिप्पणियों के आधार पर ही वह सूक्ष्म तैयार करता है ।

(III) **सभा के बाद के कर्तव्य -** सभा समाप्ति के पश्चात् सचिव को निम्न महत्वपूर्ण कार्य करने होते है ।

1. **सूक्ष्म लिखना -** सचिव को सभा समाप्ति के पश्चात् सभा में ली गई टिप्पणियों के आधार पर सूक्ष्म पुस्तिका में सूक्ष्म लिख लेने चाहिए । यह ध्यान भी रखा जाना चाहिए कि रजिस्टर में कोई अतिरिक्त कागज चिपकाया अथवा संलग्न नहीं किया जा सकता है ।
2. **सूक्ष्मों की पुष्टि** - सूक्ष्म लिखने के पश्चात् सचिव अध्यक्ष से अनुमोदन करवाता है । यदि अध्यक्ष किसी संशोधन के लिए कहता है तो सचिव को वह संशोधन करना आवश्यक है ।
3. **संचालकों तथा अंकेक्षकों की नियुक्ति की सूचना -** सचिव को सभा में निर्वाचित संचालकों एवं नियुक्त या पुन: नियुक्त अंकेक्षकों को उनकी नियुक्ति की सूचना देनी चाहिए । अंकेक्षकों को यह सूचना सभा समाप्त होने के सात दिन के अन्दर दी जानी चाहिए ।
4. **पारित प्रस्तावों की प्रतियाँ रजिस्ट्रार को भेजना -** वार्षिक साधारण सभा में पारित किये गये प्रस्तावों की प्रतियाँ सचिव कम्पनी, की सभा की तिथि के 30 दिन के भीतर कम्पनियों को रजिस्ट्रार को पंजीयन हेतु भिजवाता है ।
5. **लाभांश वितरण की व्यवस्था करना -** सचिव का कर्तव्य है कि सभा की तिथि से 30 दिन के भीतर सदस्यों को लाभांश के वितरण की व्यवस्था करनी चाहिए ।
6. **पारित प्रस्तावों का क्रियान्वयन -** सचिव का कर्तव्य है कि वह सभा में पारित किये गये प्रस्तावों को उचित समय एवं उचित 'ढंग से क्रियान्वित करें ।
7. **वार्षिक खाते व विवरण भेजना -** वार्षिक साधारण सभा के 60 दिन' के भीतर कम्पनी के - वार्षिक खाते तथा वार्षिक विवरण की तीन प्रतियों में रजिस्ट्रार को भेजना जरूरी है । सचिव सभा के समाप्त होने के बाद वार्षिक खाते विवरण रजिस्ट्रार के कार्यालय में फाईल करवाता है |

17.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैधानिक सभा क्या है? वैधानिक सभा के सम्बन्ध में सचिव के क्या कर्तव्य हैं?
   What is statutory meeting? What are the duties of a company secretary regarding statutory meeting?
2. वैधानिक सभा के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम के प्रावधान बताइये?
   Explain the provisions of companies Act with regards to the statutory meeting.
3. वैधानिक सभा के पूर्व तथा पश्चात् कम्पनी सचिव के कर्तव्यों की व्याख्या कीजिए ।

Describe the duties of a company secretary before and after holdind a statutory meeting.

4. वार्षिक साधारण सभा क्या है? यह क्यों बुलायी जाती है? वार्षिक साधारण सभा मे किए जाने वाले कार्यो का संक्षिप्त विवेचन कीजिए |

   What is the annual general meeting? why it is called? What business are transacted at the annual general meeting.

5. एक कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा बुलाने के लिए क्या कानूनी व्यवस्थाएँ है? ऐसी सभा में क्या कार्य किये जाते है?

   What are the legal provisions for holding of annual general meeting of a company? What business is transacted at such a meeting?

17.7 उपयोगी पुस्तकें

1. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - डॉ. नौलखा
2. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - माथुर, सक्सैना
3. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - जोशी, खींचा एवं गोयल

इकाई - 18 : असाधारण सामान्य सभा (Extra Ordinary General Meeting)

इकाई की रूपरेखा

18.0 असाधारण सामान्य सभा का आशय

18.1 असाधारण सभा कौन बुला सकता है?

18.2 असाधारण सामान्य सभा के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य

18.3 अन्य सभाएँ

18.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

18.5 उपयोगी पुस्तकें

18.0 असाधारण सामान्य सभा का आशय (Meaning of Extra Ordinary General Meeting)

कम्पनी से सम्बन्धित महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय कम्पनी के सदस्यों द्वारा कम्पनी की सामान्य सभा में लिये जाते है । बहुत से ऐसे कार्य भी होते है जो कि संचालकों के अधिकार क्षेत्र के परे होते है परन्तु कम्पनी की अधिकार सीमा के अन्तर्गत आते हैं । ऐसे महत्वपूर्ण कार्यो पर कभी भी अविलम्ब निर्णय लेने के लिए कम्पनी की वार्षिक सभा तक इन्तजार नहीं किया जा सकता, इस प्रकार आवश्यकता पड़ने पर समय-समय पर कम्पनी के सदस्यों की बुलाई गयी सभा, कम्पनी की असाधारण सभा कहलाती है ।

कम्पनी अधिनियम 1958 की अनुसूची प्रथम की तालिका अ के नियम 47 के अनुसार - वैधानिक सभा तथा वार्षिक साधारण सभा के अतिरिक्त यदि कम्पनी सदस्यों की कोई सभा आयोजित करती है तो वह असाधारण सामान्य सभा कहलाती है ।

सामान्य शब्दों में वार्षिक साधारण सभाओं में किये जाने वाले कार्यो के अतिरिक्त अन्य विशेष तथा असाधारण कार्य करने के लिए बुलाई जाती है, जैसे पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में परिवर्तन या कम्पनी की अंश पूंजी में कमी या वृद्धि के लिए, अंशों को बट्टे पर निर्गमित करने के लिए, ऋण पत्र निर्गमित करने के लिए और संचालकों के पारिश्रमिक में वृद्धि के लिए असाधारण सामान्य सभा बुलाई जाती है ।

18.1 असाधारण सभा कौन बुला सकता है?

कम्पनी की असाधारण सभा निम्नलिखित पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा बुलायी जा सकती है:-

(I) संचालक मण्डल द्वारा:

1. **स्वयं अपनी राय से: कम्पनी अधिनियम 1956 की अनुसूची-1** की तालिका 'अ' के विनियम 48 के अनुसार संचालक मण्डल जब उचित समझे असाधारण सभा बुला सकता है । संचालक मण्डल सामान्यत: यह सभा तब बुलाता है जब कोई महत्वपूर्ण कार्य करना है तथा निकट भविष्य में वार्षिक साधारण सभा के आयोजन की संभावना नहीं है ।

संचालक मण्डल असाधारण सभा बुलाने हेतु संचालक मण्डल की सभा बुलाकर प्रस्ताव पारित कर सकता हैं अथवा प्रस्ताव को संचरण द्वारा घर बैठे ही पारित कराया जा सकता है ।

2. **सदस्यों की माँग पर:** कम्पनी अधिनियम की धारा 139(1) के अनुसार सदस्यों की मांग पर भी संचालक मण्डल द्वारा असाधारण सभा बुलायी जा सकती है । सदस्यों की मांग पर सभा तभी बुलायी जा सकती है जबकि निम्नलिखित मताधिकार वाले सदस्यों द्वारा मांग की जाय:

(i) एक अंश पूंजी वाली कम्पनी की दशा में उन सदस्यों द्वारा असाधारण सभा की मांग की जा सकती है जिनको कुल प्रदत्त अंश पूंजी का कम रो कम 1/10 भाग के बराबर मताधिकार प्राप्त है, अथवा

(ii) बिना अंश पूंजी वाली कम्पनी की दशा में उन सदस्यों द्वारा जिनका कुल मताधिकार के कम से कम 1/10 भाग पर अधिकार है ।

[धारा 169(4)]

सदस्यों, की मांग पर सभा बुलाने सम्बंधी प्रावधान : सदस्यों की मांग पर असाधारण सभा बुलाने के सम्बन्ध मे अन्य मुख्य प्रावधान इस प्रकार है:

(i) सभा बुलाने हेतु दिये गये मांग पत्र में सभा बुलाने के उद्देश्य या मामलों को स्पष्ट किया जाना चाहिए ।

[धारा 169(2)]

(ii) मांग पत्र पर सभा बुलाने की मांग करने वालों के हस्ताक्षर होने चाहिए ।

[धारा 169 (2)]

(iii) सभा का मांग पत्र कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में दिया जाना चाहिए । **[धारा 169 (2)]**

(iv) सभा का मांग पत्र अलग-अलग प्रपत्रों में हो सकता है लेकिन प्रत्येक मांग पत्र पर कम से कम एक सदस्य के हस्ताक्षर होने चाहिए ।

[धारा 169(3)]

(v) यदि असाधारण सभा के लिए मांग. पत्र में दो या अधिक उद्देश्य अथवा मामले लिखे गये हैं तो प्रत्येक उद्देश्य या मामले के लिए निर्धारित संख्या में मताधिकार धारा 169 (4) के प्रावधानों के अनुसार रखने वाले सदस्यों के हस्ताक्षर होने चाहिए ।

(vi) संचालकों को मांग पत्र प्राप्त होने के 21 दिन के भीतर सभा बुलाने की कार्यवाही प्रारंभ कर देनी चाहिये तथा 45 दिनों के भीतर असाधारण सभा का आयोजन कर लेना चाहिए।

[धारा 169 (6)]

(vii) सभा के मांग पत्र पर यदि संयुक्त अंशधारियों में से किसी एक या अधिक ने हस्ताक्षर किये हैं तो यहीं माना जावेगा कि सभी संयुक्त धारकों ने हस्ताक्षर किये है ।

[धारा 169 (8)]

(II) सभा की मांग करने वाले सदस्यों द्वारा :

जब धारा 169(4) में निर्धारित मताधिकार रखने वाले सदस्यों द्वारा संचालकों से असाधारण सभा बुलाने की मांग की जाती है तथा संचालक मण्डल द्वारा मांग प्राप्त होने

के 21 दिन के भीतर सभा बुलाने की कार्यवाही प्रारंभ नही की जाती हैं तथा 45 दिन के भीतर सभा आयोजित नहीं की जाती हैं तो मांग करने वाले सदस्य स्वयं कम्पनी की असाधारण सभा बुला सकते हैं ।

इस सम्बन्ध में अन्य प्रावधान निम्न है :

(1) **सभा बुलाने का अधिकार:** कम्पनी की असाधारण सभा बुलाने की मांग वाले सदस्यों द्वारा सभा तभी बुलायी जा सकती है जबकि :

(i) अंश पूंजी वाली कम्पनी की दशा में कम्पनी की चुकता अंश पूंजी के धारकों में से कम से कम 1/10 भाग पर अधिकार रखने वाले या अधिकांश सदस्यों द्वारा मांग की जाय ।

[धारा 169 (6) (इ)]

(ii) यदि कम्पनी बिना अंश पूंजी वाली है तो कुल मताधिकार के 1/10 भाग पर अधिकार रखने वाले सदस्यों द्वारा मांग की जाय ।

[धारा 169 (6) (ब)]

(2) **सभा बुलाने की विधि:** मांग करने वाले सदस्यों द्वारा असाधारण समा ठीक उसी प्रकार से बुलायी जायेगी जिस प्रकार से संचालक मण्डल द्वारा बुलायी जाती है ।

(3) **समय सीमा:** सभा की मांग करने वाले सदस्य सभा की मांग करने के तीन माह के भीतर ही सभा बुला सकते हैं, इसके बाद नहीं । लेकिन स्थगित सभा बाद में भी बुलायी जा सकती हैं ।

[धारा 169 (7)]

(4) **खर्चो का भुगतान:** सदस्यों द्वारा बुलायी गयी सभा के खर्चो का भुगतान कम्पनी को ही करना होता है । यदि संचालकों के समक्ष वैध तरीके से सभा बुलाने की मांग की गयी है और वे सभा बुलाने में असफल रहने के दोषी पाये जाते हैं तो कम्पनी उन संचालकों से क्षतिपूर्ति प्राप्त कर सकती है ।

[धारा 169 (9)]

(III) किसी भी संचालक अथवा किन्हीं दो सदस्यों द्वारा :

कम्पनी अधिनियम 1956 की अनुसूची-I की तालिका अ के विनियम 48(2) के अनुसार यदि किसी समय संचालक मण्डल की न्यूनतम कार्यवाहक संख्या के बराबर संचालक भारत में नहीं है तो कोई भी संचालक या कम्पनी के दो सदस्य मिलकर कम्पनी की असाधारण सभा बुला सकते हैं । यह सभा भी ठीक उसी प्रकार से बुलायी जाती है जिस प्रकार से संचालक मण्डल द्वारा असाधारण सामान्य सभा बुलायी जाती है ।

(IV) कम्पनी विधान ट्रिब्यूनल के आदेश से :

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 186 के अनुसार राष्ट्रीय कम्पनी विधान ट्रिब्यूनल कम्पनी की असाधारण सामान्य सभा बुला सकता है । ट्रिब्यूनल ऐसी सभा तब बुलाता है जबकि :

(1) ट्रिब्यूनल स्वयं सभा बुलाना उपयुक्त समझे ।

(2) ट्रिब्यूनल को किसी संचालक ने आवेदन किया है ।

(3) कम्पनी की सभा में उपस्थित होने वाले या मतदान का अधिकार रखने वाले किसी सदस्य ने आवेदन किया है |

उपरोक्त में से किसी भी परिस्थिति में यदि ट्रिब्यूनल उचित समझे तो असाधारण सामान्य सभा बुलाने के लिए निम्नलिखित आदेश प्रदान कर सकता है:

(i) वह जैसा उचित समझे सभा बुलाने, आयोजित करने तथा सभा को संचालित करने की विधि निर्धारित कर सकता है, और

(ii) जैसा वह उचित समझे वैसे सहायक या प्रासंगिक निर्देश दे सकता है तथा कम्पनी अधिनियम एवं कम्पनी के अन्तर्नियमों में दिये गये सभा बुलाने, आयोजित करने तथा संचालित करने सम्बन्धी नियमों में संशोधन कर सकता है ।

[धारा 186 (2)]

ट्रिब्यूनल यह भी निर्देश दे सकता है कि यदि एक भी सदस्य उपस्थित हो तो भी सभा का गठन हुआ मान लिया जाय ।

यदि ट्रिब्यूनल के निर्देशानुसार असाधारण सामान्य सभा का संचालन नहीं किया जाता है तो वह धारा 186(2) के प्रावधानों के अनुरूप संचालित सभा नहीं मानी जायेगी तथा इस सभा में किये गये सभी कार्य अप्रभावी होंगे ।

18.2 असाधारण सामान्य सभा के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्य

असाधारण सामान्य सभा के सम्बन्ध में सचिव के कार्यो का अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं-

(I) सभा के पूर्व के कर्तव्य

(II) सभा के समय के कर्तव्य

(III) सभा के बाद के कर्तव्य ।

(I) सभा के पूर्व के कर्तव्य

1. **संचालक-मण्डल की सभा बुलाना** - यदि आवश्यक हो तो कम्पनी के सचिव को चाहिए कि इस सम्बन्ध में संचालक-मण्डल की विधिवत् सभा को बुलाए । यदि कम्पनी के किन्हीं सदस्यों ने असाधारण सभा बुलाने के लिए मांग-पत्र दिया है तो इस मांग-पत्र को भी इस सभा में प्रस्तुत करना चाहिए । इस सभा में असाधारण सभा बुलाने की तिथि, समय व स्थान निश्चित किया जाता है । इसके साथ ही सचिव को तत्सम्बन्धी सूचना एवं कार्य विशेष सम्बन्धी प्रस्ताव की प्रति सदस्यों को भेजने के लिए अधिकृत कर दिया जाता है ।
2. **आवश्यक सूचना व प्रपत्र तैयार करना -** सचिव परिस्थिति के अनुसार, तत्सम्बन्धी सूचना तैयार करता है । इस सूचना में कार्य विशेष सम्बन्धी पारित किया जाने वाला प्रस्ताव भी रहता है । प्रस्ताव के सम्बन्ध में यह स्पष्ट उल्लेख कर देना चाहिए कि यह विशेष प्रस्ताव अथवा साधारण प्रस्ताव है । साथ ही में एक परिपत्र भी तैयार करता है । सभा की कार्यावली भी अध्यक्ष के परामर्श से तैयार करता है ।
3. **मुद्रण व्यवस्था करना** - सचिव इन प्रपत्रों, सूचना, कार्यावली आदि की मुद्रण-व्यवस्था करता है । यह कार्य समय से पूर्व समाप्त हो जाना चाहिए ।

4. **सूचना आदि भेजना -** अब सचिव को सभा की सूचना एवं भेजे जाने वाले प्रपत्रों को सभी सदस्यों एवं उन व्यक्तियों को जो उनके प्राप्त करने के अधिकारी हों, यथासमय भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए ।
5. **समाचार-पत्र में सूचना -** कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय के क्षेत्र में प्रचलित समाचार-पत्र में असाधारण सभा की सूचना प्रकाशित करने की व्यवस्था करनी चाहिए ।
6. **प्रतिपुरूष की जाँच -** सभा में उपस्थित न हो सकने वाले सदस्यों से प्राप्त प्रतिपुरूष फार्मों की जाँच करनी चाहिए एवं आवश्यक सूची तैयार करनी चाहिए ।
7. **सभा के लिए आवश्यक व्यवस्था करना -** उपस्थित होने वाले सदस्यों की संख्या को ध्यान में रखते हुए इनके बैठने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए । सभा में पेयजल की भी पहले से ही व्यवस्था करनी चाहिए ।
8. **मतगणना की व्यवस्था करगा -** सभा में मतगणना की मांग की जा सकती है अत: मतदान पत्रों आदि की पहले से ही व्यवस्था कर लेनी चाहिए ।
9. **आवश्यक रजिस्टर व प्रपत्र आदि निरीक्षण के लिए रखना -** इस सभा में सम्बन्धित प्रपत्र, रजिस्टर आदि सदस्यों के द्वारा निरीक्षण करने की व्यवस्था करनी चाहिए ।
10. **अध्यक्ष की मेज तैयार करना -** अध्यक्ष के बैठने के स्थान के बिल्कुल निकट रखी गई मेज पर कम्पनी अधिनियम, पार्षद सीमानियम, अन्तर्नियमों, सभा की सूचना, घण्टी आदि की भी व्यवस्था करनी चाहिये ।

(II) सभा के समय के कर्तव्य

1. **प्रवेश-पत्र एकत्रित करना -** सचिव को चाहिए कि सभा भवन के प्रवेश द्वार पर आगन्तुकों से प्रवेश-पत्र एकत्रित करने एवं उनका स्वागत करने के लिए किसी कर्मचारी की नियुक्ति कर दे । उपस्थिति रजिस्टर में उनके हस्ताक्षर लेने की व्यवस्था भी करनी चाहिए ।
2. **कार्यवाहक संख्या देखना -** सभा की कार्यवाही आरम्भ करने से पूर्व सचिव उपस्थिति को देखकर यह निश्चित करेगा कि सभा की कार्यवाही के लिए आवश्यक कार्यवाहक संख्या उपस्थित है या नहीं, इसकी सूचना वह सभा के अध्यक्ष को देगा ।
3. **सभा की सूचना पढना -** अब अध्यक्ष के आदेश पर सचिव सभा की सूचना को, जो सदस्यों के पास पहले ही भेजी जा चुकी है, पढेगा ।
4. **मांगी गई सूचनायें देना -** अध्यक्ष, सभा के दौरान यदि कोई सूचनायें प्रपत्र आदि मांगता है तो सचिव उन्हें प्रदान करेगा । इसके अतिरिक्त आवश्यकता पडने पर वह अध्यक्ष की सहायता भी करेगा ।
5. **टिप्पणियाँ लिखना -** सभा के पश्चात् सचिव को कम्पनी के सूक्ष्म लिखने होते हैं अत: इस उद्देश्य से वह सभा की कार्यवाही से सम्बन्धित अपनी सुविधा के लिए, आवश्यक टिप्पणियाँ लिखता है ।
6. **मतगणना की आवश्यकता -** यदि किसी प्रस्ताव पर मतगणना की आवश्यकता पड़ जाती है तो सचिव मतगणना की किया में सहायता करेगा ।

(III) सभा के बाद के कर्तव्य

1. **सूक्ष्म लिखना -** सभा से सम्बन्धित कार्यवाही के सूक्ष्म सचिव लिखेगा एवं उचित समय में उनकी पुष्टि अध्यक्ष के हस्ताक्षरों द्वारा करवायेगा ।
2. **परिवर्तन अंकित करना -** यदि कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियमों में कोई परिवर्तन किये जाते हैं तो ऐसे परिवर्तनों को यथास्थान अंकित कर लेना चाहिए । सभा के पश्चात् यदि पार्षद सीमानियम अथवा अन्तर्नियमों की कोई प्रतिलिपि किसी सदस्य को अथवा अन्यत्र भेजी जाती है तो उसमें ऐसे परिवर्तन अवश्य अंकित होने चाहिये ।
3. **रजिस्ट्रार के पास परिवर्तित प्रलेख भेजना -** कम्पनी के ऐसे परिवर्तित सीमानियम व अन्तर्नियम रजिस्ट्रार के पास सभा की तिथि से 3 माह के भीतर फाइल कर देना चाहिये ।
4. **विशेष प्रस्तावों को रजिस्ट्रार के पास भेजना -** इस सभा में जो विशेष प्रस्ताव पारित किये गये हैं उनकी सही प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के यहाँ, प्रस्ताव पारित होने के 15 दिन के अन्दर भेज देनी चाहिए ।

18.3 अन्य सभाएँ (Other Meetings)

कम्पनी की वैधानिक सभा, वार्षिक साधारण सभा, असाधारण सामान्य सभा तथा संचालक मण्डल की सभाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य सभाएँ भी हो सकती हैं । ऐसी कुछ प्रमुख सभाओं का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार हैं:

(I) **वर्ग सभाएं (Class Meetings):** - जब किसी वर्ग या श्रेणी विशेष के सदस्यों द्वारा सभा बुलायी जाती है तो उस सभा को वर्ग सभा कहते हैं । वर्तमान व्यवस्थाओं के अनुसार कोई भी कम्पनी सदस्यों की दो प्रकार की वर्ग की सभाएँ बुला सकती है:

1. **साधारण अंशधारियों की सभा:-** जब कम्पनी के साधारण अंशों के स्वामी सदस्यों द्वारा कम्पनी की साधारण सभा बुलायी जाती है तो वह साधारण अंशधारियों द्वारा बुलायी गयी वर्ग सभा मानी जाती हैं ।
2. **पूर्वाधिकार अंशधारियों की सभा:-** यदि कम्पनी के पूर्वाधिकारी अंशधारी अपनी वर्ग सभा बुलाते हैं तो वह पूर्वाधिकार अंशधारियों की वर्ग सभा मानी जाती हैं ।

वर्ग सभाएं सामान्यत: जिन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु बुलायी जाती है, वे उद्देश्य इस प्रकार हो सकते है:

(1) किसी श्रेणी या वर्ग के अंशधारियों के अधिकारों में परिवर्तन करना ।
(2) किसी समझौता योजना पर विचार विमर्श करना ।
(3) कम्पनी द्वारा स्वैच्छिक समापन की दशा में ।
(4) न्यायालय द्वारा अनिवार्य समापन की दशा में भी वर्ग सभाएं बुलायी जा सकती हैं । किसी वर्ग विशेष के अंशधारियों के अधिकारों में परिवर्तन तभी किया जा सकता है जब कम्पनी के सीमानियम तथा अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में प्रावधान हों । अधिकारों में परिवर्तन विशेष प्रस्ताव द्वारा ही किया जा सकता हैं । लेकिन इस सम्बन्ध में एक प्रावधान यह भी है कि जिस वर्ग के अंशधारियों के अधिकारों में परिवर्तन किया जाना है उस वर्ग के कम से कम 10 प्रतिशत सदस्य ऐसे परिवर्तन से असहमत हैं तो वे इस परिवर्तन को निरस्त करने के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं लेकिन ऐसा

प्रार्थना पत्र वे सदस्य ही दे सकते है जिन्होंने न तो प्रस्ताव के पक्ष में सहमति दी है और ना ही पक्ष में मतदान किया हैं ।

न्यायालय प्राप्त आवेदन पर विचार करता है तथा दोनों पक्षकारों को सुनवाई का अवसर देकर परिवर्तन को निरस्त कर सकता है अथवा परिवर्तन की पुष्टि कर सकता है ।

यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में विपरीत व्यवस्था नहीं है तो वर्ग सभाओं के सम्बन्ध में सूचना देने, कार्यवाहक संख्या, प्रतिपुरूष, मतदान आदि से सम्बन्धित वे ही नियम लागू होते हैं जो साधारण सभा में लागू होते हैं ।

(II) **ऋणदाताओं की सभाएँ (Meetings of Creditors):-** यदि कम्पनी द्वारा ऐसे निर्णय लिये जाने प्रस्तावित हैं जिनसे ऋणदाताओं के हित प्रभावित होते हों तो उन निर्णयों पर विचार हेतु ऋणदाताओं की सभाएं बुलायी जा सकती हैं ।

किसी भी कम्पनी में सामान्यत: ऋणदाताओं की सभाएं निम्नलिखित परिस्थितियों में बुलायी जा सकती है :

(1) कम्पनी की अंश पूंजी में परिवर्तन अथवा पुनर्गठन करने की दशा में ।

(2) कम्पनी द्वारा किसी समझौता योजना को स्वीकार करने की दशा में ।

(3) ऋणदाताओं द्वारा स्वैच्छिक समापन का प्रस्ताव पारित किये जाने हेतु ।

(4) यदि कम्पनी के समापन की कार्यवाही एक वर्ष से अधिक समय तक चल जाये और कम्पनी का समापन ऋणदाताओं द्वारा हो तो निस्तारक द्वारा ऋणदाताओं की सभा बुलाना ।

(5) यदि ऋणदाताओं द्वारा स्वैच्छिक समापन किया जा रहा है तो निस्तारक द्वारा ऋणदाताओं की अंतिम सभा बुलाना ।

(III) **ऋणपत्रधारियों की सभाएं (Meetings of Debentures Holders)**: कम्पनी अपनी वितीय आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु अंशों के साथ-साथ ऋणपत्र भी जारी करती है। ऋणपत्र कुछ निश्चित शर्तो के अधीन जारी किये जाते हैं। उन शर्तो को कम्पनी तथा ऋणपत्रधारी दोनों को ही मानना जरूरी होता है। कभी-कभी कम्पनी में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि ऋणपत्रधारियों को ऋणपत्रों की शर्तो में परिवर्तन करना जरूरी हो जाता है।

ऋणपत्रों की शर्तो में परिवर्तन करने सम्बन्धी प्रस्ताव पर विचार करने के लिए ऋणपत्रधारियों की सभा बुलायी जाती है। यदि किसी समझौता योजना को लागू करना होता है तो भी ऋणपत्रधारियों की सभा बुलायी जा सकती है। ऋणपत्रधारियों की सभा की कार्यवाही, सूचना, प्रस्ताव, मतदान, प्रतिपुरूष आदि के सम्बन्ध में कम्पनी के अन्तर्नियमों में व्यवास्थाएं की जा सकती है। यदि अन्तर्नियमों में व्यवास्थाएं नहीं है तो सामान्यत: सारी बातें साधारण सभा के समान ही होती है।

18.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. असाधारण सभा के सम्बन्ध में सचिव के कर्तव्यों का उल्लेख कीजिए ।
   State the duties of a company secretary regarding to an extra-ordinary General meeting.

2. असाधारण सामान्य सभा क्या होती है? कब, किस प्रकार तथा किसके द्वारा एक कम्पनी की असाधारण सामान्य सभा बुलायी जा सकती है?
   What is an extra-ordinary General meeting? When, in what manner and by whom a extra-ordinary General meeting of a company is called?
3. असाधारण सामान्य सभा के सम्बन्ध मे वैधानिक प्रावधानों की विवेचना कीजिए ।
   Discuss the provisions of law pertaining to extra-ordinary General Meeting.
4. असाधारण सामान्य सभा किसे कहते हैं? ऐसी सभा बुलाने से सम्बन्धित नियमों का उल्लेख कीजिए ।
   What is an extra-ordinary General Meeting? State the rules relating to convening such a meeting.

18.5 उपयोगी पुस्तकें

1. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - डी. आर. एल. नवलखा
   प्रकाशक : रमेश बुक डिपो, जयपुर ।
2. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - माथुर, सक्सेना एवं बिन्नाणी
   प्रकाशक : आदर्श प्रकाशन, जयपुर ।
3. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - जोशी, खीचा एवं गोयल
   प्रकाशक : अजमेरा बुक कम्पनी, जयपुर ।
4. कम्पनी अधिनियम एवं सचिवीय पद्धति - उपाध्याय, चतुर्वेदी, गुप्ता एवं शर्मा
   प्रकाशक : रमेश बुक डिपो, जयपुर ।

ISBN - 13/978-81-8496-235-2